प्रकाशक:
श्रीमन्त सेठ शिताबराय लक्ष्मीचन्द्र
जैन-साहित्योद्धारक-फंड-कार्यालय
विदिशा (म० प्र०)



मुद्रक —
पं० शिवनारायण उपाध्याय, बी० ए०
नया संसार प्रेस,
भदैनी, वाराणसी

THE ṢAṬKHAṆḌĀGAMA

OF

PUṢPADANTA AND BHŪTABALI

WITH

THE COMMENTARY DHAVALĀ OF VĪRASENA

VOL. XVI

The Last Fourteen Anuyogadvaras, Moksha etc.

Edited

with translation, notes and indexes

BY

Dr. HIRALAL JAIN, M. A., LL. B., D. Litt.

Director, Prakrit Jain Institute, Vaishali

Assisted by

Pandit Phoolchandra, Siddhanta Shastri.



Pandit Balchandra, Siddhanta Shastri

With the cooperation of

Dr. A. N. Upadhye,

M. A., D. LITT.

Published by

Shrimant Seth Shitabrai Laxmichandra,

Jaina Sahitya Uddharaka Fund Karyalaya

Vidisha (M. P.)

1958

Price rupees twelve only.

Published by
Shrimant Seth Shitabrai Laxmichandra
Jaina Sahitya Uddharaka Fund Karyalaya
Vidisha (M. P)

Printed by
Pt. SHIVA NARAYAN UPADHAYAYA, B. A.
Naya Sansar Press.
BHADAINI, VARANASI.

सम्पादकीय

मुझे आज बड़ी प्रसन्नता है कि जिस पट्खंडागम और उसकी टीका धवलाका सम्पादन प्रकाशन कार्य आजसे बीस वर्ष पूर्व सन् १९३८ में प्रारंभ हुआ था, वह आज प्रस्तुत भागके साथ संपूर्णताको प्राप्त हो रहा है। किन्तु ज्ञानकी दृष्टिसे यह कार्य केवल हमारे कर्तव्यकी प्रथम सीढ़ी मात्र है। इस प्रकाशनके द्वारा इस महान् शास्त्रीय रचनाका मूल पाठ, उसका मूलानुगामी अनुवाद, यत्र तत्र विशेष स्पष्टीकरण व तुलनात्मक टिप्पण तथा कुछ ऐतिहासिक विवेचन व पारिभाषिक शब्दोंकी सूचियाँ मात्र प्रस्तुत की जा सकी हैं। हमारे विचारके अनुसार अभी इसके सम्बन्धमें विशेष रूपसे निम्न कार्य अवशिष्ट हैं:—

१—इसके मूल पाठका एक वार सावधानीसे मूडविद्रीकी तीन उपलभ्य ताड़पत्रीय प्रतियोंसे मिलान व पाठभेदोंका अंकन। इस कार्यके लिये उक्त प्रतियोंके फोटोका भी उपयोग किया जा सकता है।

२—इसके विषयका समस्त जैन कर्मसिद्धान्तसम्बन्धी दिगम्बर और श्वेताम्बर तथा वैदिक व बौद्ध साहित्यके साथ तुलनात्मक अध्ययन व पाश्चात्य दर्शन प्रणालीसे उसका विवेचन।

३—सूत्रों और टीकाका प्राकृत भाषासम्बन्धी अध्ययन।

मुझे आशा है कि वर्तमान युगकी बढ़ती हुई ज्ञानपिपासा तथा विशेष अध्ययनकी ओर अभिरुचि व प्रोत्साहन को देखते हुए उक्त प्रवृत्तियोंको हाथ लगानेमें विलम्ब न होगा।

यद्यपि प्रत्येक भागके साथ भूमिकामें ग्रन्थसम्बन्धी ऐतिहासिक विवरण व विषय परिचय दिया गया है एवं परिशिष्टोंमें शब्द सूचियाँ, तथापि मेरा विचार था कि प्रस्तुत अन्तिम भागमें उक्त समस्त सामग्रीका पुनरावलोकन सहित संकलन दे दिया जाय। तदनुसार पारिभाषिक शब्दसूची संकलित करके इस भागके साथ प्रस्तुत की जा रही है। प्रस्तावनात्मक सामग्रीका भी संकलन कार्य चालू किया गया था। किन्तु इसी बीच मेरा स्वास्थ्य गिरने लगा और मुझे डाक्टरोंका आदेश मिला कि कुछ कालके लिये कठोर मानसिक व शारीरिक परिश्रम त्यागकर विश्राम किया जाय, नहीं तो प्रकृति और अधिक बिगड़नेका भय है। इस कारण उस सुविस्तृत भूमिकाका विचार छोड़कर एवं इस प्रकाशनमें अधिक विलम्ब उचित न समझकर इस भागको प्रकाशित किया जा रहा है। यदि विधि अनुकूल रहा तो उक्त कार्य भविष्यमें कभी पूर्ण करनेका प्रयत्न किया जायगा। आवश्यक ऐतिहासिक व विषय-परिचयसम्बन्धी जानकारी भिन्न भिन्न भागोंमें संगृहीत है ही।

इस समय स्वभावतः मेरी स्मृति इस सम्पादन प्रकाशनके गत बीस वर्षके इतिहास पर जा रही है। सफल और धन्य है वह श्रीमन्त सेठ सिताबराय लक्ष्मीचन्द्र जी, भेलसा, की सम्पत्ति जिसके थोड़ेसे दानसे यह महान् शास्त्रोद्धारका कार्य हो सका। वे गजरथ महोत्सव कराने जा रहे थे कि मेरे परम सुहृत् वैरिस्टर जमुनाप्रसाद जैनने इटारसी परिषद्के अधिवेशनके समय उनकी सद्बुद्धिको यह मोड़ दिया। गजरथ आज भी चलाये जा रहे हैं और उनमें अपरिमित धन व्यय किया जा रहा है। पाठक विचार कर देखें कि आज दानकी प्रवृत्ति किस दिशामें सार्थक है। पश्चात् भेलसानिवासी श्रीमान् स्वर्गीय सेठ राजमल जी व श्रीमान् तखतमल जी (वर्तमान मध्य प्रदेशी मंत्रि-मण्डलके सदस्य) ने सेठ लक्ष्मीचन्द्र जी की उस

सद्वुद्धिको सुदृढ़ और व्यवस्थित करके दानकी रजिस्ट्री करा दी। सम्पादन कार्यके प्रारम्भमें अमरावती निवासी श्रीमान् स्वर्गीय सेठ पन्नालाल जीका साहाय्य व प्रोत्साहन कभी भूला नहीं जा सकता। उन्होंने मानो इसी कार्यके लिये अपने मन्दिर जीके शास्त्र भंडारमें इस आगमकी पूर्ण प्रतिलिपि कराकर मँगा रखी थी। उसे तुरन्त उन्होंने मेरे सुपुर्द कर दिया। उनका यह कार्य उस समय कम साहसका नहीं था, क्योंकि भ्रान्तिवश हमारी विद्वत्समाजका एक दल इन ग्रन्थोंके प्रकाशन ही नहीं किन्तु किसी गृहस्थके द्वारा इनके अध्ययनका भी कट्टर विरोधी था और उस विरोधने क्रियात्मक रूप धारण कर लिया था। सेठ पन्नालालजी व अमरावती जैन पंचायतके अनुसार कारंजा जैन आश्रम तथा सिद्धान्त भवन, आरा, के अधिकारियोंने भी हमें उनकी प्रतियोंका उपयोग करनेकी सुविधा प्रदान की। प्रकाशन सम्बन्धी कागज, छपाई आदि विषयक कठिनाइयोंके हल करनेमें पं० नाथूराम जी प्रेमीका वरद हस्त सदैव हमारे ऊपर रहा। यही नहीं, बीचमें आर्थिक कठिनाईको दूर करने, मुद्रण कार्य बम्बईमें कराने व अपने घर पर इसका दफ्तर रखनेमें भी वे नहीं हिचकिचाये।

मेरे सम्पादक सहयोगियोंमें से डा० ए० एन० उपाध्ये प्रारम्भसे अभी तक मेरे साथ हैं। पं० फूलचन्द्र जी शास्त्रीका सहयोग भी आदिसे, बीचमें कुछ वर्षों के विच्छेदके पश्चात्, अभी भी मुझे मिल रहा है। पं० बालचन्द्र जी शास्त्रीका भी जबसे सहयोग प्राप्त हुआ तबसे अन्त तक निरन्तर निभता गया। स्वर्गीय पं० देवकीनन्दन जी शास्त्रीका भी आदिसे उनके देहावसान होने तक मुझे पूर्ण सहयोग मिलता रहा। पं० हीरालाल जी शास्त्रीका सहयोग इस कार्यके प्रारम्भमें बहुमूल्य रहा। किन्तु खेद है वह सहयोग अन्त तक न निभ सका। मैंने इन सब व्यक्तियों और घटनाओंका केवल संकेत मात्र किया है। तत्तत् सम्बन्धी आज सैकड़ों प्रिय-अप्रिय एवं साधक बाधक घटनाएँ मेरे स्मृति-पटल पर नाच रही हैं। किन्तु जिसका 'अन्त भला, वह सर्वांग भला' की उक्तिके अनुसार उस समस्त इतिहासमें मुझे माधुर्य ही माधुर्यका अनुभव हो रहा है।

जिन पुरुषोंका मैं ऊपर उल्लेख कर आया हूँ उन्हें किन शब्दोंमें धन्यवाद दूँ? बस यही एक भावना और प्रार्थना है कि जिन-वाणीकी सेवामें उन्होंने अपना जैसा तन, मन, धन लगाया है, वैसा ही वे आजन्म लगाते रहें जिससे उनके ज्ञानावर्णीय कर्मोंका क्षय हो और वे निर्मल ज्ञान प्राप्त कर पूर्ण आत्मकल्याण करनेमें सफल हों।

१-५-१९५८]

हीरालाल जैन

विषय-परिचय

कर्मप्रकृतिप्राभृतके कृति आदि २४ अनुयोगद्वारोंमें से प्रथम १० अनुयोगद्वारोंका संक्षिप्त परिचय यथास्थान कराया जा चुका है। यहाँ मोक्ष अनुयोगद्वारसे लेकर शेष १४ अनुयोगद्वारोंका परिचय कराया जाता है।

११ मोक्ष—मोक्ष अनुयोगद्वारका विचार नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव इन चार निक्षेपों द्वारा करनेकी प्रतिज्ञा करके मात्र कर्मद्रव्यमोक्षका विशेष विचार प्रकृतमें किया गया है और शेष निक्षेपोंके व्याख्यानको सुगम बतलाकर छोड़ दिया गया है। कर्मप्रकृतियाँ मूल और उत्तरके भेदसे दो प्रकारकी हैं, इसलिए कर्मद्रव्यमोक्षके दो भेद हो जाते हैं—मूलप्रकृतिकर्मद्रव्य-मोक्ष और उत्तरप्रकृतिकर्मद्रव्यमोक्ष। ये दोनों भी देशमोक्ष और सर्वमोक्षके भेदसे दो दो प्रकारके हैं। किसी मूल या उत्तर प्रकृतिके प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंकी अपेक्षा एकदेशका अभाव होना देशमोक्ष है और किसी मूल या उत्तर प्रकृतिका प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंकी अपेक्षा सर्वथा अभाव होना सर्वमोक्ष है, इसलिए देशमोक्ष और सर्वमोक्ष ये दोनों ही प्रकृतिमोक्ष, स्थितिमोक्ष, अनुभागमोक्ष और प्रदेशमोक्ष इन चार भागोंमें विभक्त हो जाते हैं। खुलासा इस प्रकार है—विवक्षित प्रकृतिकी निर्जरा होना या उसका अन्य प्रकृतिरूपसे संक्रमित होना प्रकृतिमोक्ष कहलाता है। प्रदेशमोक्षका विचार प्रकृतिमोक्षके ही समान है। किसी भी प्रकृतिकी विवक्षित स्थितिका अभाव चार प्रकारसे होता है—अपकर्षण द्वारा, उत्कर्षण द्वारा, संक्रमणद्वारा और अधःस्थितिगलन द्वारा; इसलिए इन चारोंमेंसे किसी एकके आश्रयसे विवक्षित स्थितिका अभाव होना स्थितिमोक्ष कहलाता है। स्थितिके जघन्यादि सब विकल्पोंमें स्थितिमोक्षका विचार इसी प्रकार कर लेना चाहिए। अनुभागमोक्ष भी स्थितिमोक्षके समान चार प्रकारसे होता है, इसलिए अनुभागके भी उत्कृष्टादि सब भेदोंमें उक्त प्रकारसे अनुभाग-मोक्षको घटित करके बतलाया गया है।

यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक प्रतीत होता है कि कर्मद्रव्यमोक्ष अनुयोद्वारमें सम्यग्दर्शन आदि गुणोंके द्वारा जीवके बन्धनसे मुक्त होने मात्रका विचार न करके प्रति समय बन्धको प्राप्त होनेवाले कर्मोंकी प्रकृति आदिका अभाव किस किस प्रकारसे होता रहता है इसका भी विचार किया गया है। जीवका कर्मोंसे छूटनेका क्रम एक प्रकारका ही है। यदि सम्यग्दर्शनादि गुणोंके द्वारा कर्मसे छुटकारा मिलता है तो नवीन बन्ध न होनेसे वह सर्वथा मुक्तिका कारण होता है इतना मात्र यहाँ विशेष है। इसी अभिप्रायको ध्यानमें रखकर नोआगमद्रव्यमोक्षके मोक्ष, मोक्षकारण और मुक्त ये तीन भेद किये गये हैं। जीव और कर्मोंका वियुक्त हो जाना मोक्ष है। सम्यग्दर्शन आदि मोक्षके कारण हैं और समस्त कर्मोंसे रहित अनन्त गुण युक्त शुद्ध बुद्ध आत्मा मुक्त है। मोक्ष अनुयोगद्वारमें इसका भी विस्तारके साथ विचार किया गया है।

१२ संक्रम—संक्रमका छह प्रकारका निक्षेप करके उसके आश्रयसे इस अनुयोगद्वारमें विचार किया गया है। क्षेत्र संक्रमका निर्देश करते हुए बतलाया है कि एक क्षेत्रका क्षेत्रान्तरको

प्राप्त होना क्षेत्रसंक्रम है। इस पर यह शंका की गई कि क्षेत्र निष्क्रिय होता है, इसलिए उसका अन्य क्षेत्रमें गमन कैसे हो सकता है। इसका समाधान वीरसेनस्वामीने इस प्रकार किया है कि जीव और पुद्गल सक्रिय पदार्थ हैं, इसलिए आधेयमें आधारका उपचार करनेसे क्षेत्रसंक्रम वन जाता है। कालसंक्रमका निर्देश करते हुए वतलाया है कि एक कालगत होकर नवीन कालका प्रादुर्भाव होना कालसंक्रम है। लोकमें हेमन्त ऋतु या ग्रीष्म ऋतु संक्रान्त हुई ऐसा व्यवहार भी देखा जाता है। यहाँ विवक्षित क्षेत्र और विवक्षित कालमें स्थित द्रव्यकी क्षेत्र और काल संज्ञा रख कर भी क्षेत्रसंक्रम और कालसंक्रम घटित कर लेना चाहिए, ऐसा वीरसेनस्वामीने सूचित किया है।

इस प्रकार संक्षेपसे छह निक्षेपोंका विचार करनेके पश्चात् विवक्षित अनुयोगद्वारमें कर्म-संक्रमको प्रकृत वतलाकर उसके चार भेद किये हैं—प्रकृतिसंक्रम, स्थितिसंक्रम, अनुभाग-संक्रम और प्रदेशसंक्रम। एक प्रकृतिका अन्य प्रकृतिरूपसे संक्रान्त होना यह प्रकृतिसंक्रम है। इस विषयमें विशेप नियम ये हैं। यथा—किसी भी मूलप्रकृतिका अन्य मूलप्रकृतिरूपसे संक्रमण नहीं होता। उदाहरणार्थ, ज्ञानावरणका दर्शनावरणरूपसे संक्रमण नहीं होता। इसीप्रकार अन्य मूल प्रकृतियोंके विपयमें भी जानना चाहिए। उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा जिस मूल कर्मकी जितनी उत्तर प्रकृतियाँ हैं उनमें परस्पर संक्रमण होता है। उदाहरणार्थ, ज्ञानवरणकी पाँच उत्तर प्रकृतियाँ हैं, इसलिए उनका परस्परमें संक्रमण होता है। इसी प्रकार अन्य मूल प्रकृतियोंमेंसे जिसकी जितनी उत्तर प्रकृतियाँ हों उनके परस्पर संक्रमणके विपयमें यह नियम जानना चाहिये। मात्र दर्शनमोहनीयका चारित्रमोहनीयमें और चारित्रमोहनीयका दर्शनमोहनीयमें संक्रमण नहीं होता तथा चार आयुओंका भी परस्पर संक्रमण नहीं होता इतना यहाँ विशेप जानना चाहिए।

भागहारकी दृष्टिसे संक्रमके पाँच भेद हैं—अधःप्रवृत्तसंक्रम, विध्यातसंक्रम, उद्वेलना-संक्रम, गुणसंक्रम और सर्वसंक्रम। इनमेंसे प्रकृतमें इन अवान्तर भेदोंकी दृष्टिसे संक्रमका विचार न करके वीरसेन स्वामीने वन्धके समय होनेवाले इस संक्रमका स्वामित्व, एक जीवकी अपेक्षा काल, एक जीवकी अपेक्षा अन्तर, नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचय, काल, अन्तर और अल्पबहुत्व इन अनुयोगद्वारोंका आश्रय लेकर उत्तरप्रकृतिसंक्रमका विचार किया है।

स्वामित्वका निर्देश करते हुए वतलाया है कि पाँच ज्ञानवरण, नौ दर्शनावरण, वारह कपाय और पाँच अन्तरायका अन्यतर सकपाय जीव संक्रामक होता है। असाताका वन्ध करने-वाला जीव साताका संक्रामक होता है और साताका वन्ध करनेवाला सकपाय जीव असाताका संक्रामक होता है। दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीयका परस्पर संक्रम नही होता यह तो स्पष्ट ही है। दर्शनमोहनीयके संक्रमके विपयमें यह नियम है कि सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव दर्शनमोहनीयका संक्रामक नहीं होता। सम्यक्त्वका मिथ्यादृष्टि जीव संक्रामक होता है। मात्र सम्यक्त्वका एक आवलि प्रमाण सत्कर्म शेप रहने पर उसका संक्रम नहीं होता। मिथ्यात्वका सम्यग्दृष्टि जीव संक्रामक होता है। मात्र जिस सम्यग्दृष्टिके एक आवलिसे अधिक सत्कर्म विद्यमान है ऐसा जीव इसका संक्रामक होता है। यही नियम सम्यग्मिथ्यात्वके लिए भी लागू करना चाहिए। पर इसका संक्रामक मिथ्यादृष्टि और सम्य-ग्दृष्टि दोनों होते हैं। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका उपशम और क्षय क्रियाका अन्तिम समय प्राप्त होने तक कोई भी जीव संक्रामक होता है। पुरुपवेद और तीन संज्वलनका उपशम और क्षयका प्रथम समय प्राप्त होने तक कोई भी जीव संक्रामक होता है। संज्वलन लोभका ऐसा जीव संक्रामक होता है जिस उपशामक और क्षपकने संज्वलन लोभके अन्तरका अन्तिम समय नहीं प्राप्त किया है। तथा जो अक्षपक और अनुपशामक है वह भी इसका

संक्रामक होता है। चारों आयुओंका संक्रम नहीं होता ऐसा स्वभाव है। यशःकीर्तिको छोड़कर सब नामकर्मकी प्रकृतियोंका सकषाय जीव संक्रामक होता है। मात्र जिसके एक आवलिसे अधिक सत्कर्म विद्यमान हैं ऐसा जीव इनका संक्रामक होता है। यशःकीर्तिका संक्रामक तब तक होता है जब तक पर भवसम्बन्धी नामकर्मकी प्रकृतियोंका बन्ध करता है। उच्चगोत्रका संक्रामक नीचगोत्रका बन्ध करनेवाला अन्यतर जीव होता है। मात्र एक आवलिसे अधिक सत्कर्मके रहते हुए उच्चगोत्रका संक्रामक होता है। नीचगोत्रका संक्रामक उच्चगोत्रका बन्ध करनेवाला अन्यतर जीव होता है। इस प्रकार सब प्रकृतियोंके स्वामित्वको जान कर काल आदि अनुयोगद्वारोंका विचार कर लेना चाहिए। मूलमें इनका विचार किया ही है, इसलिए विस्तार भयसे यहाँ उनका अलग अलग निर्देश नहीं करते हैं।

इस प्रकार प्रकृतिसंक्रमका विचार कर आगे प्रकृतिस्थानसंक्रमकी सूचना करते हुए बतलाया गया है कि ज्ञानावरणीय, वेदनीय, गोत्र और अन्तरायका एक एक ही संक्रमस्थान है। दर्शनावरणके नौ प्रकृतिक और छह प्रकृतिक ये दो संक्रमस्थान हैं। मोहनीयके संक्रमस्थानोंका विचार कषायप्राभृतमें विस्तारके साथ किया है। नामकर्मकी पिण्डप्रकृतियोंके आश्रयसे स्थानसमुत्कीर्तना करनी चाहिए। इस प्रकार अलग अलग प्रकृतियोंके संक्रमस्थान जानकर उनके आश्रयसे स्वामित्व और काल आदि सब अनुयोगद्वारोंका विचार करनेकी सूचना करके यह प्रकरण समाप्त किया गया है।

आगे स्थितिसंक्रमका निर्देश करके उसकी प्ररूपणा इस प्रकार की है। स्थितिसंक्रम दो प्रकारका है—मूलप्रकृतिस्थितिसंक्रम और उत्तरप्रकृतिस्थितिसंक्रम। स्थितिसंक्रम तीन प्रकारसे होता है। यथा—स्थितिका अपकर्षण होने पर स्थितिसंक्रम होता है, स्थितिका उत्कर्षण होने पर स्थितिसंक्रम होता है और स्थितिके अन्य प्रकृतिको प्राप्त कराने पर भी स्थितिसंक्रम होता है। अपकर्षण की अपेक्षा संक्षेपमें स्थितिसंक्रमका विचार इस प्रकार है—उदयावलिके भीतरकी सब स्थितियोंका अपकर्षण नहीं होता। उदयावलिके बाहर जो एक समय अधिक उदयावलिप्रमाण स्थिति है उसका अपकर्षण होता है। अपकर्षण होकर उसका एक समय कम आवलिके दो बटे तीन भागप्रमाण स्थितिको अतिस्थापनारूपसे रखकर एक अधिक तृतीय भागमें निक्षेप होता है। इससे आगेकी स्थितियोंका अपकर्षण होने पर एक आवलिप्रमाण अतिस्थापना प्राप्त होने तक उसकी वृद्धि होती है और निक्षेप उतना ही रहता है। इससे आगे अतिस्थापना अवस्थितरूपसे एक आवलिप्रमाण ही रहती है और निक्षेप उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है। उत्कर्षणके विषयमें यह नियम है कि उदयावलिके भीतरकी सब स्थितियोंका उत्कर्षण नहीं होता। एक समय अधिक उदयावलिकी अन्तिम स्थितिका उत्कर्षण होता है। किन्तु उसका नहीं बँधनेवाली स्थितिमें निक्षेप न होकर बँधनेवाली जघन्य स्थितिसे लेकर ऊपरकी सब स्थितियोंमें निक्षेप होता है। यह विधि उत्कर्षणको प्राप्त होनेवाली नीचेकी स्थितियोंकी कही है। ऊपरकी स्थितियोंका उत्कर्षण किस प्रकार होता है इसका विचार करने पर यदि यह जीव सत्कर्मसे एक समय अधिक स्थितिका बन्ध करता है तो पूर्वबद्ध कर्मकी अन्तिम स्थितिका उत्कर्षण नहीं होता, क्योंकि यहाँ पर अतिस्थापना और निक्षेपका अभाव है। पूर्वबद्ध कर्मकी द्विचरम स्थितिका भी उत्कर्षण नहीं होता, क्योंकि यहाँ पर भी अतिस्थापना और निक्षेप सम्भव नहीं हैं। इस प्रकार पूर्वबद्ध कर्मकी एक आवलि और एक आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिके नीचे जाने तक जितने भी स्थितिविकल्प हैं उनका उत्कर्षण सम्भव नहीं। कारण वही है। हाँ उससे नीचे एक स्थितिके जाने पर जो स्थितिविकल्प स्थित है उसका उत्कर्षण हो सकता है और वैसी अवस्थामें एक आवलिप्रमाण अतिस्थापना होती है तथा

शेष आवलिका असंख्यातवाँ भाग निक्षेप होता है। इस प्रकार संक्षेपमें उत्कर्षणका निर्देश करके आगे निक्षेप और अतिस्थापनाका अल्पबहुत्व बतलाया गया है।

आगे उत्तरप्रकृतिसंक्रमके प्रमाणानुगमका निर्देश करते हुए वह उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्यके भेदसे चार प्रकारका बतलाया है। उदाहरणार्थ मतिज्ञानावरणका उत्कृष्ट स्थिति-संक्रम दो आवलि कम तीस कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण होता है, क्योंकि किसी भी प्रकृतिका बन्ध होने पर एक आवलि काल तक उसका संक्रमण नहीं होता, इसलिए एक आवलि तो यह कम हो जाती है। इसके बाद उदयावलिको छोड़कर शेष स्थितिका अन्य बन्धको प्राप्त होनेवाली प्रकृतिमें संक्रमण होता है, इसलिए एक आवलि यह कम हो जाती है। इस प्रकार उक्त दो आवलियोंको छोड़कर शेष सब स्थिति संक्रमणसे प्राप्त हो सकती है, इसलिए मतिज्ञानावरणकी उत्कृष्ट संक्रमस्थिति दो आवलि कम तीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण कही है। पर उस समय उस कर्मकी स्थिति आवलि कम तीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण होती है, इसलिए उसका यत्स्थितिसंक्रम एक आवलि कम तीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण कहा है। इस प्रकार मूलमें मात्र मतिज्ञानावरणका उदाहरण देकर शेष कर्मोंके विषयमें उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाके समान उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमके जाननेकी सूचना की है और जिन कर्मोंमें उत्कृष्ट स्थितिउदीरणासे भेद है उनका अलगसे निर्देश कर दिया है सो विचार कर उसे घटित कर लेना चाहिए। स्वतन्त्ररूपसे विचार किया जाय तो उसका तात्पर्य इतना ही है कि जो बन्धसे उत्कृष्ट स्थितिवाली प्रकृतियाँ हैं उनका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम दो आवलिकम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण प्राप्त होता है और उत्कृष्ट यत्स्थितिसंक्रम एक आवलि कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण प्राप्त होता है। परन्तु जो बन्धोत्कृष्ट स्थितिवाली प्रकृतियाँ न होकर संक्रमोत्कृष्ट स्थितिवाली प्रकृतियाँ हैं उनका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम तीन आवलि कम उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण प्राप्त होता है और उत्कृष्ट यत्स्थितिसंक्रम दो आवलि कम उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण प्राप्त होता है। मात्र दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृतियोंमें तथा आहारकद्विक और तीर्थंङ्कर प्रकृतिमें जो विशेषता है उसे अलगसे जान लेना चाहिए। चारों आयुओंका जो उत्कृष्ट स्थितिबन्ध है वही उनका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम है, क्योंकि एक आयुका अन्य आयुमें संक्रम नहीं होता। मात्र इनकी यत्स्थिति एक आवलि कम उत्कृष्ट आबाधासहित अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कही है। इनकी उत्कृष्ट यत्स्थिति इतनी कैसे कही है इस विषयको श्वेताम्बर कर्मप्रकृतिकी टीका में स्पष्ट किया है। उसका भाव यह है कि आयुबन्ध होते समय बन्धावलिप्रमाण काल जानेपर आयुबन्धके प्रथम समयमें बँधे हुए कर्मका उत्कर्षण होने पर उसकी अबाधा सहित उत्कृष्ट यत्स्थिति उक्त कालप्रमाण प्राप्त होती है। यह एक समाधान है। तथा 'अथवा' कहकर दूसरा समाधान इसप्रकार किया है कि बन्धावलिके बाद आयुकी निर्व्याघात-रूप अपवर्तना (अपकर्षण) भी सर्वदा सम्भव है, इसलिए उसकी अपेक्षा पूर्वोक्त प्रमाण यत्स्थिति जान लेनी चाहिए। अभिप्राय इतना ही है कि पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्यके प्रथम त्रिभागमें परभवसम्बन्धी उत्कृष्ट आयुका बन्ध होने पर उसकी निषेक रचना तो नरकायु और देवायुकी तेतीस सागरप्रमाण तथा तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुकी तीन पल्यप्रमाण ही रहती है। आबाधा-काल पूर्वकोटिका त्रिभाग इससे अलग है इसलिए इनका जो स्थितिबन्ध है वही स्थितिसंक्रम है। पर इनके बन्धके प्रथम समयसे लेकर एक आवलि काल जानेपर इन निषेकस्थितियोंमें बन्ध होते समय उत्कर्षण और बन्ध होते समय या बन्ध समयके बाद भी अपकर्षण होने लगता है। यतः इस उत्कर्षण और अपकर्षणमें एक स्थितिसे प्रदेश समूह उठकर दूसरी स्थितिमें निक्षिप्त होते समय स्थितिके परिमाणमें अबाधाकाल भी गर्भित है। पर यह उत्कर्षण और अपकर्षण बन्धके प्रथम समयसे लेकर एक आवलिकाल तक सम्भव नहीं है। यही कारण है कि आयुकर्मकी

यत्स्थिति कहते समय नरकायु आदिकी अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिमें एक आवलिकम उत्कृष्ट आबाधाकाल भी सम्मिलित कर लिया है।

इसप्रकार उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमके प्रमाणका अनुगम करनेके बाद जघन्य स्थितिसंक्रमके प्रमाणका निर्देश किया है। खुलासा इसप्रकार है—पाँच ज्ञानावरण, चक्षुदर्शनावरण आदि चार दर्शनावरण, सम्यक्त्व, संज्वलन लोभ, चार आयु और पाँच अन्तराय इनकी एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थिति शेष रहने पर उदयावलिसे उपरितन एक समयमात्र स्थितिका अपकर्षण होता है, इसलिए इनका जघन्य स्थितिसंक्रम एक स्थितिप्रमाण है और यत्स्थितिसंक्रम समयाधिक एक आवलिप्रमाण है। स्त्यानगृद्धित्रिक, मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, नरकगतिद्विक, तिर्यञ्चगतिद्विक, एकेन्द्रिय आदि चार जाति, आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म और साधारण इनकी क्षपणा होनेके अन्तिम समयमें जघन्य स्थिति पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण होती है, इसलिए इनका जघन्य स्थितिसंक्रम उक्त प्रमाण कहा है। परन्तु क्षपणाके अन्तिम समयमें इनके उदयावलिमें स्थित निषेकोंका संक्रम नहीं होता, इसलिए उक्त कालमें उदयावलिके मिला देनेपर इनकी यत्स्थिति उदयावलि अधिक पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण होती है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी यत्स्थिति उदयावलि अधिक न कहकर अन्तर्मुहूर्त अधिक कहनी चाहिए, क्योंकि इन दोनों प्रकृतियोंकी क्षपणाकी समाप्ति अन्तरकरणमें रहते हुए होती है और अन्तरकरणका काल उस समय अन्तर्मुहूर्त शेष रहता है. इसलिए यह स्पष्ट है कि अन्तरकरणमें इनके प्रदेशोंका अभाव होनेसे यत्स्थिति इतनी बढ़ जाती है। निद्रा और प्रचलाकी स्थिति दो आवलि और एक आवलिका असंख्यातवाँ भाग शेष रहनेपर इनकी मात्र उपरितन एक स्थितिका संक्रम होता है ऐसा स्वभाव है, इसलिए इनका जघन्य स्थितिसंक्रम एक स्थिति और यत्स्थितिसंक्रम आवलिका असंख्यातवाँ भाग अधिक दो आवलि होता है। हास्यादि छहकी क्षपणाके अन्तिम समयमें जघन्य स्थिति संख्यात वर्षप्रमाण होती है, इसलिए इनका जघन्य स्थितिसंक्रम संख्यात वर्षप्रमाण होता है। पर इनकी क्षपणाकी समाप्ति भी अन्तरकरणमें रहते हुए होती है और उस समय अन्तरकरणका काल अन्तर्मुहूर्त शेष रहता है. इसलिए इनकी यत्स्थिति अन्तर्मुहूर्त अधिक संख्यात वर्ष होती है। क्रोधसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध दो महीना प्रमाण होता है, मानसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध एक महीनाप्रमाण होता है, मायासंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध अर्ध मासप्रमाण होता है और पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध आठ वर्षप्रमाण होता है। इन प्रकृतियोंके उक्त स्थितिबन्धमेंसे अलग अलग अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अबाधाकालके कम कर देनेपर उनके जघन्य स्थिति संक्रमका प्रमाण आ जाता है जो क्रमशः अन्तर्मुहूर्त कम दो माह, अन्तर्मुहूर्त कम एक माह, अन्तर्मुहूर्त कम अर्धमास और अन्तर्मुहूर्त कम आठ वर्षप्रमाण होता है। तथा इनका यत्स्थितिसंक्रम क्रमसे दो आवलि कम दो माह, दो आवलि कम एक माह, दो आवलि कम अर्धमास और दो आवलि कम आठ वर्षप्रमाण होता है, क्योंकि अपना अपना जघन्य स्थितिबन्ध होनेपर उसका एक आवलि काल तक संक्रम नहीं होता, इसलिए अपने अपने जघन्य स्थितिबन्धमेंसे एक आवलि तो यह कम हो गई और संक्रम प्रारम्भ होने पर यह एक आवलि काल तक होता रहता है, इसलिए एक आवलि यह कम हो गई। अतः इन प्रकृतियोंके जघन्य यत्स्थितिसंक्रमका प्रमाण अपने अपने जघन्य स्थितिबन्धमेंसे दो आवलि कम करने पर जो प्रमाण शेष रहे उतना प्राप्त होता है। अब रहीं शेष प्रकृतियाँ सो उनकी जघन्य स्थिति सयोगिकेवलीके अन्तिम समयमें अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होती है, इसलिए यहाँ पर उसमेंसे उदयावलिप्रमाण स्थितिको छोड़कर शेष स्थितिका संक्रमण सम्भव होनेसे इनका जघन्य स्थितिसंक्रम उदयावलि

कम अन्तर्मुहूर्तप्रमाण और यत्स्थितिसंक्रम उदयावलिसहित अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होता है। यहाँपर मूलमें इन प्रकृतियोंकी यत्स्थिति तथा स्त्यानगृद्धित्रिक आदि बत्तीस प्रकृतियोंकी यत्स्थिति नहीं बतलाई गई है। किन्तु वह सम्भव है, इसलिए हमने उसका अलगसे निर्देश कर दिया है। तथा मूलमें देवगति आदिका जघन्य स्थितिसंक्रम बतलाते समय जो प्रकृतियाँ परिगणित की गई हैं उनमें तीन आङ्गोपांङ्ग भी परिगणित किये जाने चाहिए, क्योंकि इनका जघन्य स्थितिसंक्रम भी सयोगिकेवलीके अन्तिम समयमें होता है। आगे जो जघन्य स्थितिसंक्रमका स्वामित्व कहा है उससे भी यह बात स्पष्ट हो जाती है।

इस प्रकार प्रमाणानुगमका निर्देश करनेके बाद जघन्य और उत्कृष्ट भेदोंका आश्रयकर स्वामित्व, एक जीवकी अपेक्षा काल, एक जीवकी अपेक्षा अन्तर, नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचय, नाना जीवोंकी अपेक्षा काल, नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर और अल्पबहुत्वका निर्देश करके भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धि इन अनुयोगद्वारोंका संक्षेपमें निरूपण किया है।

इस प्रकार स्थितिसंक्रमका विचार कर आगे अनुभागसंक्रमका प्रकरण प्रारम्भ होता है। इसमें सब कर्मोंको देशघाति, सर्वघाति और अघाति इन भेदोंमें विभक्तकर इनके आदि स्पर्धक परस्परमें किनके समान हैं और किनके किस क्रमसे प्राप्त होते हैं यह बतलाकर उत्कर्षणसे प्राप्त होनेवाला अनुभाग अनुभागसंक्रम है, अपकर्षणसे प्राप्त होनेवाला अनुभाग अनुभागसंक्रम है और अन्य प्रकृतियोंमें संक्रमण होकर प्राप्त होनेवाला अनुभाग अनुभागसंक्रम है इस अर्थपदका निर्देश किया गया है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि मूल प्रकृतियोंमें उत्कर्षण और अपकर्षण इन दो प्रकारोंसे और उत्तर प्रकृतियोंमें यथासम्भव तीनों प्रकारोंसे अनुभागसंक्रम होता है।

आगे अपकर्षणसे प्राप्त होनेवाले अनुभागसंक्रमका निर्देश करते हुए बतलाया गया है कि आदि स्पर्धकका अपकर्षण नहीं होता, क्योंकि इसके नीचे जघन्य निक्षेप और जघन्य अतिस्थापनाका अभाव है। इसीप्रकार जघन्य निक्षेप और जघन्य अतिस्थापनाके अन्तर्गत जितने स्पर्धक हैं उनका अपकर्षण नहीं होता। मात्र इनके ऊपर जो स्पर्धक अवस्थित हैं उनका अपकर्षण होता है क्योंकि इनकी अतिस्थापना और निक्षेप पाये जाते हैं। इतना निर्देश करनेके बाद यहाँ प्रकृत विषयमें उपयोगी अल्पबहुत्व दिया गया है।

आगे उत्कर्षणके विषयमें यह नियम दिया है कि चरम स्पर्धककी स्थापना और निक्षेप का अभाव है, इसलिए जघन्य निक्षेप और जघन्य अतिस्थापनाप्रमाण स्पर्धक नीचे सरककर जो स्पर्धक अवस्थित है उसका उत्कर्षण होता है। इसके आगे अपकर्षण और उत्कर्षणकी अपेक्षा निक्षेप और अतिस्थापनाका अल्पबहुत्व देकर अर्थपद समाप्त किया गया है।

आगे प्रमाणानुगम, स्वामित्व, एक जीवकी अपेक्षा काल, एक जीवकी अपेक्षा अन्तर, नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचयय, नाना जीवोंकी अपेक्षा काल, नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर, सन्निकर्ष, स्वस्थान अल्पबहुत्व और परस्थान अल्पबहुत्वका निर्देश करके कुछ अनुयोगद्वारोंका आश्रय लेकर भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धिका विचारकर अनुभागसंक्रमप्रकरण समाप्त होता है।

आगे संक्रमस्थानोंको सत्कर्मस्थानोंके अनुसार जाननेकी सूचना कर प्रदेशसंक्रमके विषयमें कहा है कि एक उत्तर प्रकृतिके प्रदेशोंका अन्य सजातीय प्रकृतिमें संक्रमित होना प्रदेशसंक्रम कहलाता है। प्रदेशसंक्रम भी मूलप्रकृतियोंमें न होकर उत्तर प्रकृतियोंमें होता है। तदनुसार उत्तर प्रकृतिसंक्रमके पाँच भेद हैं–उद्वेलनसंक्रम, विध्यातसंक्रम, अधःप्रवृत्त संक्रम, गुणसंक्रम और सर्व-संक्रम। आगे ये संक्रम किस अवस्थामें और कहाँ होते हैं तथा किन प्रकृतियोंके कितने संक्रम होते हैं यह बतला कर इन संक्रमोंके अवहारकालके अल्पबहुत्वका निर्देश किया गया है। आगे

स्वामित्व आदि अनुयोगद्वारोंका आश्रय लेकर भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धिसंक्रमका निर्देश करते हुए इस प्रकरणको समाप्त किया गया है।

१३ लेश्या—लेश्याका निक्षेप चार प्रकारका है-नामलेश्या, स्थापनालेश्या, द्रव्यलेश्या और भावलेश्या। यहाँ इन नामलेश्या आदि निक्षेपोंका स्पष्टीकरण करते हुए तद्व्यतिरिक्त द्रव्यलेश्या के विषयमें लिखा है कि चक्षु इन्द्रियद्वारा ग्राह्य पुद्गलस्कन्धोंके कृष्ण आदि छह वर्णों की द्रव्यलेश्या संज्ञा है। यहाँ इनके उदाहरण भी दिये गये हैं। भावलेश्याके आगम और नोआगम ये भेद करके नोआगम भावलेश्याका वही लक्षण दिया है जो सर्वत्र प्रसिद्ध है। प्रकृतमें नैगमनयकी अपेक्षा नोआगमद्रव्यलेश्या और भावलेश्या प्रकृत है यह कहकर द्रव्यलेश्याके असंख्यात लोकप्रमाण भेद होने पर भी छह भेद ही क्यों किये गये हैं इसका स्पष्टीकरण किया गया है।

आगे शरीरके आश्रयसे किन जीवोंके कौन लेश्या होती है यह बतला कर छह शरीरोंकी द्रव्य लेश्याओंका अलग अलग विचार किया गया है। यद्यपि कृष्णादि द्रव्यलेश्याओंमें एक एक गुणकी मुख्यतासे नामकरण किया जाता है पर इसका यह अभिप्राय नहीं है कि इनमेंसे प्रत्येकमें एक एक गुण ही होता है, इसलिए आगे किस लेश्यामें किस क्रमसे कौन कौन गुण होते हैं इसका स्पष्टीकरण तालिका द्वारा कराया जाता है —

लेश्या नाम	१	२	३	४	५
कृष्णले०	शुक्ल	पीत	लाल	नील	कृष्ण
नीलले०	शुक्ल	पीत	लाल	कृष्ण	नील
कापोतले०	शुक्ल	पीत	कृष्ण	लाल	नील
कापोतले०	शुक्ल	कृष्ण	पीत	नील	लाल
कापोतले०	कृष्ण	शुक्ल	नील	पीत	लाल
पीतले०	कृष्ण	नील	शुक्ल	पीत	लाल
पद्मले०	कृष्ण	नील	शुक्ल	लाल	पीत
पद्मले०	कृष्ण	नील	लाल	शुक्ल	पीत
पद्मले०	कृष्ण	नील	लाल	पीत	शुक्ल
शुक्लले०	कृष्ण	नील	लाल	पीत	शुक्ल

इन लेश्याओंमेंसे जिसमें सर्व प्रथम गुणका निर्देश किया है वह उसमें सबसे स्तोक है और आगेके गुण उस लेश्यामें उत्तरोत्तर अनन्तगुणे हैं। कापोत और पद्मलेश्या तीन तीन प्रकारसे निष्पन्न होती हैं। शेष लेश्याएँ एक ही प्रकारसे निष्पन्न होती हैं। तथा कापोत लेश्यामें द्विस्थानिक अनुभाग होता है और शेष लेश्याओंमें द्विस्थानिक, त्रिस्थानिक और चतुःस्थानिक अनुभाग होता है।

मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योगसे उत्पन्न हुए जीवके संस्कारविशेषका नाम भावलेश्या है। द्रव्यलेश्याके समान ये भी छह प्रकारकी होती हैं। इनमेंसे कापोत लेश्या तीव्र होती है, नीललेश्या तीव्रतर होती है और कृष्णलेश्या तीव्रतम होती है। पीतलेश्या मन्द होती है, पद्मलेश्या मन्दतर होती है और शुक्ललेश्या मन्दतम होती है। ये छहों लेश्याएँ षट्स्थानपतित हानि-वृद्धिको लिए हुए होती हैं। तथा इनमें भी कापोतलेश्या द्विस्थानिक अनुभागको लिए हुए होती है और शेष पाँच लेश्याएँ द्विस्थानिक, त्रिस्थानिक और चतुःस्थानिक अनुभागको लिए हुए होती हैं। इस प्रकार इस अधिकारमें लेश्याओंका उक्त प्रकारसे वर्णन करके अन्तमें तीव्रता और मन्दताकी अपेक्षा अल्पबहुत्व बतला कर यह अधिकार समाप्त किया गया है।

१४ लेश्याकर्म—कृष्णादि लेश्याओंमेंसे जिसके आलम्बनसे मारण और विदारण आदि जिस प्रकारकी क्रिया होती है उसके अनुसार उसका वह लेश्याकर्म माना गया है। उदाहरणार्थं कृष्णलेश्यासे परिणत हुआ जीव निर्दय, कलहशील, रौद्र, अनुबद्धवैर, चोर, चपल, परस्त्रीमें आसक्त, मधु, मांस और सुरामें विशेष रुचि रखनेवाला, जिन शासनके सुननेमें अतत्पर और असंयमी होता है। इसी प्रकार अन्य लेश्याओंका अपने अपने नामानुरूप कर्म जानना चाहिए। इस प्रकार इस अधिकारमें लेश्याकर्मका विचार किया गया है।

१५ लेश्यापरिणाम—कौन लेश्या किस रूपसे अर्थात् किस वृद्धि या हानिरूपसे परिणत होती है इस बातका विचार इस अधिकारमें किया गया है। इसमें बतलाया है कि कृष्णलेश्यामें षट्स्थानपतित संक्लेशकी वृद्धि होने पर उसका अन्य लेश्यामें संक्रमण न होकर स्वस्थानमें ही संक्रमण होता है। मात्र विशुद्धिकी वृद्धि होने पर उसका अन्य लेश्यामें भी संक्रमण होता है और स्वस्थानमें भी संक्रमण होता है। इतना अवश्य है कि कृष्णलेश्यामेंसे नीललेश्यामें आते समय नियमसे अनन्तगुणहानि होती है। नीललेश्यामें संक्लेशकी वृद्धि होने पर स्वस्थानसंक्रमण भी होता है और नीलसे कृष्णलेश्यामें भी संक्रमण होता है। तथा विशुद्धि होने पर स्वस्थान संक्रमण भी होता है और नीललेश्यासे कापोतलेश्यामें भी संक्रमण होता है। मात्र नीललेश्यासे कृष्ण लेश्यामें जाते समय संक्लेशकी अनन्तगुणी वृद्धि होती है और नीलसे कापोत लेश्यामें आते समय संक्लेशकी अनन्तगुणी हानि होती है। इसी प्रकार शेष चार लेश्याओंमें भी परिणामका विचार कर लेना चाहिए। इस प्रकार इस अधिकारमें परिणामका विचार कर तीव्रता और मन्दताकी अपेक्षा संक्रम और प्रतिग्रहके अल्पबहुत्वका विचार करते हुए इस अधिकारको समाप्त किया गया है।

१६ सातासात—इस अनुयोगद्वारका यहाँ पर पाँच अधिकारोंके द्वारा विचार किया गया है। वे पाँच अधिकार ये हैं—समुत्कीर्तना, अर्थपद, पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व। समुत्कीर्तनामें बतलाया गया है कि एकान्त सात और अनेकान्त सातके भेदसे सात दो प्रकारका है। तथा इसी प्रकार एकान्त असात और अनेकान्त असातके भेदसे असात भी दो प्रकारका है। अर्थपदका निर्देश करते हुए बतलाया है कि जो कर्म सातरूपसे बद्ध होकर यथावस्थित रहते हुए वेदा जाता है वह एकान्त सातकर्म है और इससे अन्य अनेकान्त सातकर्म है। इसी प्रकार जो कर्म असातरूपसे बद्ध होकर यथावस्थित रहते हुए वेदा जाता है वह एकान्त असात कर्म है और इससे अन्य अनेकान्त असातकर्म है। पदमीमांसामें इनके उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य पदोंके अस्तित्वकी सूचना मात्र की गई है। स्वामित्वमें इन उत्कृष्ट आदि भेद रूप एकान्त सात आदिके स्वामित्वका निर्देश किया गया है। तथा अन्तमें प्रमाणका विचार कर अल्पबहुत्वका निर्देश करते हुए इस अनुयोगद्वारको समाप्त किया गया है।

१७ दीर्घ-ह्रस्व—इसमें दीर्घको प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशके भेदसे चार प्रकारका बतला कर उनका बन्ध, उदय और सत्त्वकी अपेक्षा विचार किया गया है। सर्व प्रथम मूलप्रकृतिदीर्घके प्रकृतिस्थानदीर्घ और एकैकप्रकृतिस्थानदीर्घ ये दो भेद करके प्रकृतिस्थानका विचार करते हुए बतलाया है कि आठ प्रकृतियोंका बन्ध होने पर प्रकृतिदीर्घ और उनसे न्यून प्रकृतियोंका बन्ध होने पर नोप्रकृतिदीर्घ होता है। इसी प्रकार उदय और सत्त्वकी अपेक्षा प्रकृतिदीर्घ और नोप्रकृतिदीर्घको घटित करके बतला कर उत्तर प्रकृतियोंमेंसे किस मूलकर्मकी उत्तर प्रकृतियोंमें बन्धादिकी अपेक्षा प्रकृतिदीर्घ सम्भव नहीं है और किसकी उत्तर प्रकृतियोंमें प्रकृतिदीर्घ और नोप्रकृतिदीर्घ सम्भव है यह बतलाया गया है। आगे स्थितिदीर्घ, अनुभागदीर्घ और प्रदेशदीर्घको भी बतलाया गया है।

आगे दीर्घके समान ह्रस्वके भी चार भेद करके उनका विचार किया गया है। उदाहरणार्थ बन्धकी अपेक्षा प्रकृतिह्रस्वका निर्देश करते हुए बतलाया है कि एक एक प्रकृतिका बन्ध करनेवालेके प्रकृतिह्रस्व होता है और इससे अधिकका बन्ध करनेवालेके नोप्रकृतिह्रस्व होता है। इस प्रकार मूल और उत्तर प्रकृतियोंका आलम्बन लेकर बन्ध, उदय और सत्त्वकी अपेक्षा दीर्घ और ह्रस्वके विचार करनेमें इस अनुयोगद्वारकी प्रवृत्ति हुई है।

१८ भवधारणीय—इस अनुयोगद्वारमें भवके ओघभव, आदेशभव और भवग्रहणभव ये तीन भेद करके बतलाया है कि आठ कर्म और आठ कर्मोंके निमित्तसे उत्पन्न हुए जीवके परिणामको ओघभव कहते हैं। चार गति नामकर्म और उनसे उत्पन्न हुए जीवके परिणामको आदेशभव कहते हैं। इसके अनुसार आदेशभव चार प्रकारका है—नारक भव, तिर्यञ्चभव, मनुष्यभव और देवभव। तथा भुज्यमान आयु गलकर नई आयुका उदय होने पर प्रथम समयमें उत्पन्न हुए व्यञ्जन संज्ञावाले जीवके परिणामको या पूर्वशरीरका त्याग होकर नूतन शरीरके ग्रहणको भवग्रहणभव कहते हैं। प्रकृतमें भवग्रहणभवका प्रकरण है। यद्यपि जीव अमूर्त है फिर भी उसका कर्मके साथ अनादि सम्बन्ध होनेसे संसार अवस्थामें वह मूर्तभावको प्राप्त हो रहा है, इसलिए अमूर्त जीवका मूर्त कर्मके साथ बन्ध बन जाता है। ऐसा यह जीव शेष कर्मोंके द्वारा न धारण किया जाकर आयुकर्मके द्वारा धारण किया जाता है, अतएव भवधारणीय आयुकर्म ठहरता है। इसका पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्वको आलम्बन लेकर विस्तारसे विचार वेदना अनुयोगद्वारमें किया है, इसलिए उस सब व्याख्यानको वहाँसे जान लेना चाहिए। इस प्रकार भवग्रहणभवके व्याख्यान करनेमें यह अनुयोगद्वार चरितार्थ है।

१९ पुद्गलात्त—इसमें पुद्गलके चार निक्षेप करके प्रकृतमें नोआगमतद्व्यतिरिक्त द्रव्यपुद्गलका विचार करते हुए बतलाया गया है कि पुद्गलात्त अर्थात् पुद्गलोंका आत्मसात्कार छह प्रकारसे होता है—ग्रहणसे, परिणामसे, उपभोगसे, आहारसे, ममत्वसे और परिग्रहसे। इनका खुलासा करते हुए बतलाया है कि हाथ और पैर आदिसे ग्रहण किये गये दण्ड आदि पुद्गल ग्रहणसे आत्तपुद्गल हैं। मिथ्यात्व आदि परिणामोंसे अपने किये गये पुद्गल परिणामसे आत्तपुद्गल हैं। उपभोगसे अपने किये गये गन्ध और ताम्बूल आदि पुद्गल उपभोगसे आत्तपुद्गल हैं। खान-पानके द्वारा अपने किये गये पुद्गल आहारसे आत्तपुद्गल हैं। अनुरागसे ग्रहण किये गये पुद्गल ममत्वसे आत्तपुद्गल हैं और स्वाधीन पुद्गल परिग्रहसे आत्तपुद्गल हैं। इन सबका वर्णन इस अनुयोगद्वारमें किया गया है। अथवा पुद्गलात्तका अर्थ पुद्गलात्मा है। पुद्गलात्मासे रूपादि गुणवाला पुद्गल लिया गया है। अतः उसके गुणोंकी षट्स्थानपतित वृद्धि आदिका इस अनुयोगद्वारमें विचार किया गया है।

मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योगसे उत्पन्न हुए जीवके संस्कारविशेषका नाम भावलेश्या है। द्रव्यलेश्याके समान ये भी छह प्रकारकी होती हैं। उनमेंसे कापोत लेश्या तीव्र होती है, नीललेश्या तीव्रतर होती है और कृष्णलेश्या तीव्रतम होती है। पीतलेश्या मन्द होती है, पद्मलेश्या मन्दतर होती है और शुक्ललेश्या मन्दतम होती है। ये छहों लेश्याएँ षट्स्थानपतित हानि-वृद्धिको लिए हुए होती हैं। तथा इनमें भी कापोतलेश्या द्विस्थानिक अनुभागको लिए हुए होती है और शेष पाँच लेश्याएँ द्विस्थानिक, त्रिस्थानिक और चतुःस्थानिक अनुभागको लिए हुए होती हैं। इस प्रकार इस अधिकारमें लेश्याओंका उक्त प्रकारसे वर्णन करके अन्तमें तीव्रता और मन्दताकी अपेक्षा अल्पबहुत्व बतला कर यह अधिकार समाप्त किया गया है।

१४ लेश्याकर्म—कृष्णादि लेश्याओंमेंसे जिसके आलम्बनसे मारण और विदारण आदि जिस प्रकारकी क्रिया होती है उसके अनुसार उसका वह लेश्याकर्म माना गया है। उदाहरणार्थ कृष्णलेश्यासे परिणत हुआ जीव निर्दय, कलहशील, रौद्र, अनुबद्धवैर, चोर, चपल, परस्त्रीमें आसक्त, मधु, मांस और सुरामें विशेष रुचि रखनेवाला, जिन शासनके सुननेमें अतत्पर और असंयमी होता है। इसी प्रकार अन्य लेश्याओंका अपने अपने नामानुरूप कर्म जानना चाहिए। इस प्रकार इस अधिकारमें लेश्याकर्मका विचार किया गया है।

१५ लेश्यापरिणाम—कौन लेश्या किस रूपसे अर्थात् किस वृद्धि या हानिरूपसे परिणत होती है इस बातका विचार इस अधिकारमें किया गया है। इसमें बतलाया है कि कृष्णलेश्यामें षट्स्थानपतित संक्लेशकी वृद्धि होने पर उसका अन्य लेश्यामें संक्रमण न होकर स्वस्थानमें ही संक्रमण होता है। मात्र विशुद्धिकी वृद्धि होने पर उसका अन्य लेश्यामें भी संक्रमण होता है और स्वस्थानमें भी संक्रमण होता है। इतना अवश्य है कि कृष्णलेश्यामेंसे नीललेश्यामें आते समय नियमसे अनन्तगुणहानि होती है। नीललेश्यामें संक्लेशकी वृद्धि होने पर स्वस्थान-संक्रमण भी होता है और नीलसे कृष्णलेश्यामें भी संक्रमण होता है। तथा विशुद्धि होने पर स्वस्थान संक्रमण भी होता है और नीललेश्यासे कापोतलेश्यामें भी संक्रमण होता है। मात्र नीललेश्यासे कृष्ण लेश्यामें जाते समय संक्लेशकी अनन्तगुणी वृद्धि होती है और नीलसे कापोत लेश्यामें आते समय संक्लेशकी अनन्तगुणी हानि होती है। इसी प्रकार शेष चार लेश्याओंमें भी परिणामका विचार कर लेना चाहिए। इस प्रकार इस अधिकारमें परिणामका विचार कर तीव्रता और मन्दताकी अपेक्षा संक्रम और प्रतिग्रहके अल्पबहुत्वका विचार करते हुए इस अधिकारको समाप्त किया गया है।

१६ सातासात—इस अनुयोगद्वारका यहाँ पर पाँच अधिकारोंके द्वारा विचार किया गया है। वे पाँच अधिकार ये हैं—समुत्कीर्तना, अर्थपद, पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व। समुत्कीर्तनामें बतलाया गया है कि एकान्त सात और अनेकान्त सातके भेदसे सात दो प्रकारका है। तथा इसी प्रकार एकान्त असात और अनेकान्त असातके भेदसे असात भी दो प्रकारका है। अर्थपदका निर्देश करते हुए बतलाया है कि जो कर्म सातरूपसे बद्ध होकर यथावस्थित रहते हुए वेदा जाता है वह एकान्त सातकर्म है और इससे अन्य अनेकान्त सातकर्म है। इसी प्रकार जो कर्म असातरूपसे बद्ध होकर यथावस्थित रहते हुए वेदा जाता है वह एकान्त असात कर्म है और इससे अन्य अनेकान्त असातकर्म है। पदमीमांसामें इनके उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य पदोंके अस्तित्वकी सूचना मात्र की गई है। स्वामित्वमें इन उत्कृष्ट आदि भेद रूप एकान्त सात आदिके स्वामित्वका निर्देश किया गया है। तथा अन्तमें प्रमाणका विचार कर अल्पबहुत्वका निर्देश करते हुए इस अनुयोगद्वारको समाप्त किया गया है।

१७ दीर्घ-ह्रस्व—इसमें दीर्घको प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशके भेदसे चार प्रकारका बतला कर उनका बन्ध, उदय और सत्त्वकी अपेक्षा विचार किया गया है। सर्व प्रथम मूलप्रकृतिदीर्घके प्रकृतिस्थानदीर्घ और एकैकप्रकृतिस्थानदीर्घ ये दो भेद करके प्रकृतिस्थानका विचार करते हुए बतलाया है कि आठ प्रकृतियोंका बन्ध होने पर प्रकृतिदीर्घ और उनसे न्यून प्रकृतियोंका बन्ध होने पर नोप्रकृतिदीर्घ होता है। इसी प्रकार उदय और सत्त्वकी अपेक्षा प्रकृतिदीर्घ और नोप्रकृतिदीर्घको घटित करके बतला कर उत्तर प्रकृतियोंमेंसे किस मूलकर्मकी उत्तर प्रकृतियोंमें बन्धादिकी अपेक्षा प्रकृतिदीर्घ सम्भव नहीं है और किसकी उत्तर प्रकृतियोंमें प्रकृतिदीर्घ और नोप्रकृतिदीर्घ सम्भव है यह बतलाया गया है। आगे स्थितिदीर्घ, अनुभागदीर्घ और प्रदेशदीर्घको भी बतलाया गया है।

आगे दीर्घके समान ह्रस्वके भी चार भेद करके उनका विचार किया गया है। उदाहरणार्थ बन्धकी अपेक्षा प्रकृतिह्रस्वका निर्देश करते हुए बतलाया है कि एक एक प्रकृतिका बन्ध करनेवालेके प्रकृतिह्रस्व होता है और इससे अधिकका बन्ध करनेवालेके नोप्रकृतिह्रस्व होता है। इस प्रकार मूल और उत्तर प्रकृतियोंका आलम्बन लेकर बन्ध, उदय और सत्त्वकी अपेक्षा दीर्घ और ह्रस्वके विचार करनेमें इस अनुयोगद्वारकी प्रवृत्ति हुई है।

१८ भवधारणीय—इस अनुयोगद्वारमें भवके ओघभव, आदेशभव और भवग्रहणभव ये तीन भेद करके बतलाया है कि आठ कर्म और आठ कर्मोंके निमित्तसे उत्पन्न हुए जीवके परिणामको ओघभव कहते हैं। चार गति नामकर्म और उनसे उत्पन्न हुए जीवके परिणामको आदेशभव कहते हैं। इसके अनुसार आदेशभव चार प्रकारका है—नारक भव, तिर्यञ्चभव, मनुष्यभव और देवभव। तथा भुज्यमान आयु गलकर नई आयुका उदय होने पर प्रथम समयमें उत्पन्न हुए व्यञ्जन संज्ञावाले जीवके परिणामको या पूर्वशरीरका त्याग होकर नूतन शरीरके ग्रहणको भवग्रहणभव कहते हैं। प्रकृतमें भवग्रहणभवका प्रकरण है। यद्यपि जीव अमूर्त है फिर भी उसका कर्मके साथ अनादि सम्बन्ध होनेसे संसार अवस्थामें वह मूर्तभावको प्राप्त हो रहा है, इसलिए अमूर्त जीवका मूर्त कर्मके साथ बन्ध बन जाता है। ऐसा यह जीव शेष कर्मोंके द्वारा न धारण किया जाकर आयुकर्मके द्वारा धारण किया जाता है, अतएव भवधारणीय आयुकर्म ठहरता है। इसका पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्वको आलम्बन लेकर विस्तारसे विचार वेदना अनुयोगद्वारमें किया है, इसलिए उस सब व्याख्यानको वहाँसे जान लेना चाहिए। इस प्रकार भवग्रहणभवके व्याख्यान करनेमें यह अनुयोगद्वार चरितार्थ है।

१९ पुद्गलात्त—इसमें पुद्गलके चार निक्षेप करके प्रकृतमें नोआगमतद्व्यतिरिक्त द्रव्यपुद्गलका विचार करते हुए बतलाया गया है कि पुद्गलात्त अर्थात् पुद्गलोंका आत्मसात्कार छह प्रकारसे होता है—ग्रहणसे, परिणामसे, उपभोगसे, आहारसे, ममत्त्वसे और परिग्रहसे। इनका खुलासा करते हुए बतलाया है कि हाथ और पैर आदिसे ग्रहण किये गये दण्ड आदि पुद्गल ग्रहणसे आत्तपुद्गल हैं। मिथ्यात्व आदि परिणामोंसे अपने किये गये पुद्गल परिणामसे आत्तपुद्गल हैं। उपभोगसे अपने किये गये गन्ध और ताम्बूल आदि पुद्गल उपभोगसे आत्तपुद्गल हैं। खान-पानके द्वारा अपने किये गये पुद्गल आहारसे आत्तपुद्गल हैं। अनुरागसे ग्रहण किये गये पुद्गल ममत्त्वसे आत्तपुद्गल हैं और स्वाधीन पुद्गल परिग्रहसे आत्तपुद्गल हैं। इन सबका वर्णन इस अनुयोगद्वारमें किया गया है। अथवा पुद्गलात्तका अर्थ पुद्गलात्मा है। पुद्गलात्मासे रूपादि गुणवाला पुद्गल लिया गया है। अतः उसके गुणोंकी षट्स्थानपतित वृद्धि आदिका इस अनुयोगद्वारमें विचार किया गया है।

२० निधत्त-अनिधत्त—इस अनुयोगद्वारमें बतलाया है कि जिस प्रदेशाग्रका उत्कर्षण और अपकर्षण तो होता है पर उदीरणा और अन्य प्रकृतिरूपसे संक्रमण नहीं होता उसकी निधत्त संज्ञा है। प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशके भेदसे निधत्त भी चार प्रकारका है और अनिधत्त भी चार प्रकारका है। इस विषयमें यह नियम है कि दर्शनमोहनीयकी उपशामना या क्षपणा करते समय मात्र दर्शनमोहनीय कर्म अनिवृत्तिकरणमें अनिधत्त हो जाता है। अनन्तनुबन्धीकी विसंयोजना करते समय मात्र अनन्तानुबन्धीचतुष्क अनिवृत्तिकरणमें अनिधत्त हो जाता है और चारित्रमोहनीयकी उपशामना और क्षपणा करते समय अनिवृत्ति-करण गुणस्थानमें सब कर्म अनिधत्त हो जाते हैं। तथा अपने अपने निर्दिष्ट स्थानके पूर्व दर्शनमोहनीय, अनन्तानुबन्धीचतुष्क और शेष सब कर्म निधत्त और अनिधत्त दोनों प्रकारके होते हैं। यह अर्थपद है, इसके अनुसार चौबीस अनुयोगद्वारोंका आश्रय लेकर इस अनुयोग-द्वारका कथन करना चाहिए।

२१ निकाचित-अनिकाचित—इस अनुयोगद्वारमें बतलाया है कि जिस प्रदेशाग्रका न तो अपकर्षण होता है, न उत्कर्षण होता है, न अन्य प्रकृतिरूपसे संक्रमण होता है और न उदीरणा होती है। जिसके ये चारों नहीं होते उसकी निकाचित संज्ञा है। यह प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशके भेदसे चार प्रकारका है। इसके विषयमें भी यह नियम है कि पूर्वोक्त प्रकार से अनिवृत्तिकरणमें प्रवेश करने पर सब कर्म अनिकाचित हो जाते हैं। किन्तु इसके पूर्व वे निकाचित और अनिकाचित दोनों प्रकारके होते हैं। इन निकाचित और अनिकाचित प्रदेशाग्रोंकी भी चौबीस अनुयोगद्वारोंके आश्रयसे प्ररूपणा करनी चाहिए। यहाँ उपशान्त, निधत्त और निकाचितके सन्निकर्षका कथन करते हुए बतलाया है कि जो प्रदेशाग्र अप्रशस्त उपशामनारूपसे उपशान्त है वह न निधत्त है और न निकाचित है। जो निधत्त प्रदेशाग्र है वह न उपशान्त है और न निकाचित है। तथा जो निकाचित प्रदेशाग्र है वह न उपशान्त है और न निधत्त है। आगे अधःप्रवृत्तसंक्रमके साथ इन तीनोंके अल्पबहुत्वका निर्देश करके यह अनुयोगद्वार समाप्त किया गया है।

२२ कर्मस्थिति—इस अनुयोगद्वारके विषयमें दो उपदेशोंका निर्देश करके यह अनुयोगद्वार समाप्त किया गया है। पहला उपदेश नागहस्तिके मतके अनुसार निर्दिष्ट किया है और दूसरा उपदेश आर्यमंक्षुके मतका निर्देश करता है। नागहस्तिक्षमाश्रमणका कहना है कि कर्मस्थिति अनुयोगद्वारमें कर्मोंकी जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिके प्रमाणका कथन किया जाता है और आर्यमंक्षुका कहना है कि इसमें कर्मस्थितिके भीतर सञ्चित हुए सत्कर्मकी प्ररूपणा की जाती है।

२३ पश्चिमस्कन्ध—इस अनुयोगद्वारमें तीन भवोंमेंसे भवग्रहणभवको प्रकृत बतला कर चरम भवमें जीवके सब कर्मोंकी बन्धमार्गणा, उदयमार्गणा, उदीरणामार्गणा, संक्रममार्गणा और सत्कर्ममार्गणा इन पाँच मार्गणाओंका विचार किया जाता है यह बतलाया गया है। इसके आगे जो जीव सिद्ध होता है उसकी अन्तर्मुहूर्त आयु शेष रह जाने पर तेरहवें गुणस्थानमें कर्मों की और आत्मप्रदेशोंकी किस क्रमसे क्या क्या क्रिया होती है तथा चौदहवें गुणस्थानमें यह जीव किसरूपसे कितने कालतक अवस्थित रहकर कर्मोंसे मुक्त होकर सिद्ध होता है यह बतलाया गया है। इसप्रकार इन सब बातोंका विवेचन करनेके बाद यह अनुयोगद्वार समाप्त किया गया है।

२४ अल्पबहुत्व—इस अनुयोगद्वारके प्रारम्भमें यह सूचना की है कि नागहस्ति भट्टारक इसमें सत्कर्मका विचार करते हैं। वीरसेन स्वामीने इस उपदेशको प्रवृत्तमान बतला कर इसके अनुसार सत्कर्मके प्रकृतिसत्कर्म, स्थितिसत्कर्म, अनुभागसत्कर्म और प्रदेशसत्कर्म ये चार भेद करके सर्वप्रथम मूल और उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा सत्कर्मका विचार किया है। इसमें भी मूल प्रकृतियोंके स्वामित्वकी सूचनामात्र करके उत्तरप्रकृतियोंके स्वामित्वको विस्तारसे बतला कर एक जीवकी अपेक्षा काल, एक जीवकी अपेक्षा अन्तर, नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचय, काल, अन्तर और स्वामित्वको स्वामित्वके बलसे जान लेनेकी सूचना करके स्वस्थान और परस्थान दोनों प्रकारके अल्पबहुत्वोंमें से परस्थान अल्पबहुत्वका ओघसे और चारों गतियोंके साथ असंज्ञी मार्गणामें विचार किया है। भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धि यहाँ पर नहीं हैं, अतः इनके विषयमें इतनी मात्र सूचना देकर प्रकृतिस्थानसत्कर्मके विषयमें लिखा है कि मोहनीयका कषायप्राभृतके अनुसार जानना चाहिए और शेष कर्मोंकी प्रकृतिस्थानप्ररूपणा सुगम है।

स्थितिसत्कर्मका विचार करते हुए मूलप्रकृतिस्थितिसत्कर्मका वर्णन सुगम कहकर उत्तर प्रकृतियोंके स्थितिसत्कर्मका जघन्य और उत्कृष्ट अद्धाच्छेद तथा जघन्य और उत्कृष्ट स्वामित्वका विस्तारसे विचार कर तथा एक जीवकी अपेक्षा काल आदि अनुयोगद्वारोंको स्वामित्वके बलसे जाननेकी सूचनामात्र करके अल्पबहुत्व दिया गया है।

यहाँ पर अद्धाच्छेदका विचार करते हुए 'जट्ठिदि' और 'जाओ ट्ठिदीओ' ये शब्द आये हैं। प्रायः अनेक स्थानों पर 'जं ट्ठिदि' भी मुद्रित है। पर उससे 'जट्ठिदि'का ही ग्रहण करना चाहिए। इन शब्दों द्वारा दो प्रकारकी स्थितियोंका निर्देश किया गया है। 'जट्ठिदि' शब्द 'यत्स्थिति' का द्योतक है और 'जाओ ट्ठिदीओ'से स्थितिगत निषेकोंका परिमाण लिया गया है। उदाहरणस्वरूप पाँच निद्राओंकी उत्कृष्ट यत्स्थिति पूरी तीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण बतलाई है और निषेकोंके अनुसार स्थितियाँ एक समय कम तीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण बतलाई हैं। अभिप्राय इतना है कि पाँच निद्राओंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होते समय उदय नहीं होता, इसलिए पूरी स्थिति तीस कोड़ाकोड़ी सागर होकर भी उस समय सब निषेक एक कम तीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण होते हैं, क्योंकि अनुदयवाली प्रकृतियोंका एक निषेक उदय समयके पूर्व स्तिवुक संक्रमणके द्वारा अन्य प्रकृतिरूप परिणत होता रहता है, इसलिए इनकी यत्स्थिति तीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण होकर भी निषेकोंके अनुसार स्थिति एक समय कम होती है। यहाँ बन्धके समय आबाधा कालके भीतर प्राक्तनबद्ध कर्मोंके निषेकका सत्त्व होनेसे एक समय कम तीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण निषेक बन जाते हैं इतना विशेष जानना चाहिए। यहाँ पर विशेष नियम इस प्रकार जानना चाहिए—

१—जिन कर्मोंका स्वोदयसे स्थितिबन्ध होता है उनकी यत्स्थिति और निषेकोंके परिमाणके अनुसार स्थिति समान होती है। बन्धोत्कृष्ट स्थितिके समान ही उनका दोनों प्रकारका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म होता है।

२—जिन कर्मोंका परोदयमें उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होता है उनकी उत्कृष्ट यत्स्थिति तो बन्धोत्कृष्ट स्थितिके ही समान होती है। मात्र निषेकोंके परिमाणके अनुसार उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म बन्धोत्कृष्ट स्थितिसे एक समय कम होता है।

३—जिन कर्मोंका स्वोदयमें उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमसे उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म प्राप्त होता है उनकी उत्कृष्ट यत्स्थितिसत्कर्म और निषेकोंके परिमाणके अनुसार उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म तज्जातीय कर्मके उत्कृष्ट स्थितिबन्धसे एक आवलि कम होता है। मात्र सम्यक्त्वका उक्त दोनों प्रकारका

उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म अन्तर्मुहूर्त कम जानना चाहिए, क्योंकि मिथ्यात्व गुणस्थानमें मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होकर अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्व प्राप्त होनेपर मिथ्यात्वकी अन्तर्मुहूर्त कम उत्कृष्ट स्थितिका सम्यक्त्वरूपसे संक्रमण होता है।

४—जिन कर्मोंका परोदयमें उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमसे उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म प्राप्त होता है उनकी उत्कृष्ट यत्स्थिति तज्जातीय कर्मके उत्कृष्ट स्थितिबन्धसे एक आवलि कम होती है और निषेकोंके परिमाणके अनुसार उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म तज्जातीय कर्मके उत्कृष्ट स्थितिबन्धसे एक समय अधिक एक आवलि कम होता है। मात्र सम्यग्मिथ्यात्वका उक्त दोनों प्रकारका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म मिथ्यात्वके उत्कृष्ट स्थितिबन्धसे अन्तर्मुहूर्त कम जानना चाहिए। कारणका कथन स्पष्ट है।

५—चारों आयुओंका उत्कृष्ट अबाधा काल सहित उत्कृष्ट स्थितिबन्ध उत्कृष्ट यत्स्थिति-सत्कर्म होता है और अपने अपने निषेकोंके परिमाणके अनुसार निषेकगत उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म होता है।

इसीप्रकार जघन्य स्थितिसत्कर्मके विषयमें भी अलग अलग प्रकृतियोंको ध्यानमें रखकर नियम घटित कर लेने चाहिए।

अनुभागसत्कर्मका विचार करते हुए पहले क्रमसे स्पर्धकप्ररूपणा, घातिसंज्ञा और स्थान-संज्ञाका प्ररूपण करके जघन्य और उत्कृष्ट स्वामित्व और कुछ मार्गणाओंमें अल्पबहुत्वका विचार किया गया है।

अनुभागसत्कर्मके पश्चात् प्रदेश उदीरणाके आश्रयसे अल्पबहुत्व बतलाते हुए मूल और उत्तर प्रकृतियोंका आलम्बन लेकर वह बतलाया गया है। आगे उत्तरप्रकृतिसंक्रम, मोहनीय सम्बन्धी प्रकृतिस्थानसंक्रम, जघन्य स्थितिसंक्रम, अनुभागसंक्रम, जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिके आश्रयसे प्रदेशसंक्रम और स्वतन्त्ररूपसे प्रदेशसंक्रमके अल्पबहुत्वका विचार करके प्रदेशसंक्रम अधिकारको पूर्ण किया गया है।

इसके पश्चात् पहले कहे गये लेश्या, लेश्यापरिणाम, लेश्याकर्म, सात-असात, दीर्घ-ह्रस्व, भवधारण, पुद्गलात्त, निधत्त-अनिधत्त, निकाचित-अनिकाचित, कर्मस्थिति और पश्चिमस्कन्ध इन अनुयोगद्वारोंका पुनः पृथक्-पृथक् उल्लेख करके अलग अलग सूचनाएँ दी गई हैं। अन्तमें महावाचक क्षमाश्रमणके अभिप्रायानुसार अल्पबहुत्व अनुयोगद्वारके आश्रयसे सत्कर्मका विचार करते हुए उत्तरप्रकृतिसत्कर्म अल्पबहुत्वदण्डक, मोहनीय प्रकृतिस्थानसत्कर्म अल्पबहुत्व, उत्तर-प्रकृतिस्थितिसत्कर्म अल्पबहुत्व, उत्तरप्रकृतिअनुभागसत्कर्म अल्पबहुत्व और उत्तरप्रकृतिप्रदेश-सत्कर्म अल्पबहुत्व देकर अल्पबहुत्वके साथ चौबीस अनुयोगद्वार समाप्त करनेके साथ धवला समाप्त होती है।

विषय-सूची

मोक्खादि-सेस-अणियोगद्दाराणि

११

मोक्खाणियोगद्दारं

महुवरमहुवरवाउलवियसियसियसुरहिगंधमल्लेहि ।
मल्लिजिणमच्चियूण य मोक्खणियोगो परूवेमो ॥१॥

मोक्खे त्ति अणियोगद्दारे मोक्खो णिक्खिवियव्वो— णाममोक्खो ट्ठवणमोक्खो दव्वमोक्खो भावमोक्खो चेदि मोक्खो चउव्विहो । णाममोक्खो ट्ठवणमोक्खो आगमदो दव्वमोक्खो आगम-णोआगमभावमोक्खो च सुगमो । जो सो णोआगमदो दव्व-मोक्खो[1] सो दुविहो कम्ममोक्खो णोकम्ममोक्खो चेदि । णोकम्ममोक्खो सुगमो । कम्मदव्वमोक्खो चउव्विहो पयडिमोक्खो ट्ठिदिमोक्खो अणुभागमोक्खो पदेसमोक्खो चेदि । पयडिमोक्खो दुविहो मूलपयडिमोक्खो उत्तरपयडिमोक्खो चेदि । तत्थ एक्केक्को दुविहो देसमोक्खो सव्वमोक्खो चेदि । तत्थ अट्ठपदं— जा पयडी णिज्जरिज्जदि अण्णपयडिं वा संकामिज्जदि एसो पयडिमोक्खो णाम[2] । एसो पयडिमोक्खो सुगमो, पयडिउदय-पयडिसंकमेसु अंतब्भावादो । ठिदिमोक्खो दुविहो उक्कस्सो जहण्णो चेदि । एत्थ अट्ठपदं । तं जहा— ओकड्डिदा वि उक्कड्डिदा वि अण्णपयडिं संकामिदा

मधुको करनेवाले भ्रमरोंसे व्याकुल ऐसे विकसित, धवल और सुगन्धित पुष्पोंके द्वारा मल्लि जिनेन्द्रकी पूजा करके मोक्ष-अनुयोगद्वारकी प्ररूपणा करते हैं ॥१॥

मोक्ष इस अनुयोगद्वारमें मोक्षका निक्षेप करना चाहिये— वह मोक्ष नाममोक्ष, स्थापना-मोक्ष, द्रव्यमोक्ष और भावमोक्षके भेदसे चार प्रकारका है। इनमें नाममोक्ष, स्थापनामोक्ष, आगमद्रव्यमोक्ष, आगमभावमोक्ष और नोआगमभावमोक्ष; ये सुगम हैं । जो नोआगमद्रव्यमोक्ष है वह दो प्रकारका है— कर्ममोक्ष और नोकर्ममोक्ष । इनमें नोकर्ममोक्ष सुगम है । कर्मद्रव्यमोक्ष चार प्रकारका है— प्रकृतिमोक्ष, स्थितिमोक्ष, अनुभागमोक्ष और प्रदेशमोक्ष । प्रकृतिमोक्ष दो प्रकारका है— मूलप्रकृतिमोक्ष और उत्तरप्रकृतिमोक्ष । उनमें प्रत्येक देशमोक्ष और सर्वमोक्षके भेदसे दो प्रकारका है । उनमें अर्थपद बतलाते हैं— जो प्रकृति निर्जराको प्राप्त होती है अथवा अन्य प्रकृतिमें सक्रान्त होती है, यह प्रकृतिमोक्ष कहलाता है । यह प्रकृतिमोक्ष सुगम है, क्योंकि, उसका अन्तर्भाव प्रकृति-उदय और प्रकृतिसंक्रममें होता है । स्थितिमोक्ष उत्कृष्ट और जघन्यके भेदसे दो प्रकारका है । यहां अर्थपद बतलाते हैं । वह इस प्रकार है— अपकर्षणको प्राप्त हुई,

१ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-का-ताप्रतिषु 'णोआगमदव्वमोक्खो' इति पाठः । २ मप्रतिपाठोऽयम् । अप्रतौ 'णाम सो सुगमो पयडि', काप्रतौ 'णाम पयडि', ताप्रतौ 'णाम एसो सुगमो, पयडि' इति पाठः ।

वि अधट्ठिदीए[1] णिज्जरिदा वि ट्ठिदी ट्ठिदिमोक्खो[2]। एदेण अट्ठपदेण उक्कस्साणुक्कस्स-जहण्णाजहण्णट्ठिदिमोक्खो परूवेयव्वो। अणुभागमोक्खे[3] अट्ठपदं। तं जहा— ओकड्डिदो उक्कड्डिदो अण्णपयडिं संकामिदो अधट्ठिदिं[4]गलणाए णिज्जिण्णो वा अणुभागो अणुभाग-मोक्खो। एदेण अट्ठपदेण उक्कस्साणुक्कस्स-जहण्णाजहण्णअणुभागमोक्खो परूवेयव्वो। पदेसमोक्खे[5] अट्ठपदं। तं जहा— अधट्ठिदिं[6]गलणाए पदेसाणं णिज्जरा पदेसाणमण्ण-पयडीसु संकमो वा पदेसमोक्खो णाम। एसो वि उक्कस्साणुक्कस्स-जहण्णाजहण्ण-भेदेण णेयव्वो।

णोकम्मदव्वमोक्खो सुगमो। अथवा, णोआगमदो दव्वमोक्खो मोक्खो मोक्ख-कारणं मुत्तो चेदि तिविहो। जीव-कम्माणं वियोगो मोक्खो णाम। णाण-दंसण-चर-णाणि मोक्खकारणं। सयलकम्मवज्जियो अणंतणाण-दंसण-वीरिय-चरण-सुह-सम्मत्तादि-गुणगणाइण्णो णिरामओ णिरंजणो णिच्चो कयकिच्चो मुत्तो णाम। एदेसिं तिण्णं पि णिक्खेव-णय-णिरुत्तिअणियोगद्दारेहि हेउगब्भेहि परूवणा कायव्वा। एवं कदे मोक्खणि-ओगद्दारं समत्तं होदि।

उत्कर्षणको प्राप्त हुई, अन्य प्रकृतिमें संक्रान्त हुई, और अधःस्थितिके गलनेसे निर्जराको भी प्राप्त हुई स्थितिका नाम स्थितिमोक्ष है। इस अर्थपदके आश्रयसे उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य स्थितिमोक्षकी प्ररूपणा करना चाहिये। अनुभागमोक्षके सम्बन्धमें अर्थपदका कथन करते हैं। वह इस प्रकार है— अपकर्षणको प्राप्त हुआ, उत्कर्षणको प्राप्त हुआ, अन्य प्रकृतिमें संक्रान्त हुआ, और अधःस्थितिगलनके द्वारा निर्जराको भी प्राप्त हुए अनुभागको अनुभागमोक्ष कहा जाता है। इस अर्थपदके आश्रयसे उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य अनुभागमोक्षकी प्ररूपणा करना चाहिये। प्रदेशमोक्षके विषयमें अर्थपद कहते हैं। वह इस प्रकार है— अधःस्थितिगलनके द्वारा जो प्रदेशोंकी निर्जरा और प्रदेशोंका अन्य प्रकृतियोंमें संक्रमण होता है उसे प्रदेशमोक्ष कहा जाता है। इसको भी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्यके भेदसे ले जाना चाहिये।

नोकर्मद्रव्यमोक्ष सुगम है। अथवा नोआगमद्रव्यमोक्ष मोक्ष, मोक्षकारण और मुक्तके भेदसे तीन प्रकारका है। जीव और कर्मका पृथक् होना मोक्ष कहलाता है। ज्ञान, दर्शन और चरित्र ये मोक्षकारण हैं। समस्त कर्मोंसे रहित; अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्तवीर्य, चारित्र, सुख और सम्यक्त्व आदि गुणगणोंसे परिपूर्ण; निरामय, निरंजन, नित्य और कृतकृत्य जीवको मुक्त कहा जाता है। इन तीनोंकी ही प्ररूपणा हेतुगर्भित निक्षेप, नय और निरुक्ति अनुयोगद्वारोंसे करना चाहिये। ऐसा करनेपर मोक्ष-अनुयोगद्वार समाप्त होता है।

---

१ ताप्रतौ 'अवट्ठिदा वि' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'वि ट्ठिदी ए (ट्ठि) दिमोक्खो' इति पाठः। ३ अ-काप्रत्योः 'अणुभागमोक्खो', ताप्रतौ 'अणुभागमोक्खो (क्खे)' इति पाठः। ४ अ-ताप्रत्योः 'अवट्ठिदि' इति पाठः। ५ काप्रतौ 'पदेसमोक्खो' इति पाठः। ६ अ-ताप्रत्योः 'अवट्ठिदि' इति पाठः।

संकमाणियोगद्दारं

मुणिसुव्वयदेसयरं पणमिय मुणिसुव्वयं जिणं देवं ।
संकममणिओगमिणं जहासुअं वण्णइस्सामो ॥१॥

संकमे त्ति अणिओगद्दारे संकमो णिक्खिवियव्वो । तं जहा— णामसंकमो ट्ठवणसंकमो दवियसंकमो खेत्तसंकमो कालसंकमो भावसंकमो चेदि छव्विहो संकमो । तत्थ संकमसद्दो णामसंकमो णाम । सो एसो त्ति अण्णस्स सरूवं बुद्धीए णिधत्तो ट्ठवणसंकमो णाम । दवियसंकमो दुविहो आगम-णोआगमदवियसंकमो चेदि । आगमदवियसंकमो सुगमो । णोआगमदवियसंकमो जाणुगसरीर-भविय-तव्वदिरित्तदवियसंकमभेदेण तिविहो । जाणुगसरीर-भवियदव्वसंकमा सुगमा । तव्वदिरित्तसंकमो दुविहो णोकम्मसंकमो कम्मसंकमो चेदि । णोकम्मसंकमो जहा मट्टियाए घडसरूवेण परिणामो । कम्म-संकमो थप्पो ।

एगक्खेत्तस्स खेत्तंतरगमणं खेत्तसंकमो णाम । किरियाविरहिदस्स खेत्तस्स कधं संकमो ? ण, जीव-पोग्गलाणं सकिरियाणं आधेये आधारोवयारेण लद्धखेत्तववएसाणं संकमुवलंभादो । ण च खेत्तस्स संकमववहारो अप्पसिद्धो, उड्ढलोगो[1] संकंतो त्ति

मुनियोंके उत्तम चरित्रका उपदेश करनेवाले मुनिसुव्रत जिनेन्द्रको नमस्कार करके श्रुतके अनुसार संक्रम-अनुयोगद्वारका वर्णन करते हैं ॥ १ ॥

संक्रम इस अनुयोगद्वारमें संक्रमका निक्षेप किया जाता है। वह इस प्रकारसे— नामसंक्रम, स्थापनासंक्रम, द्रव्यसंक्रम, क्षेत्रसंक्रम, कालसंक्रम और भावसंक्रमके भेदसे संक्रम छह प्रकारका है। उनमें 'संक्रम' यह शब्द नामसंक्रम कहलाता है। 'वह यह है' इस प्रकार अन्यके स्वरूपको बुद्धिमें स्थापित करना, यह स्थापनासंक्रम है। द्रव्यसंक्रम दो प्रकारका है— आगमद्रव्यसंक्रम और नोआगमद्रव्यसंक्रम। इनमें आगमद्रव्यसंक्रम सुगम है। नोआगमद्रव्यसंक्रम ज्ञायकशरीर, भव्य और तद्व्यतिरिक्त द्रव्यसंक्रमके भेदसे तीन प्रकार है। इनमें ज्ञायकशरीर और भव्य द्रव्यसंक्रम सुगम हैं। तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यसंक्रम दो प्रकारका है— नोकर्मसंक्रम और कर्मसंक्रम। नोकर्मसंक्रम— जैसे मिट्टीका घट स्वरूपसे परिणमन। कर्मसंक्रमको अभी स्थगित किया जाता है।

एक क्षेत्रके क्षेत्रान्तरको प्राप्त होनेका नाम क्षेत्रसंक्रम है।

शंका— क्षेत्र तो क्रियासे रहित है, फिर उसका क्षेत्रान्तरमें गमन कैसे सम्भव है ?

समाधान— नहीं, क्योंकि आधेयमें आधारका उपचार करनेसे सक्रिय जीव और पुद्गलोंकी 'क्षेत्र' संज्ञा सम्भव है और उनका संक्रम पाया ही जाता है। दूसरे, क्षेत्रके संक्रमका व्यवहार अप्रसिद्ध भी नहीं है, क्योंकि, ऊर्ध्वलोक संक्रान्त हुआ, ऐसा व्यवहार पाया जाता है।

१ अ-काप्रत्योः 'वद्ध', ताप्रतौ 'व (ल) द्ध' इति पाठः ।

ववहारुवलंभादो । कालस्सपुव्वस्स पादुब्भावो कालसंकमो णाम । ण च एसो असिद्धो, संकंतो हेमंतो त्ति[1] ववहारुवलंभादो । संपहि उप्पण्णस्स कधं संकमो ? ण, पोग्गलाणं उप्पाद-वय-धुवभावाणमुवयारेण पत्तकालववएसाणं एयंतेण उप्पादाभावादो । अधवा, एगक्खेत्तम्हि ट्ठिददव्वस्स खेत्तंतरगमणं खेत्तसंकमो । एगकालम्मि ट्ठिददव्वस्स कालंतरगमणं कालसंकमो । कोधादिएगभावम्हि ट्ठिददव्वस्स भावंतरगमणं भावसंकमो ।

तत्थ कम्मसंकमे पयदं । सो चउव्विहो पयडिसंकमो ट्ठिदिसंकमो अणुभागसंकमो पदेससंकमो चेदि । तत्थ पयडिसंकमे अट्ठपदं– जा पयडी अण्णपयडिं णिज्जदि एसो पयडिसंकमो । एदेण अट्ठपदेण संकमे भण्णमाणे तत्थ मूलपयडिसंकमो णत्थि । कुदो ? साभावियादो । उत्तरपयडिसंकमे[2] सामित्तं– बंधे संकमो, अबंधे णत्थि । कुदो ? साभावियादो ।

पंचण्णं णाणावरणीयाणं संकामओ[3] को होदि ? अण्णदरो सकसाओ ? णवण्णं दंसणावरणीयाणं पंचण्णमंतराइयाणं च णाणावरणभंगो । सादस्स संकामओ[4] को होदि ? जो असादस्स बंधओ । असादस्स संकामओ को होदि ? जो सादस्स बंधओ

अपूर्व कालके प्रादुर्भावका नाम कालसंक्रम है । यह असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि हेमन्त ऋतु संक्रान्त हुई, ऐसा व्यवहार पाया जाता है ।

शंका— उत्पन्नका संक्रम कैसे हो सकता है ?

समाधान— नहीं, क्योंकि उपचारसे काल संज्ञाको प्राप्त हुए पुद्गलोंके उत्पाद, व्यय और ध्रौव्यके एकान्ततः उत्पादका अभाव है । अथवा एक क्षेत्रमें स्थित द्रव्यके क्षेत्रान्तर गमनको क्षेत्रसंक्रम, एक कालमें स्थित द्रव्यके कालान्तर गमनको कालसंक्रम, और क्रोधादिक एक किसी भावमें स्थित द्रव्यके भावान्तर गमनको भावसंक्रम समझना चाहिये ।

उनमें यहां कर्मसंक्रम प्रकृत है । वह चार प्रकारका है— प्रकृतिसंक्रम, स्थितिसंक्रम, अनुभागसंक्रम और प्रदेशसंक्रम । इनमेंसे प्रकृतिसंक्रमके विषयमें अर्थपदका कथन करते हैं— जो एक प्रकृति अन्य प्रकृतिस्वरूपताको प्राप्त करायी जाती है, यह प्रकृतिसंक्रम कहलाता है । इस अर्थपदके अनुसार संक्रमका कथन करनेपर मूलप्रकृतिसंक्रम सम्भव नहीं है, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है । उत्तरप्रकृतिसंक्रममें स्वामित्वकी प्ररूपणा की जाती है— बन्धके होनेपर संक्रम सम्भव है, बन्धके अभावमें वह सम्भव नहीं है, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है ।

पांच ज्ञानावरणीय प्रकृतियोंका संक्रामक कौन होता है ? उनका संक्रामक अन्यतर सकषाय जीव होता है । नौ दर्शनावरणीय और पांच अन्तरायके संक्रमणकी प्ररूपणा ज्ञानावरणके समान है । सातवेदनीयका संक्रामक कौन होता है ? जो असाताका बन्धक है वह साताका संक्रामक होता है । असाताका संक्रामक कौन होता है ? जो सकषाय जीव साताका बन्धक होता

---

१ काप्रतौ 'णाम एसो असिद्धो संकंतो होंतो त्ति' इति पाठः । २ अ-काप्रत्योः 'संकमो', ताप्रतौ 'संकमो (मे)' इति पाठः । ३ अप्रतौ 'संकमओ', का-ताप्रत्योः 'संकमो' इति पाठः । ४ मप्रतौ 'संकमओ' इति पाठः ।

सकसाओ । दंसणमोहणीयं चरित्तमोहणीए ण संकमदि, चरित्तमोहणीयं पि दंसणमोहणीए ण संकमदि[1] । कुदो ? साभावियादो । सम्मामिच्छाइट्ठी दंसणमोहणीयस्स असंकामगो । एवं सासणो वि[2] । सम्मत्तस्स णियमा मिच्छाइट्ठी संकामगो जस्स आवलिकावाहिरसंतकम्ममत्थि । मिच्छत्तस्स संकामओ को होदि ? सम्माइट्ठी जस्स आवलियवाहिरं मिच्छत्तस्स संतकम्ममत्थि । सम्मामिच्छत्तस्स संकामगो को होदि ? सम्माइट्ठी मिच्छाइट्ठी वा जस्स आवलियवाहिरं संतकम्ममत्थि । वारसण्णं कसायाणं णाणावरणभंगो । इत्थिवेदस्स संकामओ को होदि ? जाव इत्थिवेदो चरिमसमयअणुवसंतो चरिमसमयअक्खीणो वा । णवुंसयवेदस्स इत्थिवेदभंगो । पुरिसवेदस्स संकामगो को होदि ? जाव पुरिसवेदो पढमसमयउवसंतो पढमसमयखीणो वा । तिण्णं संजलणाणं[3] पुरिसवेदभंगो । लोहसंजलणाए संकामओ को होदि ? उवसामया खवगा च, जाव अंतरं चरिमसमयअकदं ति अक्खवय-अणुवसामओ च ।

चदुण्णमाउआणं संकमो णत्थि । कुदो ? साभावियादो । सव्वासिं पि णामपयडीणं

है । दर्शनमोहनीय चारित्रमोहनीयमें संक्रान्त नहीं होती और चारित्रमोहनीय भी दर्शनमोहनीयमें सक्रान्त नहीं होती, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है । सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव दर्शनमोहनीयका असंक्रामक होता है । इसी प्रकार सासादनसम्यग्दृष्टि भी दर्शनमोहनीयका असंक्रामक होता है । सम्यक्त्व-प्रकृतिका संक्रामक नियमसे मिथ्यादृष्टि जीव होता है, जिसके कि उसका सत्कर्म आवलीके वाहिर होता है । मिथ्यात्वका संक्रामक कौन होता है ? उसका संक्रामक सम्यग्दृष्टि होता है, जिसके मिथ्यात्वका सत्कर्म आवलीके वाहिर होता है । सम्यग्मिथ्यात्वका संक्रामक कौन होता है ? उसका संक्रामक सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टि होता है, जिसके उसका सत्कर्म आवलीके वाहिर होता है । वारह कषायोंके संक्रमणकी प्ररूपणा ज्ञानावरणके समान है । स्त्रीवेदका संक्रामक कौन होता है ? स्त्रीवेदके अनुपशान्त रहनेके अन्तिम समय तक अथवा उसके अक्षीण रहनेके अन्तिम समय तक जीव उसका संक्रामक होता है । नपुंसकवेदके संक्रमणकी प्ररूपणा स्त्रीवेदके समान है । पुरुषवेदका संक्रामक कौन होता है ? पुरुषवेदके उपशान्त होनेके प्रथम समय तक अथवा उसके क्षीण होनेके प्रथम समय तक जीव उसका संक्रामक होता है । तीन संज्वलनोंके संक्रमणकी प्ररूपणा पुरुषवेदके समान है । संज्वलन लोभका संक्रामक कौन होता है ? उसके संक्रामक उपशामक और क्षपक जीव होते हैं, अन्तर न किये जानेके अन्तिम समय तक अक्षपक व अनुपशामक जीव भी उसके संक्रामक होते हैं ।

चार आयु कर्मोंका संक्रम नहीं होता, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है । यशकीर्तिको छोड़कर

---

१ मोहदुगाउग-मूलपयडीण न परोप्परंमि संकमणं । संकम-बंधुदउव्वट्टणा (णव) लिगाईणकरणाइं ॥ क. प्र. २, ३. २ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-का-ताप्रतिषु 'सामगो वि' इति पाठः । तथा सासादनाः सम्यग्मिथ्यादृष्टयश्च न किमपि दर्शनमोहनीयं क्वापि संक्रमयन्ति, अविशुद्धदृष्टित्वात् । बन्धाभावे हि दर्शनमोहनीयस्स संक्रमो विशुद्धदृष्टेरेव भवति, नाविशुद्धदृष्टेः । क. प्र. (मलय.) २, ३. ३ ताप्रतौ 'तिसंजलणाणं' इति पाठः ।

जसकित्तिवज्जाणं ताव संकमो जाव सकसाओ जाव आवलियबाहिरं च संतकम्ममत्थि। जसकित्तीए ताव संकामगो जाव परभवियणामपयडीणं बंधदि। उच्चागोदस्स संकामओ को होदि? जो णीचागोदस्स बंधओ जाव आवलियबाहिरं संतकम्ममत्थि। णीचागोदस्स संकामओ को होदि? जो उच्चागोदस्स बंधओ सकसाओ। एवं सामित्तं समत्तं।

एयजीवेण कालो— पंचणाणावरणीय-णवदंसणावरणीय-पणुवीसमोहणीय-अणुव्वेल्लमाणसव्वणामपयडीणं[1] पंचंतराइयाणं च संकमो केवचिरं कालादो होदि? अणादिओ अपज्जवसिदो अणादिओ सपज्जवसिदो सादिओ सपज्जवसिदो वा। जो सो सादिओ सपज्जवसिदो जहण्णेण अंतोमुहुत्तं, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। सादासादाणं जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं। मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० बेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। णवरि मिच्छत्तस्स छावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि। सम्मत्तस्स जह० अंतोमुहुत्तं, उक्कस्सेण पलिदो० असंखे० भागो।

णिरयगइ-देवगइणामाणं तदाणुपुव्वीणामाणं वेउव्वियसरीर-वेउव्वियसरीरअंगोवंग-बंधण-संघादाणं च जह० अट्ठवस्साणि सादिरेयाणि अंतोमुहुत्तं वा, उक्क० बेसागरोवमसहस्साणि सादिरेयाणि। मणुसगइ-मणुसगइपाओग्गाणुपुव्वीणं जह० अट्ठवस्साणि

शेष सभी नामप्रकृतियोंका तब तक संक्रम होता है जब तक कि जीव सकषाय है और जब तक उनका सत्कर्म आवलीके बाहिर रहता है। यशकीर्तिका संक्रामक तब तक होता है जब तक परभविक नामप्रकृतियोंको बांधता है। उच्चगोत्रका संक्रामक कौन होता है? जो नीचगोत्रका बन्धक होता है वह उच्चगोत्रका तब तक संक्रामक होता है जब तक उसका आवलीके बाहिर सत्कर्म रहता है। नीचगोत्रका संक्रामक कौन होता है? जो सकषाय जीव उच्चगोत्रका बन्धक होता है वह नीचगोत्रका संक्रामक होता है। इस प्रकार स्वामित्व समाप्त हुआ।

एक जीवकी अपेक्षा कालकी प्ररूपणा की जाती है— पांच ज्ञानावरणीय, नौ दर्शनावरणीय, पच्चीस मोहनीय, उद्वेलित न की जानेवाली सब नाम प्रकृतियां और पांच अन्तराय; इनका संक्रमण कितने काल होता है? उनके संक्रमणका काल अनादि-अपर्यवसित, अनादि-सपर्यवसित और सादि-सपर्यवसित भी है। इनमें जो सादि-सपर्यवसित है उसका प्रमाण जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन है। साता व असाता वेदनीयके संक्रमणका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे अन्तमुहूर्त मात्र है। मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रमणका काल जघन्यसे अन्तमुहूर्त और उत्कर्षसे कुछ अधिक दो छयासठ सागरोपम मात्र है। विशेष इतना है कि मिथ्यात्वका वह काल साधिक छयासठ सागरोपम मात्र है। सम्यक्त्व प्रकृतिके संक्रमणका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है।

नरकगति, देवगति, नरकगत्यानुपूर्वी, देवगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकशरीरांगोपांग, वैक्रियिकबन्धन और वैक्रियिकसंघात नामकर्मोंके संक्रमणका काल जघन्यसे साधिक आठ वर्ष या अन्तर्मुहूर्त, और उत्कर्षसे साधिक दो हजार सागरोपम मात्र है। मनुष्यगति और मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वीके संक्रमणका काल जघन्यसे साधिक आठ वर्ष या अन्तर्मुहूर्त और

---

१ अ-काप्रत्योः 'पयडि' इति पाठः।

सादिरेयाणि अंतोमुहुत्तं वा, उक्क० असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । उच्चागोदस्स जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० तेत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि । आहारससरीर-आहारसरीरअंगोवंग-बंधण-संघादाणं जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० पलिदो० असंखे० भागो । तित्थयरणामाए जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि सादिरेयाणि । णीचागोदस्स जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० बेछावट्ठिसागरोवमाणि तिहि पलिदोवमेहि अब्भहियाणि । एवं कालो समत्तो ।

अंतरं— जेसिं कम्माणं तिभंगीयो कालो तेसिं जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं । एवं सादासादाणं । वेउव्वियछक्कस्स जह० एगसमओ, उक्क० असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । मणुसगइ-मणुसगइपाओग्गाणुपुव्वी-उच्चा-णीचागोदाणं जह० एगसमओ, उक्क० असंखेज्जा लोगा । आहारसरीर-आहारसरीरअंगोवंग-बंधण- संघादाणं जह० एगसमओ, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । तित्थियरणामाए सादभंगो । सम्मत्त-मिच्छत्ताणं जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । एवं सम्मामिच्छत्तस्स । णवरि जह० एगसमओ । अणंताणुबंधिचउक्क० जह० अंतोमु०, उक्क० बेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि । एवं अंतरपरूवणा समत्ता ।

उत्कर्पसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र है । उच्चगोत्रके संक्रमणका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्पसे साधिक तेतीस सागरोपम मात्र है । आहारकशरीर, आहारकशरीरांगोपांग, आहारकबन्धन और आहारकसंघातके संक्रमणका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्पसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है । तीर्थंकर नामकर्मके संक्रमणका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्पसे साधिक तेतीस सागरोपम मात्र है । नीचगोत्रके संक्रमणका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्पसे तीन पल्योपम अधिक दो छयासठ सागरोपम मात्र है । इस प्रकार कालका कथन समाप्त हुआ ।

अन्तर— जिन कर्मोंके संक्रमका काल तीन भंग रूप है उनके संक्रमका अन्तरकाल जघन्यसे एक समय और उत्कर्पसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है । इसी प्रकार साता व असाता वेदनीयके विपयमें कहना चाहिये । वैक्रियिकपट्का प्रकृत अन्तरकाल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र है । मनुष्यगति, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, उच्चगोत्र और नीचगोत्रका वह अन्तरकाल जघन्यसे एक समय और उत्कर्पसे असंख्यात लोक मात्र है । आहारशरीर, आहारशरीरांगोपांग, आहारशरीरबन्धन और आहारशरीरसंघातका अन्तरकाल जघन्यसे एक समय और उत्कर्पसे उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन मात्र है । तीर्थंकर प्रकृतिका अन्तरकाल सातावेदनीयके समान है । सम्यक्त्व और मिथ्यात्वका वह अन्तरकाल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन मात्र है । इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वका भी अन्तरकाल जानना चाहिये । विशेष इतना है कि उसका वह अन्तरकाल जघन्यसे एक समय मात्र है । अनन्तानुबन्धिचतुष्कका अन्तरकाल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्पसे साधिक दो छयासठ सागरोपम मात्र है । इस प्रकार अन्तरप्ररूपणा समाप्त हुई ।

---

१ ताप्रतौ 'आहारसरीरस्स' इति पाठः ।

णाणाजीवेहि भंगविचओ। अट्ठपदं— जेसिं संतकम्ममत्थि तेसु पयदं। एदेण अट्ठपदेण पंचणाणावरणीय-णवदंसणावरणीय-सम्मामिच्छत्त-सोलसकसाय-णवणोकसाय-तेरसणामपयडि-पंचंतराइयाणं च सिया सव्वे जीवा संकामया, सिया संकामया च असंकामओ च, सिया संकामया च असंकामया च। सादासाद-सम्मत्त-मिच्छत्त-सेस-णामपयडि-उच्च-णीचागोदाणं संकामया च असंकामया च णियमा अत्थि। एवं णाणाजीवेहि भंगविचओ समत्तो।

णाणाजीवेहि कालो— सव्वकम्माणं संकामया सव्वद्धा। अंतरं णत्थि, णाणाजीवप्प-णादो[1]। अप्पाबहुअं। तं जहा— आहारसरीरणामाए संकामया थोवा। सम्मत्तस्स असंखे० गुणा। मिच्छत्तस्स असंखे० गुणा। सम्मामिच्छत्तस्स विसेसा०। देवगइणामाए असंखे० गुणा। णिरयगइ० विसेसा०। वेउव्विय० विसे०। णीचागोदस्स अणंतगुणा। असादस्स संखे० गुणा। सादस्स संखे० गुणा। उच्चागोदस्स विसे०। मणुसगइ० विसे०। अणंताणुबंधि० विसेसा०। जसकित्ति० विसे०। अट्ठण्हं पि कसायाणं विसे०। णिद्दाणिद्दा-पयलापयला-थीणगिद्धि-तेरसणामपयडीणं संकामया विसे०। लोहसं० विसे०।

नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयका कथन करते हैं। उसमें अर्थपद— जिन कर्मोंका सत्कम है वे यहां प्रकृत हैं। इस अर्थपदके अनुसार पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नौ नोकषाय, तेरह नामप्रकृतियां और पांच अन्तराय; इन प्रकृतियोंके कदाचित् सब जीव संक्रामक होते हैं, कदाचित् बहुत संक्रामक व एक असंक्रामक, तथा कदाचित् बहुत संक्रामक व बहुत असंक्रामक भी होते हैं। साता व असाता वेदनीय, सम्यक्त्व, मिथ्यात्व, शेष नामप्रकृतियां, उच्चगोत्र और नीचगोत्र; इनके नियमसे बहुत संक्रामक व बहुत असंक्रामक भी होते हैं। इस प्रकार नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय समाप्त हुआ।

नाना जीवोंकी अपेक्षा कालकी प्ररूपणा की जाती है— सब कर्मोंके संक्रामकोंका काल नाना जीवोंकी अपेक्षा सर्वकाल है। सब कर्मोंके संक्रामकोंका अन्तर नहीं होता, क्योंकि, नाना जीवोंकी विवक्षा है।

अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है— आहारशरीर नामकर्मके संक्रामक स्तोक हैं। सम्यक्त्वके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। मिथ्यात्वके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामक विशेष अधिक हैं। देवगति नामकर्मके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। नरकगतिके संक्रामक विशेष अधिक हैं। वैक्रियिकशरीरके संक्रामक विशेष अधिक हैं। नीचगोत्रके संक्रामक अनन्तगुणे हैं। असातावेदनीयके संक्रामक संख्यातगुणे हैं। सातावेदनीयके संक्रामक संख्यातगुणे हैं। उच्चगोत्रके संक्रामक विशेष अधिक हैं। मनुष्यगतिके संक्रामक विशेष अधिक हैं। अनन्तानुबन्धीके संक्रामक विशेष अधिक हैं। यशकीर्तिके संक्रामक विशेष अधिक है। आठों भी कषायोंके संक्रामक विशेष अधिक हैं। निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि और तेरह नामप्रकृतियोंके संक्रामक विशेष अधिक हैं। संज्वलनलोभके संक्रामक विशेष अधिक हैं।

---

१ प्रतिषु 'णाणाजीवप्पमाणादो' इति पाठः।

णउंसय० विसे० । इत्थि० विसे० । छण्णोकसायाणं विसे० । पुरिस० विसे० । कोध० विसे० । माण० विसे० । माया० विसे० । पंचणाणावरण-णवदंसणावरण-सेसणामपयडि-पंचंतराइयाणं संकामया तुल्ला विसेसाहिया । एवमोघसंकमदंडओ समत्तो ।

णिरयगईए आहारसरीरणामाए संकामया थोवा । सम्मत्तस्स संकामया असंखे० गुणा । मिच्छत्तस्स असंखे० गुणा । सम्मामिच्छत्तस्स विसेसा० । णीचागोदस्स असंखे० गुणा । असादस्स संखे० गुणा । सादस्स संखे० गुणा । उच्चागोदस्स विसे० । अणंताणुबंधि० विसेसा० । सेसाणं कम्माणं संकामया तुल्ला विसेसा० । एवं णिरयोघ-संकमदंडओ समत्तो ।

तिरिक्खगईए आहारसरीरणामाए संकामया थोवा । सम्मत्तस्स असंखे० गुणा । मिच्छत्तस्स असंखे० गुणा । सम्मामिच्छत्तस्स विसेसा० । देवगई० असंखे० गुणा । णिरयगई० विसेसा० । वेउव्वियसरीर० विसे० । णीचागोदस्स अणंतगुणा । असादस्स संखे० गुणा । सादस्स संखे० गुणा । उच्चागोदस्स विसेसा० । मणुसगई० विसे० । अणंताणुबंधि० विसे० । सेसाणं कम्माणं तुल्ला विसेसाहिया । एवं तिरिक्खगइ-दंडओ समत्तो ।

नपुंसकवेदके संक्रामक विशेष अधिक हैं । स्त्रीवेदके संक्रामक विशेष अधिक हैं । छह नोकषायोंके संक्रामक विशेष अधिक हैं । पुरुषवेदके संक्रामक विशेष अधिक हैं । [संज्वलन] क्रोधके संक्रामक विशेष अधिक हैं । मानके संक्रामक विशेष अधिक हैं । मायाके संक्रामक विशेष अधिक हैं । पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, शेष नामप्रकृतियों और पांच अन्तराय कर्मोंके संक्रामक तुल्य व विशेष अधिक हैं । इस प्रकार ओघसंक्रमदण्डक समाप्त हुआ ।

नरकगतिमें आहारशरीर नामकर्मके संक्रामक स्तोक हैं । सम्यक्त्वके संक्रामक असंख्यात-गुणे हैं । मिथ्यात्वके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं । सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामक विशेष अधिक हैं । नीचगोत्रके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं । असातावेदनीयके संक्रामक संख्यातगुणे हैं । सातावेदनीयके संक्रामक संख्यातगुणे हैं । उच्चगोत्रके संक्रामक विशेष अधिक हैं । अनन्तानु-बन्धिचतुष्कके संक्रामक विशेष अधिक हैं । शेष कर्मोंके संक्रामक तुल्य व विशेष अधिक हैं । इस प्रकार नरकगतिमें सामान्यसे संक्रमदण्डक समाप्त हुआ ।

तिर्यंचगतिमें आहारकशरीर नामकर्मके संक्रामक स्तोक हैं । सम्यक्त्वके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं । मिथ्यात्वके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं । सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामक विशेष अधिक हैं । देवगतिके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं । नरकगतिके संक्रामक विशेष अधिक हैं । वैक्रियिकशरीरके संक्रामक विशेष अधिक हैं । नीचगोत्रके संक्रामक अनन्तगुणे हैं । असाता-वेदनीयके संक्रामक संख्यातगुणे हैं । सातावेदनीयके संक्रामक संख्यातगुणे हैं । उच्चगोत्रके संक्रामक विशेष अधिक हैं । मनुष्यगतिके संक्रामक विशेष अधिक हैं । अनन्तानुबन्धिचतुष्कके संक्रामक विशेष अधिक हैं । शेष कर्मोंके संक्रामक तुल्य व विशेष अधिक हैं । इस प्रकार तिर्यंचगतिमें संक्रमदण्डक समाप्त हुआ ।

देवगईए णिरयगइभंगो । मणुस्सेसु आहारसरीरणामाए संकामया थोवा । मिच्छत्तस्स संकामया संखे० गुणा । सम्मत्तस्स संका० असंखे० गुणा । सम्मामिच्छत्तस्स विसेसा० । देवगई० असंखे० गुणा । णिरयगई० विसे० । वेउव्विय० विसे० । णीचागोदस्स असंखे० गुणा । असाद० संखे० गुणा । साद० संखे० गुणा । उच्चागोद० विसे० । अणंताणुबंधि० विसे० । उवरि ओघं । एवं मणुसगइदंडओ समत्तो ।

बेइंदिएसु आहार० संकामया संखेज्जजीवा थोवा । सम्मत्तसंकामया असंखे० गुणा । सम्मामिच्छत्त० विसे० । देवगई० असंखे० गुणा । णिरयगई० विसे० । वेउव्विय० विसे० । णीचागोद० असंखे० गुणा । असाद० संखे० गुणा । साद० संखे० गुणा । उच्चागोद० विसे० । सेसाणं कम्माणं तुल्ला विसेसा० । तेइंदिय-चउरिंदिय-असण्णिपंचिंदियाणं बेइंदियभंगो । भुजगारो पदणिक्खेवो वड्ढिसंकमो च एगेगपयडिसंकमे णत्थि ।

पयडिट्ठाणसंकमे ट्ठाणसमुक्कित्तणा । तं जहा— णाणावरणपयडिसंकमस्स एक्कं चेव ट्ठाणं । एदेण एक्केण ट्ठाणेण सव्वाणिओगद्दाराणि णेदव्वाणि । दंसणावरणस्स बे ट्ठाणाणि । तं जहा— णवण्णं छण्णं संकमो चेदि । एदेहि बेट्ठाणेहिं चदुवीसअणिओगद्दाराणि

देवगतिमें संक्रमके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा नरकगतिके समान है । मनुष्योंमें आहारशरीर नामकर्मके संक्रामक स्तोक हैं । मिथ्यात्वके संक्रामक संख्यातगुणे हैं । सम्यक्त्वके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं । सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामक विशेष अधिक हैं । देवगतिके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं । नरकगतिके संक्रामक विशेष अधिक हैं । वैक्रियिकशरीरके संक्रामक विशेष अधिक हैं । नीचगोत्रके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं । असातावेदनीयके संक्रामक संख्यातगुणे हैं । सातावेदनीयके संक्रामक संख्यातगुणे हैं । उच्चगोत्रके संक्रामक विशेष अधिक हैं । अनन्तानुबन्धिचतुष्कके संक्रामक विशेष अधिक हैं । आगेकी प्ररूपणा ओघके समान है । इस प्रकार मनुष्यगतिमें संक्रमदण्डक समाप्त हुआ ।

द्वीन्द्रिय जीवोंमें आहारशरीरके संक्रामक जीव संख्यात हैं जो स्तोक हैं । सम्यक्त्वके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं । सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामक विशेष अधिक हैं । देवगतिके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं । नरकगतिके संक्रामक विशेष अधिक हैं । वैक्रियिकशरीरके संक्रामक विशेष अधिक हैं । नीचगोत्रके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं । असातावेदनीयके संक्रामक संख्यातगुणे हैं । सातावेदनीयके संक्रामक संख्यातगुणे हैं । उच्चगोत्रके संक्रामक विशेष अधिक हैं । शेष कर्मोंके संक्रामक तुल्य व विशेष अधिक हैं । त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंमें संक्रमके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा द्वीन्द्रिय जीवोंके समान है । भुजाकार, पदनिक्षेप और वृद्धिसंक्रम एक एक प्रकृतिके संक्रममें नहीं हैं ।

प्रकृतिस्थानसंक्रममें स्थानसमुत्कीर्तनाकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है— ज्ञानावरणके प्रकृतिसंक्रमका एक ही स्थान है । इस एक स्थानके द्वारा सब अनुयोगद्वारोंको ले जाना चाहिये । दर्शनावरणके दो स्थान हैं । यथा— नौ प्रकृतियोंका संक्रम और छह प्रकृतियोंका

१ अप्रतो 'एदेण बेट्ठाणाणि' इति पाठः ।

भुजगार-पदणिक्खेव-वड्ढिसंकमा च णेदव्वा। मोहणीयस्स जहा कसायपाहुडे[1] वित्थरेण ट्ठाणसमुक्कित्तणा कदा तहा एत्थ वि कायव्वा। वेयणीय-गोदंतराइयाणं एक्केक्कं चेव ट्ठाणं[2]। णामस्स पुध पुध पिंडणामट्ठाणसमुक्कित्तणा कायव्वा। तं जहा— गदिणामाए एक्किस्से[3] दोण्णं तिण्णं चदुण्णं संकमो। उव्वेल्लणं पडुच्च जासु जासु पिंडपयडीसु संकमट्ठाणाणि अत्थि तेहि सव्वअणियोगद्दाराणि णेयव्वाणि। एवं पयडिसंकमो समत्तो।

ठिदिसंकमो दुविहो मूलपयडिट्ठिदिसंकमो उत्तरपयडिट्ठिदिसंकमो चेदि। एत्थ अट्ठपदं। तं जहा— ओकड्डिदा वि ट्ठिदी ट्ठिदिसंकमो, उक्कड्डिदा वि ट्ठिदी ट्ठिदिसंकमो, अण्णपयडिं णीदा वि ट्ठिदी ट्ठिदिसंकमो होदि[4]। एत्थ ओकड्डणाए ताव किंचि सरूवपरूवणं कस्सामो। तं जहा— उदयावलियब्भंतरट्ठिदीयो ण सक्का ओकड्डेदुं[5], उदयावलियादो जा समउत्तरट्ठिदी सा सक्का ओकड्डेदुं[6]। सा ओकड्डिज्जमाणिया आवलियाए समऊणाए वेत्तिभागे अधिच्छाविदूण रूवाहियतिभागे णिक्खिवदि। तदो समउत्तरियाए ट्ठिदीए तत्तियो चेव णिक्खेवो, अधिच्छावणा वड्ढदि। एवं ताव अधिच्छावणा वड्ढदि

संक्रम। इन दो स्थानोंके द्वारा चौवीस अनुयोगद्वारों, भुजाकार, पदनिक्षेप और वृद्धिसंक्रमको भी ले जाना चाहिये। मोहनीयकी स्थानसमुत्कीर्तना जैसे कसायपाहुडमें विस्तारसे की गयी है वैसे यहां भी उसे करना चाहिये। वेदनीय, गोत्र और अन्तरायका एक एक ही स्थान है। नामकर्मकी पृथक् पृथक् पिण्ड नामप्रकृतियोंकी स्थानसमुत्कीर्तना करना चाहिये। वह इस प्रकारसे— गति नामकर्म सम्बन्धी एक, दो, तीन और चारका संक्रम होता है। उद्वेलनाके आश्रयसे जिन जिन पिण्ड प्रकृतियोंमें संक्रमस्थान हैं उनके द्वारा सब अनुयोगद्वारोंको ले जाना चाहिये। इस प्रकार प्रकृतिसंक्रम समाप्त हुआ।

स्थितिसंक्रम दो प्रकार है—मूलप्रकृतिस्थितिसंक्रम और उत्तरप्रकृतिस्थितिसंक्रम। यहां अर्थपद इस प्रकार है— अपकर्षणप्राप्त स्थितिको स्थितिसंक्रम कहा जाता है, तथा उत्कर्षणप्राप्त और अन्य प्रकृतिको प्राप्त करायी गयी भी स्थितिको स्थितिसंक्रम कहा जाता है। यहां पहिले अपकर्षणके स्वरूपकी कुछ प्ररूपणा की जाती है। यथा— उदयावलीके भीतरकी स्थितियां अपकर्षणको प्राप्त नहीं करायी जा सकतीं, किन्तु उदयावलीसे जो एक समय अधिक स्थिति है वह अपकपणको प्राप्त करायी जा सकती है। अपकर्षणको प्राप्त करायी जानेवाली उस स्थितिका निक्षेप एक समय कम ऐसी आवलीके दो त्रिभागोंको अतिस्थापना करके एक समय अधिक आवलीके त्रिभागमें किया जाता है। आगे उत्तरोत्तर एक एक समय अधिक स्थितिका निक्षेप तो उतना मात्र ही होता है, किन्तु अतिस्थापना वढ़ती जाती है। इस प्रकार अतिस्थापना आवली प्राप्त होने

---

१ क. पा. सु. पृ. २६०–३०९. २ ताप्रतौ 'ट्ठा [णा] णं' इति पाठः। ३ ताप्रतौ 'एक्केक्किस्से' इति पाठः। ४ ट्ठिदिसंकमो दुविहो मूलपयडिट्ठिदिसंकमो उत्तरपयडिट्ठिदिसंकमो च। तत्थ अट्ठपदं— जा ट्ठिदी ओकड्डिज्जदि वा उक्कड्डिज्जदि वा अण्णपयडिं संकामिज्जइ वा सो ट्ठिदिसंकमो, सेसो ट्ठिदिअसंकमो। क. पा. सु. पृ. ३१०,१–२. ठिइसंकमो त्ति वुच्चइ मूलुत्तरपगईउ जा हि ठिई। उव्वट्टियाउ ओवट्टिया व पगइं निया वाऽण्णं॥ क. प्र. २, २८. ५ अप्रतौ 'संकामओकड्डेदुं', काप्रतौ 'संका ओकड्डेदुं' इति पाठः। ६ अ-काप्रत्योः 'संकामओकड्डेदुं' इति पाठः।

जाव आवलिया त्ति । तेण परं णिक्खेवो चेव वड्ढदि[1] । जहण्णओ णिक्खेवो थोवो । जहण्णिया अधिच्छावणा दोहि समएहि ऊणिया दुगुणा । उक्कस्सिया अधिच्छावणा असंखे० गुणा । उक्कस्सयं ट्ठिदिखंडयं विसेसाहियं । उक्कस्सओ णिक्खेवो विसेसाहिओ, जेण कम्मट्ठिदी दोहि आवलियाहि समउत्तराहि ऊणिया[2] ।

उक्कड्डणा णाम कधं होदि ? वुच्चदे । तं जहा— उदयावलियब्भंतरट्ठिदी ण सक्का उक्कड्डेदुं । कुदो ? साभावियादो । समउत्तरउदयावलियादिट्ठिदी उक्कड्डिज्जदि[3] । सा उक्कड्डिज्जमाणिया[4] वि अवज्झमाणीसु ट्ठिदीसु ण णिक्खिवदि, वज्झमाणियाणं जहण्णट्ठिदिसादिं कादूण उवरिमासु सव्वासु ट्ठिदीसु णिक्खिवदि । एस[5] विही हेट्ठिमाणं ट्ठिदीणं उक्कड्डिज्जमाणियाणं[6] ।

संपहि उवरिमाणं ट्ठिदीणं उक्कड्डणाविहाणं वुच्चदे । तं जहा— ट्ठिदिसंतकम्मादो

तक बढ़ती है । इसके पश्चात् निक्षेप ही बढ़ता है । जघन्य निक्षेप स्तोक है । जघन्य अतिस्थापना दो समयोंसे कम दुगुणी है । उत्कृष्ट अतिस्थापना असंख्यातगुणी है । उत्कृष्ट स्थितिकाण्डक विशेष अधिक है । उत्कृष्ट निक्षेप विशेष अधिक है, कारण कि वह एक समय अधिक दो आवलियोंसे हीन कर्मस्थितिके बराबर है ।

उत्कर्षण कैसे होता है ? इसका उत्तर देते हैं । यथा—उदयावलीके भीतरकी स्थिति उत्कर्षणको प्राप्त नहीं करायी जा सकती है, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है । एक समय अधिक उदयावली आदि रूप स्थितिका उत्कर्षण किया जा सकता है । उस उत्कर्षणको प्राप्त करायी जानेवाली स्थितिका भी निक्षेप अवध्यमान स्थितियोंमें नहीं किया जाता है, किन्तु वध्यमान स्थितियोंमें जघन्य स्थितिको आदि करके आगेकी सब स्थितियोंमें किया जाता है । यह विधान उत्कर्षणको प्राप्त करायी जानेवाली अधस्तन स्थितियोंके लिये है ।

अब उपरिम स्थितियोंके उत्कर्षणका विधान कहते हैं । यथा—स्थितिसत्कर्मसे समयाधिक

---

१ तिस्से उदयादि जाव आवलियतिभागो ताव णिक्खेवो, आवलियाए वेत्तिभागा अइच्छावणा । उदए बहुअं पदेसग्गं दिज्जइ, तेण परं विसेसहीणं जाव आवलियतिभागो त्ति । तदो जा विदिया ट्ठिदी तिस्से वि तत्तिगो चेव णिक्खेवो, अइच्छावणा समयुत्तरा । एवमइच्छावणा समयुत्तरा, णिक्खेवो तत्तिगो चेव उदयावलियबाहिरादो आवलियतिभागंतिमट्ठिदि त्ति । तेण परं णिक्खेवो वड्ढइ, अइच्छावणा आवलिया चेव । क. पा. सु. पृ. २११, ५–९. उव्वट्टंतो य ठिइं उदयावलिबाहिरा ठिइविसेसा । निक्खिवइ तइयभागे समयहिए सेसमइवईय ॥ वड्ढइ तत्तो अतित्थावणा उ जावालिगा हवइ पुन्ना । ता निक्खेवो समयाहिगालिगदुगूणकम्मठिई ॥ क. प्र. ३, ४-५. २ तदो सव्वत्थोवो जहण्णओ णिक्खेवो । जहण्णिया अइच्छावणा दुसमयूणा दुगुणा । णिव्वाघादेण उक्कस्सिया अइच्छावणा विसेसाहिया । वाघादेण उक्कस्सिया अइच्छावणा असंखेज्जगुणा । उक्कस्सयं ट्ठिदिखंडयं विसेसाहियं । उक्कस्सओ णिक्खेवो विसेसाहिओ । उक्कस्सओ ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ । क. पा. सु. पृ. ३१५, १८-२३. ३ अ-काप्रत्योः '-वलियादि उक्कड्डिज्जदि', ताप्रतौ '-वलियादि (यट्ठिदिं) उक्कड्डिज्जदि' इति पाठः । ४ अ-ताप्रत्योः 'ओकड्डिज्जमाणिया' इति पाठः । ५ ताप्रतौ 'एसा' इति पाठः । ६ उव्वट्टणा ठिईए उदयावलियाए बाहिरठिईणं । होइ अबाहा अइत्थावणाउ जावालिया हस्सा ॥ क. प्र. ३, १.

समउत्तरट्ठिदिं वंधमाणस्स जा पुव्वबद्धस्स चरिमट्ठिदी सा ण उक्कड्डिज्जदि, दुचरिमट्ठिदी वि ण उक्कड्डिज्जदि। एवं जाव एगा आवलिया अण्णो आवलियाए असंखे० भागो च ओदिण्णो[1] त्ति णेदव्वं। तदो जा हेट्ठिमा अणंतरट्ठिदी सा उक्कड्डिज्जदि। तिस्से उक्कड्डिज्जमाणियाए आवलिया अधिच्छावणा, आवलियाए असंखे० भागो णिक्खेवो। उक्कड्डिज्जमाणीणं ट्ठिदीणं जहण्णओ णिक्खेवो थोवो। जहण्णिया अधिच्छावणा एगावलिया, सा असंखे० गुणा। उक्क० अधिच्छावणा संखेज्जगुणा। उक्कस्सओ णिक्खेवो असंखे० गुणो, जेण कम्मट्ठिदी उक्कस्सियाए आबाहाए समत्तराए आवलियाए च ऊणिया[2]। एसा अट्ठपदपरूवणा।

एत्तो पमाणाणुगमो वुच्चदे— उत्तरपयडिसंकमे पयदं। सो चउव्विहो उक्कस्सओ अणुक्कस्सओ जहण्णओ अजहण्णओ चेदि। मदिआवरणस्स उक्कस्सओ ट्ठिदिसंकमो तीसं

स्थितिको वांधनेवालेके जो पूर्वबद्ध कर्मकी चरम स्थिति है उसका उत्कर्षण नहीं किया जाता है, द्विचरम स्थितिका भी उत्कर्षण नहीं किया जाता है, इस प्रकार एक आवली और अन्य आवलीके असंख्यातवें भाग नीचे आने तक ले जाना चाहिये। उससे नीचेकी जो अधस्तन अनन्तर स्थिति है उसका उत्कर्षण किया जाता है। उत्कर्षणको प्राप्त करायी जानेवाली उक्त स्थितिकी अतिस्थापना आवली प्रमाण और निक्षेप आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र होता है। उत्कर्षणको प्राप्त करायी जानेवाली स्थितियोंका जघन्य निक्षेप स्तोक है। जघन्य अतिस्थापना एक आवली मात्र होकर उससे असंख्यातगुणी है। उत्कृष्ट अतिस्थापना संख्यातगुणी है। उत्कृष्ट निक्षेप असंख्यातगुणा है, क्योंकि, वह उत्कृष्ट आवाधा और एक समय अधिक आवलीसे हीन कर्मस्थिति प्रमाण है। यह अर्थपदकी प्ररूपणा हुई।

यहां प्रमाणानुगमका कथन करते हैं— उत्तरप्रकृतिसंक्रमका अधिकार है। वह चार प्रकारका है— उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य। मतिज्ञानावरणका उत्कृष्ट स्थितिसंकम

---

१ प्रतिषु 'उदिण्णो' इति पाठः। २ वाघादेण कधं? जइ संतकम्मादो वंधो समयुत्तरो तिस्से ट्ठिदीए णत्थि उक्कड्डणा। जइ संतकम्मादो वंधो दुसमयुत्तरो तिस्से वि संतकम्मअग्गट्ठिदीए णत्थि उक्कड्डणा। एत्थ आवलियाए असंखेज्जदिभागो जहण्णिया अइच्छावणा। जदि जत्तिया जहण्णिया अइच्छावणा तत्तिएण अब्भहिओ संतकम्मादो वंधो तिस्से वि संतकम्मअग्गट्ठिदीए णत्थि उक्कड्डणा। अण्णो आवलियाए असंखेज्जदिभागो जहण्णओ णिक्खेवो। जइ जहण्णियाए अइच्छावणाए जहण्णएण च णिक्खेवेण एत्तियमेत्तेण संतकम्मादो अदिरित्तो वंधो सा संतकम्मअग्गट्ठिदी उक्कड्डिज्जदि। तदो समयुत्तरे वंधे णिक्खेवो तत्तिओ चेव, अइच्छावणा वड्ढदि। एवं ताव अइच्छावणा वड्ढइ जाव अइच्छावणा आवलिया जादा त्ति। तेण परं णिक्खेवो वड्ढइ जाव उक्कस्सओ णिक्खेवो त्ति। क. पा. सु. पृ. ३१६, २८–३७. णिव्वाघाएणेवं वाघाए संतकम्महिगवंधो। आवलिअसंखभागादि होइ अइत्थावणा नवरं॥ क. प्र. ३, ३. ××× संप्रत्यल्पबहुत्वमुच्यते— या जघन्याऽतीस्थापना यश्च जघन्यो निक्षेप एतौ द्वावपि सर्वस्तोकौ परस्परं च तुल्यौ। यतो द्वावप्येतौ आवलिकासत्कासंख्येयतमभागमात्रौ, ताभ्यामसंख्येयगुणोत्कृष्टाऽतीस्थापना, तस्या उत्कृष्टाबाधारूपत्वात्। ततोऽप्युत्कृष्टो निक्षेपोऽसंख्येयगुणः, यतोऽसौ समयाधिकावलिकयाऽबाधया च हीना सर्वा कर्मस्थितिः। ततोऽपि सर्वा कर्मस्थितिर्विशेषाधिका। मलय.

सागरोवमकोडाकोडीयो दोहि आवलियाहि ऊणाओ, जट्ठिदिसंकमो[1] आवलिऊणो। जहा उक्कस्सट्ठिदिउदीरणा तहा उक्कस्सट्ठिदिसंकमो सव्वकम्माणं पि कायव्वो। तत्तो णाणत्तं वत्तइस्सामो— देवगइ-देव-मणुस्साणुपुव्वी-बेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदियजादि-आदाव-सुहुम-अपज्जत्त-साहारणाणं उक्कस्समद्धच्छेदो वीसं सागरोवमकोडाकोडीओ बेहि तीहि आवलियाहि ऊणाओ। सामित्तं पि उक्कस्सट्ठिदिं वंधिय पडिभग्गो होदूण एदाओ णामपयडीओ वंधिय तदो आवलियादीदस्स[2]। आदावस्स पुण बंधावलियादीदस्स उक्कस्सओ ट्ठिदिसंकमो। एदं णाणत्तं उक्कस्सट्ठिदिउदीरणादो।

देव-णिरयाउआणं उक्कस्सट्ठिदिसंकमो तेत्तीसं सागरोवमाणि, जट्ठिदिसंकमो आवलियूणपुव्वकोडितिभागेणब्भहियतेत्तीसं सागरोवमाणि। मणुस्स-तिरिक्खाउआणमुक्कस्सट्ठिदिसंकमो तिण्णि पलिदोवमाणि, जट्ठिदिसंकमो आवलियूणपुव्वकोडितिभागेणब्भहियतिण्णिपलिदोवमाणि।

जहण्णट्ठिदिसंकमपमाणाणुगमो[3]। तं जहा— पंचणाणावरण-चत्तारिदंसणावरण-पंचंतराइयाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो एगा ट्ठिदी, जट्ठिदिसंकमो समयाहियावलियाँ[4]। णिद्दा-पयलाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो एगा ट्ठिदी, जट्ठिदिसंकमो दो आवलियाओ आवलियाए असंखेज्जदि-

---

दो आवलियोंसे हीन तीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम मात्र होता है, जस्थितिसंक्रम एक आवलीसे हीन तीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम मात्र होता है। पूर्वमें जैसे उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा कथन किया गया है वैसे ही सभी कर्मोंके उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका भी कथन करना चाहिये। उससे जो यहां जो कुछ विशेपता है उसे बतलाते हैं— देवगति, देवानुपूर्वी, मनुष्यानुपूर्वी, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जाति, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण; इनका उत्कृष्ट अद्धाच्छेद दो व तीन आवलियोंसे हीन बीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम मात्र है। उसका स्वामी भी उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर और प्रतिभग्न होकर फिर इन नामकर्मकी प्रकृतियोंको बांधनेके पश्चात् आवली मात्र कालको वितानेवाला जीव होता है। परन्तु आतपका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम जिसने बन्धावलीको बिताया है उसके होता है। यह उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाकी अपेक्षा यहां विशेपता है।

देवायु और नरकायुका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम तेतीस सागरोपम और जस्थितिसंक्रम आवली कम पूर्वकोटिके त्रिभागसे अधिक तेतीस सागरोपम मात्र होता है। मनुष्यायु और तिर्यगायुका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम तीन पल्योपम और जस्थितिसंक्रम आवली कम पूर्वकोटिके त्रिभागसे अधिक तीन पल्योपम मात्र होता है।

जघन्य स्थितिसंक्रमके प्रमाणानुगमका कथन करते हैं। यथा— पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पांच अन्तरायका जघन्य स्थितिसंक्रम एक स्थिति और जस्थितिसंक्रम एक समय अधिक आवली मात्र है। निद्रा और प्रचलाका जघन्य स्थितिसंक्रम एक स्थिति और

---

१ अप्रतौ 'जंठिदिसंकमो', ताप्रतौ 'जं ट्ठिदिसंकमो' पाठः। २ अप्रतौ 'आवलियादितस्स' इति पाठः। ३ अ-काप्रत्योः'संकमो', ताप्रतौ 'संकमो (म)' इति पाठः। ४ आवरण-विग्घ-दंसणच उक्क-लोभंत-वेयगाऊणं। एगा ठिई जहन्नो चट्ठिई समयाहिगावलिगा ॥ क. प्र. २, ३२.

भागो च[1] । णिद्दाणिद्दा-पयलापयला-थीणगिद्धि-मिच्छत्त-बारसकसाय-सम्मामिच्छत्त-इत्थि-णवुंसयवेदाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो पलिदो० असंखे० भागो[2] । सादासादाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो अंतोमुहुत्तं ।

सम्मत्त-लोहसंजलणाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो एगा ट्ठिदी[3] । जट्ठिदिसंकमो समयाहियावलिया । छण्णं णोकसायाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो संखे० वस्साणि[4] । कोहसंजलणाए जह० ट्ठिदिसंकमो वे मासा अंतोमुहुत्तूणा, जट्ठिदिसंकमो वे मासा वेहि आवलियाहि ऊणा । माणसंजलणस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो मासो अंतोमुहुत्तूणो[6], जट्ठिदिसंकमो मासो वेहि आवलियाहि ऊणो । मायासंजलणाए जहण्णट्ठिदिसंकमो अद्धमासो अंतोमुहुत्तूणो[7], जट्ठिदिसंकमो अद्धमासो दोहि आवलियाहि ऊणो । पुरिसवेदस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो अट्ठवस्साणि अंतोमुहुत्तूणाणि[8], जट्ठिदिसंकमो अट्ठवस्साणि दोहि आवलियाहि ऊणाणि ।

आउआणं जहा जहण्णट्ठिदिउदीरणाए तहा कायव्वं । णिरयगइ-णिरयगइपाओग्गाणुपुव्वी - तिरिक्खगइ - तिरिक्खगइपाओग्गाणुपुव्वी-एइंदिय-बेइंदिय-तेइंदिय - चउरिंदियजादि-आदावुज्जोव-थावर-सुहुम-साहारणसरीराणं जहण्णगो ट्ठिदिसंकमो पलिदो०

जस्थितिसंक्रम दो आवली और एक आवलीके असंख्यातवें भागसे अधिक है । निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, मिथ्यात्व, बारह कषाय, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है । साता और असाता वेदनोयका जघन्य स्थितिसंक्रम अन्तर्मुहूर्त मात्र है ।

सम्यक्त्व और संज्वलन लोभका जघन्य स्थितिसंक्रम एक स्थिति मात्र है । इनका जस्थितिसंक्रम एक समय अधिक आवली मात्र है । छह नोकषायोंका जघन्य स्थितिसंक्रम संख्यात वर्ष मात्र है । संज्वलन क्रोधका जघन्य स्थितिसंक्रम अन्तर्मुहूर्त कम दो मास और जस्थितिसंक्रम दो आवलीसे कम दो मास प्रमाण है । संज्वलन मानका जघन्य स्थितिसंक्रम अन्तर्मुहूर्त कम एक मास और जस्थितिसंक्रम दो आवली कम एक मास प्रमाण है । संज्वलन मायाका जघन्य स्थितिसंक्रम अन्तर्मुहूर्त कम आधा मास और जस्थितिसंक्रम दो आवली कम आधा मास प्रमाण है । पुरुषवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम अन्तर्मुहूर्त कम आठ वर्ष और जस्थितिसंक्रम दो आवली कम आठ वर्ष है ।

आयु कर्मोंकी जिस प्रकार जघन्य स्थितिकी उदीरणा कही गयी है उसी प्रकारसे उनके जघन्य संक्रमको भी कहना चाहिये । नरकगति, नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, तिर्यग्गति, तिर्यग्गतिप्रायोग्यानुपूर्वी, एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जाति, आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म

---

१ निद्दादुगस्स एक्का आवलिदुगं असंखभागो य । जट्ठिइ × × × क. प्र. २, ३३. २ मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्त-बारसकसाय-इत्थि-णवुंसयवेदाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो । क. पा. सु. ३१९, ४४. ३ क. पा. सु. पृ. ३१९, ४५. ४ क. पा. सु. पृ. ३१९, ४९. ५ का-मप्रत्योः 'अंतोमुहुत्तूणो', अप्रतौ त्रुटितोऽत्र पाठः । क. पा. सु. पृ. ३१९, ४५. ६ क. पा. सु. पृ. ३१९, ४६. ७ क. पा. सु. पृ. ३१९, ४७. ८ का. पा. सु. पृ. ३१९, ४८. ९ ताप्रतौ 'आउआणं जहण्ण-' इति पाठः ।

असंखे० भागो । देवगइ-देवगइपाओग्गाणुपुव्वी-मणुसगइ-मणुसगइओग्गाणुपुव्वी-पंच-सरीर-पंचसरीरबंधण-पंचसरीरसंघाद-छसंठाण-छसंघडण-पसत्थापसत्थवण्ण-गंध-रस-फास-अगुरुअलहुअ-उवघाद-परघाद-उस्सास-पसत्थापसत्थविहायगइ-तस-बादर-पज्जत्ता-पज्जत्त-पत्तेयसरीर-थिराथिर-सुहासुह-सुभग-दूभग-सुस्सर-दुस्सर-आदेज्ज-अणादेज्ज-जस-कित्ति-अजसकित्ति-णिमिण-तित्थयर-णीचुच्चागोदाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो अंतोमुहुत्तं । एवं जहण्णुक्कस्सअद्धाच्छेदो समत्तो ।

एत्तो सामित्तं । तं जहा— जहा उक्कस्सियाए ट्ठिदीए उदीरणाए सव्वकम्माणं पि सामित्तं परूविदं तहा उक्कस्सट्ठिदिसंकमे वि सव्वकम्माणं पि सामित्तं परूवेयव्वं[1] । एवमुक्कस्सट्ठिदिसंकमसामित्तं समत्तं ।

जहण्णट्ठिदिसंकमसामित्तं वत्तइस्सामो । तं जहा— पंचणाणावरण-चउदंसणावरण-पंचंतराइयाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स ? समयाहियावलियचरिमसमयछदुमत्थस्स । णिद्दा-पयलाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स ? दोहि आवलियाहि आवलियाए असंखे० भागेण चरिमसमयछदुमत्थस्स । णिद्दाणिद्दा-पयलापयला-थीणगिद्धीणं जहण्णट्ठिदिसंकमो

और साधारणशरीर नामकर्मोंका जघन्य स्थितिसंक्रम पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है। देवगति, देवगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, मनुष्यगति, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, पांच शरीर, पांच शरीरबन्धन, पांच शरीरसंघात, छह संस्थान, छह संहनन, प्रशस्त व अप्रशस्त वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्त व अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येकशरीर, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, सुभग, दुर्भग, सुस्वर, दुस्वर, आदेय, अनादेय, यशकीर्ति, अयशकीर्ति, निर्माण, तीर्थंकर, नीचगोत्र और उच्चगोत्र; इनका जघन्य स्थितिका संक्रम अन्तर्मुहूर्त मात्र है। इस प्रकार जघन्य व उत्कृष्ट अद्धाछेद समाप्त हुआ।

यहां स्वामित्वका कथन करते हैं। वह इस प्रकार है— जिस प्रकार उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणामें सभी कर्मोंके स्वामित्वकी प्ररूपणा की गयी है उसी प्रकारसे उत्कृष्ट स्थितिके संक्रममें भी सभी कर्मोंके स्वामित्वकी प्ररूपणा करना चाहिये। इस प्रकार उत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका स्वामित्व समाप्त हुआ।

जघन्य स्थितिसंक्रमके स्वामित्वका कथन करते हैं। वह इस प्रकार है— पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पांच अन्तरायकी जघन्य स्थितिका संक्रम किसके होता है ? जिसके चरम समयवर्ती छद्मस्थ होनेमें एक समय अधिक आवली मात्र शेष है उसके उपर्युक्त प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिसंक्रम होता है। निद्रा और प्रचलाका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? जिसके अन्तिम समयवर्ती छद्मस्थ होनेमें दो आवली और आवलीका असंख्यातवां भाग शेष रहा है उसके निद्रा और प्रचलाका जघन्य स्थितिसंक्रम होता है। निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला और स्त्यानगृद्धिका

---

१ सामित्तं । उक्कस्सट्ठिदिसंकामयस्स सामित्तं जहा उक्कस्सियाए ट्ठिदीए उदीरणा तहा णेदव्वं । क. पा. सु. पृ. ३१९, ५१-५२.

कस्स ? खवगस्स अपच्छिमट्ठिदिखंडयचरिमसमए वट्टमाणस्स । सादासादाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स ? चरिमसमयसजोगिस्स ।[1]

मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स ? दंसणमोहक्खवगस्स अपच्छिमट्ठिदिखंडयचरिमसमए वट्टमाणस्स । अणंताणुबंधी [णं जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स ?] विसंजोएंतस्स अणंताणुबंधीणं अपच्छिमट्ठिदिखंडयचरिमसमए वट्टमाणस्स[2] । अट्ठण्णं कसायाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स ? अट्ठकसायक्खवगस्स अपच्छिमट्ठिदिखंडयस्स चरिमफालिं पादेंतस्स[3] ।

णवुंसयवेदस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स ? णवुंसयवेदेण खवगसेडिमुवट्ठियस्स खवगस्स णवुंसयवेदचरिमट्ठिदिखंडयचरिमफालिं संछुहमाणस्स[4] । इत्थिवेदस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स ? इत्थिवेदोदएण अणुदएण वा खवगसेडिमारूढस्स खवगस्स इत्थिवेदचरिमट्ठिदिखंडयचरिमफालिं संकममाणस्स[5] । छण्णोकसायाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स ? छण्णोकसायखवगस्स तेसिं चरिमट्ठिदिखंडयचरिमफालिं संकममाणस्स[6] । कोध-माण-मायासंजलणाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स ? तेसिं खवयस्स अपच्छिमसमय-

---

जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? वह अन्तिम स्थितिकाण्डकके चरम समयमें वर्तमान क्षपकके होता है । साता और असाता वेदनीयका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? वह अन्तिम समयवर्ती सयोगीके होता है ।

मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? वह अन्तिम स्थितिकाण्डकके चरम समयमें वर्तमान दर्शनमोहक्षपकके होता है । अनन्तानुबन्धी कषायोंका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? वह अनन्तानुबन्धी कषायोंके अन्तिम स्थितिकाण्डकके चरम समयमें वर्तमान ऐसे अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवाले जीवके होता है । आठ कषायोंका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? वह अन्तिम स्थितिकाण्डककी चरम फालिको नष्ट करनेवाले ऐसे आठ कषायोंके क्षपकके होता है ।

नपुंसक वेदका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? वह नपुंसक वेदसे क्षपकश्रेणिपर उपस्थित हुए उस क्षपकके होता है जो नपुंसकवेदके चरम स्थितिकाण्डककी चरम फालिका क्षेपण कर रहा है । स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? जो क्षपक स्त्रीवेदके उदय अथवा उसके अनुदयके साथ क्षपकश्रेणिपर आरुढ़ होकर स्त्रीवेदके चरम स्थितिकाण्डककी चरम फालिका संक्रमण कर रहा है । छह नोकषायोंका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? वह उनके चरम स्थितिकाण्डककी चरम फालिका संक्रमण करनेवाले छह नोकषायोंके क्षपकके होता है । संज्वलन क्रोध, मान और मायाका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? वह उनके क्षपकके होता है

---

१ क. पा. सु. पृ. ३२०, ५४–५५; ५८–५९. २ अणंताणुबंधीणं जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स ? विसंजोएंतस्स तेसिं चेव अपच्छिमट्ठिदिखंडयचरिमसमयसंकामयस्स । क. पा. सु. पृ. ३२०, ६०–६१. ३ अट्ठण्हं कसायाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स ? खवयस्स तेसिं चेव अपच्छिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयसंछुहमाणयस्स जहण्णं । क. पा. सु. पृ. ३२०, ६२–६३. ४ क. पा. सु. पृ. ३२१, ७१–७२. ५ इत्थिवेदस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स ? खवयस्स इत्थिवेदोदयक्खवयस्स तस्स अपच्छिमट्ठिदिखंडयं संछुहमाणयस्स तस्स जहण्णयं । क. पा. सु. पृ. ३२१, ६९–७०. ६ क. पा. सु. पृ. ३२२, ७३-७४.

पबद्धं चरिससमयसंछुद्धस्स । लोहसंजलणस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स ? समयाहिय-आवलियचरिमसमयसुहुमसांपराइयखवगस्स । पुरिसवेदस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स ? पुरिसवेदखवयस्स सगअपच्छिमट्ठिदिबंधो संछुहमाणो संछुद्धो ताधे[1] । सम्मत्तस्स जहण्णो ट्ठिदिसंकमो कस्स ? समयाहियावलियचरिमसमयअक्खीणदंसणमोहणीयस्स ।

आउआणं जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स ? समयाहियावलियचरिमसमयतब्भवत्थस्स । णिरयगइ-णिरयगइपाओग्गाणुपुव्वी - तिरिक्खगइ - तिरिक्खगइपाओग्गाणुपुव्वी - एइंदिय-बीइंदिय-तीइंदिय - चउरिंदियजादि - आदावुज्जोव-थावर-सुहुम - साहारणसरीराणं जहण्ण-ट्ठिदिसंकमो कस्स ? अणियट्टिखवयस्स एदासिं पयडीणमपच्छिमट्ठिदिखंडयस्स चरिमफालिं संछुहमाणस्स। सेसाणं णामपयडीणं जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स? चरिमसमय-सजोगिस्स । णीचुच्चागोदाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स ? चरिमसमयसजोगिस्स । एवं जहण्णट्ठिदिसंकमसामित्तं समत्तं ।

एयजीवेण कालो—पंचणाणावरणीय-णवदंसणावरणीय-असाद-मिच्छत्त-सोलसकसाय-णवुंसयवेद-अरदि-सोग-भय-दुगुंछाणं उक्कस्सट्ठिदिसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जह०

जो अन्तिम समयप्रबद्धके क्षेपण करनेके अन्तिम समयमें वर्तमान है। संज्वलन लोभका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? जिसके अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपक होनेमें एक समय अधिक आवली मात्र शेप है। पुरुषवेदका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? वह पुरुषवेदके क्षपकके उस समय होता है जब निक्षिप्त किया जानेवाला अपना अन्तिम स्थितिबन्ध पूर्णतया निक्षिप्त हो जाता है। सम्यक्त्व प्रकृतिका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? जिसके अन्तिम समयवर्ती अक्षीणदर्शनमोह होनेमें एक समय अधिक आवली मात्र शेप है।

आयु कर्मोंका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? जिसके अन्तिम समयवर्ती तद्भवस्थ होनेमें एक समय अधिक आवली मात्र शेप है। नरकगति, नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, तिर्यग्गति, तिर्यग्गतिप्रायोग्यानुपूर्वी, एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जाति, आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म और साधारणशरीर; इनका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? वह इन प्रकृतियोंके अन्तिम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिका निक्षेप करनेवाले अनिवृत्तिकरण क्षपकके होता है। शेप नामप्रकृतियोंका जघन्य स्थितिसंक्रम किसके होता है ? वह अन्तिम समयवर्ती सयोगीके होता है। नीच और ऊंच गोत्रका जघन्य स्थितिसंक्रमण किसके होता है। वह अन्तिम समयवर्ती सयोगीके होता है। इस प्रकार जघन्य स्थितिसंक्रमका स्वामित्व समाप्त हुआ।

एक जीवकी अपेक्षा कालकी प्ररूपणा की जाती है—पांच ज्ञानावरणीय, नौ दर्शनावरणीय, असाता-वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्साके उत्कृष्ट स्थिति-

---

१ कोहसंजलणस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स ? खवयस्स कोहसंजलणस्स अपच्छिमट्ठिदिबंधचरिमसमयसंछुह-माणस्स तस्स जहण्णयं। एवं माण-मायासंजलण-पुरिसवेदाणं। लोभसंजलणस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स ? आवलियसमयाहियसकसायस्स खवयस्स। क. पा. सु. पृ. ३२१, ६४–६८.

एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं। पंचणाणावरण-णवदंसणावरण-मिच्छत्त-सोलसकसाय-असादावेदणीयाणं अणुक्कस्सट्ठिदिसंकमो जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० असंखेज्जा पोग्गल-परियट्टा। अथवा, मदि-सुदआवरणाणमणुक्कस्सट्ठिदिसंकमकालो एगसमयमादिं कादूण जाव असंखे० पोग्गलपरियट्टमेत्तो। कुदो? मदि-सुदआवरणाणं संखेज्जपयडीसु अण्णदरपयडीए उक्कस्सट्ठिदिं बंधिदूण बिदियसमए सव्वासिमणुक्कस्सट्ठिदिं बंधिय तदियसमए अवराए पयडीए उक्कस्सट्ठिदिं बंधिय आवलियादीदं संकममाणस्स अणुक्कस्सट्ठिदीए एगादि-समयकालुवलंभादो। अरदि-सोग-भय-दुगुंछा-णवुंसयवेदाणं अणुक्कस्सट्ठिदिसंकमकालो जह० एयसमओ, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टा।

इत्थि-पुरिसवेद-साद-हस्स-रदीणं उक्कस्सट्ठिदिसंकमकालो जह० एगसमओ, उक्क० आवलिया[1]। अणुक्कस्सट्ठिदिसंकमकालो जह० एयसमओ, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। णवरि सादस्स जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० असंखे० पोग्गलपरियट्टा।

देव-णिरयाउआणं उक्कस्सट्ठिदिसंकमो णिसेयट्ठिदिगो[2] णियमा अंतोमुहुत्तो। अणुक्कस्सट्ठिदिसंकमो देव-णिरयाउआणं[3] जह० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि

संक्रमका काल कितना है? वह जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है। पांच ज्ञाना-वरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय और असातावेदनीयके अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। अथवा मतिज्ञाना-वरण और श्रुतज्ञानावरणके अनुत्कृष्ट स्थितिसंक्रमका काल एक समयको आदि करके असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र तक है। इसका कारण यह है कि मतिज्ञानावरण और श्रुतज्ञानावरणकी संख्यात प्रकृतियोंमें किसी एक प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर, द्वितीय समयमें सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिको बांधकर, तृतीय समयमें अन्य प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर आवलिका-तीत उसका संक्रमण करनेवालेके अनुत्कृष्ट स्थितिका एक आदि समय रूप काल पाया जाता है।

अरति, शोक, भय, जुगुप्सा और नपुंसकवेदकी अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रमका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन रूप अनन्त काल मात्र है।

स्त्रीवेद, पुरुषवेद, सातावेदनीय, हास्य और रतिकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रमका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे आवली मात्र है। इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रमका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र अनन्त काल है। विशेष इतना है कि सातावेदनीयका उक्त काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे असंख्यात पुद्गल-परिवर्तन मात्र है।

देवायु और नारकायुकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रमकाल निषेकस्थितिस्वरूप है जो नियमसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है। देवायु और नारकायुकी अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रमका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त

---

१ अप्रतौ 'आवलियाए' इति पाठः। २ अ-काप्रत्योः 'णिसेयट्ठिदि जो', ताप्रतौ 'णिसेयट्ठिदिजो (गो)' इति पाठः। ३ अप्रतौ 'णिरयाणुआणं' इति पाठः।

सादिरेयाणि । मणुस-तिरिक्खाउआणं णिसेयट्ठिदिगो[1] उक्कस्सट्ठिदिसंकमो जह० उक्कस्सेण च अंतोमुहुत्तं । अणुक्कस्सट्ठिदिसंकमो जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि सादिरेयाणि ।

उक्कस्सट्ठिदिं बंधमाणगो जाओ णामपयडीओ बंधदि तासिं उक्कस्सट्ठिदिसंकमकालो जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं । अणुक्कस्सट्ठिदिसंकमकालो जह० अंतोमु०, उक्क० अणुवेल्लिज्जमाणियाणं असंखे० पोग्गलपरियट्टा, उव्वेल्लिज्जमाणियाणं वेसागरोवमसहस्साणि सादिरेयाणि । जासिं णामपयडीणमुक्कस्सट्ठिदिसंकमो वीसं सागरोवमकोडाकोडीओ तीहि आवलियाहि ऊणाओ तासिं पयडीणमुक्कस्सट्ठिदिसंकमकालो जह० एगसमओ, उक्क० एगावलिया । अणुक्कस्सट्ठिदिसंकमकालो जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० अणुव्वेल्लिज्जमाणियाणं असंखे० पोग्गलपरियट्टा, उव्वेल्लिज्जमाणियाणं वेसागरोवमसहस्साणि सादिरेयाणि ।

आहारसरीर-तदंगोवंग-बंधण-संघादाणं उक्कस्सट्ठिदिसंकमकालो जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ । अणुक्कस्सट्ठिदिसंकमकालो जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० पलिदो० असंखे० भागो । तित्थयरणामाए उक्कस्सट्ठिदिसंकमकालो जहण्णुक्क० एगसमओ । अणुक्कस्सट्ठिदिसंकमकालो जह० संखेज्जवाससहस्साणि, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि सादिरेयाणि ।

और उत्कर्षसे साधिक तेतीस सागरोपम प्रमाण है। मनुष्यायु और तिर्यगायुकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रमका काल निषेकस्थिति स्वरूप है जो जघन्य व उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है। उनकी अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रमका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे साधिक तीन पल्योपम मात्र है।

उत्कृष्ट स्थितिको बांधनेवाला जीव जिन नामप्रकृतियोंको बांधता है उनकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रमका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है। उनकी अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रमका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे अनुद्वेल्यमान प्रकृतियोंका असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन तथा उद्वेल्यमान प्रकृतियोंका साधिक दो हजार सागरोपम है। जिन नामप्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका संक्रम तीन आवलियोंसे हीन बीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम प्रमाण है उन प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रमका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे एक आवली मात्र है। उनकी अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रमका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे अनुद्वेल्यमान प्रकृतियोंका असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन तथा उद्वेल्यमान प्रकृतियोंका साधिक दो हजार सागरोपम है।

आहारशरीर तथा उसके आंगोपांग, बन्धन और संघातकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रमका काल जघन्य व उत्कर्षसे एक समय मात्र है। उनकी अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रमका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है। तीर्थंकर नामकर्मकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रमका काल जघन्य व उत्कर्षसे एक समय मात्र है। उसकी अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रमका काल जघन्यसे संख्यात हजार वर्ष और उत्कर्षसे साधिक तेतीस सागरोपम मात्र है।

---

१ अ-काप्रत्योः 'णिसेयट्ठिदीगो', ताप्रतौ 'णिसेयट्ठिदिगो' इति पाठः ।

उच्चागोदस्स उक्कस्सट्ठिदिसंकमकालो जह० एगसमओ, उक्क० आवलिया। णीचागोदस्स जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं। उच्च-णीचागोदाणं अणुक्कस्सट्ठिदिसंकमकालो जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० असंखे० पोग्गलपरियट्टा। एवमुक्कस्सकालो समत्तो।

जहण्णट्ठिदिसंकमकालो। तं जहा— पंचणाणावरणीय- णवदंसणावरणीय- सादासाद-मिच्छत्त-सोलसकसाय-णवणोकसाय-पंचंतराइयाणं जहण्णट्ठिदिसंकमकालो जहण्णुक्क० एगसमओ[1]। अजहण्णट्ठिदिसंकमकालो अणादिओ अपज्जवसिदो अणादिओ सपज्जवसिदो वा। णवरि सोलसकसाय-णवणोकसायाणं अजहण्णस्स तिण्णि भंगा। जो सो सादिओ सपज्जवसिदो तस्स जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जहण्णट्ठिदिसंकमकालो जहण्णुक्क० एगसमओ। अजहण्णट्ठिदिसंकमकालो दोण्णं पि जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि।

चदुण्णमाउआणं जहण्णट्ठिदिसंकमकालो जहण्णुक्क० एगसमओ। अजहण्णट्ठिदिसंकमकालो देव-णिरयाउआणं जह० दसवस्ससहस्साणि सादिरेयाणि, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि साहियाणि। मणुस-तिरिक्खाउआणं अजहण्णट्ठिदिसंकमकालो जह०

उच्चगोत्रकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रमका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे आवली मात्र है। नीचगोत्रकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रमका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है। उच्चगोत्र और नीचगोत्रकी अनुत्कृष्ट स्थितिके संक्रमका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। इस प्रकार उत्कृष्ट काल समाप्त हुआ।

जघन्य स्थितिके संक्रमकालकी प्ररूपणा करते हैं। यथा—पांच ज्ञानावरणीय, नौ दर्शनावरणीय, सातावेदनीय, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नौ नोकषाय और पांच अन्तराय; इनकी जघन्य स्थितिके संक्रमका काल जघन्य व उत्कर्षसे एक समय मात्र है। इनकी अजघन्य स्थितिके संक्रमका काल अनादि-अपर्यवसित और अनादि-सपर्यवसित भी है। विशेष इतना है कि सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी अजघन्य स्थिति सम्बन्धी संक्रमकालके तीन भंग हैं। उनमें जो सादि-सपर्यवसित है वह जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिके संक्रमका काल जघन्य व उत्कर्षसे एक समय मात्र है। अजघन्य स्थितिके संक्रमका काल दोनोंका ही जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे साधिक दो छयासठ सागरोपम मात्र है।

चार आयु कर्मोंकी जघन्य स्थितिके संक्रमका काल जघन्य व उत्कर्षसे एक समय मात्र है। अजघन्य स्थितिके संक्रमका काल देवायु और नारकायुका जघन्यसे साधिक दस हजार वर्ष और उत्कर्षसे साधिक तेतीस सागरोपम मात्र है। मनुष्यायु और तिर्यंचआयुकी अजघन्य स्थितिके

---

१ अट्ठावीसाए पयडीणं जहण्णट्ठिदिसंकमकालो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ। णवरि इत्थि-णवुंसयवेद-छण्णोकसायाणं जहण्णट्ठिदिसंकमकालो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। क. पा. सु. पृ. ३२२, ७८-८१. २ अ-काप्रत्योः 'जहण्ण-' इति पाठः। ३ प्रतिषु 'जहण्ण' इति पाठः।

एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं। कुदो मणुसाउअस्स एगसमओ ? आउए आवलियाए असंखे० भागेणाहियदोआवलियावसेसे आउअस्स विणट्ठोकड्डणसंकमे[2] अप्पमत्ते दुसमयाहियावलियावसेसपमत्तगुणं पडिवण्णे कयएगसमयअजहण्णसंकमे[3] विदियसमए जहण्णसंकमुवलंभादो। उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि सादिरेयाणि।

णिरयगइ-णिरयगइपाओग्गाणुपुव्वी-तिरिक्खगइ-तिरिक्खगइपाओग्गाणुपुव्वी-एइंदिय-बेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदियजादि-आदावुज्जोव-थावर-सुहुम-साहारणसरीरणामाणं जहण्णट्ठिदिसंकमकालो जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ। अजहण्णट्ठिदिसंकमकालो अणुव्वेल्लिज्जमाणियाणं अणादियो अपज्जवसिदो अणादियो सपज्जवसिदो वा। उव्वेल्लिज्जमाणियाणं अजहण्णट्ठिदिसंकमकालो जहण्णेण अट्ठवस्साणि सादिरेयाणि, उक्क० बेसागरोवमसहस्साणि साहियाणि।

वुत्तसेसाणं णामपयडीणं जहण्णट्ठिदिसंकमकालो जहण्णुक्क० एयसमओ। उव्वेल्लिज्जमाणियाणं अजहण्णट्ठिदिसंकमकालो जह० अट्ठवस्साणि सादिरेयाणि। उक्कस्सेण मणुसगइ-मणुसगइपाओग्गाणुपुव्वीणं असंखेज्जपोग्गलपरियट्टा, देवगइ-देवगइपाओग्गाणु-

---

संक्रमका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है।

शंका— मनुष्यायुका एक समय मात्र उक्त काल कैसे बनता है ?

समाधान— कारण यह कि आयुमें आवलीके असंख्यातवें भागसे अधिक दो आवली कालके शेष रहनेपर जिसके आयुका अपकर्षण व संक्रम नष्ट हो चुका है ऐसे अप्रमत्तसंयतके दो समय अधिक आवली मात्र शेष प्रमत्त गुणस्थानको प्राप्त होकर एक समय अजघन्य संक्रमके करनेपर द्वितीय समयमें जघन्य संक्रम पाया जाता है।

उनकी अजघन्य स्थितिके संक्रमका काल उत्कर्षसे साधिक तीन पल्योपम मात्र है।

नरकगति, नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, तिर्यग्गति, तिर्यग्गतिप्रायोग्यानुपूर्वी, एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जाति, आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म और साधारणशरीर नामकर्मोंकी जघन्य स्थितिके संक्रमका काल जघन्य व उत्कर्षसे एक समय मात्र है। अजघन्य स्थितिके संक्रमका काल अनुद्वेल्यमान प्रकृतियोंका अनादि-अपर्यवसित और अनादि-सपर्यवसित भी है। उद्वेल्यमान प्रकृतियोंकी अजघन्य स्थितिके संक्रमका काल जघन्यसे साधिक आठ वर्ष और उत्कर्षसे साधिक दो हजार सागरोपम मात्र है।

उपर्युक्त प्रकृतियोंके अतिरिक्त जो शेष नामप्रकृतियां हैं उनकी जघन्य स्थितिके संक्रमका काल जघन्य व उत्कर्षसे एक समय मात्र है। उद्वेल्यमान प्रकृतियोंकी अजघन्य स्थितिके संक्रमका काल जघन्यसे साधिक आठ वर्ष मात्र है। उत्कर्षसे वह मनुष्यगति और मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वीका असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन तथा देवगति, देवगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, वैक्रियिक-

---

१ मप्रतौ 'उक्क०' इति पदं नास्ति। २ अ-काप्रत्योः 'संकमो', ताप्रतौ 'संकमो (मे)' इति पाठः। ३ अ-काप्रत्योः 'पडिवण्णो कयएगसमय', ताप्रतौ 'पडिवण्णो (ण्णे) क (ए) यसमय' इति पाठः।

पुव्वीणं वेउव्वियसरीर-वेउव्वियसरीरअंगोवंग-बंधण-संघादाणं च वेसागरोवमसहस्साणि सादियाणि । आहारसरीर-आहारसरीरअंगोवंग-बंधण-संघादाणं जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० पलिदोवमस्स असंखे० भागो। तित्थयरणामाए जहण्णट्ठिदिसंकमकालो जहण्णुक्क० एगसमओ । अजहण्णट्ठिदिसंकमकालो जह० संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि सादिरेयाणि । सेसाणं कम्माणं अजहण्णट्ठिदिसंकमकालो अणादिओ अपज्जवसिदो अणादिओ सपज्जवसिदो वा ।

उच्च-णीचगोदाणं जहण्णट्ठिदिसंकमकालो जहण्णुक्क० एगसमओ । अजहण्णट्ठिदिसंकमकालो अणादिओ अपज्जवसिदो अणादिओ सपज्जवसिदो वा । णवरि उच्चागोदस्स अजहण्णट्ठिदिसंकमकालो जह० अट्ठवस्साणि सादिरेयाणि, उक्क० असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । एवं कालो समत्तो ।

एगजीवेण उक्कस्संतरं— मदि-सुदआवरणाणं उक्कस्सट्ठिदिसंकामयंतरं जह० एगसमओ, उक्क० असंखे० पोग्गलपरियट्टा । तिण्णिणाणावरण-णवदंसणावरण-सादासाद-मिच्छत्त-सोलसकसाय-णवणोकसायाणमुक्कस्सट्ठिदिसंकामयंतरं[1] जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० असंखे० पोग्गलपरियट्टा । णवरि णवणोकसायाणं उक्कस्सट्ठिदिसंकामगंतरं[2] जह० एग-

शरीर, वैक्रियिकशरीरांगोपांग, वैक्रियिकबन्धन और वैक्रियिकसंघातका साधिक दो हजार सागरोपम मात्र है । आहारकशरीर, आहारकशरीरांगोपांग, आहारकबन्धन और आहारकसंघातका उक्त काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त व उत्कर्षसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है । तीर्थंकर नामकर्मकी जघन्य स्थितिके संक्रमका काल जघन्य व उत्कर्षसे एक समय मात्र है। उसकी अजघन्य स्थितिके संक्रमका काल जघन्यसे संख्यात हजार वर्ष और उत्कर्षसे साधिक तेतीस सागरोपम मात्र है । शेष कर्मोंकी अजघन्य स्थितिके संक्रमका काल अनादि-अपर्यवसित और अनादि-सपर्यवसित भी है ।

उच्च और नीच गोत्रकी जघन्य स्थितिके संक्रमका काल जघन्य व उत्कर्षसे एक समय मात्र है । उनकी अजघन्य स्थितिके संक्रमका काल अनादि-अपर्यवसित और अनादि-सपर्यवसित भी है । विशेष इतना है कि उच्चगोत्रकी अजघन्य स्थितिके संक्रमका काल जघन्यसे साधिक आठ वर्ष और उत्कर्षसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र है । इस प्रकार कालप्ररूपणा समाप्त हुई ।

एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्थिति सम्बन्धी संक्रमके अन्तरकालकी प्ररूपणा की जाती है— मतिज्ञानावरण और श्रुतज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका अन्तरकाल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र है । शेष तीन ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका अन्तरकाल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र है । विशेष इतना है कि नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका अन्तरकाल

१ अप्रतौ 'समयंतरं', काप्रतौ 'सामयंतरं इति पाठः । २ अप्रतौ 'समयंतरं', ताप्रतौ 'सं० अंतरं' इति पाठः ।

समओ। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं उक्कस्सट्ठिदिसंकामयंतरं जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० उवड्ढ-पोग्गलपरियट्टं। पंचंतराइयाणं उक्कस्सट्ठिदिसंकामयंतरं जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० असंखे० पोग्गलपरियट्टा।

देव-णिरयाउआणं उक्क० ट्ठिदिसंकामयंतरं जह० अंतोमुहुत्तं। उक्क० देवाउअस्स उवड्ढपोग्गलपरियट्टं, णिरयाउअस्स असंखे० पोग्गलपरियट्टा। जट्ठिदिं[1] पडुच्च देव-णिरयाउआणं उक्कस्सट्ठिदिसंकामयंतरं जह० समऊणपुव्वकोडी दसवस्ससहस्साणि च, उक्क० तं चेव। मणुस-तिरिक्खाउआणं उक्कस्सट्ठिदिसंकामयंतरं जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० असंखे० पोग्गलपरियट्टा। जट्ठिदिं पडुच्च जह० पुव्वकोडी समऊणा। उक्कस्संतरं तं चेव।

उक्कस्सट्ठिदिं बंधमाणो जाओ णामपयडीओ[2] बंधदि तासिं णामपयडीणं उक्कस्स-ट्ठिदिसंकामयंतरं जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० असंखे० पोग्गलपरियट्टा। सेसाणं णामपयडीणं उक्कस्सट्ठिदिसंकामयंतरं जह० एयसमओ, उक्क० असंखे० पोग्गलपरियट्टा। आहार-सरीर-आहारसरीरंगोवंग-बंधण-संघादाणं उक्कस्सट्ठिदिसंकामयंतरं जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। तित्थयरणामाए उक्कस्सट्ठिदिसंकामयंतरं णत्थि।

जघन्यसे एक समय मात्र है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका अन्तरकाल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। पांच अन्तराय कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका अन्तरकाल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे असंख्यात पुद्गल परिवर्तन मात्र है।

देवायु और नारकायुकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका अन्तरकाल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त है। उत्कर्षसे वह देवायुका उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन तथा नारकायुका असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। जस्थितिकी अपेक्षा देवायु और नारकायुकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका अन्तरकाल जघन्यसे एक समय कम एक पूर्वकोटि और दस हजार वर्ष तथा उत्कर्षसे भी उतना मात्र ही है। मनुष्यायु और तिर्यगायुकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका अन्तरकाल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। जस्थितिकी अपेक्षा वह जघन्यसे एक समय कम पूर्वकोटि प्रमाण है। उत्कृष्ट अन्तरकाल भी उसका वही है।

उत्कृष्ट स्थितिको बांधनेवाला जीव जिन नामकर्मकी प्रकृतियोंको बांधता है उन नाम-प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका अन्तर जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। शेष नामप्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका अन्तरकाल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। आहारशरीर, आहारशरीरांगोपांग, आहारकशरीरबन्धन और आहारकशरीरसंघातकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका अन्तरकाल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। तीर्थंकर नामकर्मकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका अन्तरकाल सम्भव नहीं है।

---

१ ताप्रतौ 'जं ट्ठिदिं' इति पाठः। २ अप्रतौ 'सुणाम' इति पाठः।

उच्च-णीचागोदाणं उक्क० ट्ठिदिसंकामयंतरं जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। एवमेयजीवेण उक्कस्सट्ठिदिसंकामयंतरं समत्तं।

जहण्णट्ठिदिसंकामयंतरं। तं जहा— आउअवज्जाणं कम्माणं जहण्णट्ठिदिसंकामयंतरं णत्थि[1]। देव-णिरयाउआणं जहण्णट्ठिदिसंकामयंतरं जह० दसवस्ससहस्साणि सादिरेयाणि, उक्क० पयडिअंतरं। तिरिक्ख-मणुस्साउआणं जह० ट्ठिदि० अंतरं जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं समऊणं, उक्क० पयडिअंतरं। अणंताणुबंधीणं जह० ट्ठिदि० अंतरं[2] जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं[3]। अवसेसाणं[4] पयडीणं अजहण्णट्ठिदिसंकामयंतरस्स पयडिअंतरभंगो। एवं जहण्णट्ठिदिसंकामयंतरं समत्तं।

णाणाजीवेहि भंगविचओ दुविहो उक्कस्सपदभंगविचओ जहण्णपदभंगविचओ[5] चेदि। तत्थ अट्ठपदं। तं जहा— जो उक्कस्सियाए ट्ठिदीए संकामओ सो अणुक्कस्सियाए ट्ठिदीए असंकामओ। जो अणुक्कस्सियाए ट्ठिदीए संकामओ सो उक्कस्सियाए ट्ठिदीए असंकामगो। जेसिं पयडिसंतमत्थि तेसु पयदं[6], जेसिं णत्थि तेहि अव्ववहारो। एदेण अट्ठपदेण णाणावरणस्स उक्कस्सियाए ट्ठिदीए सिया सव्वे जीवा असंकामया, सिया

ऊंच और नीच गोत्रकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका अन्तर जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। इस प्रकार एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकका अन्तर समाप्त हुआ।

जघन्य स्थितिके संक्रामकके अन्तरकालकी प्ररूपणा की जाती है। यथा— आयु कर्मोंको छोड़कर शेष कर्मोंकी जघन्य स्थितिके संक्रामकका अन्तरकाल सम्भव नहीं है। देवायु और नारकायुकी जघन्य स्थितिके संक्रामकका अन्तरकाल जघन्यसे साधिक दस हजार वर्ष और उत्कर्षसे प्रकृतिसंक्रमके अन्तरके समान है। तिर्यगायु और मनुष्यायुकी जघन्य स्थितिके संक्रामकका अन्तर जघन्यसे एक समय कम क्षुद्रभवग्रहण और उत्कर्षसे प्रकृतिसंक्रामकके अन्तर जैसा है। अनन्तानुबन्धी कषायोंकी जघन्य स्थितिके संक्रामकका अन्तरकाल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। शेष प्रकृतियोंकी अजघन्य स्थितिके संक्रामकका अन्तरकाल प्रकृतिसंक्रामकके अन्तर जैसा है। इस प्रकार जघन्य-स्थिति-संक्रामकके अन्तरकी प्ररूपणा समाप्त हुई।

नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय दो प्रकार है— उत्कृष्ट पदविषयक भंगविचय और जघन्य पदविषयक भंगविचय। उनमें अर्थपद इस प्रकार है— जो उत्कृष्ट स्थितिका संक्रामक होता है वह अनुत्कृष्ट स्थितिका असंक्रामक होता है। जो अनुत्कृष्ट स्थितिका संक्रामक होता है वह उत्कृष्ट स्थितिका असंक्रामक होता है। जिन प्रकृतियोंका सत्त्व है वे यहां प्रकृत हैं, जिनका सत्त्व नहीं है वे यहां अव्यवहार्य हैं। इस अर्थपदके अनुसार ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट,

---

१ एत्तो जहण्णयमंतरं। सव्वासिं पयडीणं णत्थि अंतरं। क. पा. सु. पृ. ३२२, ८४–८५. २ अप्रतौ 'ट्ठिदिअंतरे' इति पाठः। ३ णवरि अणंताणुबंधीणं जहण्णट्ठिदिसंकामयंतरं जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। क. पा. सु. पृ. ३२२, ८६–८७. ४ अप्रतौ 'उवसेसाणं इति पाठः। ५ प्रतिषु 'जहण्णट्ठिदिभंगविचओ' इति पाठः। ६ अ-काप्रत्योः 'पदं' इति पाठः।

असंकामया च संकामओ च[1], सिया असंकामया च संकामया च, एवं तिण्णिभंगा। अणुक्कस्सियाए ट्ठिदीए सिया सव्वे जीवा संकामया, सिया संकामया च असंकामओ च, सिया संकामया च असंकामया च। एवं सव्वासिं पयडीणं णाणाजीवेहि भंगविचओ णाणावरणस्सेव णेयव्वो।

जहण्णपदभंगविचयस्स उक्कस्सपदभंगविचयभंगो[2]। णवरि तिरिक्खाउअस्स जहण्णाजहण्णट्ठिदिसंकामया णियमा अत्थि।

णाणाजीवेहि कालो। तं जहा— सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं णिरयाउअस्स च जट्ठिदिसंकामओ त्ति कादूण उक्कस्सट्ठिदिसंकमकालो जह० एगसमओ, उक्क० आवलि० असंखे० भागो[3]। मणुस्स-तिरिक्ख-देवाउआणं आहारसरीर-आहारसरीरंगोवंग-बंधण-संघाद-तित्थयराणं उक्कस्सट्ठिदिसंकमकालो जह० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया। सेसाणं कम्माणं उक्कस्सट्ठिदिसंकमकालो जह० एगसमओ, उक्क० पलिदोवमस्स असंखे० भागो। सव्वकम्माणं पि अणुक्कस्सट्ठिदिसंकमकालो सव्वद्धा।

णाणाजीवेहि जहण्णट्ठिदिसंकमकालो। तं जहा— णिरय-मणुस-देवाउआणं अणंताणु-

---

स्थितिके कदाचित् सब जीव असंक्रामक होते हैं, कदाचित् बहुत असंक्रामक और एक संक्रामक होता है, कदाचित् बहुत असंक्रामक और बहुत संक्रामक होते हैं। इस प्रकारसे यहां तीन भंग हैं। ज्ञानावरणकी अनुत्कृष्ट स्थितिके कदाचित् सब जीव संक्रामक होते हैं, कदाचित् बहुत संक्रामक और एक असंक्रामक होता है, कदाचित् बहुत संक्रामक और बहुत असंक्रामक भी होते हैं। इस प्रकार नाना जीवोंकी अपेक्षा सब प्रकृतियोंके भंगविचयको ज्ञानावरणके समान ही ले जाना चाहिये।

जघन्य पदभंगविचयकी प्ररूपणा उत्कृष्ट पदभंगविचयके समान है। विशेष इतना है कि तिर्यगायुकी जघन्य व अजघन्य स्थितिके संक्रामक नियमसे बहुत हैं।

नाना जीवोंकी अपेक्षा कालकी प्ररूपणा की जाती है। यथा— सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और नारकायुकी जस्थितिके संक्रामक हैं, इस कारण उनकी उत्कृष्ट स्थितिका संक्रमकाल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र है। मनुष्यायु, तिर्यगायु, देवायु, आहारकशरीर, आहारकशरीरांगोपांग, आहारकबन्धन, आहारकसंघात और तीर्थंकर; इनकी उत्कृष्ट स्थितिका संक्रमकाल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे संख्यात समय मात्र है। शेष कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थितिका संक्रमकाल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है। सभी कर्मोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका संक्रमकाल सर्वकाल है।

नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य स्थितिके संक्रमकालकी प्ररूपणा की जाती है। यथा— नारकायु, मनुष्यायु, देवायु और अनन्तानुबन्धी कषायोंकी जघन्य स्थितिका संक्रमकाल

---

१ ताप्रतौ 'असंकामओ च संकामया च' इति पाठः। २ प्रतिपु 'विचयपदभंगो' इति पाठः। ३ सव्वासिं पयडीणमुक्कस्सट्ठिदिसंकमो केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सट्ठिदिसंकमो केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो। क. पा. सु. पृ. ३२३, ९४-९९

बंधीणं च जहण्णट्ठिदिसंकमकालो जह० एगसमओ, उक्क० आवलि० असंखे० भागो[1]। तिरिक्खाउअस्स जहण्णट्ठिदिसंकामया केवचिरं० ? सव्वद्धा। परभवियं पडुच्च आवलि० असंखे० भागो। सेसाणं कम्माणं जह० ट्ठिदिसंकामया केवचिरं० ? जह० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया। सव्वकम्माणं पि अजहण्णट्ठिदिसंकामया केवचिरं० ? सव्वद्धा[2]। एवं णाणाजीवेहि कालो समत्तो।

णाणाजीवेहि अंतरं। तं जहा— णिरयाउअस्स उक्कस्सट्ठिदिसंकामयंतरं जट्ठिदि-संकामया त्ति जह० एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे० भागो। पंचणाणावरण-णव-दंसणावरण-सादासाद-सोलसकसाय-णवणोकसाय-मणुस-तिरिक्ख-देवाउआणं मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वासिं णामपयडीणं उच्च-णीचगोद-पंचंतराइयाणं च उक्कस्स-ट्ठिदिसंकामयंतरं जह० एगसमओ, उक्क० अंगुलस्स असंखे० भागो।

णाणाजीवेहि जहण्णट्ठिदिसंकामयंतरं। तं जहा— पंचणाणावरण-णवदंसणावरण-सादासाद-मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-अट्ठकसाय-छण्णोकसाय-लोहसंजलणाणं सव्वासिंणामपयडीणमुच्च-णीचागोद-पंचंतराइयाणं च जह० ट्ठिदिसंकामयंतरं णाणाजीवे पडुच्च जह० एगसमओ, उक्क० छम्मासा। अणंताणुबंधीणं जह० ट्ठिदिसंकामयंतरं जह०

जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र है। तिर्यगायुकी जघन्य स्थितिके संक्रामकोंका कितना काल है ? सर्वकाल है। परभविककी अपेक्षा वह आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र है। शेष कर्मोंकी जघन्य स्थितिके संक्रामकोंका कितना काल है ? वह जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे संख्यात समय मात्र है। सभी कर्मोंकी अजघन्य स्थितिके संक्रामकोंका काल कितना है ? सर्वकाल है। इस प्रकार नाना जीवोंकी अपेक्षा कालकी प्ररूपणा समाप्त हुई।

नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तरकी प्ररूपणा की जाती है। यथा— नारकायुकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका अन्तर, जस्थितिके संक्रामक रहनेके कारण जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र होता है। पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, सोलह कषाय, नौ नोकषाय, मनुष्यायु, तिर्यगायु, देवायु, मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सब नामप्रकृतियां, उच्चगोत्र, नीचगोत्र और पांच अन्तराय; इनकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रामकोंका अन्तर जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र होता है।

नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य स्थितिके संक्रामकोंका अन्तर इस प्रकार है—पांच ज्ञाना-वरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, आठ कषाय, छह नोकषाय, संज्वलनलोभ, सब नामप्रकृतियां, उच्चगोत्र, नीचगोत्र और पांच अन्तराय; इनकी जघन्य स्थितिके संक्रामकोंका अन्तर नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे छह मास प्रमाण होता है। अनन्तानुबन्धी कषायोंकी जघन्य स्थितिके संक्रामकोंका अन्तर

---

१ णवरि अणंताणुबंधीणं जहण्णट्ठिदिसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो। क. पा. सु. पृ. ३२४, १०४–६. २ मप्रतौ 'सव्वसव्वद्धा' इति पाठः।

एगसमओ, उक्क० चदुवीसमहोरत्ताणि सादिरेयाणि। तिसंजलण-पुरिसवेदाणं जह० एयसमओ, उक्क० वस्सं सादिरेयं। इत्थि-णवुंसयवेदाणं जह० एगसमओ, उक्क० वास-पुधत्तं। तिरिक्खाउअस्स णत्थि अंतरं। तिण्णमाउआणं जह० एगसमओ, उक्क० वारस मुहुत्ता। एवमंतरं समत्तं।

अप्पाउहुअं[1]— उक्क० मणुस-तिरिक्खाउआणं जाओ ट्ठिदीओ संकामिज्जंति ताओ थोवाओ। जट्ठिदीयो विसेसा०। देव-णिरयाउआणं जाओ ट्ठिदीयो संकामिज्जंति[3] ताओ संखेज्जगुणाओ। जट्ठिदीओ विसेसाहियाओ। आहारसरीर० संखेज्जगुणाओ। जट्ठिदीओ विसे०। देव-मणुसगइ-जसकित्ति-उच्चागोदाणं जाओ ट्ठिदीओ [संकामिज्जंति ताओ] संखे० गुणाओ। जट्ठिदीयो विसे०। णिरय-तिरिक्खगइ-अजसकित्ति-चदुसरीर-णीचागोदाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ तत्तियाओ चेव। जट्ठिदीयो विसेसाहियाओ। सादस्स जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसेसाहियाओ। जट्ठिदीयो विसे० ओ। पंचणाणावरण-णवदंसणावरण-असाद-पंचंतराइयाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ तत्तियाओ चेव। जट्ठिदीयो विसे० ओ। णवणोकसायाणं जाओ ट्ठिदीयो ताओ विसे० ओ। जट्ठिदीयो विसे० ओ। सोलसण्णं

जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे साधिक चौबीस दिन-रात्रि प्रमाण होता है। तीन संज्वलन कषाय और पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिके संक्रामकोंका अन्तर जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे साधिक एक वर्ष मात्र होता है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका उक्त अन्तर जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे वर्षपृथक्त्व मात्र होता है। तिर्यगायुका वह अन्तर सम्भव नहीं है। शेष तीन आयु कर्मोंका उक्त अन्तर जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे बारह मुहूर्त मात्र होता है। इस प्रकार अन्तरका कथन समाप्त हुआ।

अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा की जाती है— उत्कर्षसे मनुष्यायु और तिर्यगायुकी जो स्थितियां संक्रमणको प्राप्त होती हैं वे स्तोक हैं। जस्थितियां विशेष अधिक हैं। देवायु और नारकायुकी जो स्थितियां संक्रमणको प्राप्त होती हैं वे उनसे संख्यातगुणी हैं। जस्थितियां विशेष अधिक हैं। आहारशरीरकी संक्रमणको प्राप्त होनेवाली स्थितियां संख्यातगुणी हैं। जस्थितियां विशेष अधिक हैं। देवगति, मनुष्यगति, यशकीर्ति और उच्चगोत्रकी जो स्थितियां संक्रान्त होती हैं वे संख्यात-गुणी हैं। जस्थियां विशेष अधिक हैं। नरकगति, तिर्यग्गति, अयशकीर्ति व चार शरीर नामकर्मोंकी तथा नीच गोत्रकी जो स्थितियां संक्रमणको प्राप्त होती हैं वे उतनी मात्र ही हैं। जस्थितियां विशेष अधिक हैं। सातावेदनीयकी जो स्थितियां संक्रान्त होती हैं वे विशेष अधिक हैं। जस्थितियां विशेष अधिक हैं। पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय और पांच अन्तराय; इनकी जो स्थितियां संक्रान्त होती हैं वे उतनी मात्र ही हैं। जस्थितियां विशेष अधिक हैं। नौ नोकषायों-की जो स्थितियां संक्रान्त होती हैं वे विशेष अधिक हैं। जस्थितियां विशेष अधिक हैं।

---

१ अप्रतौ 'अप्पाबहुअ०' इति पाठः। २ अप्रतौ 'विसेसाहिओ' इति पाठः। ३ अप्रतौ 'संकामिज्जंत' इति पाठः।

कसायाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ तुल्लाओ। जट्ठिदीओ विसे० ओ। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसे० ओ। जट्ठिदीओ विसे० ओ। मिच्छत्तस्स जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसे० ओ। जट्ठिदीयो विसेसाहियाओ।

णिरयगईए णेरइएसु मणुस-तिरिक्खाउआणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ थोवाओ। जट्ठिदीओ विसेसाहियाओ। णिरयाउअस्स जाओ ट्ठिदीयो ताओ असंखे० गुणाओ। जट्ठिदीओ[1] विसे० ओ। आहारसरीरस्स जाओ ट्ठिदीओ ताओ संखे० गुणाओ। जट्ठिदीयो विसे० ओ। देवगईए जाओ ट्ठिदीओ ताओ संखे० गुणाओ। जट्ठिदी० विसे०। मणुसगइ-जसकित्ति-उच्चागोदाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसे०। जट्ठिदीयो विसे०। णिरयगई-वेउव्वियसरीर-णीचागोद-ओरालिय-तेजा-कम्मइयसरीर- अजसकित्तीणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ तत्तियाओ चेव। जट्ठिदीयो विसे० ओ। सादस्स जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसे० ओ। जट्ठिदीयो विसे०। पंचणाणावरण-णवदंसणावरण-असाद-पंचंतराइयाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ तत्तियाओ चेव। जट्ठिदीयो[3] विसे० ओ। णवणोकसायाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसे० ओ। जट्ठिदीयो विसे० ओ। सोलसकसायाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ तत्तियाओ चेव। जट्ठिदीयो विसे०। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जाओ ट्ठिदीओ

सोलह कपायोंकी जो स्थितियां संक्रान्त होती हैं वे समान रूपसे तुल्य होकर उतनी मात्र ही हैं। जस्थितियां विशेप अधिक हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जो स्थितियां संक्रान्त होती हैं वे विशेप अधिक हैं। जस्थितियां विशेप अधिक हैं। मिथ्यात्वकी जो स्थितियां संक्रान्त होती हैं वे विशेप अधिक हैं। जस्थितियां विशेप अधिक हैं।

नरकगतिमें नारकियोंमें मनुष्यायु और तिर्यंगायुकी जो उक्त स्थितियां हैं वे स्तोक हैं। जस्थितियां विशेप अधिक हैं। नारकायुकी जो उक्त स्थितियां हैं वे असंख्यातगुणी हैं। जस्थितियां विशेप अधिक हैं। आहारशरीरकी जो उक्त स्थितियां हैं वे संख्यातगुणी हैं। जस्थितियां विशेप अधिक हैं। देवगतिकी जो उक्त स्थितियां हैं वे संख्यातगुणी हैं। जस्थितियां विशेप अधिक हैं। मनुष्यगति, यशकीर्ति और उच्चगोत्रकी जो उक्त स्थितियां हैं वे विशेप अधिक हैं। जस्थितियां विशेप अधिक हैं। नरकगति, वैक्रियिकशरीर, नीचगोत्र, औदारिक, तैजस एवं कार्मणशरीर तथा अयशःकीर्तिकी जो उक्त स्थितियां हैं वे उतनी मात्र ही हैं। जस्थितियां विशेप अधिक हैं। सातावेदनीयकी जो उक्त स्थितियां हैं वे विशेप अधिक हैं। जस्थितियां विशेप अधिक हैं। पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय और पांच अन्तरायकी जो उक्त स्थितियां हैं वे उतनी मात्र ही हैं। जस्थितियां विशेप अधिक हैं। नौ नोकपायोंकी जो उक्त स्थितियां हैं वे विशेप अधिक हैं। जस्थितियां विशेप अधिक हैं। सोलह कपायोंकी जो उक्त स्थितियां हैं वे उतनी मात्र ही हैं। जस्थितियां विशेप अधिक हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जो उक्त

---

१ अप्रतौ 'जाओ ट्ठिदीयो', काप्रतौ 'ज० ट्ठिदीयो' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'विसे० संखे० गुणाओ। णिरयगइ' इति पाठः। ३ अप्रतौ 'जहण्णट्ठिदीयो', का-ताप्रत्योः 'ज० ट्ठिदीयो' इति पाठः।

ताओ विसे० ओ । जट्ठिदीयो विसे० ओ । मिच्छत्तस्स जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसे० । जट्ठिदीयो विसेसा० ।

तिरिक्खगईए मणुस्साउअस्स जाओ ट्ठिदीओ ताओ थोवाओ । तिरिक्खाउअस्स जाओ ट्ठिदीओ [ताओ] विसे० ओ । दोण्णं जट्ठिदीओ विसे० ओ । देवाउअस्स जाओ ट्ठिदीओ ताओ संखे० गुणाओ । जट्ठिदीयो विसे० । णिरयाउअस्स जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसे० । जट्ठिदी० विसे० । आहारसरीरस्स जाओ ट्ठिदीओ ताओ संखेज्ज-गुणाओ । जट्ठिदीओ विसे० ओ । मणुसगइ-देवगइ-जसकित्ति-उच्चागोदाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ संखे० गुणाओ । जट्ठिदीओ विसे० । णिरयगइ-तिरिक्खगइ-चदुसरीर-अजसकित्ति-णीचागोदाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ तुल्लाओ । जट्ठिदीओ विसे० ओ । सादस्स जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसे० । जट्ठिदीओ विसे० ओ । तीसियाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ तत्तियाओ चेव, जट्ठिदीयो विसे० ओ । णवणोकसायाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसे० ओ । जट्ठिदीयो विसे० ओ । सोलसण्णं कसायाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ तत्तियाओ[2] चेव । जट्ठिदीयो विसे० ओ। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसे० ओ। जट्ठिदीयो विसे० ओ । मिच्छत्तस्स जाओ ट्ठिदीओ विसे० ओ । जट्ठिदी विसे० ओ । मणुस्सेसु देवेसु एइंदिएसु च एदेण बीजपदेण णेयव्वं ।

स्थितियां हैं वे विशेष अधिक हैं । जस्थितियां विशेष अधिक हैं । मिथ्यात्वकी जो उक्त स्थितियां हैं वे विशेष अधिक हैं । जस्थितियां विशेष अधिक हैं ।

तिर्यंचगतिमें मनुष्यायुकी जो स्थितियां संक्रमणको प्राप्त होती हैं वे स्तोक हैं । तिर्यगायुकी जो उक्त स्थितियां हैं वे विशेष अधिक हैं । दोनोंकी जस्थितियां विशेष अधिक हैं । देवायुकी जो उक्त स्थितियां हैं वे संख्यातगुणी हैं । जस्थितियां विशेष अधिक हैं । नारकायुकी जो उक्त स्थितियां हैं वे विशेष अधिक हैं । जस्थितियां विशेष अधिक हैं । आहारशरीरकी जो उक्त स्थितियां हैं वे संख्यातगुणी हैं । जस्थितियां विशेष अधिक हैं । मनुष्यगति, देवगति, यशकीर्ति और उच्चगोत्रकी जो उक्त स्थितियां हैं वे संख्यातगुणी हैं । जस्थितियां विशेष अधिक हैं । नरकगति, तिर्यंगति, चार शरीर, अयशकीर्ति और नीचगोत्रकी जो उक्त स्थितियां हैं वे तुल्य होकर उतनी मात्र ही हैं । जस्थितियां विशेष अधिक हैं । सातावेदनीयकी जो उक्त स्थितियां हैं वे विशेष अधिक हैं । जस्थितियां विशेष अधिक हैं । तीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम प्रमाण स्थितिवाले कर्मोंकी जो उक्त स्थितियां हैं वे उतनी मात्र ही हैं । जस्थितियां विशेष अधिक हैं । नौ नोकषायोंकी जो उक्त स्थितियां हैं वे विशेष अधिक हैं । जस्थितियां विशेष अधिक हैं । सोलह कषायोंकी जो उक्त स्थितियां हैं वे उतनी मात्र ही हैं । जस्थितियां विशेष अधिक हैं । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जो उक्त स्थितियां हैं वे विशेष अधिक हैं । जस्थितियां विशेष अधिक हैं । मिथ्यात्वकी जो उक्त स्थितियां हैं वे विशेष अधिक हैं । जस्थितियां विशेष अधिक हैं । मनुष्यों, देवों और एकेन्द्रियोंमें भी प्रकृतिअल्पबहुत्वको इस बीजपदसे ले जाना चाहिये ।

---

१ ताप्रतौ नास्तीदं वाक्यम् । २ अप्रतौ 'ट्ठिदीओ तत्तियाओ' इति पाठः ।

जहण्णएण पंचणाणावरणीय- छदंसणावरणीय -सम्मत्त-लोहसंजलण- चत्तारिआउ-पंचंतराइयाणं जह० ट्ठिदिसंकमो एगा ट्ठिदी। जट्ठिदीओ असंखेज्जगुणाओ। णिद्दा-पयलाणं जट्ठिदीओ संखे० गुणाओ। कुदो? आवलि० असंखे० भाएणब्भहियदोआवलियं[1]-पमाणत्तादो। देवगइ-वेउव्वियसरीर-आहारसरीर-अजसकित्ति-णीचागोदाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ संखे० गुणाओ। मणुसगइ-ओरालिय-तेजा-कम्मइयसरीर-जसकित्ति-उच्चागोदाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसेसा०। सव्वासिं जट्ठिदीयो विसेसा०। सादासादाणं जाओ[2] ट्ठिदीओ ताओ विसेसा०। जट्ठिदिसंकमो विसे०। मायासंजलण० जाओ ट्ठिदीओ ताओ संखे० गुणाओ। जट्ठिदी० विसे०। माणे विसे०। कोधे विसे०। पुरिस० संखे० गुणाओ। छण्णोकसाय० संखे० गुणाओ। इत्थि-णवुंसयवेद० असंखे० गुणाओ[3]। थीणगिद्धितियस्स जहण्णट्ठिदी असंखे० गुणा। णिरय-तिरिक्खगईणं असं० गुणाओ। अट्ठकसायाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ असंखे० गुणाओ। सम्मामिच्छत्तस्स असंखे० गुणाओ। मिच्छत्तस्स असंखे० गुणाओ। अणंताणुबंधीणं असंखेज्जगुणाओ। सव्वासिं जट्ठिदीयो विसे० ओ।

णिरयगईए णिरयाउअस्स सम्मत्तस्स य जहण्णट्ठिदिसंकमो थोवो। जट्ठिदी असंखे०

जघन्य पदकी अपेक्षा पांच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सम्यक्त्व, संज्वलन लोभ, चार आयु और पांच अन्तराय; इनका जघन्य स्थितिसंक्रम एक स्थितिस्वरूप है। जस्थितियां असंख्यातगुणी हैं। निद्रा और प्रचलाकी जस्थितियां संख्यातगुणी हैं, क्योंकि, वे आवलीके असंख्यातवें भागसे अधिक दो आवली प्रमाण हैं। देवगति, वैक्रियिकशरीर, आहारशरीर, यशकीर्ति और नीचगोत्र इनकी जो जघन्य स्थितियां संक्रान्त होती हैं वे संख्यातगुणी हैं। मनुष्यगति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, यशकीर्ति और उच्चगोत्र; इनकी जो उक्त स्थितियां हैं वे विशेष अधिक हैं। सबकी जस्थितियां विशेष अधिक हैं। साता और असाता वेदनीयकी जो उक्त स्थितियां हैं वे विशेष अधिक हैं। जस्थितिसंक्रम विशेष अधिक है, संज्वलन मायाकी जो उक्त स्थितियां हैं वे संख्यातगुणी हैं। जस्थितियां विशेप अधिक हैं। संज्वलन मानमें विशेष अधिक हैं। संज्वलन क्रोधमें विशेष अधिक हैं। पुरुपवेदकी संख्यातगुणी हैं। छह नोकपायोंकी संख्यातगुणी हैं। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी उक्त स्थितियां असंख्यातगुणी हैं। स्त्यानगृद्धि आदि तीनकी जघन्य स्थिति असंख्यातगुणी है। नरकगति और तिर्यग्गतिकी उक्त स्थितियां असंख्यातगुणी हैं। आठ कपायोंकी जो उक्त स्थितियां हैं वे असंख्यातगुणी हैं। सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणी हैं। मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणी हैं। अनन्तानुबन्धी कपायोंकी संख्यातगुणी हैं। सबकी जस्थितियां विशेष अधिक हैं।

नरकगतिमें नारकायु और सम्यक्त्वका जघन्य स्थितिसंक्रम स्तोक है। जस्थिति असंख्यात-

---

१ अप्रतौ 'भाएणव्वहियादोआवलिय', ताप्रतौ 'भागेणब्भहियादो आवलिय' इति पाठः। २ अप्रतौ 'जा' इति पाठः। ३ अ-काप्रत्योः 'गुणा' इति पाठः। ४ अ-काप्रत्योः अष्टकषाय-सम्यग्मिथ्यात्वसम्बन्धिसन्दर्भोऽयं त्रुटितोऽस्ति, मप्रतितः कृतसंशोधने च केवलमष्टकषायसम्बन्धिसन्दर्भो योजितो न तु सम्यग्मिथ्यात्वसम्बन्धी।

गुणा । मणुस-तिरिक्खाउआणं संखेज्जगुणाओ । जट्ठिदी विसे० । अणंताणुबंधीणं असंखेज्जगुणाओ। जट्ठिदी विसे० । आहारसरीर० असंखे० गुणाओ । जट्ठिदीओ विसे० ओ । सम्मामिच्छत्तस्स असंखे० गुणाओ । देवगइ-णिरयगइ-वेउव्वियसरीर० असंखे० गुणाओ । उच्चागोदस्स विसे० ओ । मणुसगइ० विसे० ओ । जसकित्ति० विसे० । अजसकित्ति० विसे० ओ । तिरिक्खगई० विसे० ओ । ओरालिय-तेजा-कम्मइय० विसे० । सादस्स० विसे० । सेसाणं तीसियाणं[1] विसे० । पुरिसवेद० विसेसा० । इत्थिवेद० विसे० । हस्स-रदि० विसे० । णवुंसयवेद० विसे० । अरदि-सोग० विसे० । भय-दुगुंछाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसे० । बारसकसायाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसे० । मिच्छत्तस्स विसे० । सव्वासिं पि जट्ठिदीयो विसेसाहियाओ ।

तिरिक्खगईए तिरिक्खेसु तिरिक्खाउअस्स सम्मत्तस्स य जो जहण्णट्ठिदिसंकमो [सो] थोवो । जट्ठिदिसंकमो असंखेज्जगुणो । मणुस्साउअस्स संखे० गुणाओ । देवाउअस्स णिरयाउअस्स य संखेज्जगुणाओ । अणंताणुबंधीणं असंखे० गुणाओ । णिरयगइ-देवगइ-मणुसगइ-वेउव्विय-आहारसरीर-उच्चागोदाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ असंखे० गुणाओ । सम्मामिच्छत्तस्स० संखे० गुणाओ । जसकित्तीए असंखे० गुणा० । अजसगित्तीए

गुणी हैं। मनुष्यायु और तिर्यगायुकी प्रकृत स्थितियां संख्यातगुणी हैं । जस्थितियां विशेष अधिक हैं । अनन्तानुबन्धी कषायोंकी असंख्यातगुणी हैं । जस्थितियां विशेष अधिक हैं । आहारशरीरकी असंख्यातगुणी हैं । जस्थितियां विशेष अधिक हैं । सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणी हैं । देवगति, नरकगति और वैक्रियिकशरीरकी असंख्यातगुणी हैं । उच्चगोत्रकी विशेष अधिक हैं। मनुष्यगतिकी विशेष अधिक हैं । यशकीर्तिकी विशेष अधिक हैं । अयशकीर्तिकी विशेष अधिक हैं। तिर्यंचगतिकी विशेष अधिक हैं । औदारिकशरीर, तैजसशरीर और कार्मणशरीरकी विशेष अधिक हैं । सातावेदनीयकी विशेष अधिक हैं । शेष त्रिंशिक प्रकृतियोंकी विशेष अधिक हैं । पुरुषवेदकी विशेष अधिक हैं । स्त्रीवेदकी विशेष अधिक हैं । हास्य व रतिकी विशेष अधिक हैं । नपुंसकवेदकी विशेष अधिक हैं । अरति व शोककी विशेष अधिक हैं । भय और जुगुप्साकी जो उक्त स्थितियां हैं वे विशेष अधिक हैं । बारह कषायोंकी जो उक्त स्थितियां हैं वे विशेष अधिक हैं । मिथ्यात्वकी जो उक्त स्थितियां हैं विशेष अधिक हैं । सभीकी जस्थितियां विशेष अधिक हैं ।

तिर्यंचगतिमें तिर्यंचोंमें तिर्यंचआयु और सम्यक्त्वका जो जघन्य स्थितिसंक्रम है वह स्तोक है । जस्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है । मनुष्यायुकी उक्त स्थितियां संख्यातगुणी हैं । देवायु और नारकायुकी संख्यातगुणी हैं । अनन्तानुबन्धी कषायोंकी असंख्यातगुणी हैं । नरकगति, देवगति, मनुष्यगति, वैक्रियिकशरीर, आहारकशरीर और उच्चगोत्रकी जो उक्त स्थितियां हैं वे असंख्यातगुणी हैं । सम्यग्मिथ्यात्वकी संख्यातगुणी हैं । यशकीर्तिकी असंख्यातगुणी हैं । अयशकीर्तिकी

---

१ अप्रतौ 'सिमाणं०', काप्रतौ 'तिसाणं', ताप्रतौ 'तस (तीसि) याणं०', मप्रतौ 'तंसयाणं०' इति पाठः ।

विसेसा० । तिरिक्खगई० विसे० । णीचागोदस्स विसे० । ओरालिय-तेजा-कम्मइयसरीराणं विसे० । सादस्स० विसे० । सेसाणं तीसियाणं विसे० । पुरिसवेदस्स० विसे० । इत्थिवेदस्स० विसे० । हस्स-रदीणं विसे० । अरदि-सोगाणं विसे० । णवुंसयवेदस्स० विसे० । भय-दुगुंछाणं० विसे० । वारसकसाय० विसेसा० । मिच्छत्तस्स विसे० ।

तिरिक्खजोणिणीणं[1] एकम्हि पदे णाणत्तं— सम्मत्तस्स जहण्णट्ठिदि० पलिदो असंखे० भागो । उव्वेल्लमाणियाणं णामपयडीणं उवरि संखेज्जगुणो सम्मामिच्छत्तादो विसेसहीणो । एदं णाणत्तं । ओघभंगो मणुसगईए । णवरि तिसु आउएसु णाणत्तं । देवगईए णिरयगइभंगो ।

एत्तो भुजगारसंकमे अट्ठपदं भणियूण घेत्तव्वं । पंचणाणावरणीय-णवदंसणावरणीय-सादासाद-मोहणिज्जाणं अत्थि भुजगार-अप्पदर-अवट्ठियसंकमो, अवत्तव्वं णत्थि । णवरि अणंताणुवंधि-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-वारसकसाय-णवणोकसायाणं अवत्तव्वसंकमो अत्थि । चदुण्णमाउआणं अत्थि चत्तारि पदाणि । णामपयडीणं उव्वेल्लिज्जमाणियाणं तित्थयर-उच्चागोदाणं च अत्थि अवत्तव्वसंकमो । सेसाणं णामपयडीणं णीचागोदंतराइयाणं च णत्थि अवत्तव्वसंकमो ।

विशेष अधिक हैं । तिर्यंचगतिकी विशेष अधिक हैं । नीचगोत्रकी विशेष अधिक हैं । औदारिकशरीर, तैजसशरीर और कार्मणशरीरकी विशेष अधिक हैं । सातावेदनीयकी विशेष अधिक हैं । शेष त्रिंशिक प्रकृतियोंकी विशेष अधिक हैं । पुरुषवेदकी विशेष अधिक हैं । स्त्रीवेदकी विशेष अधिक हैं । हास्य व रतिकी विशेष अधिक हैं । अरति और शोककी विशेष अधिक हैं । नपुंसकवेदकी विशेष अधिक हैं । भय और जुगुप्साकी विशेष अधिक हैं । वारह कषायोंकी विशेष अधिक हैं । मिथ्यात्वकी विशेष अधिक हैं ।

तिर्यंच योनिमतियोंमें एक पदमें विशेषता है—उनमें सम्यक्त्वका जघन्य स्थितिसंक्रम पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है । उद्वेल्यमान नामप्रकृतियोंका जघन्य स्थितिसंक्रम आगे संख्यातगुणा व सम्यग्मिथ्यात्वसे विशेष हीन है । यह यहां विशेषता है । मनुष्यगतिमें ओघके समान प्ररूपणा है । विशेष इतना है कि तीन आयुओंमें कुछ विशेषता है । देवगतिमें नरकगतिके समान प्ररूपणा है ।

यहां भुजाकारसंक्रममें अर्थपदको कह करके ग्रहण करना चाहिये । पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय और मोहनीय कर्मोंका भुजाकार, अल्पतर और अवस्थित संक्रम होता है; अवक्तव्य संक्रम नहीं होता, विशेष इतना है कि अनन्तानुवन्धी, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, वारह कषाय और नौ नोकषाय; इनका अवक्तव्य संक्रम होता है । चार आयु कर्मोंके चार पद हैं । उद्वेल्यमान नामप्रकृतियों, तीर्थंकर और उच्चगोत्रका अवक्तव्य संक्रम होता है । शेष नामप्रकृतियों, नीचगोत्र और अन्तरायका अवक्तव्यसंक्रम नहीं होता ।

---

१ अ-ताप्रत्योः 'तिरिक्खजोणीणं' इति पाठः ।

एयजीवेण कालो—पंचणाणावरणाणं भुजगारस्स कालो जह० एगसमओ, उक्क० संखेज्जाणि समयसहस्साणि। अप्पदरस्स जह० एगसमओ, उक्क० वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। अवट्ठियस्स जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं। णवदंसणावरणाणं तिविहो जह० एगसमओ। उक्क० भुजगारस्स एक्कारस समया, सेसाणं णाणावरणभंगो। सादासाद-मिच्छत्ताणं भुजगारसंकमस्स जह० एगसमओ, उक्क० वे समया; अद्धासंकिलेस-क्खयप्पणादो। अप्पदर-अवट्ठियाणं णाणावरणभंगो[1]। सोलसकसाय-णवणोकसायाणं भुजगारसंकमस्स जह० एगसमओ, उक्क० सत्तारस समया। सोलसकसाय-णवणो-कसायाणमप्पदर-अवट्ठिदाणं णाणावरणभंगो। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगार-अवट्ठिय-[अवत्तव्व] संकमाणं कालो जहण्णुक्क० एगसमओ। एदेसिमप्पदरस्स जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि[2]।

चदुण्णमाउआणमवट्ठिद-भुजगारसंकमाणं कालो जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ। पुव्व-

---

एक जीवकी अपेक्षा कालका कथन करते हैं—पांच ज्ञानावरण प्रकृतियोंके भुजाकार संक्रमका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे संख्यात हजार समय है। अल्पतरका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे साधिक दो छयासठ सागरोपम मात्र हैं। अवस्थितका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है। नौ दर्शनावरण प्रकृतियोंके तीन प्रकारके संक्रमका काल जघन्यसे एक समय मात्र है। उत्कर्षसे वह भुजाकारका ग्यारह समय और शेष दोका ज्ञानावरणके समान है। सातावेदनीय, असातावेदनीय और मिथ्यात्वके भुजाकार संक्रमका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे दो समय मात्र है; क्योंकि, अद्धाक्षय और संक्लेशक्षयकी प्रधानता है। इनके अल्पतर और अवस्थित संक्रमके कालकी प्ररूपणा ज्ञानावरणके समान है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके भुजाकारसंक्रमका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे सत्रह समय मात्र है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके अल्पतर और अवस्थित संक्रमके कालकी प्ररूपणा ज्ञानावरणके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजाकार, अवस्थित और अवक्तव्य संक्रमका काल जघन्य व उत्कर्षसे एक समय मात्र है। इनके अल्पतरसंक्रमका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे साधिक दो छयासठ सागरोपम मात्र है।

चार आयुकर्मोंके अवस्थित और भुजाकार संक्रमोंका काल जघन्य व उत्कर्षसे एक समय

---

१ मिच्छत्तस्स भुजगारसंकामगो केवच्चिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण चत्तारिसमया। अप्पदरसंकामगो केवच्चिरं कालादो होदि ? जहण्णेणेयसमओ। उक्कस्सेण तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं। अवट्ठिद-संकामओ केवच्चिरं कालादो होदि ? जहण्णेणेयसमओ। उक्कस्सेणंतोमुहुत्तं। क. पा. सु. पृ. ३२९, १५६–६४.

२ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगार-अवट्ठिद-अवत्तव्वसंकामया केवच्चिरं कालादो होंति ? जहण्णेणुक्कस्सेणेय-समओ। अप्पदरसंकामओ केवच्चिरं कालादो होदि ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण वे छावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। सेसाणं कम्माणं भुजगारसंकामओ केवच्चिरं कालादो होदि ? जहण्णेणेयसमओ। उक्कस्सेण एगूणवीस समया। सेसपदाणि मिच्छत्तभंगो। णवरि अवत्तव्वसंकामया जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ। क. पा. सु. पृ. ३३०, १६५–७४.

बंधादो समउत्तरं पबद्धस्स जट्ठिदिं पडुच्च जट्ठिदिसंकमो त्ति एत्थ घेत्तव्वं। देव-णिरयाउ-आणं अप्पदरसंकमस्स जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि सादिरेयाणि। तिरिक्ख-मणुस्साउआणं जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि सादिरेयाणि।

सव्वासिं णामपयडीणं णाणावरणभंगो। आहारसरीर-आहारसरीरंगोवंग-बंधण-संघाद-तित्थयराणं भुजगार-अवट्ठियसंकमो णत्थि। तित्थयरअप्पदरसंकमस्स जह० संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि सादिरेयाणि। आहारचउक्कस्स जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० पलिदो० असंखे० भागो। पंचण्णं [अंतराइयाणं] णाणावरण-भंगो। णवरि भुजगारस्स संखेज्जा समया[2]। एवं णीचुच्चागोदाणं। णवरि भुजगारस्स वे समया। एवं कालो समत्तो।

एगजीवेण अंतरं कालादो[3] साधेदूण णेयव्वो। णाणाजीवेहि भंगविचओ। पंच-णाणावरणीय-णवदंसणावरणीय-सादासाद-मिच्छत्त-सोलसकसाय-णवणोकसाय-तिरिक्खा-उअ-एइंदियबंधपाओग्गणामपयडीणं णीचुच्चागोद-पंचंतराइयाणं च भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिदसंकामया जीवा णियमा अत्थि। चारित्तमोहणीयस्स अवत्तव्व० भजियव्वा।

मात्र है। पूर्व बन्धसे एक समय अधिक बांधे गये आयु कर्मका जस्थितिकी अपेक्षा यहां जस्थिति-संक्रम ग्रहण करना चाहिये। देवायु और नारकायुके अल्पतर संक्रमका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे साधिक तेतीस सागरोपम मात्र है। तिर्यंचआयु और मनुष्यायुके अल्पतर संक्रमका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे साधिक तीन तीन पल्योपम मात्र है।

सब नामप्रकृतियोंके संक्रमकालकी प्ररूपणा ज्ञानावरणके समान है। आहारकशरीर, आहारकशरीरांगोपांग, आहारकबन्धन, आहारकसंघात और तीर्थंकर इनके भुजाकारसंक्रम और अवस्थितसंक्रम नहीं होते। तीर्थंकर प्रकृतिके अल्पतरसंक्रमका काल जघन्यसे संख्यात हजार वर्ष और उत्कर्षसे साधिक तेतीस सागरोपम मात्र है। आहारचतुष्कके अल्पतरसंक्रमका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है। पांच [अन्तराय] प्रकृतियोंके संक्रमकालकी प्ररूपणा ज्ञानावरणके समान है। विशेष इतना है कि उनके भुजाकार-संक्रमका काल संख्यात समय मात्र है। इसी प्रकार नीचगोत्र और ऊंचगोत्रके संक्रमकालकी प्ररूपणा करना चाहिये। विशेष इतना है कि उनके भुजाकारसंक्रमका काल दो समय मात्र है। इस प्रकार कालप्ररूपणा समाप्त हुई।

एक जीवकी अपेक्षा अन्तरको कालसे सिद्ध करके ले जाना चाहिये। नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयका कथन किया जाता है— पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नौ नोकषाय, तिर्यंचआयु, एकेन्द्रियके बन्ध योग्य नामप्रकृतियां, नीचगोत्र, ऊंचगोत्र और पांच अन्तराय; इनके भुजाकार, अल्पतर और अवस्थित संक्रामक बहुत जीव नियमसे हैं। चारित्रमोहनीयके अवक्तव्य संक्रामक भजनीय हैं। तीन

---

१ अ-ताप्रत्योः 'आहारसरीरस्स' इति पाठः। २ अप्रतौ 'संखेज्जसमया' इति पाठः। ३ अप्रतौ 'अंतरकाले', का-ताप्रत्योः 'अंतरं कालो' इति पाठः।

तिण्णमाउआणं एइंदियबंधिदपाओग्गणामपयडीणं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं च भुजगार-अवट्ठिद-अवत्तव्वसंकामया भयणिज्जा। अप्पदरसंकामया णियमा अत्थि[1]।

णाणाजीवेहि कालो अंतरं च णाणाजीवभंगविचयादो साहेयव्वं। एत्तो अप्पाबहुअं-पंचणाणावरण-णवदंसणावरण-सादासाद-बावीसमोहणीयाणं [भुजगार] संकामया थोवा। अवट्ठिदसंकामया असंखेज्जगुणा। अप्पदरसंकामया संखे० गुणा। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं अवट्ठिदसंकामया थोवा। भुजगारसंकामया असंखे० गुणा। अवत्तव्वसंकामया असंखे० गुणा। अप्पदर० असंखे० गुणा। अणंताणुबंधीणं अवत्तव्व० थोवा। भुजगार० अणंतगुणा। अवट्ठिद० असंखे० गुणा[2]। अप्पदर० संखे० गुणा[3]।

[4]णिरयाउअस्स अवट्ठिय० थोवा। भुजगार० असंखे० गुणा। अवत्तव्व[5]० संखे० गुणा। अप्पदर० असंखे० गुणा। एवं देव-मणुस्साउआणं। तिरिक्खाउअस्स अवत्तव्व-संकामया पदरस्स असंखे० भागो। अवट्ठियसंकामया सव्वजीवाणं पलिदो०

आयुकर्म, एकेन्द्रियके बन्धयोग्य नामप्रकृतियों, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजाकार, अवस्थित और अवक्तव्य संक्रामक भजनीय हैं। इनके अल्पतर संक्रामक बहुत जीव नियमसे हैं।

नाना जीवोंकी अपेक्षा काल और अन्तरको नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयसे सिद्ध करना चाहिये। यहां अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा की जाती है— पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय और बाईस मोहनीय प्रकृतियोंके भुजाकार संक्रामक स्तोक हैं। इनके अवस्थित संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अल्पतर संक्रामक संख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अवस्थित संक्रामक स्तोक हैं। भुजाकार संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अवक्तव्य संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अल्पतर संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अनन्तानुबन्धी कषायोंके अवक्तव्य संक्रामक स्तोक हैं। भुजाकार संक्रामक अनन्तगुणे हैं। अवस्थित संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अल्पतर संक्रामक संख्यातगुणे हैं।

नारकायुके अवस्थित संक्रामक स्तोक हैं। भुजाकार संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अवक्तव्य संक्रामक संख्यातगुणे हैं। अल्पतर संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार देवायु और मनुष्यायुके कहना चाहिये। तिर्यंच आयुके अवक्तव्य संक्रामक प्रतरके असंख्यातवें भाग हैं। अवस्थित संक्रामक सब जीवोंके पल्योपमके असंख्यातवें भाग प्रतिभाग रूप हैं। भुजाकार

---

१ णाणाजीवेहि भंगविचओ। मिच्छत्तस्स सव्वजीवा भुजगारसंकामगा च अप्पयरसंकामया च अवट्ठिदसंकामया च। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सत्तावीसभंगा। सेसाणं मिच्छत्तभंगो। णवरि अवत्तव्वसंकामया भजियव्वा। क. पा. सु. पृ. ३३२, १९३-९७. २ अ-काप्रत्योः 'अवत्त० संखे० गुणा', ताप्रतौ 'अवत्तव्व० असंखे० गुणा' इति पाठः। ३ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा अवट्ठिदसंकामया। भुजगारसंकामया असंखेज्जगुणा। अवत्तव्वसंकामया असंखेज्जगुणा। अप्पयरसंकामया असंखेज्जगुणा। अणंताणुबंधीणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया। भुजगारसंकामया अणंतगुणा। अवट्ठिदसंकामया असंखेज्जगुणा। अप्पयरसंकामया संखेज्जगुणा। एवं सेसाणं कम्माणं। क. पा. सु. पृ. ३३६, २२९-३७. ४ अ-का-ताप्रतिषूपलभ्यमानोऽयं नारकायुःसम्बन्धी सन्दर्भो मप्रतितः कृतसंशोधने बहिष्कृतः। ५ ताप्रतौ 'अप्पदर० (अवत्तव्व०) संखे' इति पाठः।

असंखे० भागपडिभागो। भुजगारसंकामया सव्वजीवाणमंतोमुहुत्तपडिभागो। अप्पदर-संकामया सव्वजीवाणं असंखेज्जा भागा। एदेण अप्पाबहुअं तिरिक्खाउअस्स साहेयव्वं।

णिरयगईए अवत्तव्वसंकामया थोवा। भुजगार० असंखे० गुणा। अवट्ठिय० अप्पदर० असंखे० गुणा उव्वेल्लणकालसंचिदे पडुच्च। एवं देवगइणामाए। मणुसगइ-णामाए अवत्तव्व० थोवा। भुजगार० अणंतगुणा। अवट्ठिय० असंखे० गुणा। अप्पदर० असंखे० गुणा। तिरिक्खगइणामाए भुजगार० थोवा। अवट्ठिय० असंखे० गुणा। अप्पदर० संखे० गुणा। चदुण्णमाणुपुव्वीणं सग-सगगइभंगो। ओरालिय-तेजा-कम्मइयाणं भुजगार० थोवा। अवट्ठिय० असंखे० गुणा। अप्पदर० संखे० गुणा। एवं अणादियसंतकम्मणामाणं। णीचागोद-पंचंतराइयाणं णाणावरणभंगो। उच्चागोदस्स मणुसगइभंगो। एवं भुजगारट्ठिदिसंकमो समत्तो।

पदणिक्खेवस्स ट्ठिदिउदीरणपदणिक्खेवभंगो। वड्ढिसंकमो— पंचणाणावरणीयाणं असंखेज्जगुणहाणीए संकामया थोवा। संखेज्जगुणहाणीए असंखे० गुणा। संखेज्जभाग-हाणीए संखे० गुणा। संखेज्जगुणवड्ढीए[1] असंखे० गुणा। संखे० भागवड्ढीए संखे० गुणा। असंखे० भागवड्ढीए अणंतगुणा। अवट्ठिद० असंखे० गुणा। असंखे० भाग-

संक्रामक सब जीवोंके अन्तर्मुहूर्त प्रतिभाग रूप हैं। अल्पतर संक्रामक सब जीवोंके असंख्यात बहुभाग मात्र हैं। इससे तिर्यगायुके अल्पबहुत्वको सिद्ध करना चाहिये।

नरकगतिके अवक्तव्य संक्रामक स्तोक हैं। भुजाकार संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अवस्थित व अल्पतर संक्रामक उद्वेलनकालसंचितोंकी अपेक्षा असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार देवगति नामकर्मके सम्बन्धमें अल्पबहुत्व कहना चाहिये। मनुष्यगति नामकर्मके अवक्तव्य संक्रामक स्तोक हैं। भुजाकार संक्रामक अनन्तगुणे हैं। अवस्थित संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अल्पतर संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। तिर्यंचगति नामकर्मके भुजाकार संक्रामक स्तोक हैं। अवस्थित संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अल्पतर संक्रामक संख्यातगुणे हैं। चार आनुपूर्वी नाम-कर्मोंका अल्पबहुत्व अपनी अपनी गतिके समान है। औदारिक, तैजस और कार्मण शरीरके भुजाकार संक्रामक स्तोक हैं। अवस्थित संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अल्पतर संक्रामक संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार अनादिसत्कर्मिक नामप्रकृतियोंका अल्पबहुत्व है। नीचगोत्र और पांच अन्तराय प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व ज्ञानावरणके समान है। उच्चगोत्रका अल्पबहुत्व मनुष्यगतिके समान है। इस प्रकार भुजाकार स्थितिसंक्रम समाप्त हुआ।

यहां पदनिक्षेपकी प्ररूपणा स्थितिउदीरणा सम्बन्धी पदनिक्षेपके समान है। वृद्धिसंक्रमकी प्ररूपणा की जाती है— पांच ज्ञानावरण सम्बन्धी असंख्यात गुणहानिके संक्रामक स्तोक हैं। संख्यातगुणहानिके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। संख्यातभागहानिके संक्रामक संख्यातगुणे हैं। संख्यातगुणवृद्धिके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। संख्यातभागवृद्धिके संक्रामक संख्यातगुणे हैं। असंख्यातभागवृद्धिके संक्रामक अनन्तगुणे हैं। अवस्थित संक्रामक असंख्यातगुणे हैं।

१ ताप्रतौ 'असंखे० गुणवड्ढीए' इति पाठः।

हाणीए संखे० गुणा । एवं णवदंसणावरणीय-सादासादाणं । एवं सेसाणं पि कम्माणं । णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-चत्तारिआउआणं च चत्तारिवड्ढि-चत्तारिहाणीयो वत्तव्वाओ । एवं ट्ठिदिसंकमो समत्तो ।

अणुभागसंकमे पुव्वं गमणिज्जो[1] कम्माणमादिफद्दयणिद्देसो— चत्तारिणाणावरणीय-तिण्णिदंसणावरणीय-चदुसंजलण-णवणोकसाय-पंचंतराइयाणि देसघादीणि[2] । सादासाद-आउचउक्क-सयलणामपयडि-उच्च-णीचागोदाणि अघादिकम्माणि । एदेसिमघादिकम्माणं पुव्विल्लदेसघादिकम्माणं च आदिफद्दयाणि सरिमाणि । केवलणाणावरणीय-छदंसणा-वरणीय-बारसकसाय० सव्वघाइकम्माणि[3] । एदेसिं आदिफद्दयाणि परोप्परं सरिसाणि । सव्वघादीणि दारुसमाणाणि देसघादीणमादिफद्दएहिंतो अणंतगुणाणि । सम्मत्तस्स आदिफद्दयं देसघादीणमादिफद्दएण सरिसं । तदो प्पहुडि सम्मत्तफद्दयाणि देसघादि-[4]

असंख्यातभागहानिके संक्रामक संख्यातगुणे हैं । इसी प्रकारसे नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय और असातावेदनीयके सम्बन्धमें कथन करना चाहिये । इसी प्रकार शेष कर्मोंके भी सम्बन्धमें कहना चाहिये । विशेष इतना है कि सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और चार आयु कर्मोंकी प्ररूपणामें चार वृद्धियों और चार हानियोंको कहना चाहिये । इस प्रकार स्थितिसंक्रम समाप्त हुआ ।

अनुभागसंक्रमकी प्ररूपणामें पहिले कर्मोंके आदि स्पर्धकोंका निर्देश ज्ञात कराने योग्य है— चार ज्ञानावरण, तीन दर्शनावरण, चार संज्वलन, नौ नोकषाय और पांच अन्तराय; ये देशघाती कर्म हैं । सातावेदनीय, असातावेदनीय, चार आयु, समस्त नामप्रकृतियां, उच्चगोत्र और नीचगोत्र; ये कर्मप्रकृतियां अघाती हैं । इन अघातिया कर्मोंके तथा पूर्वोक्त देशघाती कर्मोंके आदि स्पर्धक सदृश होते हैं । केवलज्ञानावरण, छह दर्शनावरण और बारह कषाय ये सर्वघाती कर्म हैं । इनके आदि स्पर्धक परस्परमें सदृश हैं । सर्वघाति कर्मोंके दारु समान स्पर्धक देशघाति कर्मोंके आदि स्पर्धकोंकी अपेक्षा अनन्तगुणे हैं । सम्यक्त्व प्रकृतिका आदि स्पर्धक देशघातियोंके आदि स्पर्धकके सदृश है । उससे लेकर सम्यक्त्वके स्पर्धक देशघाति और

---

१ काप्रतौ 'गमणिज्जे', ताप्रतौ 'गमणिज्ज-' इति पाठः । २ मति-श्रुतावधि-मनःपर्ययज्ञानावरण-चक्षुर-चक्षुरवधिदर्शनावरण-संज्वलनचतुष्टय-नवनोकषायान्तरायपंचकलक्षणानां पंचविंशतिसंख्यानां देशघातिप्रकृतीनां देशघातीनि रसस्पर्धकानि भवन्ति । स्वस्य ज्ञानादेर्गुणस्य देशमेकदेशं मतिज्ञानादिलक्षणं घातयन्तीत्येवंशीलानि देशघातीनि । क. प्र. (मलय.) २–१. ३ वेदनीयायुर्नाम-गोत्राणां सम्बन्धिनः एकादशोत्तरप्रकृतिशतस्या-घातिनो रसस्पर्धकान्यघातीनि वेदितव्यानि । केवलं वेद्यमानसर्वघातिरसस्पर्धकसम्बन्धात्तान्यपि सर्वघातीनि भवन्ति । यथेह लोके स्वयमचौराणामपि चौरसम्बन्धाच्चौरता । उत्तं च— जाण न विसओ घाइत्तणम्मि ताणं पि सव्वघाइरसो । जायइ घाइसगासेण चोरया वेहऽचोराणं ॥ क. प्र. (मलय.) २–४४. ३ केवलज्ञानावरण - केवलदर्शनावरणाद्यद्वादशकषाय-निद्रापंचक-मिथ्यात्वलक्षणानां विंशतिप्रकृतीनां रसस्पर्धकानि सर्वघातीनि— सर्वं स्वघात्यं केवलज्ञानादिलक्षणं गुणं घातयन्तीति सर्वघातीनि । तानि च ताम्रभाजनवत् निश्छिद्राणि, घृतवत् स्निग्धानि, द्राक्षावत्तनुप्रदेशोपचितानि, स्फटिकाभ्रहारवच्चातीव निर्मलानि । उक्तं च— जो घायइ सविसयं सयलं सो होइ सव्वघाइरसो । सो निच्छिड्डो निद्धो तणुओ फलिहब्भहरविमलो ॥ क. प्र. (मलय.) २–४४. ४ प्रतिपु 'घादि' इति पाठः ।

अघादिकम्मफद्दएहि सह णिरंतरं गंतूण दारुसमाणम्हि देसघादिम्हि णिट्ठियाणि।[1] सम्मत्तउक्कस्सफद्दयादो सम्मामिच्छत्तस्स पढमफद्दयमणंतगुणं। कुदो? केवलणाणावरणादिफद्दयसमाणत्तादो। तदो णिरंतराणि अणंताणि सम्मामिच्छत्तफद्दयाणि गंतूण दारुसमाणफद्दयाणमणंतिमभागे चेव णिट्ठिदाणि। तदो उवरिमाणंतरफद्दयं मिच्छत्तस्स जहण्णफद्दयं होदि[1]। तं च सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सदारुसमाणफद्दयादो अणंतगुणं घादिकम्माणमादिफद्दएहि असमाणं। एवं सव्वकम्माणं पि आदिफद्दयपरूवणा कदा।

एत्तो अट्ठपदं— ओकड्डिदो वि अणुभागो अणुभागसंकमो, उक्कड्डिदो वि अणुभागो अणुभागसंकमो, अण्णपयडिं णीदो वि अणुभागो अणुभागसंकमो[2]। आदिफद्दयं ण ओकड्डिज्जदि[3]। आदिफद्दयादो जत्तियो जहण्णओ णिक्खेवो एत्तियमेत्ताणि फद्दयाणि ण ओकड्डिज्जंति[4]। तदो उवरिमफद्दयं पि ण ओकड्डिज्जदि, अधिच्छावणाभावादो। तदो जत्तियाणि जहण्णणिक्खेवफद्दयाणि जत्तियाणि जहण्णअधिच्छावणाफद्दयाणि च एत्तियमेत्ताणि फद्दयाणि पढमफद्दयप्पहुडि उवरिं चडियूण ट्ठिदं जं फद्दयं तमोकड्डिज्जदि,

---

अघाति कर्मोंके स्पर्धकोंके साथ निरन्तर जाकर दारु समान देशघातिमें समाप्त होते हैं। सम्यक्त्वके उत्कृष्ट स्पर्धककी अपेक्षा सम्यग्मिथ्यात्वका प्रथम स्पर्धक अनन्तगुणा है, क्योंकि, वह केवलज्ञानावरणके आदि स्पर्धकके समान है। उसके आगे सम्यग्मिथ्यात्वके अनन्त स्पर्धक निरन्तर जाकर दारु समान स्पर्धकोंके अनन्तवें भागमें ही समाप्त हो जाते हैं। उसके आगेका अनन्तर स्पर्धक मिथ्यात्वका जघन्य स्पर्धक होता है। वह सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट दारु समान स्पर्धककी अपेक्षा अनन्तगुणा होकर घाती कर्मोंके आदि स्पर्धकोंके समान नहीं होता। इस प्रकार सब कर्मोंके ही आदि स्पर्धकोंकी प्ररूपणा की गयी है।

यहां अर्थपद— अपकर्षणको प्राप्त हुआ भी अनुभाग अनुभागसंक्रम है, उत्कर्षणको प्राप्त हुआ भी अनुभाग अनुभागसंक्रम है, और अन्य प्रकृतिको प्राप्त कराया गया भी अनुभाग अनुभागसंक्रम है। आदि स्पर्धकका अपकर्षण नहीं होता है। आदि स्पर्धकसे लेकर जितना जघन्य निक्षेप है, इतने मात्र स्पर्धकोंका भी अपकर्षण नहीं किया जाता है। उनसे ऊपरके स्पर्धकका भी अपकर्षण नहीं किया जाता है, क्योंकि, अतिस्थापनाका अभाव है। इसलिये जितने जघन्य निक्षेपस्पर्धक हैं और जितने जघन्य अतिस्थापनास्पर्धक हैं इतने मात्र स्पर्धक प्रथम स्पर्धकसे लेकर ऊपर चढ़कर जो स्पर्धक स्थित है उसका अपकर्षण किया जाता है, क्योंकि, उसके अतिस्थापनारूप व निक्षेपरूप स्पर्धकोंकी सम्भावना पायी जाती है।

---

१ सव्वेसु देसघाईसु सम्मत्तं तदुवरिं तु वा मिस्सं। दारुसमाणस्साणंतिमोत्ति मिच्छत्तमुप्पिमओ ॥ क. प्र. २, ४५. २ अणुभागो ओकड्डिदो वि संकमो उक्कड्डिदो वि संकमो अण्णपयडिं णीदो वि संकमो। क. पा. सु. पृ. ३४५, १. तत्थट्ठपयं उव्वाट्टया व ओवट्टिया व अविभागा। अणुभागसंकमो एस अन्नपगइं निया वावि ॥ क. प्र. २, ४६. ३ प्रतिषु 'आदिफद्दयाणं ओकड्डिज्जदि' इति पाठः। ४ ताप्रतौ 'फद्दयाणि ओकड्डिज्जंति' इति पाठः।

तस्स अधिच्छावणा-णिक्खेवफद्दयाणं संभवुवलंभादो[1]।

एत्थ अप्पाबहुअं— पदेसगुणहाणिट्ठाणंतरं थोवो[2]। जहण्णओ णिक्खेवो अणंतगुणो। जहण्णिया अधिच्छावणा अणंतगुणा। उक्क० अधिच्छावणा अणंतगुणा। उक्कस्सयमणुभागखंडयं विसे०। उक्कस्सओ णिक्खेवो विसेसाहिओ[3], ओकड्डणादो[4] चरिमफद्दयस्स अधिच्छावणफद्दय-णिक्खेवाणमभावादो। तदो जहण्णयं णिक्खेवं जहण्णं च अधिच्छावणं ओसक्किऊण[5] जं फद्दयं चरिमफद्दयादो ट्ठिदं तमोकड्डिज्जदि[6]।

ओकड्डणादो उक्कड्डणादो च जहण्णओ णिक्खेवो तुल्लो, सो थोवो। ओकड्डणादो जहण्णिया अधिच्छावणा, उक्कड्डणादो च अणुक्कस्स-जहण्णाजहण्णअधिच्छावणाए चरिमफद्दयसलागा वि, उक्कड्डणादो च उक्कस्सओ णिक्खेवो तुल्लो अणंतगुणो[7]।

यहां अल्पबहुत्व—प्रदेशगुणहानिस्थानान्तर स्तोक है। जघन्य निक्षेप अनन्तगुणा है। जघन्य अतिस्थापना अनन्तगुणी है। उत्कृष्ट अतिस्थापना अनन्तगुणी है। उत्कृष्ट अनुभागकाण्डक विशेष अधिक है। उत्कृष्ट निक्षेप विशेष अधिक है, क्योंकि, अपकर्षणकी अपेक्षा अन्तिम स्पर्धकका जो अतिस्थापना रूप स्पर्धक है और जिसका निक्षेप हुआ है, मात्र इन दोनोंका अभाव है। इसीलिये अन्तिम स्पर्धकसे जघन्य निक्षेप और जघन्य अतिस्थापनाको छोड़कर जो स्पर्धक स्थित है उसका अपकर्षण किया जाता है।

अपकर्षण और उत्कर्षण दोनोंकी अपेक्षा जघन्य निक्षेप तुल्य होकर स्तोक है। अपकर्षणकी अपेक्षा जघन्य अतिस्थापना व उत्कर्षणकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य अतिस्थापनाकी अन्तिम स्पर्धकशलाका भी, तथा उत्कर्षणकी अपेक्षा उत्कृष्ट निक्षेप तुल्य व अनन्तगुणा है।

---

१ ओकड्डणाए परूवणा। पढमफद्दयं ण ओकड्डिज्जदि विदियफद्दयं ण ओकड्डिज्जदि। एवमणंताणि फद्दयाणि जहण्णिया अइच्छावणा, तत्तियाणि फद्दयाणि ण ओकड्डिज्जंति। अण्णाणि अणंताणि फद्दयाणि जहण्णणिक्खेवमेत्ताणि च ण ओकड्डिज्जंति। जहण्णओ णिक्खेवो जहण्णिया अइच्छावणा च तत्तियमेत्ताणि फद्दयाणि आदीदो अधिच्छिदूण तदित्थफद्दयमोकड्डिज्जइ। तेण परं सव्वाणि फद्दयाणि ओकड्डिज्जंति। क. पा. सु. पृ. २४६, ४–१०. २ प्रतिषु 'थोवा' इति पाठः। ३ एत्थ अप्पाबहुअं। सव्वत्थोवाणि पदेसगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दयाणि। जहण्णओ णिक्खेवो अणंतगुणो। जहण्णिया अइच्छावणा अणंतगुणा। उक्कस्सयमणुभागकंडयमणंतगुणं। उक्कस्सिया अइच्छावणा एगाए वग्गणाए ऊणिया। उक्कस्सणिक्खेवो विसेसाहिओ। उक्कस्सो बंधो विसेसाहिओ। क. पा. सु. २४६, ११–१८. थोवं पएसगुणहाणिअंतरे दुसु जहन्ननिक्खेवो। कमसो अणंतगुणिओ दुसु वि अइत्थावणा तुल्ला॥ वाघाएणणुभागकंडगमेक्काए वग्गणाऊणं। उक्कोसो निक्खेवो ससंतबंधो य सविसेसो॥ क. प्र. ३, ८–९. ४ ताप्रतौ 'उक्कड्डणादो' इति पाठः। ५ अ-काप्रत्योः 'ओकड्डिऊण' इति पाठः। ६ प्रतिषु 'तमुक्कड्डिज्जदि' इति पाठः। ७ उक्कड्डणाए परूवणा। चरिमफद्दयं ण उक्कड्डिज्जदि। दुचरिमफद्दयं पि ण उक्कड्डिज्जदि। एवमणंताणि फद्दयाणि ओसक्किऊण तं फद्दयमुक्कड्डिज्जदि। सव्वत्थोवो जहण्णओ णिक्खेवो। जहण्णिया अइच्छावणा अणंतगुणा। उक्कस्सओ णिक्खेवो अणंतगुणो। उक्कस्सओ बंधो विसेसाहिओ। ओकड्डणादो उक्कड्डणादो च जहण्णिया अइच्छावण तुल्ला। जहण्णओ णिक्खेवो तुल्लो। क. पा. सु. पृ. २४७, १९–२८. चरिमं नोव्वट्टिज्जइ जावाणंताणि फड्डगाणि ततो। उस्सक्किय ओकड्डइ (उव्वट्टइ) एवं उव्वट्टणाईओ॥ क. प्र. ३, ७.

एदेण अट्ठपदेण पमाणाणुगमो वुच्चदे । तं जहा— घादिसण्णा ठाणसण्णा[1] च एत्थ वि परूवेयव्वा । सम्मत्तस्स उक्कस्सओ संकमो[2] देसघादी दुट्ठाणियो । एवं मणुस-तिरिक्खाउआणं । सम्मामिच्छत्तस्स आदावणामाए च सव्वघादी दुट्ठाणियो अणुभागसंकमो[3] । इत्थि-णवुंसयवेदाणमुक्कस्सओ सव्वघादी चदुट्ठाणियो अणुभागसंकमो । सम्मत्त-चदुसंजलण-पुरिसवेदाणं जहण्णसंकमो देसघादी एयट्ठाणियो । सेसाणं कम्माणं जहण्णओ संकमो सव्वघादी दुट्ठाणियो[4] । णवरि मणुव-तिरियाउआणं देसघादी ।

सामित्तं— मदिआवरणस्स उक्कस्साणुभागसंकमो कस्स होदि ? जो उक्कस्साणुभागं बंधियूण आवलियादिक्कंतो सो एइंदियो वा अणेइंदियो[5] वा बादरो वा सुहुमो वा पज्जत्तओ वा अपज्जत्तओ वा णियमा मिच्छाइट्ठी, असंखेज्जवस्साउअमणुस्से तिरिक्खे मणुस्सोववादियदेवे च मोत्तूण जो अण्णो, तस्स उक्कस्साणुभागसंकमो । एवं चदुणाणावरण-णवदंसणावरण-मिच्छत्त-सोलसकसाय-णवणोकसाय-असादावेदणीय-

---

इस अर्थपदके अनुसार प्रमाणानुगमकी प्ररूपणा की जाती है। यथा— घाति संज्ञा और स्थान संज्ञाकी यहां भी प्ररूपणा करना चाहिये । सम्यक्त्वका उत्कृष्ट संक्रम देशघाती होता हुआ द्विस्थानिक है। इसी प्रकार मनुष्यायु और तिर्यगायुके सम्बन्धमें कहना चाहिये । सम्यग्मिथ्यात्व और आतप नामकर्मका अनुभागसंक्रम सर्वघाती होकर द्विस्थानिक है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम सर्वघाती चतुःस्थानिक है। सम्यक्त्व, चार संज्वलन और पुरुषवेदका जघन्य संक्रम देशघाती एकस्थानिक है। शेष कर्मोंका जघन्य संक्रम सर्वघाती द्विस्थानिक है । विशेष इतना है कि वह मनुष्यायु और तिर्यगायुका देशघाती है।

स्वामित्वकी प्ररूपणा की जाती है— मतिज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम किसके होता है ? जो उत्कृष्ट अनुभागको बांधकर एक आवलीको विता चुका है । वह एकेन्द्रिय हो चाहे अनेकेन्द्रिय हो, बादर हो अथवा सूक्ष्म हो, पर्याप्त हो अथवा अपर्याप्त हो, नियमसे मिथ्यादृष्टि हो; तथा असंख्यातवर्षायुष्क मनुष्यों, तिर्यंचों और मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले देवों (आनतादिक) को छोड़कर जो अन्य हो, उसके मतिज्ञानावरणका उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम होता है । इसी प्रकार शेष चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नौ नोकषाय,

---

१ प्रतिषु 'घादिसंठाणसण्णा' इति पाठः । २ अप्रतौ 'उक्कस्सओ वि संकमो इति पाठः । ३ दुविहपमाणे जेट्ठो सम्मत्तदेसघाइ दुट्ठाणा । नर-तिरियाऊ-आयव-मिस्से वि य सव्वघाइम्मि ॥ क. प्र. २, ४७. ४ तत्थ पुव्वं गमणिज्जा घादिसण्णा च ट्ठाणसण्णा च । सम्मत्त-चदुसंजलण-पुरिसवेदाणं मोत्तूण सेसाणं कम्माणमणुभागसंकमो णियमा सव्वघादी, वेट्ठाणिओ वा तिट्ठाणिओ वा चउट्ठाणिओ वा । णवरि सम्मामिच्छत्तस्स वेट्ठाणिओ चेव । अक्खवग-अणुवसामगस्स चदुसंजलण-पुरिसवेदाणमणुभागसंकमो मिच्छत्तभंगो । खवगुवसामगाणमणुभागसंकमो सव्वघादी वा देसघादी वा, वेट्ठाणिओ वा एयट्ठणिओ वा । सम्मत्तस्स अणुभागसंकमो णियमा देसघादी । एयट्ठाणिओ वेट्ठाणियाओ वा । क. पा. सु. पृ. ३४९, ३३–३९. सेसासु चउट्ठाणे मंदो सम्मत्त-पुरिस-संजलणे । एगट्ठाणे सेसासु सव्वघाइम्मि दुट्ठाणे ॥ क. प्र. ३, ४८. ५ अ-काप्रत्योः 'सोइंदियो वा अणेइंदियो', ताप्रतौ 'सो इंदियो वा अणिंदियो' इति पाठः ।

अप्पसत्थणामपयडि-णीचागोद-पंचंतराइयाणं[1] । सादस्स उक्कस्साणुभागसंकमो कस्स ? चरिमसमयसुहुमसांपराइएण खवएण जं बद्धमणुभागं आवलियादिक्कंतं संकममाणस्स खीणकसायस्स सजोगिकेवलिस्स वा । जसकित्ति-उच्चागोदाणं सादभंगो ।

णिरयाउअस्स उक्कस्सओ अणुभागसंकमो कस्स ? जो उक्कस्साणुभागं बंधिदूण आवलियादिक्कंतो सो ताव पाओग्गो जाव समयाहियावलियचरिमसमयतब्भवत्थो त्ति । एवं सेसाणमाउआणं ।

जाओ पसत्थाओ परभवियणामबंधज्झवसाणस्स चरिमसमये बज्झंति तासिं बंधज्झवसाणवोच्छेदादो आवलियादिक्कंतमादिं कादूण जाव चरिमसमयसजोगादो[2] त्ति उक्कस्साणुभागसंकमो । मणुसगइ-मणुसगइपाओग्गाणुपुव्वी-ओरालियसरीर-ओरालियसरीरअंगोवंग-बंधण-संघाद-वज्जरिसहसंघडणाणमुक्कस्सओ अणुभागसंकमो कस्स ? देवेण सव्वविसुद्धेण पबद्धाणुभागं आवलियादिक्कंतं संकममाणस्स । सो कत्थ होदि ? देवेसु णेरइएसु तिरिक्खेसु मणुस्सेसु एइंदिय-बेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदिय-पंचिंदिएसु सुहुमेसु[3]

असातावेदनीय, अप्रशस्त नामप्रकृतियों, नीचगोत्र और पांच अन्तराय प्रकृतियोंके भी उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमका कथन करना चाहिये। सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका संक्रम किसके होता है? अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपकके द्वारा जो अनुभाग बांधा गया है आवलिकातिक्रान्त उसका संक्रमण करनेवाले क्षीणकषाय अथवा सयोगकेवलीके उसका उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम होता है। यशकीर्ति और उच्चगोत्रकी प्ररूपणा सातावेदनीयके समान है।

नारकायुके उत्कृष्ट अनुभागका संक्रम किसके होता है? जो उत्कृष्ट अनुभागको बांधकर बन्धावलीको विता चुका है वह अन्तिम समयवर्ती तद्भवस्थ होनेमें एक समय अधिक आवली मात्र कालके शेष रहने तक नारकायुके उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमके योग्य होता है। इसी प्रकार शेष आयु कर्मोंकी प्ररूपणा है।

जो प्रशस्त प्रकृतियां परभविक नामप्रकृतियोंके बन्धाध्यवसानके अन्तिम समयमें बंधती हैं उनका बन्धाध्यवसानव्युच्छित्तिसे आवलिकातिक्रान्त समयको आदि लेकर अन्तिम समयवर्ती सयोगी तक उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम होता है। मनुष्यगति, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, औदारिकशरीर, औदारिकशरीरांगोपांग, औदारिकबन्धन, औदारिकसंघात और वज्रर्षभसंहननका उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम किसके होता है? वह सर्वविशुद्ध देवके द्वारा बांधे गये अनुभागका बन्धावलीके पश्चात् संक्रम करनेवाले जीवके होता है। वह कहांपर होता है? वह देवोंमें, नारकियोंमें, तिर्यंचोंमें, मनुष्योंमें, एकेन्द्रियोंमें, द्वीन्द्रियोंमें, त्रीन्द्रियोंमें, चतुरिन्द्रियोंमें, पंचेन्द्रियोंमें,

१ सामित्तं । मिच्छत्तस्स उक्कस्साणुभागसंकमो कस्स ? उक्कस्साणुभागं बंधिदूणावलियपडिभग्गस्स अण्णदरस्स । एवं सव्वकम्माणं । णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागसंकमो कस्स ? दंसणमोहणीयक्खवयं मोत्तूण जस्स संतकम्ममत्थि त्ति तस्स उक्कस्साणुभागसंकमो । क. पा. सु. पृ. ३५१, ४०-४५. उक्कोसगं पबंधिय आवलियमइच्छिऊण उक्कोसं । जाव ण घाणइ तगं संकमइ य आ मुहुत्तंतो ॥ असुभाणं अन्नयरो सुहुमअपज्जत्तगाइ मिच्छो य । वज्जिय असंखवासाउए य मणुओववाए य ॥ क. प्र. २, ५२-५३. २ प्रतिषु 'संजोगादो' इति पाठः । ३ ताप्रतौ 'चउरिंदिएसु सुहुमेसु' इति पाठः ।

बादरेसु पज्जत्तएसु अपज्जत्तएसु वा होदि।

उज्जोवणामाए उक्कस्साणुभागसंकमो कस्स? सत्तमाए पुढवीए दंसणमोहुवसामगंतेण अधापवत्तकरणचरिमसमए जं बद्धमणुभागं आवलियादीदं संकममाणस्स। सो कत्थ होदि? णेरइएसु तिरिक्खेसु मणुस्सेसु एइंदिएसु विगलिंदिएसु सुहुमेसु बादरेसु पज्जत्तएसु अपज्जत्तएसु वा होदि।

णिरयगदीए सादस्स उक्कस्साणुभागसंकमो कस्स होदि? चरिमसमयसुहुमसांपराइएण उवसामएण जो बद्धो अणुभागो तमघादेदूण अण्णदरिस्से पुढवीए उववज्जेज्ज तस्स उक्कस्सअणुभागसंकमो। एवं सव्वत्थ वत्तव्वं[1]। एव मुक्कस्ससामित्तं समत्तं।

एत्तो जहण्णाणुभागसंकमस्स सामित्तं— कसाए[2] खवेंतस्स जाव अंतरं अकदं[3] ताव अप्पसत्थाणं कम्माणं अणुभागसंतकम्मं सुहुमसंतकम्मादो उवरिं होदि, अंतरं कदे सुहुमसंतकम्मादो हेट्ठदो होदि[4]। एदेण बीजपदेण जहण्णसामित्तं कायव्वं। पंचणाणावरण-छदंसणावरण-पंचंतराइयाणं जहण्णाणुभागसंकामओ[5] को होदि? जो जहण्णट्ठिदिसंकामओ सो चेव जहण्णाणुभागस्स वि संकामओ। एवं सम्मत्त-लोहसंजलणाणं[6]।

सूक्ष्मोंमें, बादरोंमें, पर्याप्तकोंमें और अपर्याप्तकोंमें होता है।

उद्योत नामकर्मका उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम किसके होता है? सातवीं पृथिवीमें दर्शनमोहका उपशम करनेवाले जीवके द्वारा अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें जो अनुभाग बांधा गया है, बन्धावलीके पश्चात् उसका संक्रम करनेवालेके उद्योतका उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम होता है। वह कहांपर होता है? वह नारकियोंमें, तिर्यंचोंमें, मनुष्योंमें, एकेन्द्रियोंमें, विकलेन्द्रियोंमें, सूक्ष्मोंमें, बादरोंमें, पर्याप्तकोंमें और अपर्याप्तकोंमें होता है।

नरकगतिमें सातावेदनीयका उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम किसके होता है? अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्म साम्पराय उपशामकके द्वारा जो अनुभाग बांधा गया है उसका घात न करके जो अन्यतर पृथिवीमें उत्पन्न होनेवाला है उसके सातावेदनीयका उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम होता है। इसी प्रकारसे सर्वत्र प्ररूपणा करना चाहिये। इस प्रकार उत्कृष्ट स्वामित्व समाप्त हुआ।

यहां जघन्य अनुभागसंक्रमके स्वामित्वका कथन किया जाता है— कषायोंका क्षपण करनेवाले जीवके, जब तक वह अन्तर नहीं करता है तब तक, अप्रशस्त कर्मोंका अनुभागसत्कर्म सूक्ष्म एकेन्द्रियके सत्कर्मसे अधिक होता है। किन्तु अन्तर करनेपर वही सूक्ष्म एकेन्द्रियके सत्कर्मसे नीचे होता है। इस बीज पदके अनुसार जघन्य स्वामित्वको करना चाहिये। पांच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण और पांच अन्तरायके जघन्य अनुभागका संक्रामक कौन होता है? जो इनकी जघन्य स्थितिका संक्रामक है वही उनके जघन्य अनुभागका भी संक्रामक होता है। इसी प्रकार सम्यक्त्व और संज्वलन लोभके सम्बन्धमें कहना चाहिये।

१ सव्वत्थायाउज्जोव-मणुसगइपंचगाण आऊणं। समयाहिगालिगा सेसग त्ति सेसाण जोगंता॥ क. प्र. २-५४. २ ताप्रतौ 'सामित्तं कस्स? कसाए' इति पाठः। ३ अ-काप्रत्योः 'अंतरं कथं', ताप्रतौ 'अंतरं कदं' इति पाठः। ४ खवगस्संतरकरणे अकए घाईण सुहुमकम्मुवरिं। क. प्र. २-५५. ५ अप्रतौ 'संकमओ', का-ताप्रत्योः 'संकमो' इति पाठः। ६ ताप्रतौ 'लोहसंजणाणं इति पाठः।

णिद्दाणिद्दा-पयलापयला-थीणगिद्धीणं जहण्णाणुभागसंकामओ को होदि[1] ? सुहुमेइंदियो कद[2]हदसमुप्पत्तियकम्मो अण्णदरएइंदियो बेइंदियो तेइंदियो चउरिंदियो पंचिंदियो वा। कुदो ? जहण्णाणुभागेण सह सुहुमेइंदियस्स बीइंदियाएिसु उप्पत्तिसंभवादो। सम्माइट्ठी पसत्थकम्माणुभागं ण हणदि[3]। अप्पसत्थाणं भवोग्गहियाणं कम्माणमणुभागसंतकम्मं जिणे वट्टमाणं पि असण्णिसंतकम्मादो अणंतगुणं[4]। एदेण कारणेण सादासादाणं णामस्स पयडीणं अणादियसंतकम्मियाणं णीचागोदस्स च कदहदसमुप्पत्तियसंतकम्मियस्स सुहुमेइंदियस्स जहण्णसंतकम्मादो हेट्ठा बंधमाणस्स जहण्णाणुभागसंकमो। एइंदियादिपंचिंदिएसु वि एदेसिं जहण्णाणुभागसंकमो होदि[5], जहण्णाणुभागसंतकम्मियसुहुमेइंदियस्स जहण्णाणुभागेण सह बेइंदियादिसुप्पत्तिदंसणादो।

मिच्छत्त-अट्ठकसायाणं पि सुहुमेइंदियम्हि चेव कयहदसमुप्पत्तियकम्मम्हि जहण्णाणुभागसंकमो[6]। सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकामगो को होदि ? जो

निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला और स्त्यानगृद्धिके जघन्य अनुभागका संक्रामक कौन होता है ? जिसने हतसमुत्पत्तिक कर्मको किया है ऐसा सूक्ष्म एकेन्द्रिय, अन्यतर एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय जीव उनके जघन्य अनुभागका संक्रामक होता है। इसका कारण यह है कि जघन्य अनुभागके साथ सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवकी उत्पत्ति द्वीन्द्रिय आदि जीवोंमें सम्भव है। सम्यग्दृष्टि जीव प्रशस्त कर्मोंके अनुभागका घात नहीं करता है। भवोपगृहीत अप्रशस्त कर्मोंका अनुभागसत्कर्म जिन भगवान्‌में वर्तमान होकर भी असंज्ञीके सत्कर्मसे अनन्तगुणा होता है। इस कारण सातावेदनीय, असातावेदनीय, अनादिसत्कर्मिक नामप्रकृतियों और नीचगोत्रका जघन्य अनुभागसंक्रम हतसमुत्पत्तिकसत्कर्मिक होकर जघन्य सत्कर्मसे नीचे बांधनेवाले सूक्ष्म एकेन्द्रियके होता है। एकेन्द्रियको आदि लेकर पंचेन्द्रिय पर्यन्त जीवोंमें भी इनके जघन्य अनुभागका संक्रम होता है, क्योंकि, जघन्य अनुभागसत्कर्मिक सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवकी जघन्य अनुभागके साथ द्वीन्द्रियादि जीवोंमें उत्पत्ति देखी जाती है।

मिथ्यात्व और आठ कषायोंका भी जघन्य अनुभागसंक्रम हतसमुत्पत्तिककर्मको करनेवाले सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवके ही होता है। सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागका संक्रामक

---

१ अ-काप्रत्योः 'संकमो होदि', ताप्रतौ 'संकमो [को-] होदि' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'सुहुमेइंदियकद-' इति पाठः। ३ सम्मद्दिट्ठी न हणइ सुभाणुभागे···। क. प्र. २-५६. ४ केवलिगो णंतगुणं असन्निओ सेस असुभाणं ॥ क. प्र. २-५५. ५ सेसाण सुहुम हयसंतकम्मिगो तस्स हेट्ठओ जाव। बंधइ तावं एगिंदिओ व णेगिंदिओ वावि ॥ क. प्र. २-५९. उक्तसेसाणं शुभानामशुभानां वा प्रकृतीनां सप्तनवतिसंख्यानां यः सूक्ष्मैकेन्द्रियो वायुकायिकोऽग्निकायिको वा हतकर्मा—हतं विनाशितं प्रभूतमनुभागसत्कर्म येन स हतकर्मा— स तस्यात्मसत्कस्यानुभागसत्कर्मणोऽधस्तात् ततः स्तोकतरमित्यर्थः। अनुभागं तावद् बध्नाति यावदेकेन्द्रियस्तस्मिन्नन्यस्मिन् वा एकेन्द्रियभवे वर्तमानोऽनेकेन्द्रियो वेति स एव हतसत्कर्मा एकेन्द्रियोऽन्यस्मिन् द्वीन्द्रियादिभवे वर्तमानो यावदन्यं बृहत्तरमनुभागं न बध्नाति तावत्तमेव जघन्यमनुभागं संक्रमयतीति। मलय. ६ मिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ ? सुहुमस्स हदसमुप्पत्तिकम्मेण अण्णदरो। एइंदिओ वा बेइंदिओ वा

सम्मामिच्छत्तखवगो अपच्छिमे अणुभागखंडए वट्टमाणओ सो होदि[1]। पुरिसवेद-तिसंजलणाणं जहण्णाणुभागसंकामगो को होदि ? एदेसि खवओ[2] एदेसिं[3] चेव अपच्छिम-समयपवद्धाणं चरिमफालीयो संछुहमाणओ। णवरि पुरिसवेदस्स पुलिंगेण उवट्ठिदो त्ति वत्तव्वं[4]। णवुंसयवेदस्स जहण्णाणुभागसंकामओ को होदि ? णवुंसयवेदक्खवगो णवुंसयवेदोदएणेव खवगसेडिमारूढो णवुंमयवेदचरिमफालिं संछुहमाणगो। इत्थिवेदस्स जहण्णाणुभागसंकामओ को होदि ? इत्थिवेदखवगो अण्णदरवेदोदएण खवगसेडिमारूढो इत्थिवेदचरिमाणुभागखंडयचरिमफालिं संछुहमाणओ। छण्णोकसायाणमित्थिवेदभंगो[5]।

चदुण्णमाउआणं जहण्णाणुभागससंकामओ को होदि ? अप्पप्पणो जहण्णियाओ ट्ठिदीओ णिव्वत्तेदूण आवलियमदिक्कंतो। अणंताणुवंधीणं जहण्णाणुभागसंकामओ को

कौन होता है ? जो सम्यग्मिथ्यात्वका क्षपक अन्तिम अनुभागकाण्डकमें वर्तमान है वह उसके जघन्य अनुभागका संक्रामक होता है। पुरुषवेद और तीन संज्वलन कषायोंके जघन्य अनुभागका संक्रामक कौन होता है ? जो इन प्रकृतियोंका क्षपक इन्हींके अन्तिम समय-प्रवद्धोंकी अन्तिम फालियोंका क्षेपण कर रहा हो वह उनके जघन्य अनुभागका संक्रामक होता है। विशेष इतना है कि पुरुषवेदका संक्रामक पुलिंगसे उपस्थित हुआ जीव होता है, ऐसा कहना चाहिये। नपुंकसवेदके जघन्य अनुभागका संक्रामक कौन होता है ? नपुंसकवेदका क्षपक जो जीव नपुंसकवेदके उदयके साथ ही क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ होकर नपुंसकवेदकी अन्तिम कालिका क्षेपण कर रहा हो वह उसके जघन्य अनुभागका संक्रामक होता है। स्त्रीवेदके जघन्य अनुभागका संक्रामक कौन होता है ? जो स्त्रीवेदका क्षपक जीव अन्यतर वेदोदयके साथ क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ होकर स्त्रीवेदके अन्तिम अनुभागकाण्डककी अन्तिम फालिका क्षेपण कर रहा हो वह स्त्रीवेदके जघन्य अनुभागका संक्रामक होता हैं। छह नोकपायोंके जघन्य अनुभागसंक्रामककी प्ररूपणा स्त्रीवेदके समान है।

चार आयु कर्मोंके जघन्य अनुभागका संक्रामक कौन होता है ? अपनी अपनी जघन्य स्थितियोंको रचकर बन्धावलीको वितानेवाला जीव उनके जघन्य अनुभागका संक्रामक होता है। अनन्तानुवन्धी कषायोंके जघन्य अनुभागका संक्रामक कौन होता है ? विसंयोजना करके जो

तेइंदियो वा चउरिंदिओ वा पंचिंदिओ वा। एवमट्ठण्णं कसायाणं। क. पा. सु. पृ. ३५१, ४७–५०. १ सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ ? चरिमाणुभागखंडयं संछुहमाणओ। क. पा. सु. पृ. ३५२, ५३–५४. × × × नियगचरमरसखंडे दिट्ठिमोहदुगे॥ क. प्र. २, ५७. २ अ-काप्रत्योः 'खवदि', ताप्रतौ 'खवदि (ओ)' इति पाठः। ३ अप्रतौ 'एदासिं' इति पाठः। ४ कोहसंजलणस्स जहण्णाणु-भागसंकामओ को होइ ? चरिमाणुभागबंधस्स चरिमसमयअणिल्लेवगो। एवं माण-मायासंजलण-पुरिसवेदाणं। क. पा. सु. पृ. ३५३, ५७–५९. ५ इत्थिवेदस्स जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ ? इत्थिवेदक्खवगो तस्सेव चरिमाणुभागखंडए वट्टमाणओ। णवुंसयवेदस्स जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ ? णवुंसयवेदक्खवओ तस्सेव चरिमे अणुभागखंडए वट्टमाणओ। छण्णोकसायाणं जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ ? खवगो तेसिं चेव छण्णोकसाय-वेदणीयाणं चरिमे अणुभागखंडए वट्टमाणओ। क. पा. सु. पृ. ३५३, ६३–६७.

होदि ? विसंजोएदूण जहण्णपरिणामेण पढमसमयसंजुत्तो । णिरयगइणामाए जहण्णाणुभागसंकामओ को होदि ? पढमदाए संजोएमाणओ । जहा णिरयगइणामाए तहा सव्वासिमुव्वेल्लमाणणामपयडीणं । उच्चागोदस्स जहण्णाणुभागसंकामगो को होदि ? संजोजेमाणओ[1] । एवं सामित्तं समत्तं ।

एयजीवेण कालो । तं जहा— पंचणाणावरणीय-णवदंसणावरणीय-असादावेदणीय-मिच्छत्त-सोलसकसाय-णवणोकसायाणं उक्कस्साणुभागसंकामगो जह० अंतोमुहुत्तं, उक्कस्सेण वि अंतोमुहुत्तं । अणुक्कस्साणुभागसंकामओ केवचिरं० ? जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं उक्कस्साणुभागसंकामओ जह०, अंतोमु०, उक्क० वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि । अणुक्कस्साणुभागसंकामओ जहण्णुक्क० अंतोमु० ।

जघन्य परिणामसे संयुक्त होनेके प्रथम समय वर्तमान है वह उनके जघन्य अनुभागका संक्रामक होता है । नरकगति नामकर्मके जघन्य अनुभागका संक्रामक कौन होता है ? सर्वप्रथम संयोजन करनेवाला जीव उसके जघन्य अनुभागका संक्रामक होता है । जैसे नरकगतिके जघन्य अनुभागसंक्रामकका कथन किया है वैसे ही उद्वेल्यमान सभी नामप्रकृतियोंके जघन्य अनुभागसंक्रामकोंका कथन करना चाहिये । उच्चगोत्रके जघन्य अनुभागका संक्रामक कौन होता है ? सर्वप्रथम संयोजन करनेवाला जीव उसका संक्रामक होता है । इस प्रकार स्वामित्वकी प्ररूपणा समाप्त हुई ।

एक जीवकी अपेक्षा कालकी प्ररूपणा की जाती है । यथा— पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषाय; इनके उत्कृष्ट अनुभागसंक्रामकका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे भी अन्तर्मुहूर्त मात्र ही है । इनके अनुत्कृष्ट अनुभागसंक्रामकका काल कितना है ? वह जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे साधिक दो छयासठ सागरोपम मात्र है । उनके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका काल जघन्य व उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है ।

१ आऊण जहण्णठिई बंधिय जावत्थि संकमो ताव । उव्वलण-तित्थ-संजोयणा य पढमावलियं गंतुं ॥ क. प्र. २-५८ तथा नरकद्विक-मनुजद्विक-वैक्रियसप्तकाहारसप्तकोच्चैर्गोत्रलक्षणामेकविंशत्युद्वलनप्रकृतीनां तीर्थंकरस्यानन्तानुबन्धिनां च जघन्यमनुभागं बद्ध्वा प्रथमावलिकां बन्धावलिकालक्षणां गत्वातिक्रम्य, बन्धावलिकायाः परतः इत्यर्थः । जघन्यमनुभागं संक्रमयति । कः संक्रमयतीति चेदुच्यते— वैक्रियिकसप्तक-देवद्विक-नरकद्विकानामसंज्ञिपंचेन्द्रियः, मनुष्यद्विकोच्चैर्गोत्रयोः सूक्ष्मनिगोदः, आहारसप्तकस्याप्रमत्तः, तीर्थंकरस्याविरतसम्यग्दृष्टिः, अनन्तानुबन्धिनां पश्चात्कृतसम्यक्त्वो मिथ्यादृष्टिः संक्रमयतीति । मलय.
२ मिच्छत्तस्स उक्कस्साणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं । अणुक्कस्साणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं । उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । एवं सोलसकसाय-णवणोकसायाणं । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण वे छावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि । अणुक्कस्साणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं । क. पा. सु. पृ. ३५४, ६९-७९.

साद-जसकित्ति-उच्चागोदाणं मणुसगइ-मणुसगइपाओग्गाणुपुव्वी-ओरालियसरीर-ओरालियसरीरअंगोवंग-बंधण-संघाद-पढमसंघडण आदावुज्जोवणामाओ मोत्तूण सेसाणं पसत्थणामपयडीणं च उक्कस्साणुभागसंकामओ केवचिरं०? जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० पुव्व-कोडी देसूणा। अणुक्कस्साणुभागसंकामओ केवचिरं० ? उव्वेल्लमाणपयडीओ मोत्तूण सेसाण अणादिओ अपज्जवसिदो अणादिओ सपज्जवसिदो वा। उव्वेल्लमाणाणं पयडीणमणुक्कस्साणु-भागसंकामओ केवचिरं० ? जह० पलिदो० असंखे० भागो, अथवा अट्ठवस्साणि सादिरेयाणि। उक्कस्सेण जो जस्स पयडिसंतकालो तच्चिरं कालं[1]।

आउआणं[2] जट्ठिदिं बंधमाणगो जमणुभागं णिव्वत्तेदि जाव तट्ठिदिं ण ओवट्टेदि ताव तत्तियं कालं सो अणुभागं होदि। एदेण बीजेण देव-णिरयाउआणं उक्कस्साणु-क्कस्सअणुभागसंकामओ जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि सादिरेयाणि। मणुस-तिरिक्खाउआणं उक्कस्साणुकस्सअणुभागसंकमो केवचिरं० ? जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि सादिरेयाणि। णवरि तिरिक्खाउअअणुकस्सअणुभाग-संकमस्स उक्कस्सेण असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा।

अप्पसत्थाणं णामपयडीणं णीचागोद-पंचंतराइयाणं च उक्कस्साणुभागसंकमो जह०

सातावेदनीय, यशकीर्ति, उच्चगोत्र तथा मनुष्यगति, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, औदारिक-शरीर, औदारिकशरीरांगोपांग, औदारिकबन्धन, औदारिकसंघात, प्रथम संहनन, तथा आतप व उद्योतको छोड़कर शेष प्रशस्त नामप्रकृतियोंके भी उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका काल कितना है ? वह जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे कुछ कम पूर्वकोटि मात्र है। इनके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका काल कितना है ? उक्त काल उद्वेल्यमान प्रकृतियोंको (आहारकद्विक, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, देवद्विक, नारकचतुष्क, उच्चगोत्र और मनुष्यद्विक) को छोड़कर शेष प्रकृतियोंका अनादि-अपर्यवसित और अनादि-सपर्यवसित भी है। उद्वेल्यमान प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका काल कितना है ? वह जघन्यसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग अथवा साधिक आठ वर्ष मात्र है। उत्कर्षसे जो जिसके प्रकृतिसत्वका काल है उतना काल उनके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका है।

आयु कर्मोंकी जिस स्थितिको बांधनेवाला जिस अनुभागकी रचना करता है व जब तक उस स्थितिका अपवर्तन नहीं करता है तब तक उतने मात्र काल उसके वह अनुभाग होता है। इस बीजपदके अनुसार देवायु व नारकायुके उत्कृष्ट व अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे साधिक तेतीस सागरोपम मात्र है। मनुष्यायु और तिर्य-गायुके उत्कृष्ट व अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका काल कितना है ? वह जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे साधिक तीन पल्योपम मात्र है। विशेष इतना है कि तिर्यंच आयुके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रमका काल उत्कर्षसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र है।

अप्रशस्त नाम प्रकृतियों, नीचगोत्र और पांच अन्तरायके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रमका

---

१ अ-काप्रत्योः 'काल' इति पाठः। २ ताप्रतौ '-कम्मकालो। तच्चिरं कालं आउआणं।' इति पाठः।

उक्क० अंतोमुहुत्तं । अणुक्कस्सअणुभाग० केवचिरं० ? जह० अंतोमु०, उक्क० असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । मणुसगइ-मणुसगइपाओग्गाणुपुव्वी-ओरालियसरीर-ओरालियसरीर-अंगोवंग-बंधण-संघाद-पढमसंघडण-आदावुज्जोवाणं उक्कस्साणुभागसंकामगो केवचिरं० ? जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० बेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि । एदेसिं चेव अणुक्कस्स-संकामगो केवचिरं० ? जह० अंतोमुहुत्तं । उक्क० आदावणामाए असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा, मणुसगइणामाए सपरिवाराए असंखेज्जा पोग्लगपरियट्टा, ओरालियसरीरस्स सपरिवारस्स पढमसंघडणस्स उज्जोवणामाए च अणादिओ अपज्जवसिदो, अणादिओ सपज्जवसिदो, सादिओ सपज्जवसिदो वा । [तत्थ जो सादिओ सपज्जवसिदो] तस्स जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । एवमुक्कस्साणुभागसंकमकालो समत्तो ।

जहण्णाणुभागसंकमकालो । तं जहा— पंचणाणावरण-छदंसणावरण-पंचंतराइयाणं जहण्णाणुभागसंकमो केवचिरं० ? जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ । अजहण्णाणुभागसंकामओ केवचिरं० ? अणादिओ अपज्जवसिदो, अणादिओ सपज्जवसिदो वा । णिद्दाणिद्दा-पयला-पयला-थीणगिद्धि-सादासाद-मिच्छत्त-अट्ठकसायाणं जहण्णाणुभागसंकामओ जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं । अजहण्णाणुभागसंकामओ जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० असंखेज्जा लोगा । सम्मत्त-चदुसंजलण-पुरिसवेदाणं जहण्णाणुभागसंकामओ केव० ? जहण्णुक्क० एगसमओ ।

काल जघन्य व उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है । इनके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रमका काल कितना है ? जघन्यसे वह अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र है । मनुष्यगति, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, औदारिकशरीर, औदारिकशरीरांगोपांग, औदारिकबन्धन, औदारिक-संघात, प्रथम संहनन, आतप और उद्योतके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका काल कितना है ? वह जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे साधिक दो छयासठ सागरोपम मात्र है । इन्हींके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका काल कितना है ? वह जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है । उत्कर्षसे वह आतप नामकर्मका असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन, सपरिवार मनुष्यगति नामकर्मका असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन, तथा सपरिवार औदारिकशरीर, प्रथम संहनन और उद्योत नामकर्मका अनादि-अपर्यवसित, अनादि-सपर्यवसित व सादि-सपर्यवसित भी है । उनमें जो सादि-सपर्यवसित काल है उसका प्रमाण जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त व उत्कर्षसे उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन है । इस प्रकार उत्कृष्ट अनुभाग संक्रमका काल समाप्त हुआ ।

जघन्य अनुभागके संक्रमकालकी प्ररूपणा इस प्रकार है— पांच ज्ञानावरण, छह दर्शना-वरण और पांच अन्तरायके जघन्य अनुभागके संक्रमका काल कितना है ? वह जघन्य व उत्कर्षसे एक समय मात्र है । उनके अजघन्य अनुभागके संक्रामकका काल कितना है ? वह अनादि-अपर्यवसित और अनादि-सपर्यवसित भी है । निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, साता-वेदनीय, असातावेदनीय, मिथ्यात्व और आठ कषायोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकका काल जघन्य व उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है । उनके अजघन्य अनुभागके संक्रमका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे असंख्यात लोक मात्र है । सम्यक्त्व, चार संज्वलन और पुरुषवेदके जघन्य अनुभागके संक्रामकका काल कितना है ? वह जघन्य और उत्कर्षसे एक समय

अजहण्णाणुभागसंकामओ चदुसंजलण-पुरिसवेदाणं अणादिओ अपज्जवसिदो, अणादिओ सपज्जवसिदो, सादिओ सपज्जवसिदो [वा]। तत्थ जो सो सादिओ सपज्जवसिदो तस्स जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। सम्मत्तस्स जह० अंतोमु०, उक्क० वेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि।

अणंताणुबंधीणं जहण्णाणुभागसंकामओ जह० एगसमओ, उक्क० चत्तारि समया। अजहण्णअणुभागसंकामओ अणादिओ अपज्जवसिदो, अणादिओ सपज्जवसिदो, सादिओ सपज्जवसिदो च। तत्थ जो सो सादिओ सपज्जवसिदो तस्स जह० अंतोमु०, उक्कस्समुवड्ढपोग्गलपरियट्टं। अट्ठण्णं णोकसायाणं जहण्णाणुभागसंकामओ जहण्णुक्क० अंतोमुहुत्तं। अजहण्ण० अणादिओ अपज्जवसिदो, अणादिओ सपज्जवसिदो, सादिओ सपज्जवसिदो च। तत्थ जो सो सादिओ सपज्जवसिदो तस्स जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकामओ केव० ? जहण्णुक्क० अंतोमु०। अजहण्णस्स जह० अंतोमु०, उक्क० वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि।

आउआणं जहण्णाणुभागसंकामओ जह० एगसमओ, उक्क० चत्तारि समया। अजहण्ण० जह० अंतोमुहुत्तं[1]। देव-णिरयाउआणं अजहण्णाणुभागसंकमकालस्स कुदो

मात्र है। चार संज्वलन और पुरुपवेदके अजघन्य अनुभागके संक्रामकका काल अनादि-अपर्यवसित, अनादि-सपर्यवसित और सादि-सपर्यवसित भी है। उनमें जो सादि-सपर्यवसित है उसका प्रमाण जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्पसे उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन है। सम्यक्त्वके अजघन्य अनुभागके संक्रामकका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे साधिक दो छयासठ सागरोपम मात्र है।

अनन्तानुबन्धी कपायोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्पसे चार समय मात्र है। उनके अजघन्य अनुभागके संक्रामकका काल अनादि-अपर्यवसित, अनादि-सपर्यवसित और सादि-सपर्यवसित भी है। उनमें जो सादि-सपर्यवसित है उसका प्रमाण जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्पसे उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन है। पुरुषवेदको छोड़कर शेप आठ नोकपायोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकका काल जघन्य व उत्कर्पसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है। उनके अजघन्य अनुभागके संक्रामकका काल अनादि-अपर्यवसित, अनादि-सपर्यवसित और सादि-सपर्यवसित भी है। उनमें जो सादि-सपर्यवसित है उसका प्रमाण जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्पसे उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन है। सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागके संक्रामकका काल कितना है ? वह जघन्य व उत्कर्पसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है। उसके अजघन्य अनुभागके संक्रामकका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्पसे साधिक दो छयासठ सागरोपम मात्र है।

आयु कर्मोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे चार समय मात्र है। उनके अजघन्य अनुभागके संक्रामकका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है।

---

१ ताप्रतावतोऽग्रे 'उक्क० वेछावट्ठिसागरो० ।' इत्यधिकः पाठः।

अंतोमु० ? ण, अजहण्णाणुभागसंकमस्स आदिं करिय पुणो अजहण्णाणुभागसंकमे अंतोमुहुत्तमच्छिय पुणो जहण्णाणुभागं मोत्तूण सेसाणुभागस्स घादं करिय एगसमय-जहण्णाणुभागं संकामिय विदियादिसमएसु आवलियादीदं पुव्वबद्धाणुभागं संकममाणस्स तदुवलंभादो। उक्कस्सेण देव-णिरयाउआणं तेत्तीसं सागरोवमाणि सादिरेयाणि, तिरिक्खाउअस्स असंखेज्जा लोगा।

णामपयडीणं अणुव्वेल्लमाणियाणं[1] सुहाणमसुहाणं वा जहण्णाणुभागसंकामओ केव० ? जह० उक्क० च अंतोमुहुत्तं। अजहण्णाणुभागसंकामगो केव० ? जह० अंतोमु०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। एवं णीचागोदस्स। आहारसरीर-आहारसरीरअंगोवंग-बंधण-संघादाणं जहण्णाणुभागसंकामओ केव० ? जह० एगसमओ, उक्क० चत्तारि समया। अजहण्णाणुभागसंकामओ केवचिरं० ? जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० पलिदोवमस्स असंखे० भागो। तित्थयरणामाए जहण्णाणुभागसंकामओ केव० ? जह० एगसमओ, उक्क० चत्तारि समया। अजहण्णाणुभागसंकामओ केवचिरं० ? जचिरं पयडिसंतकम्मं। सेसाणमुव्वेल्ल-माणणामपयडीणमुच्चागोदस्स जहण्णाणुभागसंकामओ केव० ? जह० एगसमओ, उक्क०

शंका— देवायु और नारकायुके अजघन्य अनुभागके संक्रमका काल अन्तर्मुहूर्त कैसे है ?

समाधान— नहीं, क्योंकि अजघन्य अनुभागसंक्रमको आदि करके, फिर अजघन्य अनुभागसंक्रममें अन्तर्मुहूर्त रहकर, पुनः जघन्य अनुभागको छोड़कर शेष अनुभागका घात करके एक समयमें जघन्य अनुभागका संक्रम करके द्वितीयादि समयोंमें आवलिकातीत पूर्वबद्ध अनुभागका संक्रम करनेवालेके उक्त काल पाया जाता है।

उक्त काल उत्कर्षसे देवायु और नारकायुका साधिक तेतीस सागरोपम, तथा तिर्यगायुका असंख्यात लोक मात्र है।

अनुद्वेल्यमान शुभ और अशुभ नामप्रकृतियोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकका काल कितना है ? वह जघन्य व उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है। उनके अजघन्य अनुभागके संक्रामकका काल कितना है ? वह जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे असंख्यात लोक मात्र है। इसी प्रकार नीचगोत्रके भी अनुभागसंक्रमकालका कथन करना चाहिये। आहारशरीर, अहारशरीरांगोपांग, आहारबन्धन और आहारसंघातके जघन्य अनुभागके संक्रामकका काल कितना है ? वह जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे चार समय मात्र है। इनके अजघन्य अनुभागके संक्रामकका काल कितना है ? वह जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है। तीर्थंकर नामकर्मके जघन्य अनुभागके संक्रामकका काल कितना है ? वह जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे चार समय मात्र है। उसके अजघन्य अनुभागके संक्रामकका काल कितना है ? जितना काल प्रकृतिसत्कर्मका है उतना ही काल उसके अजघन्य अनुभागके संक्रमका भी है। शेष उद्वेल्यमान नामप्रकृतियों और उच्चगोत्रके जघन्य अनुभागके

---

१ अप्रतौ 'अणुव्वेम्माणियाणं' इति पाठः।

च्चारि समया। अजहण्णाणुभागसंकामगो केव० ? जह० पलिदो० असंखे० भागो अट्ठवस्साणि सादिरेयाणि, उक्क० अप्पप्पणो पयडिसंतस्स कालो। एवं जहण्णुक्कस्स-अणुभागसंकमकालो समत्तो।

एयजीवेण अंतरं। [तं] जहा— पंचणाणावरणीय-णवदंसणावरणीय-असादावेदणीय-मिच्छत्त-सोलसकसाय-णवणोकसाय-णिरय-तिरिक्ख-मणुस्साउआणं अप्पसत्थणामपयडीणं च णीचागोद-पंचंतराइयाणं च उक्कस्साणुभागसंकामयंतरं केव० ? जह० अंतोमुत्तं, उक्क० असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। साद-जसकित्ति-उच्चागोदाणं जासिं च णामपयडीणं खवगो परभवियणामबंधज्झवसाणस्स चरिमसमए उक्कस्साणुभागो बज्झदि तासिं च उक्कस्साणुभागसंकामयंतरं णत्थि। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं उक्कस्समणुभागसंकामयंतरं जहण्णं जहण्णपयडिअंतरं, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। देवाउअस्स जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। मणुसगइ-मणुसगइपाओग्गाणुपुव्वी-वज्जरिसहसंघडण-उज्जोव-ओरालियचउक्काणं देवाउअभंगो। आदावणामाए अप्पसत्थणामपयडिभंगो। एवमुक्कस्संतरं समत्तं।

जहण्णाणुभागसंकामयंतरं— पंचणाणावरणीय-छदंसणावरणीय-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-चदुसंजलण-णवणोकसायाणं पंचंतराइयाणं जहण्णाणुभागसंकामयंतरं णत्थि।

संक्रामकका काल कितना है ? वह जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे चार समय मात्र है। उनके अजघन्य अनुभागके संक्रामकका काल कितना है ? वह जघन्यसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग और साधिक आठ वर्ष तथा उत्कर्षसे अपने अपने प्रकृतिसत्त्वके कालके समान है। इस प्रकार जघन्य व उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमका काल समाप्त हुआ।

एक जीवकी अपेक्षा अन्तरकी प्ररूपणा की जाती है। यथा— पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नौ नोकषाय, नारकायु, तिर्यगायु, मनुष्यायु, अप्रशस्त नामप्रकृतियों, नीचगोत्र और पांच अन्तरायके उत्कृष्ट अनुभाग संक्रामकका अन्तरकाल कितना है ? वह जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। सातावेदनीय, यशकीर्ति और उच्चगोत्रका तथा जिन नामप्रकृतियोंका क्षपकके द्वारा परभविक नामकर्मोंके बन्धाध्यवसानके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट अनुभाग बांधा जाता है उनके भी उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका अन्तर नहीं होता। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका जघन्य अन्तरकाल जघन्य प्रकृतिअन्तरके समान तथा उत्कृष्ट उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। उक्त अन्तरकाल देवायुका जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। मनुष्यगति, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, वज्रर्षभसंहनन, उद्योत और औदारिकचतुष्कका उक्त अन्तरकाल देवायुके समान है। आतप नामकर्मके इस अन्तरकालकी प्ररूपणा अप्रशस्त नामप्रकृतियोंके समान है। इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर समाप्त हुआ।

जघन्य अनुभाग संक्रामकके अन्तरकी प्ररूपणा की जाती है— पांच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, चार संज्वलन, नौ नोकषाय और पांच अन्तराय; इनके

णिद्दाणिद्दा - पयलापयला - थीणगिद्धि - सादासाद - मिच्छत्त - अट्ठकसाय- तिरिक्खाउआणं अणुव्वेल्लमाणपसत्थापसत्थणामपयडीणं णीचागोदस्स च जहण्णाणुभागसंकामयंतरं जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० असंखेज्जा लोगा। अणंताणुबंधीणं जहण्णाणुभागसंकामयंतरं जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। णिरय-देव-मणुस्साउआणं जहण्णाणु० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। उव्वेल्लणपाओग्गाणं णामपयडीणं उच्चागोदस्स च जहण्णाणुभागसंकामयंतरं जह० पलिदो० असंखे० भागो, उक्क० मोत्तूण संजदपाओग्गाओ अवसेसाणं असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा, संजदपाओग्गाणं उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। तित्थयरणामाए जहण्णाणुभागसंकामयंतरं णत्थि। एवं अंतरं समत्तं।

णाणाजीवेहि भंगविचओ दुविहो उक्कस्सपदभंगविचओ जहण्णपदभंगविचओ चेदि। तत्थ अट्ठपदं— जे[1] उक्कस्सअणुभागस्स संकामया ते अणुक्कस्स० असंकामया। जे अणुक्कस्सअणुभागस्स[2] संकामया ते उक्कस्सस्स असंकामया। एदेण अट्ठपदेण सव्वकम्माणं पि उक्कस्साणुभागस्स सिया सव्वे जीवा असंकामया, सिया असंकामया च संकामओ च, सिया असंकामया च संकामया च। अणुक्कस्सस्स वि विवरीएण तिण्णि-

---

जघन्य अनुभाग संक्रामकका अन्तरकाल सम्भव नहीं है। निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, सातावेदनीय, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, आठ कषाय और तिर्यंच आयु तथा अनुद्वेल्यमान प्रशस्त व अप्रशस्त नामप्रकृतियों एवं नीचगोत्रके जघन्य अनुभागके संक्रामकका अन्तरकाल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे असंख्यात लोक मात्र है। अनन्तानुबन्धी कषायोंके जघन्य अनुभाग संक्रामकका अन्तरकाल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। नारकायु, देवायु और मनुष्यायुके जघन्य अनुभाग संक्रामकका अन्तरकाल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। उद्वेलन योग्य नामप्रकृतियों और उच्चगोत्रके जघन्य अनुभाग संक्रामकका अन्तरकाल जघन्यसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग है। उत्कर्षसे संयत योग्य प्रकृतियोंको छोड़कर शेष प्रकृतियोंका असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन तथा संयत योग्य प्रकृतियोंका उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। तीर्थंकर नामकर्मके जघन्य अनुभाग संक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। इस प्रकार अन्तरकालकी प्ररूपणा समाप्त हुई।

नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय दो प्रकार है— उत्कृष्ट-पद-भंगविचय और जघन्य-पद-भंगविचय। उनमें अर्थपद कहते हैं— जो उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक हैं वे अनुत्कृष्ट अनुभागके असंक्रामक होते हैं। जो अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक हैं वे उत्कृष्ट अनुभागके असंक्रामक होते हैं। इस अर्थपदके अनुसार सभी कर्मोंके उत्कृष्ट अनुभागके कदाचित् सब जीव असंक्रामक होते हैं, कदाचित् असंक्रामक बहुत और संक्रामक एक होता है, तथा कदाचित् असंक्रामक भी बहुत व संक्रामक भी बहुत होते हैं। अनुत्कृष्ट अनुभागके सम्बन्धमें भी विपरीत क्रमसे तीन भंग (कदाचित् सब जीव संक्रामक, कदाचित् संक्रामक बहुत और असंक्रामक एक,

---

१ अप्रतौ 'वे' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'उ (अणु) क्कस्साणुभागस्स' इति पाठः।

भंगा वत्तव्वा । साद-जसकित्ति-उच्चागोदाणं उक्कस्साणुभागस्स णियमा अत्थि संकामया च असंकामया च । एदासिमणुक्कस्साणुभागस्स वि संकामया च असंकामया च णियमा अत्थि । सेसाणं कम्माणं छ भंगा । अपुव्वकरणे परभवियणामाणं बंधवोच्छेदम्मि जेसिं कम्माणं उक्कस्सबंधो भणिदो तेसिमुक्कस्सो वा अणुक्कस्सो वा बंधो तत्थ होदि, असंखेज्ज-लोगमेत्तअणुभागबंधज्झवसाणट्ठाणाणं तत्थ संभवादो । तेणेदेसिं छ भंगा । एवमुक्कस्सपद-भंगविचओ समत्तो ।

जहण्णयस्स वि एदं चेव अट्ठपदं । एदेण अट्ठपदेण पंचणाणावरणीय-छदंसणा-वरणीय-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-अणंताणुबंधीणं चदुक्क-चदुसंजलण- णवणोकसाय - आउत्ति-उव्वेल्लमाणणामपयडि-उच्चागोद- पंचंतराइयाणं जहण्णाणुभागसंकामयाणं छ भंगा । थीणगिद्धितिय - सादासाद-मिच्छत्त - अट्ठकसाय-तिरिक्खाउअ-अणुव्वेल्लमाणणामपयडीणं णीचागोदस्स च जहण्णाणुभागस्स णियमा संकामया च असंकामया च । एवं णाणा-जीवेहि भंगविचओ समत्तो ।

णाणाजीवेहि कालो । तं जहा— साद-जसकित्ति-उच्चागोदाणं उक्कस्साणुभाग-संकामया केवचिरं० ? सव्वद्धा[१] । सेसाणं कम्माणं उक्कस्साणुभागसंकामया जह० अंतो-मुहुत्तं, उक्क० अप्पसत्थाणं कम्माणं पलिदो० असंखे० भागो । आउआणमुक्कस्साणुभाग-

तथा कदाचित् संक्रामक भी बहुत और असंक्रामक भी बहुत होते हैं ।) कहना चाहिये । सातावेदनीय, यशकीर्ति और उच्चगोत्रके उत्कृष्ट अनुभागके नियमसे बहुत संक्रामक और बहुत असंक्रामक होते हैं । इनके अनुत्कृष्ट अनुभागके भी बहुत संक्रामक और बहुत असंक्रामक होते हैं । शेष कर्मोंके छह भंग हैं । अपूर्वकरण गुणस्थानमें परभविक नामकर्मोंकी बन्धव्युच्छित्तिके हो जानेपर जिन कर्मोंका उत्कृष्ट वन्ध कहा गया है उनका वहां उत्कृष्ट व अनुत्कृष्ट बन्ध होता है, क्योंकि, वहां असंख्यात लोक मात्र अनुभागबन्धाध्यवसानस्थानोंकी सम्भावना है । इस कारण इनके छह भंग होते हैं । इस प्रकार उत्कृष्ट-पद-भंगविचय समाप्त हुआ ।

जघन्य अनुभाग संक्रमके भी विषयमें यही अर्थपद है । इस अर्थपदके अनुसार पांच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धिचतुष्क, चार संज्वलन, नौ नोकपाय, तीन आयु, उद्वेल्यमान नामप्रकृतियों, उच्चगोत्र और पांच अन्तरायके जघन्य अनुभाग संक्रामकोंके छह भंग होते हैं । स्त्यानगृद्धि आदि तीन, सातावेदनीय, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, आठ कषाय, तिर्यगायु, अनुद्वेल्यमान नामप्रकृतियों और नीचगोत्रके जघन्य अनुभागके नियमसे संक्रामक बहुत और असंक्रामक भी बहुत होते हैं । इस प्रकार नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय समाप्त हुआ ।

नाना जीवोंकी अपेक्षा कालकी प्ररूपणा इस प्रकार है— सातावेदनीय, यशकर्ति और उच्चगोत्रके उत्कृष्ट अनुभाग संक्रामकोंका काल कितना है ? नाना जीवोंको अपेक्षा उनका सर्वकाल है । शेष कर्मोंके उत्कृष्ट अनुभाग संक्रामकोंका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे अप्रशस्त कर्मोंका पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है । आयु कर्मोंके उत्कृष्ट अनुभाग

१ अ-काप्रत्योः 'सव्वद्धं' इति पाठः ।

संकामयाणं कालो जह० अंतोमु०, उक्क० अंगुलस्स असंखे० भागो । जासिं परभविय-णामाणं बंधज्झवसाणस्स चरिमसमए खवओ उक्कस्साणुभागं णिव्वत्तेदि तासिं णाम-पयडीणं उक्कस्साणुभागसंकामयकालो जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । पसत्थाणं णामपयडीणं अक्खवयपाओग्गाणं उक्कस्साणुभागसंकमकालो जह० अंतोमु०, उक्क० पलिदो० असंखेभागो । एवमुक्कस्सकालो समत्तो ।

एत्तो णाणाजीवेहि जहण्णाणुभागसंकामयकालो । तं जहा— पंचणाणावरण-छ-दंसणावरण-सम्मत्त-पुरिसवेद-चदुसंजलण-पंचंतराइयाणं जहण्णाणुभागसंकामयाणं कालो जह० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया । अणंताणुबंधीणं जहण्णाणुभागसंकामया जह० एगसमओ, उक्क० आवलि० असंखे० भागो । सम्मामिच्छत्त-अट्ठणोकसायाणं जहण्णाणुभागसंकामया जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं । तिण्णमाउआणं जहण्णाणुभागसंकाम-याणं जह० एगसमओ, उक्क० आवलि० असंखे० भागो । तिरिक्खाउस्स जहण्णा-जहण्णस्स सव्वद्धा । णिरय-देव-मणुसगइणामाणं तप्पाओग्गआणुपुव्वीणामाणं वेउव्विय-सरीर-वेउव्वियसरीरंगोवंग-बंधण-संघादणामाणं जहण्णाणुभागसंकामयाणं० जह० एग-समओ, उक्क० आवलि० असंखे० भागो । एवमुच्चागोदस्स । आहारसरीर-आहारसरीरअंगोवंग-[1]

संक्रामकोंका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे अंगुलके असंख्यातवें भाग मात्र है । जिन परभविक नामकर्मोंके बन्धाध्यवसानके अन्तिम समयमें क्षपक जीव उत्कृष्ट अनुभागकी रचना करता है उन नामप्रकृतियोंके उत्कृष्ट अनुभाग संक्रामकोंका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे पूर्वकोटिपृथक्त्व प्रमाण है । अक्षपक योग्य प्रशस्त नामप्रकृतियोंके उत्कृष्ट अनुभाग संक्रामकोंका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है । इस प्रकार उत्कृष्ट कालकी प्ररूपणा समाप्त हुई ।

यहां नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य अनुभाग संक्रामकोंके कालकी प्ररूपणा की जाती है । यथा— पांच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सम्यक्त्व पुरुषवेद, चार संज्वलन और पांच अन्तरायके जघन्य अनुभाग संक्रामकोंका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे संख्यात समय मात्र हैं । अनन्तानुबन्धी कषायोंके जघन्य अनुभाग संक्रामकोंका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र है । सम्यग्मिथ्यात्व और आठ नोकषायोंके जघन्य अनुभाग संक्रामकोंका काल जघन्य व उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है । तीन आयु कर्मोंके जघन्य अनुभाग संक्रामकोंका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र है । तिर्यगायुके जघन्य व अजघन्य अनुभाग संक्रामकोंका काल सर्वकाल है । नरकगति, देवगति और मनुष्यगति नामकर्मों, तत्प्रायोग्य आनुपूर्वी नामकर्मों, वैक्रियिकशरीर वैक्रियिकशरीरांगोपांग, वैक्रियिकबन्धन और वैक्रियिकसंघात नामकर्मोंके जघन्य अनुभाग संक्रामकोंका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र है । इसी प्रकार उच्चगोत्रके सम्बन्धमें कहना चाहिये । आहारशरीर, आहारशरीरांगोपांग,

१ अप्रतौ 'आहारसरीरस्साहार', काप्रतौ 'आहारसरीरस्स आहार' इति पाठः ।

बंधण-संघाद-तित्थयराणं जहण्णाणुभागसंकामया जह० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया । सेसाणमणुव्वेल्लमाणणामपयडीणं णीचागोदस्स जहण्णाणुभागसंकामयाणं सव्वद्धा । एवं कालो समत्तो ।

णाणाजीवेहि अंतरं । तं जहा— पंचणाणावरणीय-णवदंसणावरणीय-असादावेदणीय-मिच्छत्त-सोलसकसाय-णवणोकसाय-आउचउक्काणं जसकित्तिं मोत्तूण सव्वणामपयडीणं णीचागोद-पंचंतराइयाणं च उक्कस्साणुभागसंकामयंतरं जह० एगसमओ, उक्क० असंखेज्जा लोगा । साद-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-जसकित्ति-उच्चागोदाणं उक्कस्साणुभागसंकामयंतरं णत्थि । एवमुक्कस्साणुभागसंकामयंतरं समत्तं ।

जहण्णाणुभागसंकामयंतरं । तं जहा— पंचणाणावरणीय-छदंसणावरणीय-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-लोहसंजलण-इत्थिवेद-छण्णोकसाय-पंचंतराइयाणं जहण्णाणुभागसंकामयंतरं जह० एयसमओ, उक्क० छम्मासा । तिण्णिसंजलण-पुरिसवेदाणमंतरं एवं चेव । णवरि उक्क० वस्सं सादिरेयं । एवं णवुंसयवेदस्स । णवरि उक्कस्समंतरं संखेज्जाणि वस्साणि । अणंताणुबंधीणं जह० एगसमओ, उक्क० असंखेज्जा लोगा । तिण्णमाउआणमंतरं जह० एगसमओ, उक्क० असंखेज्जा लोगा । जाओ णामपयडीओ सादियसंतकम्माओ तासिं णामपयडीणं जहण्णाणुभागसंकामयंतरं जह० एगसमओ, उक्क० असं०

आहारबन्धन, आहारसंघात और तीर्थंकरके जघन्य अनुभाग संक्रामकोंका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे संख्यात समय मात्र है । शेष अनुद्वेल्यमान नामप्रकृतियों और नीचगोत्रके जघन्य अनुभाग संक्रामकोंका काल सर्वकाल है । इस प्रकार कालप्ररूपणा समाप्त हुई ।

नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तरकी प्ररूपणा की जाती है । यथा— पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नौ नोकषाय और चार आयु कर्मोंके तथा यशकीर्तिको छोड़कर सब नामप्रकृतियों, नीचगोत्र और पांच अन्तरायके उत्कृष्ट अनुभाग संक्रामकोंका अन्तरकाल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे असंख्यात लोक मात्र है। सातावेदनीय सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, यशकीर्ति और उच्चगोत्रके उत्कृष्ट अनुभाग संक्रामकोंका अन्तर नहीं होता । इस प्रकार उत्कृष्ट अनुभाग संक्रामकोंका अन्तरकाल समाप्त हुआ ।

जघन्य अनुभाग संक्रामकोंके अन्तरकालकी प्ररूपणा इस प्रकार है— पांच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्वलन लोभ, स्त्रीवेद, छह नोकषाय और पांच अन्तरायके जघन्य अनुभाग संक्रामकोंका अन्तरकाल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे छह मास मात्र है । तीन संज्वलन और पुरुषवेदका भी अन्तरकाल इसी प्रकार ही है । विशेष इतना है कि इनका उक्त अन्तरकाल उत्कर्षसे साधिक एक वर्ष मात्र है । इसी प्रकार नपुंसकवेदके सम्बन्धमें कहना चाहिये । विशेष इतना है कि उत्कृष्ट अन्तरकाल संख्यात वर्ष मात्र है । अनन्तानुबन्धी कषायोंका वह अन्तरकाल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे असंख्यात लोक मात्र है । तीन आयु कर्मोंका वह अन्तरकाल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे असंख्यात लोक मात्र है । जो नामप्रकृतियां सादि सत्कर्मवाली हैं उन नामप्रकृतियोंके जघन्य अनुभाग संक्रामकोंका अन्तरकाल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे असंख्यात लोक मात्र

लोगा। एवमुच्चागोदस्स वि। सेसाणं णामपयडीणं णीचागोद-तिरिक्खाउअ-मिच्छत्त-अट्ठकसाय-सादासाद-णिद्दाणिद्दा-पयलापयला-थीणगिद्धीणं जहण्णाणुभागसंकामयाणं णत्थि अंतरं। एवमंतरं समत्तं।

सण्णियासो। तं जहा—मदिआवरणस्स उक्कस्साणुभागसंकामगो सुदावरणस्स। तं तु छट्ठाणपदिदो[1]। एवं जाणिदूण णेयव्वं।

जहण्णसण्णियासो। तं जहा— मदिआवरणस्स जो जहण्णाणुभागसंकामगो सेसाणं चदुण्णं णाणावरणीयाणं णियमा जहण्णाणुभागस्स संकामओ, दसणावरणस्स चउव्विहस्स णियमा जहण्णाणुभागसंकामगो, णिद्दा-पयलाणं णियमा असंकामओ, पंचण्णमंतराइयाणं णियमा जहण्णा, सेसाणं जेसिं संतकम्ममत्थि तेसिं णियमा अजहण्णसंकामओ। एवं सण्णियासो समत्तो।

एत्तो अप्पाबहुगं दुविहं सत्थाणे परत्थाणे चेदि। चउसट्ठिपदियो जो दंडओ तेण पयदं। सो दुविहो उक्कस्सपदे जहण्णपदे चेदि। उक्कस्सेण जहा अणुभागबंधे भणिदो तहा उक्कस्सए अणुभागसंकमे[2] कायव्वो। णवरि सम्मामिच्छत्तादो सम्मत्ते

है। इसी प्रकार उच्चगोत्रकी भी प्ररूपणा करना चाहिये। शेष नामप्रकृतियों, नीचगोत्र, तिर्यगायु, मिथ्यात्व, आठ कषाय, सातावेदनीय, असातावेदनीय, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला और स्त्यानगृद्धिके जघन्य अनुभाग संक्रामकोंका अन्तरकाल नहीं है। इस प्रकार अन्तरकालकी प्ररूपणा समाप्त हुई।

संनिकर्षकी प्ररूपणा की जाती है। यथा— मतिज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक श्रुतज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है। वह षट्स्थानपतित होता है। इस प्रकार जानकर आगे भी ले जाना चहिये।

जघन्य अनुभाग संक्रमके संनिकर्षकी प्ररूपणा इस प्रकार है— जो मतिज्ञानावरणके जघन्य अनुभागका संक्रामक है वह नियमसे शेष चार ज्ञानावरण प्रकृतियोंके जघन्य अनुभागका संक्रामक होता है, वह चार प्रकार दर्शनावरणके नियमसे जघन्य अनुभागका संक्रामक होता है, निद्रा और प्रचलाका नियमसे असंक्रामक होता है, पांच अन्तराय प्रकृतियोंके नियमसे जघन्य अनुभागका संक्रामक होता है, शेष प्रकृतियोंमें जिनका सत्त्व है उनके नियमसे अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है। इस प्रकार संनिकर्षकी प्ररूपणा समाप्त हुई।

यहां स्वस्थान और परस्थानके भेदसे अल्पबहुत्व दो प्रकारका है। चौंसठ पदवाला जो अल्पबहुत्वदण्डक है वह यहां प्रकृत है। वह दो प्रकार है— उत्कृष्ट पद विषयक और जघन्य पद विषयक। उत्कृष्ट पदकी अपेक्षा जैसे अनुभागबन्धके विषयमें उक्त अल्पबहुत्वदण्डकका कथन किया गया है वैसे ही उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमके विषयमें भी उसका कथन करना चाहिये। विशेष इतना है कि सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा सम्यक्त्वमें 'अनन्तगुणहीन'

---

१ ताप्रतौ 'छट्ठाणं पदिदा' इति पाठः। २ प्रतिषु 'अणुभागसंकमो' इति पाठः।

अणंतगुणहीणमिदि णिट्ठावयाणि पदिदाणि कादव्वाणि । एदं वदिरित्तं उक्कस्सवंधादो संकमे उक्कस्से ।

जहण्णेण सव्वमंदाणुभागो[1] लोहसंजलणो । माया० अणंतगुणो । माणो अणंतगुणो । कोधो अणंतगुणो । पुरिस० अणंतगुणो । सम्मत्ते० अणंतगुणो । सम्मामिच्छत्ते अणंतगुणो । मणपज्जव० दाणंतराइय० अणंतगुणो । ओहिणाणावरण० लाहंतराइय० अणंतगुणो । सुद० अचक्खुदं० भोगंतराइय० अणंतगुणो । चक्खु० अणंतगुणो । मदि० परिभोगंतराइय० अणंतगुणो । केवलणाण-केवलदंसणावरण-वीरियंतराइय० अणंतगुणो । पयला० अणंतगुणो । णिद्दा० अणंतगुणो । हस्स० अणंतगुणो । रदि० अणंतगुणो । दुगुंछा० अणंतगुणो । भय० अणंतगुणो । सोग० अणंतगुणो । अरदि० अणंतगुणो । इत्थि० अणंतगुणो । णवुंस० अणंतगुणो । अणंताणुवंधिमाणे० अणंतगुणो । कोधे० विसेसाहियो । माया० विसे० । लोहे विसे० । वेउव्वियसरीर० अणंतगुणो । तिरिक्खाउअ० अणंतगुणो । मणुस्साउ० अणंतगुणो । णिरयगई० अणंतगुणो । मणुसगई० अणंतगुणो । देवगई० अणंतगुणो । उच्चागोद० अणंतगुणो । णिरयाउ० अणंतगुणो । देवाउ० अणंतगुणो । ओरालिय० अणंतगुणो । तेजा० अणंतगुणो । कम्मइय० अणंत-

---

इस प्रकार निष्ठापक पतितोंको करना चाहिये, अर्थात् सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्व इन दो अवन्ध प्रकृतियोंके भी अल्पवहुत्वको यहां अनन्तगुणहीनक्रमसे कहना चाहिये । यह उत्कृष्ट वन्धकी अपेक्षा उत्कृष्ट संक्रममें भेद है ।

जघन्य पदकी अपेक्षा संज्वलन लोभ सर्वमन्द अनुभागवाला है । संज्वलन माया अनन्तगुणी है । संज्वलन मान अनन्तगुणा है । संज्वलन क्रोध अनन्तगुणा है । पुरुषवेदमें वह अनन्तगुणा है । सम्यक्त्वमें अनन्तगुणा है । सम्यग्मिथ्यात्वमें अनन्तगुणा है । मन:पर्ययज्ञानावरण और दानान्तरायमें अनन्तगुणा है । अवधिज्ञानावरण और लाभान्तरायमें अनन्तगुणा हैं । श्रुतज्ञानावरण, अचक्षुदर्शनावरण और भोगान्तरायमें अनन्तगुणा है । चक्षुदर्शनावरणमें अनन्तगुणा है । मतिज्ञानावरण और परिभोगान्तरायमें अनन्तगुणा है । केवलज्ञानावरण, केवलदर्शनावरण और वीर्यान्तरायमें अनन्तगुणा है । प्रचलामें अनन्तगुणा है । निद्रामें अनन्तगुणा है । हास्यमें अनन्तगुणा है । रतिमें अनन्तगुणा है । जुगुप्सामें अनन्तगुणा है । भयमें अनन्तगुणा है । शोकमें अनन्तगुणा है । अरतिमें अनन्तगुणा है । स्त्रीवेदमें अनन्तगुणा है । नपुंसकवेदमें अनन्तगुणा है । अनन्तानुबन्धी मानमें अनन्तगुणा है । अनन्तानुवन्धी क्रोधमें विशेष अधिक है । अनन्तानुवन्धी मायामें विशेष अधिक है । अनन्तानुवन्धी लोभमें विशेष अधिक है । वैक्रियिकशरीरमें अनन्तगुणा है । तिर्यंचआयुमें अनन्तगुणा है । मनुष्यायुमें अनन्तगुणा है । नरकगतिमें अनन्तगुणा है । मनुष्यगतिमें अनन्तगुणा है । देवगतिमें अनन्तगुणा है । उच्चगोत्रमें अनन्तगुणा है । नारकायुमें अनन्तगुणा है । देवायुमें अनन्तगुणा है । औदारिकशरीरमें अनन्तगुणा है । तैजसशरीरमें अनन्तगुणा है । कार्मण-

---

१ ताप्रतौ 'उक्कस्से० जहण्णेण । सव्वमंदाणुभागो' इति पाठः ।

गुणो । तिरिक्खगई० अणंतगुणो । णीचागोद० अणंतगुणो । अजसकित्ति० अणंतगुणो । पयलापयला० अणंतगुणो । णिद्दाणिद्दा० अणंतगुणो । थीणगिद्धि० अणंतगुणो । अपच्चक्खाणमाणे० अणंतगुणो । कोधे० विसेसाहिओ । माया० विसेसा० । लोभे० विसे० । पच्चक्खाणमाणे अणंतगुणो । कोधे विसेसा० । मायाए० विसे० । लोभे० विसे० । असाद० अणंतगुणो । जसकित्ति० अणंतगुणो । साद० अणंतगुणो । मिच्छत्त० अणंतगुणो । आहार० अणंतगुणो । एवमोघो समत्तो ।

णिरयगईए सव्वमंदाणुभागं सम्मत्तं । सम्मामिच्छत्त० अणंतगुणो । अणंताणुबंधिमाणे० अणंतगुणो । कोधे० विसे० । माया० विसे० । लोभे० विसे० । तिरिक्खाउ० अणंतगुणो । मणुस्साउ० अणंतगुणो । णिरयाउ० अणंतगुणो । ओरालिय० अणंतगुणो । वेउ० अणंतगुणो । तेजा० अणंतगुणो । कम्मइय० अणंतगुणो । हस्स० अणंतगुणो । रदि० अणंतगुणो । णिरयगई० अणंतगुणो । तिरिक्खगई० अणंतगुणो । मणुसगई० अणंतगुणो । देवगई० अणंतगुणो । णीचागोद० अणंतगुणो । अजसगित्ति० अणंतगुणो । पयला० अणंतगुणो । णिद्दा० अणंतगुणो । पयलापयला० अणंतगुणो । णिद्दाणिद्दा० अणंतगुणो । दुगुंछा० अणंतगुणो । भय० अणंतगुणो । सोग० अणंतगुणो । अरदि० अणंतगुणो । पुरिसवेद०

शरीरमें अनन्तगुणा है । तिर्यग्गतिमें अनन्तगुणा है । नीचगोत्रमें अनन्तगुणा है । अयशकीर्तिमें अनन्तगुणा है । प्रचलाप्रचलामें अनन्तगुणा है । निद्रानिद्रामें अनन्तगुणा है । स्त्यानगृद्धिमें अनन्तगुणा है । अप्रत्याख्यानावरण मानमें अनन्तगुणा है । अप्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण मानमें अनन्तगुणा है । प्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है । असातावेदनीयमें अनन्तगुणा है । यशकीर्तिमें अनन्तगुणा है । सातावेदनीयमें अनन्तगुणा है । मिथ्यात्वमें अनन्तगुणा है । आहारशरीरमें अनन्तगुणा है । इस प्रकार ओघ अल्पबहुत्व समाप्त हुआ है ।

नरकगतिमें सबसे मन्द अनुभागवाली सम्यक्त्व प्रकृति है । उससे सम्यग्मिथ्यात्वमें वह अनन्तगुणा है । अनन्तानुबन्धी मानमें अनन्तगुणा है । अनन्तानुबन्धी क्रोधमें विशेष अधिक है । अनन्तानुबन्धी मायामें विशेष अधिक है । अनन्तानुबन्धी लोभमें विशेष अधिक है । तिर्यगायुमें अनन्तगुणा है । मनुष्यायुमें अनन्तगुणा है । नारकायुमें अनन्तगुणा है । औदारिकशरीरमें अनन्तगुणा है । वैक्रियिकशरीरमें अनन्तगुणा है । तैजसशरीरमें अनन्तगुणा है । कार्मणशरीरमें अनन्तगुणा है । हास्यमें अनन्तगुणा है । रतिमें अनन्तगुणा है । नरकगतिमें अनन्तगुणा है । तिर्यंचगतिमें अनन्तगुणा है । मनुष्यगतिमें अनन्तगुणा है । देवगतिमें अनन्तगुणा है । नीचगोत्रमें अनन्तगुणा है । अयशकीर्तिमें अनन्तगुणा है । प्रचलामें अनन्तगुणा है । निद्रामें अनन्तगुणा है । प्रचलाप्रचलामें अनन्तगुणा है । निद्रानिद्रामें अनन्तगुणा है । जुगुप्सामें अनन्तगुणा है । भयमें अनन्तगुणा है । शोकमें अनन्तगुणा है । अरतिमें

अणंतगुणो। इत्थिवेद० अणंतगुणो। णवुंसय० अणंतगुणो। मणपज्ज० अणंतगुणो। थीणगिद्धि० अणंतगुणो। दाणंतराइयं० अणंतगुणो। ओहिणाण० ओहिदंसण० लाहंतराइय० अणंतगुणो। सुदणाण० अचक्खुदंसण० भोगंतराइय० अणंतगुणो। चक्खु० अणंतगुणो। आभिणिबोहिय० परिभोगंतराइय० अणंतगुणो। अपच्चक्खाणमाणे० अणंतगुणो। कोहे० विसेसाहिओ। माया० विसे०। लोभे० विसे०। पच्चक्खाणमाणे० अणंतगुणो। कोहे० विसे०। माया० विसे०। लोभे० विसे०। संजलणमाणे० अणंतगुणो। कोहे० विसे०। माया० विसे०। लोभे० विसे०। केवलणाण० केवलदंसण० असाद० वीरियं० अणंतगुणो। उच्चागोद० अणंतगुणो। अजसकित्ति० अणंतगुणो। साद० अणंतगुणो। मिच्छत्त० अणंतगुणो। आहारसरीर० अणंतगुणो। एवं णिरयगईए जहण्णओ अणुभागसंकमदंडओ समत्तो।

तिरिक्खगईए सव्वमंदाणुभागं सम्मत्तं। सम्मामिच्छत्त० अणंतगुणो। अणंताणुबंधिमाणे अणंतगुणो। कोधे० विसे०। माया० विसे०। लोभे० विसे०। वेउव्वियसरीर० अणंतगुणो। तिरिक्खाउ० अणंतगुणो। मणुस्साउ० अणंतगुणो। णिरयगई० अणंतगुणो। मणुसगई० अणंतगुणो। देवगई० अणंतगुणो। उच्चागोद० अणंतगुणो।

अनन्तगुणा है। पुरुषवेदमें अनन्तगुणा। स्त्रीवेदमें अनन्तगुणा है। नपुंसकवेदमें अनन्तगुणा है। मनःपर्ययज्ञानावरणमें अनन्तगुणा है। स्त्यानगृद्धिमें अनन्तगुणा है। दानान्तरायमें अनन्तगुणा है। अवधिज्ञानावरण, अवधिदर्शनावरण और लाभान्तरायमें अनन्तगुणा है। श्रुतज्ञानावरण, अचक्षुदर्शनावरण और भोगान्तरायमें अनन्तगुणा है। चक्षुदर्शनावरणमें अनन्तगुणा है। आभिनिबोधिकज्ञानावरण और परिभोगान्तरायमें अनन्तगुणा है। अप्रत्याख्यानावरण मानमें अनन्तगुणा है। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानमें अनन्तगुणा है। प्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है। संज्वलन मानमें अनन्तगुणा है। संज्वलन क्रोधमें विशेष अधिक है। संज्वलन मायामें विशेष अधिक है। संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है। केवलज्ञानावरण, केवलदर्शनावरण, असातावेदनीय और वीर्यान्तरायमें अनन्तगुणा है। उच्चगोत्रमें अनन्तगुणा है। अयशकीर्तिमें अनन्तगुणा है। सातावेदनीयमें अनन्तगुणा है। मिथ्यात्वमें अनन्तगुणा है। आहारशरीरमें अनन्तगुणा है। इस प्रकार नरकगतिमें जघन्य अनुभागसंक्रमदण्डक समाप्त हुआ।

तिर्यंचगतिमें सम्यक्त्व प्रकृति सबसे मन्द अनुभागवाली है। उससे सम्यग्मिथ्यात्वमें वह अनन्तगुणा है। अनन्तानुबन्धी मानमें अनन्तगुणा है। अनन्तानुबन्धी क्रोधमें विशेष अधिक है। अनन्तानुबन्धी मायामें विशेष अधिक है। अनन्तानुबन्धी लोभमें विशेष अधिक है। वैक्रियिकशरीरमें अनन्तगुणा है। तिर्यगायुमें अनन्तगुणा है। मनुष्यायुमें अनन्तगुणा है। नरकगतिमें अनन्तगुणा है। मनुष्यगतिमें अनन्तगुणा है। देवगतिमें अनन्तगुणा है।

---

१ अ-काप्रत्योः 'थीणगिद्धि० दाणंतराइय०' इति पाठः।

णिरयाउ० अणंतगुणो। देवाउ० अणंतगुणो। ओरालिय० अणंतगुणो। तेजा० अणंतगुणो। कम्मइय० अणंतगुणो। हस्स० अणंतगुणो। रदि० अणंतगुणो। तिरिक्खगई० अणंतगुणो। णीचागोद० अणंतगुणो। अजसगित्ति० अणंतगुणो। पयला० अणंतगुणो। णिद्दा० अणंतगुणो। पयलापयला० अणंतगुणो। णिद्दाणिद्दा अणंतगुणो। दुगुंछा० अणंतगुणो। भय० अणंतगुणो। सोग० अणंतगुणो। अरदि० अणंतगुणो। पुरिसवेद० अणंतगुणो। इत्थिवेद० अणंतगुणो। णवुंस० अणंतगुणो। मणपज्जवणाण० अणंतगुणो। थीणगिद्धि० अणंतगुणो। दाणंतराइयं० अणंतगुणो। ओहिणाण० ओहिदंसण० लाहंतराइय० अणंतगुणो। सुदणाण० भोगंतराइय० अणंतगुणो। चक्खु० अणंतगुणो। मदिणाण० परिभोगंतराइय० अणंतगुणो। अपच्चक्खाणमाणे० अणंतगुणो। कोधे० विसे०। माया० विसे०। लोभे० विसे०। पच्चक्खाणमाणे० अणंतगुणो। कोधे० विसे०। माया० विसे०। लोभे० विसे०। संजलणमाणे० अणंतगुणो। कोधे० विसे०। माया० विसे०। लोहे० विसे०। केवलणाण० केवलदंसण० असाद० विरियंतराइय० अणंतगुणो। जसगित्ति० अणंतगुणो। साद० अणंतगुणो।

उच्चगोत्रमें अनन्तगुणा है। नारकायुमें अनन्तगुणा है। देवायुमें अनन्तगुणा है। औदारिकशरीरमें अनन्तगुणा है। तैजसशरीरमें अनन्तगुणा है। कार्मणशरीरमें अनन्तगुणा है। हास्यमें अनन्तगुणा है। रतिमें अनन्तगुणा है। तिर्यंचगतिमें अनन्तगुणा है। नीचगोत्रमें अनन्तगुणा है। अयशकीर्तिमें अनन्तगुणा है। प्रचलामें अनन्तगुणा है। निद्रामें अनन्तगुणा है। प्रचलाप्रचलामें अनन्तगुणा है। निद्रानिद्रामें अनन्तगुणा है। जुगुप्सामें अनन्तगुणा है। भयमें अनन्तगुणा है। शोकमें अनन्तगुणा है। अरतिमें अनन्तगुणा है। पुरुषवेदमें अनन्तगुणा है। स्त्रीवेदमें अनन्तगुणा है। नपुंसकवेदमें अनन्तगुणा है। मनःपर्ययज्ञानावरणमें अनन्तगुणा है। स्त्यानगृद्धिमें अनन्तगुणा है। दानान्तरायमें अनन्तगुणा है। अवधिज्ञानावरण, अवधिदर्शनावरण और लाभान्तरायमें अनन्तगुणा है। श्रुतज्ञानावरण और भोगन्तरायमें अनन्तगुणा है। चक्षुदर्शनावरणमें अनन्तगुणा है। मतिज्ञानावरण और परिभोगान्तरायमें अनन्तगुणा है। अप्रत्याख्यानावरण मानमें अनन्तगुणा है। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है। अप्रत्यानावरण मायामें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानमें अनन्तगुणा है। प्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है। संज्वलन मानमें अनन्तगुणा है। संज्वलन क्रोधमें विशेष अधिक है। संज्वलन मायामें विशेष अधिक है। संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है। केवलज्ञानावरण, केवलदर्शनावरण, असातावेदनीय और वीर्यान्तरायमें अनन्तगुणा है। यशकीर्तिमें अनन्तगुणा है। सातावेदनीयमें

---

१ अ-काप्रत्योः 'णीचागोद० अजसगित्ति०' इति पाठः। २ अ-काप्रत्योः 'मणपज्जवणाण० थीणगिद्धि० दाणंतराइय०' इति पाठः।

मिच्छत्त० अणंतगुणो । एवं तिरिक्खगईए जहण्णाणुभागसंकमदंडओ समत्तो ।

तिरिक्खजोणिणीसु सव्वाणि पदाणि जहा तिरिक्खगदीए कदाणि तहा कायव्वाणि । मणुसेसु ओघे अजहण्णाणुभागसंकमदंडयादो ताव णाणत्तं णत्थि जाव णिरयगइ त्ति । तदो णिरियगइणामादो देवगदि० अणंतगुणो । णिरयाउ० अणंतगुणो । देवाउ० अणंतगुणो । मणुसगई० अणंतगुणो । उच्चागोद० अणंतगुणो । ओरालिय० अणंतगुणो । एत्तो अवसेसाणि पदाणि जहा ओघजहण्णदंडए कदाणि तहा कायव्वाणि । एवं मणुस्सेसु जहण्णाणुभागसंकमदंडओ समत्तो ।

जहा मणुस्सेसु तहा मणुसिणीसु । जहा णेरइएसु तहा देवेसु देवीसु च । जहा तिरिक्खगईए तहा बेइंदिय-तेइंदिय-चतुरिंदिएसु । केण कारणेण जहा तिरिक्खगईए तहा विगलिंदिएसु त्ति भणिदं ? देवगइ-मणुसगइ-णिरयगइ-वेउव्वियसरीरचउक्क-उच्चागोदाणं संजुत्तपढमसमयजहण्णाणुभागसंतकम्मस्स विगलिंदिएसुवलंभादो, अणंताणुबंधिणो पुव्वं विसंजोइदसासणसम्माइट्ठिस्स दुसमयसंजुत्तस्स तस्स जहण्णाणुभागस्स विगलिंदिएसुवलंभादो च । तेण जहा तिरिक्खगदीए तहा विगलिंदिएसु त्ति सुहासियं ।

अनन्तगुणा है। मिथ्यात्वमें अनन्तगुणा है। इस प्रकार तिर्यंचगतिमें जघन्य अनुभागसंक्रमदण्डक समाप्त हुआ।

जिस प्रकारसे तिर्यंचगतिमें सब पदोंकी प्ररूपणा की गयी है उसी प्रकारसे तिर्यंच योनिमतियोंमें भी उक्त सब पदोंकी प्ररूपणा करना चाहिये। मनुष्योंमें ओघनिरूपित अजघन्य-अनुभागसंक्रमदण्डककी अपेक्षा नरकगति नामकर्म तक कोई विशेषता नहीं है। तत्पश्चात् नरकगति नामकर्मकी अपेक्षा देवगति नामकर्ममें वह अनन्तगुणा। उससे नारकायुमें अनन्तगुणा है। देवायुमें अनन्तगुणा है। मनुष्यगति नामकर्ममें अनन्तगुणा है। उच्चगोत्रमें अनन्तगुणा है। औदारिकशरीरमें अनन्तगुणा है। यहां शेष पदोंकी प्ररूपणा जैसे ओघ जघन्य दण्डकमें की गयी है वैसे करना चाहिये। इस प्रकार मनुष्योंमें जघन्य अनुभागसंक्रमदण्डक समाप्त हुआ।

उक्त प्ररूपणा जिस प्रकार मनुष्योंमें की गयी है उसी प्रकार मनुष्यनियोंमें भी करना चाहिये। उक्त दण्डककी प्ररूपणा जिस प्रकार नारकियोंमें की गयी है उसी प्रकार देवोंमें और देवियोंमें भी करना चाहिये। द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीवोंमें तिर्यंचगतिके समान प्ररूपणा करना चाहिये।

शंका— विकलेन्द्रिय जीवोंकी वह प्ररूपणा तिर्यंचगतिके समान किस कारणसे बतलायी है ?

समाधान— इसका कारण यह है कि देवगति, मनुष्यगति, नरकगति, वैक्रियिकशरीरचतुष्क और उच्चगोत्रका संयुक्त होनेके प्रथम समयवर्ती जघन्य अनुभागसत्कर्म विकलेन्द्रिय जीवोंमें पाया जाता है, तथा सासादनसम्यग्दृष्टिमें पूर्व विसंयोजित अनन्तानुबन्धीका संयुक्त होनेके द्वितीय समयवर्ती वह जघन्य अनुभागसत्कर्म विकलेन्द्रिय जीवोंमें पाया जाता है। इस कारण विकलेन्द्रियोंकी जो वह प्ररूपणा तिर्यंचगतिके समान कही है, यह ठीक ही कहा गया है।

एत्तो भुजगारसंकमे अट्ठपदं । तं जहा— जे एण्हिं अणुभागस्स फद्दया संकामिज्जंति ते जइ अणंतरविदिक्कंते समए संकामिदफद्दएहिंतो बहुआ होंति तो एसो भुजगारसंकमो । अह जइ तत्तो थोवा होंति तो एसो अप्पदरसंकमो । जदि तत्तियो तत्तियो चेव दोसु वि समएसु फद्दयाणं संकमो होदि तो एसो अवट्ठियसंकमो । एदेण अट्ठपदेण सामित्तं— मदिआवरणस्स भुजगारसंकमो कस्स ? जो संतकम्मस्स हेट्ठदो तेण समं वा बंधंतो अच्छिदो सो तदो उवरिमाणुभागं बंधिय बंधावलियादिक्कंतं संकममाणस्स भुजगारसंकमो । अप्पदरसंकमो अणुभागखंडयघादेण विणा णत्थि । जेण अणुभागखंडयं उक्कीरिज्जमाणमुक्किण्णं सो से काले अप्पदरसंकामओ । अवट्ठिदसंकामओ को होदि ? भुजगार-अप्पदर-अवत्तव्ववदिरित्तो । चत्तारिणाणावरणीय-णवदंसणावरणीय-सादासाद-मिच्छत्ताणं मदिआवरणभंगो । एवं सोलसकसाय-णवणोकसायाणं । णवरि एत्थ अवत्तव्वसंकामओ वि अत्थि । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं अत्थि अप्पदर-अवट्ठिद-अवत्तव्वसंकमो, भुजगारसंकमो णत्थि । चदुण्णमाउआणं सादिय-संतकम्मियाणं णामपयडीणं उच्चागोदाणं च णाणावरणभंगो । णवरि अवत्तव्वसंकमो वि अत्थि । तित्थयरणामाए अत्थि भुजगार-

---

यहां भुजाकार संक्रममें अर्थपदकी प्ररूपणा की जाती है । यथा— अनुभागके जो स्पर्धक इस समय संक्रमणको प्राप्त कराये जाते हैं वे यदि अनन्तर बीते हुए समयमें संक्रामित अनुभागस्पर्धकोंकी अपेक्षा बहुत हैं तो यह भुजाकार संक्रम कहलाता है । परन्तु यदि इस समयमें संक्रमणको प्राप्त कराये जानेवाले वे ही अनुभागस्पर्धक अनन्तर बीते हुए समयमें संक्रामित स्पर्धकोंकी अपेक्षा स्तोक हैं तो यह अल्पतर संक्रम कहा जाता है । यदि दोनों ही समयोंमें उतना उतना मात्र ही अनुभागस्पर्धकोंका संक्रम होता है तो यह अवस्थित संक्रम कहलाता है । [पूर्वमें असंक्रामक होकर संक्रम करना, इसे अवक्तव्य संक्रम कहा जाता है ।] इस अर्थपदके अनुसार स्वामित्वका कथन करते हैं— मतिज्ञानावरणका भुजाकार संक्रम किसके होता है ? जो जीव सत्कर्मसे कम अथवा उसके बराबर ही अनुभागको बांधता हुआ स्थित है वह उससे अधिक अनुभागको बांधकर व बन्धावलीको बिताकर जब उसको संक्रान्त कर रहा हो तब उसके मतिज्ञानावरणका भुजाकार संक्रम होता है। अल्पतर संक्रम अनुभागकाण्डकघातके विना नहीं होता । जो उत्कीर्ण किये जानेवाले अनुभागकाण्डकको उत्कीर्ण कर चुका है वह अनन्तर समयमें उसका अल्पतरसंक्रामक होता है । अस्थितसंक्रामक कौन होता है ? भुजाकार, अल्पतर और अवक्तव्य संक्रामकसे भिन्न जीव अवस्थितसंक्रामक होता है । शेष चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, और मिथ्यात्वकी प्ररूपणा मतिज्ञानावरणके समान है । इसी प्रकार सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके सम्बन्धमें कहना चाहिये । विशेष इतना है कि यहां अवक्तव्य संक्रामक भी होता है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्य संक्रम होता है; उनका भुजाकार संक्रम नहीं होता । चार आयु कर्मों, सादिसत्कर्मिक नामप्रकृतियों और उच्चगोत्रकी प्ररूपणा ज्ञानावरणके समान है । विशेष इतना है कि इनका

---

१ अप्रतौ 'तेजइय अणंतर' इति पाठः । २ अप्रतौ 'थोवो' इति पाठः ।

अवट्ठिय-अवत्तव्वसंकमो, अप्पदरसंकामगो णत्थि। अणादिसंतकम्मियाणं णामपयडीणं णीचागोद-पंचंतराइयाणं णाणावरणभंगो।

एयजीवेण कालो— णाणावरणस्स भुजगारसंकामओ जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं। अप्पदरसंकामयाणं कालो जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ। अवट्ठियसंकामयाणं जह० एयसमओ, उक्क० वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। णवदंसणावरणीय-सादासाद-मिच्छत्त-सोलसकसाय-णवणोकसाय-सव्वणामपयडीणं उच्च-णीचागोद-पंचंतराइयाणं च णाणावरणभंगो। णवरि आहारचउक्क० अवट्ठियस्स पलिदो० असंखे० भागो। एवं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं। णवरि अवट्ठिदस्स जह० अंतोमुहुत्तं। तित्थयरणामाए भुजगार० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं। अवट्ठिय० जह० एगसमओ, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि सादिरेयाणि। चदुण्णमाउआणं भुजगार० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं। अप्पदर० जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ। अवट्ठिय० जह० एगसमओ। उक्क० देव-णिरयाउआणं[1] तेत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि, मणुस-तिरिक्खाउआणं तिण्णिपलिदो० सादिरेयाणि।

कालादो अंतरं णेयव्वं। णाणाजीवेहि भंगविचओ कालो अंतरं च साहेदूण णेयव्वं।

अवक्तव्यसंक्रम भी होता है। तीर्थंकर नामकर्मका भुजाकार, अवस्थित और अवक्तव्य संक्रम होता है; किन्तु उसका अल्पतर संक्रामक नहीं होता। अनादिसत्कर्मिक नामप्रकृतियों, नीचगोत्र और पांच अन्तरायकी प्ररूपणा ज्ञानावरणके समान है।

एक जीवकी अपेक्षा कालकी प्ररूपणा की जाती है— ज्ञानावरणके भुजाकारसंक्रामकका काल जघन्यसे एक समय व उत्कर्पसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है। अल्पतरसंक्रामकोंका काल जघन्य व उत्कर्पसे एक समय मात्र है। अवस्थितसंक्रामकोंका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्पसे साधिक दो छ्यासठ सागरोपम मात्र है। नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नौ नोकपाय, सब नामप्रकृतियों, उच्चगोत्र, नीचगोत्र और पांच अन्तरायकी प्ररूपणा ज्ञानावरणके समान है। विशेप इतना है कि आहारचतुष्कके अवस्थितसंक्रामकका काल पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है। इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भी सम्बन्धमें कहना चाहिये। विशेप इतना है कि इनकें अवस्थितसंक्रामकका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है। तीर्थंकर नामकर्मके भुजाकारसंक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्पसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है। उसके अवस्थितसंक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्पसे साधिक तेतीस सागरोपम मात्र है। चार आयु कर्मोंके भुजाकारसंक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्पसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है। इनके अल्पतरसंक्रामकका काल जघन्य व उत्कर्पसे एक समय मात्र है। अवस्थितसंक्रामकका काल जघन्यसे एक समय है। उत्कर्षसे वह देवायु और नारकायुका साधिक तेतीस सागरोपम तथा मनुष्य व तिर्यंच आयुका साधिक तीन पल्योपम मात्र है।

कालके आश्रयसे अन्तरको भी ले जाना चाहिये। नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय, काल और अन्तरको भी सिद्ध करके ले जाना चाहिये।

---

[1] अप्रतौ 'देवणेरइयाणं आउअं' इति पाठः।

एत्तो अप्पाबहुअं— णाणावरणस्स अप्पदर० थोवा। भुजगार० असंखे० गुणा। अवट्ठिय० असंखे० गुणा। एवं णवदंसणावरणीय-सादासाद-मिच्छत्त-सोलसकसाय-णवणोकसायाणं। णवरि सोलसक० - णवणोकसायाणं अवत्तव्व० थोवा। अप्पदर० अणंतगुणा। भुजगार० असंखे० गुणा। अवट्ठिय० संखे० गुणा। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं अप्पदर० थोवा। अवत्तव्व० असंखे० गुणा। अवट्ठिय० असंखे० गुणा।

णिरयाउअस्स अप्पदर० थोवा। अवत्तव्व० संखे० गुणा। भुजगार० असंखे० गुणा। अवट्ठिय० असंखे० गुणा। देवाउअस्स णिरयाउअभंगो। मणुसाउअस्स अप्पदर० थोवा। अवत्तव्व० विसेसा०। भुजगार० असंखे० गुणा। अवट्ठिय० संखे० गुणा। तिरिक्खाउअस्स अवत्तव्व० थोवा। अप्पदर० अणंतगुणा। भुजगार० असंखे० गुणा। अवट्ठिय० संखे० गुणा।

णिरयगईए अवत्तव्व० थोवा। भुजगार० असंखे० गुणा। अप्पदर० असंखे० गुणा। अवट्ठिय० असंखे० गुणा। देवगइ-वेउव्वियसरीराणं णिरयगइभंगो। मणुसगइ० अवत्तव्व० थोवा। अप्पदर० अणंतगुणा। भुजगार० असंखे० गुणा। अवट्ठिद० संखे० गुणा।

अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा की जाती है—ज्ञानावरणके अल्पतर अनुभाग संक्रामक स्तोक हैं। भुजाकार अनुभाग संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अवस्थित अनुभाग संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके भी प्रकृत अल्पबहुत्वका कथन करना चाहिये। विशेष इतना है कि सोलह कषाय और नौ नोकषायके अवक्तव्य अनुभाग संक्रामक स्तोक हैं। अल्पतर अनुभाग संक्रामक अनन्तगुणे हैं। भुजाकार अनुभाग संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अवस्थित अनुभाग संक्रामक संख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतर अनुभाग संक्रामक स्तोक हैं। अवक्तव्य अनुभाग संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अवस्थित अनुभाग संक्रामक असंख्यातगुणे हैं।

नारकायुके अल्पतर अनुभाग संक्रामक स्तोक हैं। अवक्तव्य अनुभाग संक्रामक संख्यातगुणे हैं। भुजाकार अनुभाग संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अवस्थित अनुभाग संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। देवायुके इस अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा नारकायुके समान है। मनुष्यायुके अल्पतर अनुभाग संक्रामक स्तोक हैं। अवक्तव्य अनुभाग संक्रामक विशेष अधिक हैं। भुजाकार अनुभाग संकामक असंख्यातगुणे हैं। अवस्थित अनुभाग संक्रामक संख्यातगुणे हैं। तिर्यगायुके अवक्तव्य अनुभाग संक्रामक स्तोक हैं। अल्पतर अनुभाग संक्रामक अनन्तगुणे हैं। भुजाकार अनुभाग संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अवस्थित अनुभाग संक्रामक संख्यातगुणे हैं।

नरकगतिके अवक्तव्य अनुभाग संक्रामक स्तोक हैं। भुजाकार अनुभाग संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अल्पतर अनुभाग संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अवस्थित अनुभाग संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। देवगति और वैक्रियिकसरीरकी प्ररूपणा नरकगतिके समान है। मनुष्यगतिके अवक्तव्य अनुभाग संक्रामक स्तोक हैं। अल्पतर अनुभाग संक्रामक अनंतगुणे हैं। भुजाकार अनुभाग संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अवस्थित अनुभाग संक्रामक संख्यातगुणे हैं। उच्चगोत्रकी

उच्चागोदस्स मणुमगइभंगो। अणादियसंतकम्मियाणं णामपयडीणं णीचागोद-पंचंतराइयाणं च णाणावरणभंगो। आहारसरीरस्स अवत्तव्व० थोवा। भुजगार० संखे० गुणा। अप्पदर० संखे० गुणा। अवट्ठिय० असंखे० गुणा। तित्थयरस्स आहारभंगो। एवमणुभागभुजगारसंकमो समत्तो।

एत्तो पदणिक्खेवो— णाणावरणस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स? जो तप्पाओग्गेण जहण्णाणुभागसंतकम्मेण उक्कस्ससंकिलेसं गदो[1] तदो उक्कस्सओ अणुभागो पबद्धो आवलियादिक्कंतस्स[2] उक्कस्सिया अणुभागसंकमवड्ढी अवट्ठाणं च। उक्कस्सिया हाणी कस्स? जो उक्कस्सादो अणुभागसंतकम्मादो उक्कस्समणुभागघादं करेदि तस्स अणुभागखंडए घादिदे[3] सेसाणुभागसंतकम्मं से काले संकामेंतस्स उक्कस्सिया हाणी अणुभागसंकमस्स। एवं सव्वेसिमप्पसत्थाणं कम्माणं। सादस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स? समयाहियावलियअकसायस्स खवयस्स। उक्क० हाणी कस्स? जो उवसामयचरिमसमयसुहुमसांपराइएण बद्धसादाणुभागं मिच्छत्तं गंतूण उक्कस्सएण अणुभागखंडएण घादिय सेसं संकामेमाणओ[4] तस्स उक्कस्सिया हाणी। उक्कस्समवट्ठाणं वड्ढीए। जसकित्ति-उच्चागोदाणं सादभंगो।

प्ररूपणा, मनुष्यगतिके समान है। अनादिसत्कर्मिक नामप्रकृतियों, नीच गोत्र और पांच अन्तरायोंकी प्ररूपणा ज्ञानावरणके समान है। आहारशरीरके अवक्तव्य अनुभाग संक्रामक स्तोक हैं। भुजाकार अनुभाग संक्रामक संख्यातगुणे हैं। अल्पतर अनुभाग संक्रामक संख्यातगुणे हैं। अवस्थित अनुभाग संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। तीर्थंकर नामकर्मकी प्ररूपणा आहारशरीरके समान है। इस प्रकार अनुभागभुजाकारसंक्रम समाप्त हुआ।

यहां पदनिक्षेपकी प्ररूपणा करते हैं— ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमवृद्धि किसके होती है? जो तत्प्रायोग्य जघन्य अनुभागसत्कर्मके साथ उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त हुआ है और तत्पश्चात् जिसने उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध किया है उसके आवली मात्र कालके वीतनेपर उसकी उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमवृद्धि और अवस्थान भी होता है। उसकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्मसे उत्कृष्ट अनुभागका घात करता है उसके अनुभागकाण्डकका घात कर चुकनेपर अनन्तर कालमें शेष अनुभागसत्कर्मका संक्रम करते समय उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमकी हानि होती है। इस प्रकार सब अप्रशस्त कर्मोंके सम्बन्धमें कहना चाहिये। सातावेदनीयकी उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमवृद्धि किसके होती है? वह एक समय अधिक आवली मात्र कालवर्ती अकषाय क्षपकके होती है। उसकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो चरम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक उपशामकके द्वारा बांधे गये सातावेदनीयके अनुभागको मिथ्यात्वको प्राप्त हो उत्कृष्ट अनुभागकाण्डक द्वारा घातकर शेष अनुभागका संक्रम कर रहा है उसके उसकी उत्कृष्ट हानि होती है। उसका उत्कृष्ट अवस्थान वृद्धिमें होता है। यशकीर्ति और उच्चगोत्रकी प्ररूपणा सातावेदनीयके समान है।

१ अप्रतौ 'संकिलेसादो' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'पबद्धो [तस्स-] आवलियादिक्कंतस्स' इति पाठः। ३ अप्रतौ 'घादे', ताप्रतौ 'घादेदि' इति पाठः। ४ अप्रतौ 'से संकामेमाणओ' इति पाठः।

एत्थ अट्ठपदं— सादस्स उक्कस्सेण अणुभागघादं मिच्छाइट्ठी मज्झिमपरिणामो चेव कुणदि— सुविसुद्धो ण हणदि, अइसंकिलिट्ठो वि ण हणदि। कुदो ? साभावियादो। एवं सव्वेसिं पसत्थकम्माणं। अभवसिद्धियपाओग्गउक्कस्ससादाणुभागस्स अणंते भागे मज्झिमपरिणामेहि मिच्छाइट्ठी हणदि। जेत्तियमेत्तफद्दयाणि अभवसिद्धियपाओग्ग-उक्कस्साणुभागादो मज्झिमपरिणामेहि घादेदि सुहुमसांपराइएण णिव्वत्तिदउक्कस्साणु-भागं पि घादेमाणो तत्तियमेत्ताणि चेव फद्दयाणि घादेदि। एदेण कारणेण भव-सिद्धिएण वा अभवसिद्धिएण वा णिव्वत्तिदउक्कस्साणुभागे अणुभागखंडएण मिच्छा-इट्ठिणा मज्झिमपरिणामेण घादिदे[2] अणुभागसंकमस्स उक्क० हाणी होदि। एवं सव्वेसिं पसत्थकम्माणं। एवमुक्कस्ससामित्तं समत्तं।

मदिआवरणस्स जहण्णिया अणुभागसंकमवड्ढी कस्स ? जो सुहुमेइंदियो हद-समुप्पत्तियकमेण कदजहण्णाणुभागसंकमो अप्पणो जहण्णसंतकम्मादो पक्खेवुत्तरं बंधिय आवलियादिक्कंतं संकामेदि तस्स जहण्णिया वड्ढी। जह० हाणी कस्स ? समयाहियावलियचरिमसमयछदुमत्थस्स। जहण्णमवट्ठाणं जहण्णवड्ढीए दादव्वं। एवं चउणाणावरण-चउदंसणावरणाणं पि वत्तव्वं। णिद्दा-पयलाणं पि मदिणाणावरणभंगो।

यहां अर्थपद— उत्कर्षसे सातावेदनीयके अनुभागघातको मध्यम परिणामवाला मिथ्या-दृष्टि ही करता है, उसका घात न अतिशय विशुद्ध जीव ही करता है और न अतिशय संक्लिष्ट भी। इसका कारण स्वभाव ही है। इस प्रकार सब प्रशस्त कर्मोंके सम्बन्धमें कहना चाहिये। अभव्य योग्य सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागके अनन्त बहुभागको मिथ्यादृष्टि जीव मध्यम परिणामोंके द्वारा घातता है। अभव्य योग्य उत्कृष्ट अनुभागमेंसे जितने मात्र स्पर्धकोंको वह मध्यम परिणामोंके द्वारा घातता है, सूक्ष्मसाम्परायिक द्वारा रचे गये उत्कृष्ट अनुभागका भी घात करनेवाला जीव उतने मात्र ही स्पर्धकोंको घातता है। इस कारण भव्य अथवा अभव्यके द्वारा रचित उत्कृष्ट अनुभागका मध्यम परिणाम युक्त मिथ्यादृष्टिके द्वारा अनुभागकाण्डक स्वरूपसे घात कर चुकनेपर अनुभागसंक्रमकी उत्कृष्ट हानि होती है। इसी प्रकार सब प्रशस्त कर्मोंके सम्बन्धमें कथन करना चाहिये। इस प्रकार उत्कृष्ट स्वामित्व समाप्त हुआ।

मतिज्ञानावरणकी जघन्य अनुभागसंक्रमवृद्धि किसके होती है ? हतसमुत्पत्तिकक्रमसे जघन्य अनुभागसत्कर्मको कर चुकनेवाला जो सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीव अपने जघन्य सत्कर्मकी अपेक्षा प्रक्षेप अधिक बांधकर आवली अतिक्रान्त उसका संक्रम करता है उसके मतिज्ञानावरणकी जघन्य अनुभागसंक्रमवृद्धि होती है। उसकी जघन्य हानि किसके होती है ? वह जिसके चरम समयवर्ती छद्मस्थ होनेमें एक समय अधिक आवली मात्र काल शेष रहा है उसके होती है। जघन्य अवस्थान जघन्य वृद्धिमें देना चाहिये। इसी प्रकार चार ज्ञानावरण और चार दर्शनावरणके भी कहना चाहिये। निद्रा और प्रचलाकी भी प्ररूपणा मतिज्ञानावरणके

---

१ ताम्रतौ 'कम्माणं अभव—' इति पाठः। २ ताम्रतौ 'घादेदि' इति पाठः।

णवरि जहण्णिया हाणी जत्थ जहण्णट्ठिदिसंकमो तत्थ वत्तव्वो।

पंचण्णमंतराइयाणं मदिणाणावरणभंगो। णिद्दाणिद्दा-पयलापयला-थीणगिद्धीणं जह० अणुभागवड्ढी कस्स? सुहुमेइंदियस्स हदसमुप्पत्तियकमेण कदजहण्णाणुभागसंतकम्मस्स पक्खेवुत्तरं बंधिय आवलियादीदं संकामेंतस्स। तं चेव वड्ढिदाणुभागं अंतोमुहुत्तेण घादिय संकामेंतस्स जह० हाणी। एगदरत्थावट्ठाणं। सम्मत्त० जहण्णिया हाणी कस्स? समयाहियावलियचरिमसमयअक्खीणदंसणमोहणीयस्स। जहण्णवड्ढी णत्थि। जहण्णमवट्ठाणं कस्स? चरिमाणुभागखंडयविदियफालीए वट्टमाणस्स। सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णिया हाणी कस्स? चरिमसमयअणुभागखंडयस्स पढमसमए वट्टमाणस्स जह० हाणी। तस्सेव से काले जहण्णमवट्ठाणं। जहण्णवड्ढी णत्थि।

अणंताणुबंधि० जहण्णिया वड्ढी कस्स? अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोजिय दुसमयाहियावलियसंजुत्तस्स। हाणी अवट्ठाणं च कस्स? अंतोमुहुत्तसंजुत्तस्स। तं जहा—अणंताणुबंधिणो विसंजोजिय संजुत्तो जदि वि उक्कस्सियाए वड्ढीए वड्ढदि तो वि जाव अंतोमुहुत्तं कालं ताव सुहुमेइंदियजहण्णाणुभागसंतकम्मादो हेट्ठदो चेव अणंताणुबंधीणमणुभागो होदि। सो तत्तो हेट्ठदो अच्छमाणो घादं पि गच्छदि। तदो तेण

ही समान है। विशेष इतना है कि जहांपर जघन्य स्थितिसंक्रम है वहांपर उसकी जघन्य हानि कहना चाहिये।

पांच अन्तराय कर्मोंकी प्ररूपणा मतिज्ञानावरणके समान है। निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला और स्त्यानगृद्धिकी जघन्य अनुभागसंक्रमवृद्धि किसके होती है? वह हतसमुत्पत्तिकक्रमसे जघन्य अनुभागसत्कर्मको कर चुकनेवाले सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवके प्रक्षेप अधिक बांधकर आवली अतिक्रान्त उसका संक्रम करते समय होती है। उसी वृद्धिंगत अनुभागको अन्तर्मुहूर्तमें घातकर संक्रम करनेवालेके उसकी जघन्य हानि होती है। दोनोंमेंसे किसी भी एकमें जघन्य अवस्थान होता है। सम्यक्त्व प्रकृतिकी जघन्य अनुभागसंक्रमहानि किसके होती है? वह जिसके चरम समयवर्ती अक्षीणदर्शनमोह होनेमें एक समय अधिक आवली मात्र काल शेष है उसके होती है। उसकी जघन्य अनुभागसंक्रमवृद्धि नहीं है। उसका जघन्य अवस्थान किसके होता है? वह अन्तिम अनुभागकाण्डककी द्वितीय फालिमें वर्तमान जीवके होता है। सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य हानि किसके होती है? चरम अनुभागकाण्डकके प्रथम समयमें वर्तमान जीवके उसकी जघन्य हानि होती है। उसीके अनन्तर समयमें उसका जघन्य अवस्थान होता है। उसकी जघन्य वृद्धि नहीं है।

अनन्तानुबन्धिचतुष्ककी जघन्य वृद्धि किसके होती है? अनन्तानुबन्धिचतुष्ककी विसंयोजना करके दो समय अधिक आवली संयुक्त जीवके अनन्तानुबन्धिचतुष्ककी जघन्य अनुभागसंक्रमवृद्धि होती है। उनकी जघन्य हानि और अवस्थान किसके होते हैं? वे उनकी विसंयोजना करके अन्तर्मुहूर्त संयुक्त जीवके होते हैं। यथा— अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करके उससे संयुक्त जीव यद्यपि उत्कृष्ट वृद्धिके द्वारा वृद्धिंगत होता है, तो भी उसके अन्तर्मुहूर्त काल तक सूक्ष्म एकेन्द्रियके जघन्य अनुभागसत्कर्मकी अपेक्षा हीन ही अनन्तानुबन्धी कषायोंका

अंतोमुहुत्तसंजुत्तेण तस्स अणंतभागे घादिदे जह० हाणी होदि त्ति सिद्धं । जहण्णमवट्ठाणं जहण्णहाणीए दादव्वं ।

तिण्णं संजलणाणं जह० हाणी कस्स ? खवयस्स चरिमसमयजहण्णाणुभागबंधं संकामेंतस्स जहण्णिया हाणी । वड्ढी अवट्ठाणं च कस्स ? सुहुमेइंदियस्स जहण्णाणुभागसंतकम्मियम्हि वत्तव्वं । पुरिसवेदस्स तिसंजलणभंगो । लोहसंजलणस्स जह० हाणी कस्स ? समयाहियावलियचरिमसमयसुहमसांपराइयस्स । वड्ढी अवट्ठाणं च कस्स ? सुहुमेइंदियस्स जहण्णसंतकम्मादो पक्खेवुत्तरं बंधमाणस्स । अट्ठण्णं णोकसायाणं जह० हाणी कस्स ? अपच्छिमअणुभागखंडयस्स पढमसमए वट्टमाणस्स जह० हाणी । वड्ढी अवट्ठाणं च कस्स ? सुहुमेइंदियस्स सगजहणाणुभागसंतकम्मादो पक्खेवुत्तरं बंधमाणस्स ।

णामाणं सादिसंताणं वड्ढी कस्स ? संजोजिदविदियसमए जं बद्धं तमावलियादिक्कंतं संकामेंतस्स जह० वड्ढी । हाणि-अवट्ठाणाणं अणंताणुबंधिभंगो । अणादियणामपयडीणं वड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणि कस्स ? सुहुमेइंदियस्स सगजहण्णाणुभागसंतकम्मादो

अनुभाग होता है । वह उससे हीन रहकर घातको भी प्राप्त होता है । इसीलिये अन्तर्मुहूर्त संयुक्त उक्त जीवके द्वारा उसके अनन्त बहुभागका घात कर चुकनेपर उनकी जघन्य अनुभागसंक्रमहानि होती है, यह सिद्ध है । जघन्य अवस्थान जघन्य हानिमें देना चाहिये ।

तीन संज्वलन कषायोंकी जघन्य हानि किसके होती है ? उनकी जघन्य हानि जघन्य अनुभागबन्धका संक्रमण करते हुए उसके अन्तिम समयमें वर्तमान क्षपकके होती है । उनकी जघन्य वृद्धि और अवस्थान किसके होता है ? उनकी जघन्य वृद्धि और अवस्थानका कथन सूक्ष्म एकेन्द्रियके जघन्य अनुभागसत्कर्ममें करना चाहिये । पुरुषवेदकी प्ररूपणा उपर्युक्त तीन संज्वलन कषायोंके समान है । संज्वलन लोभकी जघन्य अनुभागसंक्रमहानि किसके होती है ? वह अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक होनेमें जिसके एक समय अधिक आवली मात्र काल शेष है उसके होती है । उसकी जघन्य वृद्धि और अवस्थान किसके होता है ? जघन्य सत्कर्मकी अपेक्षा प्रक्षेप अधिक बांधनेवाले सूक्ष्म एकेन्द्रियके उसकी जघन्य वृद्धि व अवस्थान होता है । आठ नोकषायोंकी जघन्य हानि किसके होती है । अन्तिम अनुभागकाण्डकके प्रथम समयमें वर्तमान जीवके उनकी जघन्य हानि होती है । उनकी जघन्य वृद्धि और अवस्थान किसके होता है ? अपने जघन्य अनुभागसत्कर्मसे प्रक्षेप अधिक अनुभागको बांधनेवाले सूक्ष्म एकेन्द्रियके उनकी जघन्य वृद्धि और अवस्थान होता है ।

सादि सत्त्ववाली नामप्रकृतियोंकी जघन्य अनुभागसंक्रमवृद्धि किसके होती है ? संयोजनके द्वितीय समयमें जो अनुभाग बांधा गया है आवली अतिक्रान्त उसका संक्रम करनेवालेके उनकी जघन्य अनुभागसंक्रमवृद्धि होती है । उनकी हानि और अवस्थानकी प्ररूपणा अनन्तानुबन्धी कषायके समान है । अनादि सत्त्ववाली नामप्रकृतियोंकी जघन्य अनुभागसंक्रमवृद्धि, हानि और अवस्थान किसके होते हैं ? अपने जघन्य अनुभागसत्कर्मसे प्रक्षेप अधिक

पक्खेवुत्तरं बंधिय आवलियादिक्कंतं संकमेंतस्स जह० वड्ढी। तं पक्खेवमंतोमुहुत्तेण घादिय संकामेंतस्स जह० हाणी। एगदरत्थ अवट्ठाणं। णीचागोदस्स अणादियणामपयडीणं भंगो। उच्चागोदस्स अणंताणुबंधिभंगो। एवं सामित्तं समत्तं।

अप्पाबहुअं। तं जहा— णाणावरणस्स उक्क० हाणी थोवा। वड्ढी अवट्ठाणं च विसेसाहियं। णवदंसणावरणीय-असाद-मिच्छत्त-सोलसकसाय-णवणोकसाय-अप्पसत्थणामपयडीणं णीचागोद-पंचंतराइयाणं च णाणावरणभंगो। सादस्स उक्कस्सिया हाणी थोवा। वड्ढी अवट्ठाणं च अणंतगुणं। सव्वासिं णामपयडीणं पसत्थाणं उच्चागोदस्स च सादभंगो। आदावणामाए णाणावरणभंगो। आउआणं उक्कस्सिया हाणी थोवा। वड्ढी अवट्ठाणं च विसेसाहियं। एवमुक्कस्सप्पाबहुअं[1] समत्तं।

जहण्णपदणिक्खेवप्पाबहुअं। तं जहा— मदिआवरणस्स जह० हाणी थोवा। वड्ढी अवट्ठाणं च अणंतगुणं। चदुणाणावरण-छदंसणावरण-चदुसंजलण-णवणोकसाय-पंचंतराइयाणं मदिआवरणभंगो। थीणगिद्धितिय-सादासाद-मिच्छत्त-अट्ठकसायाणं वड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणि तिण्णि वि तुल्लाणि। अणंताणुबंधीणं वड्ढी थोवा। हाणि-अवट्ठाणाणि अणंतगुणाणि। सम्मत्तस्स हाणी थोवा। अवट्ठाणमणंतगुणं। सम्मामिच्छत्तस्स

अनुभागको बांधकर आवली अतिक्रान्त उसका संक्रम करनेवाले सूक्ष्म एकेन्द्रियके उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य वृद्धि होती है। उस प्रक्षेपको अन्तर्मुहूर्तमें घातकर संक्रम करनेवालेके उनकी जघन्य हानि होती है। दोनोंमेंसे किसी भी एकमें उनका जघन्य अवस्थान होता है। नीचगोत्रकी प्ररूपणा अनादिक नामप्रकृतियोंके समान है। उच्चगोत्रकी प्ररूपणा अनन्तानुबन्धीके समान है। इस प्रकार स्वामित्व समाप्त हुआ।

अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा की जाती है। यथा— ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमहानि स्तोक है। वृद्धि और अवस्थान विशेष अधिक हैं। नौ दर्शनावरणीय, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नौ नोकषाय, अप्रशस्त नामप्रकृतियों, नीचगोत्र और पांच अन्तरायके प्रकृत अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा ज्ञानावरणके समान है। सातावेदनीयकी उत्कृष्ट हानि स्तोक है। वृद्धि और अवस्थान अनन्तगुणे हैं। सब प्रशस्त नामप्रकृतियां और उच्चगोत्रकी प्ररूपणा सातावेदनीयके समान है। आतप नामकर्मकी प्ररूपणा ज्ञानावरणके समान है। आयु कर्मोंकी उत्कृष्ट हानि स्तोक है। वृद्धि व अवस्थान विशेष अधिक हैं। इस प्रकार उत्कृष्ट अल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

जघन्य पदनिक्षेप विषयक अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा करते हैं। यथा— मतिज्ञानावरणकी जघन्य हानि स्तोक है। वृद्धि और अवस्थान अनन्तगुणे हैं। चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, नौ नोकषाय और पांच अन्तरायकी प्ररूपणा मतिज्ञानावरणके समान है। स्त्यानगृद्धित्रय, सातावेदनीय, असातावेदनीय, मिथ्यात्व और आठ कषायोंकी वृद्धि, हानि और अवस्थान तीनों ही तुल्य हैं। अनन्तानुबन्धी कषायोंकी वृद्धि स्तोक है। हानि व अवस्थान अनन्तगुणे हैं। सम्यक्त्व प्रकृतिकी हानि स्तोक है। अवस्थान अनन्तगुणा है। सम्यग्मिथ्यात्वकी

---

१ ताप्रतौ 'एवमप्पाबहुगं' इति पाठः।

हाणि-अवट्ठाणाणि दो वि तुल्लाणि । चदुण्णमाउआणं वड्ढि-अवट्ठाणाणि दो वि तुल्लाणि थोवाणि । हाणी अणंतगुणा । सादियणामपयडीणं उच्चागोदस्स च आउचउक्कभंगो । अणादियणामपयडीणं णीचागोदस्स च सादभंगो । तित्थयरस्स हाणी णत्थि । वड्ढी अवट्ठाणं च दो वि तुल्लाणि । एवं पदणिक्खेवो समत्तो ।

वड्ढिसंकमे सामित्तं— छव्विहाए वड्ढीए को सामी ? अण्णदरो संकामो । छव्विहाए हाणीए को सामी ? अण्णदरो घादेंतवो । आउअवज्जाणं कम्माणं ठिदिघादेण विणा वि अणुभागा हम्मंति, चदुण्णमाउआणं पुण ट्ठिदिघादेण विणा णत्थि अणुभागघादो[1] । एवं सामित्तं समत्तं ।

एयजीवेण कालो— सव्वकम्माणं छव्विहाए हाणीए संकमस्स जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ । णवरि जासिं कम्माणं अणुसमओवट्टणा अत्थि, तेसिमणंतगुणहाणिसंकमस्स जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं । पंचण्णं वड्ढिसंकमाणं जह० एगसमओ, उक्क० आवलि० असंखे० भागो । अणंतगुणवड्ढिसंकमस्स जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं । अवट्ठियसंकमस्स भुजगारअवट्ठियसंकमभंगो[2] । एवं वड्ढिकालो समत्तो ।

एयजीवेण अंतरं— पंचवड्ढि-पंचहाणीणमंतरं केवचिरं० ? जह० एगसमओ

हानि और अवस्थान दोनों ही तुल्य हैं । चार आयु कर्मोंकी वृद्धि और अवस्थान दोनों ही तुल्य व स्तोक हैं । हानि अनन्तगुणी है । सादिक नामप्रकृतियों और उच्चगोत्रकी प्ररूपणा आयुचतुष्कके समान है । अनादिक नामप्रकृतियों और नीचगोत्रकी प्ररूपणा सातावेदनीयके समान है । तीर्थंकर प्रकृतिकी हानि नहीं है । वृद्धि और अवस्थान दोनों ही तुल्य हैं । इस प्रकार पदनिक्षेप समाप्त हुआ ।

वृद्धिसंक्रममें स्वामित्वकी प्ररूपणा की जाती है— छह प्रकारकी वृद्धिका स्वामी कौन है ? उसका स्वामी अन्यतर संक्रामक है । छह प्रकारकी हानिका स्वामी कौन है ? घात करनेवालोंमें अन्यतर जीव उसका स्वामी है । आयुको छोड़कर शेष कर्मोंके अनुभाग स्थितिघातके विना भी घाते जाते हैं । परन्तु चार आयु कर्मोंके अनुभागोंका घात स्थितिघातके विना नहीं होता । इस प्रकार स्वामित्व समाप्त हुआ ।

एक जीवकी अपेक्षा कालकी प्ररूपणा की जाती है— सब कर्मोंकी छह प्रकारकी हानिके संक्रमका काल जघन्य व उत्कर्षसे एक समय मात्र है । विशेष इतना है कि जिन कर्मोंकी प्रतिसमय अपवर्तना होती है उनकी अनन्तगुणहानिसंक्रमका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है । उनके पांच वृद्धिसंक्रमोंका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे आवलीके असंख्यातवें भाग मात्र है । अनन्तगुणवृद्धिसंक्रमका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है । अवस्थितसंक्रमका काल भुजाकार अवस्थित संक्रमके समान है । इस प्रकार वृद्धिकाल समाप्त हुआ ।

एक जीवकी अपेक्षा अन्तर— पांच वृद्धियों और पांच हानियोंका अन्तरकाल कितना

---

१ ताप्रतौ 'अणुभागादो' इति पाठः । २ प्रतिषु 'संकमभागो' इति पाठः ।

अंतोमुहुत्तं[1], उक्क० असंखेज्जा लोगा। अणंतगुणवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणं[2] भुजगारसंकम-भंगो। एवं वड्ढिअंतरं समत्तं।

णाणाजीवेहि भंगविचओ कालो अंतरं च भाणिदव्वाणि।

एत्थ अप्पाबहुअं। एदस्स साहणट्ठं इमा परूवणा। तं जहा— एयम्मि बंधट्ठाणे असंखेज्जा लोगा घादट्ठाणाणि। एत्तो पंचविहहाणीयो साहेयूण समाणिय अणंतभाग-वड्ढिसंकामयाणं गुणगारो असंखेज्जा लोगा त्ति वत्तव्वो। मदिआवरणस्स अणंतभाग-हाणिसंकामया थोवा। असंखेज्जभागहाणिसंकामया असंखे० गुणा। संखे० भागहाणि० संखे० गुणा। संखे० गुणहाणि० संखे० गुणा। असंखे० गुणहाणि० असंखे० गुणा। अणंतभागवड्ढि० असंखे० गुणा। असंखे० भगवड्ढि० असंखे० गुणा। संखेज्जभाग-वड्ढिसंकामया संखेज्जगुणा। संखे० गुणवड्ढि० संखे० गुणा। असंखे० गुणवड्ढि० असंखे० गुणा। अणंतगुणहाणि० असंखे० गुणा। अणंतगुणवड्ढि० असंखे० गुणा। अवट्ठिद० संखे० गुणा। एवं चदुणाणावरण-णवदंसणावरण-सादासाद-अणादिय-णामकम्माणं णीचागोद-पंचंतराइय-मिच्छत्ताणं च।

सोलसकसाय-णवणोकसायाणं अवत्तव्वसंकामया थोवा। अणंतभागहाणिसं० अणंत-

---

है? जघन्यसे वह एक समय और अन्तर्मुहूर्त तथा उत्कर्षसे असंख्यात लोक मात्र है। अनन्त-गुणवृद्धि, हानि और अवस्थानकी प्ररूपणा भुजाकार संक्रमके समान है। इस प्रकार वृद्धिअन्तर समाप्त हुआ।

नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय, काल और अन्तरका भी यहां कथन करना चाहिये।

यहां अल्पबहुत्वका प्रकरण है। इसकी सिद्धिके लिये यह प्ररूपणा है। यथा— एक बंधस्थानमें असंख्यात लोक प्रमाण घातस्थान होते हैं। यहां पांच प्रकारकी हानियोंको सिद्ध करके समाप्त कर अनन्तभागवृद्धि संक्रामकोंका गुणकार असंख्यात लोक मात्र है, ऐसा कहना चाहिये। मतिज्ञानावरणके अनन्तभागहानिसंक्रामक स्तोक हैं। असंख्यातभागहानिसंक्रामक असंख्यात-गुणे हैं। संख्यातभागहानिसंक्रामक संख्यातगुणे हैं। संख्यातगुणहानिसंक्रामक संख्यातगुणे हैं। असंख्यातगुणहानिसंक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अनन्तभागवृद्धिसंक्रामक असंख्यातगुणे हैं। असंख्यातभागवृद्धिसंक्रामक असंख्यातगुणे हैं। संख्यातभागवृद्धिसंक्रामक संख्यातगुणे हैं। संख्यातगुणवृद्धिसंक्रामक संख्यातगुणे हैं। असंख्यातगुणवृद्धिसंक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अनन्तगुणहानिसंक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अनन्तगुणवृद्धिसंक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अवस्थितसंक्रामक संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार शेष चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, अनादिक नामकर्मों, नीचगोत्र, पांच अन्तराय और मिथ्यात्वके भी विषयमें प्रकृत अल्पबहुत्वका कथन करना चाहिये।

सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यसंक्रामक स्तोक हैं। अनन्तभागहानिसंक्रामक

---

१ मप्रतिपाठोऽयम्। अ-का-ताप्रतिषु 'जह० अंतोमुहुत्तं' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'अवट्ठाणाणि' इति पाठः।

गुणा । सेसाणं णाणावरणभंगो ।

मणुसगइ-मणुसगइपाओग्गाणुपुव्वी-उच्चागोदाणं णोकसायभंगो । देवगइ-देवगइ-पाओग्गाणुपुव्वी - णिरयगइ - णिरयगइपाओग्गाणुपुव्वी - वेउव्वियसरीर - वेउव्वियसरीर-अंगोवंग-बंधण-संघादाणं[1] असंखे० भागहाणिसंकामया थोवा । संखे० भागहाणि० संखे० गुणा । संखे० गुणहाणि० संखे० गुणा । असंखे० गुणहाणि० असंखे० गुणा । अणंत-भागवड्ढि० असंखे० गुणा । असंखे० भागवड्ढि० असंखे० गुणा । संखेज्जभागवड्ढि० संखे० गुणा । संखे० गुणवड्ढिसं० संखे० गुणा । असंखे० गुणवड्ढि० असंखे० गुणा । अवत्तव्व०असंखे०गुणा । अणंतगुणहाणि० असंखे०गुणा । अणंतगुणवड्ढि० असंखे०गुणा । अणंतभागहाणि० असंखे० गुणा । अवट्ठिय०असंखे० गुणा । एवं वड्ढिसंकमो समत्तो ।

जहा संतकम्मट्ठाणाणि तहा संकमट्ठाणाणि । पदेससंकमे अट्ठपदं— जं पदेसग्गं अण्णपयडिं संकामिज्जदि एसो पदेससंकमो । एदेण अट्ठपदेण मूलपयडिसंकमो णत्थि[2] । उत्तरपयडिसंकमे पयदं । उत्तरपयडिसंकमो पंचविहो— उव्वेलणसंकमो विज्झादसंकमो अधापवत्तसंकमो गुणसंकमो सव्वसंकमो चेदि[3] । वुत्तं च—

उव्वेल्लण विज्झादो अधापवत्तो गुणो[4] य सव्वो य ।

अनन्तगुणे हैं । शेष पदोंकी प्ररूपणा ज्ञानावरणके समान है ।

मनुष्यगति, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रकी प्ररूपणा नोकपायोंके समान है । देवगति, देवगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, नरकगति, नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिक-शरीरांगोपांग, वैक्रियिकबन्धन और वैक्रियिकसंघातके असंख्यातभागहानिसंक्रामक स्तोक हैं । संख्यातभागहानिसंक्रामक संख्यातगुणे हैं । संख्यातगुणहानिसंक्रामक संख्यातगुणे हैं । असंख्यात-गुणहानिसंक्रामक असंख्यातगुणे हैं । अनन्तभागवृद्धिसंक्रामक असंख्यातगुणे हैं । असंख्यात-भागवृद्धिसंक्रामक असंख्यातगुणे हैं । संख्यातभागवृद्धिसंक्रामक संख्यातगुणे हैं । संख्यातगुण-वृद्धिसंक्रामक संख्यातगुणे हैं । असंख्यातगुणवृद्धिसंक्रामक असंख्यातगुणे हैं । अवक्तव्यसंक्रामक असंख्यातगुणे हैं । अनन्तगुणहानिसंक्रामक असंख्यातगुणे हैं । अनन्तगुणवृद्धिसंक्रामक असं-ख्यातगुणे हैं । अनन्तभागहानिसंक्रामक असंख्यातगुणे हैं । अवस्थितसंक्रामक असंख्यातगुणे हैं । इस प्रकार वृद्धिसंक्रम समाप्त हुआ ।

संक्रमस्थानोंकी प्ररूपणा सत्कर्मस्थानोंके समान है । प्रदेशसंक्रममें अर्थपद— जो प्रदेशाग्र अन्य प्रकृतिमें संक्रान्त किया जाता है इसका नाम प्रदेशसंक्रम है । इस अर्थपदके अनुसार मूलप्रकृतिसंक्रम नहीं है । उत्तरप्रकृतिसंक्रम प्रकरणप्राप्त है । उत्तरप्रकृतिसंक्रम पांच प्रकारका है— उद्वेलनसंक्रम, विध्यातसंक्रम, अधःप्रवृत्तसंक्रम, गुणसंक्रम और सर्वसंक्रम । कहा भी है—

परिणाम वश जिनके द्वारा जीवोंका कर्म संक्रमणको प्राप्त होता है वे संक्रम पांच हैं—

---

१ ताप्रतौ '-पाओग्गाणुपुव्वि-वेउव्वियसरीरंगोवंग-' इति पाठः । २ अ-काप्रत्योः 'अत्थि', ताप्रतौ 'अ (ण) त्थि' इति पाठः । बंधे संकामिज्जदि णोबंधे णत्थि मूलपयडीणं । गो. क. ४१०. ३ जं दलियमन्नपगइं निज्जइ सो संकमो पएसस्स । उव्वलणो विज्झाओ अहापवत्तो गुणो सव्वो ॥ क. प्र. २–६०. ४ प्रतिषु 'गुणे' इति पाठः ।

संकमइ[1] जेहि कम्मं परिणामवसेण जीवाणं[2] ॥ १ ॥

काओ पयडीओ केत्तिएहि संकमंति त्ति जाणावणट्ठं परूवणाए कीरमाणाए[3] एसा गाहा होदि—

> वंधे अधापवत्तो विज्झाद अवंध अप्पमत्तंतो ।
> गुणसंकमो दु एत्तो पयडीणं अप्पसत्थाणं[4] ॥ २ ॥

'वंधे अधापवत्तो' जत्थ जासिं पयडीणं वंधो संभवदि तत्थ तासिं पयडीणं वंधे संते असंते वि अधापमत्तसंकमो होदि । एसो णियमो वंधपयडीणं, अवंधपयडीणं णत्थि । कुदो ? सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु वि अधापमत्तसंकमुवलंभादो[5] । 'विज्झाद अवंधे' जासिं पयडीणं जत्थ वंधसंभवो णियमेण णत्थि तत्थ तासिं विज्झादसंकमो[6] । एसो वि णियमो मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव अप्पमत्तसंजदो त्ति तावदेव धुव चेव[7] होदि । 'गुणसंकमो दु एत्तो' अप्पमत्तादो उवरिमगुणट्ठाणेसु वंधविरहिदपयडीणं गुणसंकमो सव्वसंकमो च होदि । सव्वसंकमो होदि त्ति कधं णव्वदे ? तु-सद्दादो । 'अप्पसत्थाणं'

उद्वेलनसंक्रम, विध्यातसंक्रम, अधाप्रवृत्तसंक्रम, गुणसंक्रम और सर्वसंक्रम ॥ १ ॥

कौन प्रकृतियां कितने संक्रमणोंके द्वारा संक्रमणको प्राप्त होती हैं, यह बतलानेके लिये की जानेवाली प्ररूपणामें यह गाथा है—

बन्धके होनेपर अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है । विध्यातसंक्रम अबन्ध अवस्थामें अप्रमत्त गुणस्थान पर्यन्त होता है । यहांसे अर्थात् अप्रमत्त गुणस्थानसे लेकर आगेके गुणस्थानोंमें बन्धरहित अप्रशस्त प्रकृतियोंका गुणसंक्रम और सर्वसंक्रम भी होता है ॥ २ ॥

'वंधे अधापवत्तो' का स्पष्टीकरण करते हुए बतलाते हैं कि जहां जिन प्रकृतियोंका बन्ध सम्भव है वहां उन प्रकृतियोंके बन्धके होनेपर और उसके न होनेपर भी अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है । यह नियम बन्धप्रकृतियोंके लिये है, अबन्धप्रकृतियोंके लिये नहीं है; क्योंकि, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व इन दो अबन्ध प्रकृतियोंमें भी अधःप्रवृत्तसंक्रम पाया जाता है । 'विज्झाद अवंधे' का अर्थ करते हुए कहते हैं कि जिन प्रकृतियोंका जहां नियमसे बन्ध सम्भव नहीं है वहां उन प्रकृतियोंका विध्यातसंक्रम होता है । यह भी नियम मिथ्यादृष्टिसे लेकर अप्रमत्त गुणस्थान तक ही ध्रुव स्वरूपसे है । 'गुणसंकमो दु एत्तो' अर्थात् अप्रमत्त गुणस्थानसे आगेके गुणस्थानोंमें बन्धरहित प्रकृतियोंका गुणसंक्रम और सर्वसंक्रम भी होता है ।

शंका— सर्वसंक्रम भी होता है, यह कहांसे जाना जाता है ?

समाधान— यह उपर्युक्त गाथामें प्रयुक्त 'तु' शब्दसे जाना जाता है ।

---

१ अप्रतौ 'संकमिय', काप्रतौ 'संकमय' इति पाठः । २ गो. क. ४०९. ३ अ-काप्रत्योः 'परूवणा कीरमाणा', ताप्रतौ 'परूवणाए कीरमाणा' इति पाठः । ४ बंधे अधापवत्तो विज्झादं सत्तमो त्ति हु अबंधे । एत्तो गुणो अबंधे पयडीणं अप्पसत्थाणं ॥ गो. क. ४१६. ५ मिच्छे मिस्सम्मिस्साणं अधापवत्तो मुहुत्तअंतो त्ति ॥ गो. क. ४१२. ६ जासिं न बंधो गुण-भवपच्चयओ तासि होइ विज्झाओ । क. प्र. २, ६८. ७ ताप्रतौ 'ताव देवधुव चेव' इति पाठः ।

एसा परूवणा अप्पसत्थपयडीणं कदा, ण पसत्थाणं; उवसम-खवगसेडीसु वि बंध-विरहियपसत्थपयडीणमधापवत्तसंकमदंसणादो। एदाओ पयडीओ एत्तिएहि भाग-हारेहि संकमंति त्ति जाणावणट्ठं एसा गाहा—

उगुदाल तीस सत्त य वीसं एगेग वार तियचउक्कं।
एवं चदु दुग तिय तिय चदु पण दुग तिग दुगं च वोद्धव्वं[1] ॥ २ ॥

एदीए गाहाए वुत्तपयडीणं भागहाराणं च एसा संदिट्ठी—

३९	३०	७	२०	१	१	१२	४	४	४
१	४	२	३	३	४	५	२	३	२

। एवं ठविय एदिस्से गाहाए अत्थो वुच्चदे। तं जहा— पंचणाणावरण-चत्तारिदंसणावरण-सादावेयणीय-लोहसंजलण-पंचिंदियजादि-तेजा-कम्मइयसरीर-सम-चउरससंठाण-पसत्थवण्ण-रस-गंध-फास-अगुरुअलहुअ-परघाद-उस्सास-पसत्थविहायगइ-तस-बादर-पज्जत्त-पत्तेयसरीर-थिर-सुभ-सुभग-सुस्सर-आदेज्ज-जसकित्ति-णिमिण-पंचंतराइयाणं अधापवत्तसंकमो एक्को चेव[2]। कुदो? पंचणाणावरण-चउदंसणावरण-पंचंतराइयाणं[3] मिच्छाइट्ठि[4]प्पहुडि जाव सुहुमसांपराइयचरिमसमयो त्ति बंधो चेव। तेणेव एदासि-

---

यह प्ररूपणा 'अप्पसत्थाणं' अर्थात् अप्रशस्त प्रकृतियोंकी गयी है, न कि प्रशस्त प्रकृतियोंकी; क्योंकि, उपशम श्रेणि और क्षपक श्रेणिमें भी बन्धरहित प्रशस्त प्रकृतियोंका अधःप्रवृत्तसंक्रम देखा जाता है। ये प्रकृतियां इतने भागहारोंसे संक्रमणको प्राप्त होती हैं, यह बतलानेके लिये यह गाथा है—

उनतालीस, तीस, सात, बीस, एक, एक बारह और तीन चतुष्क (४, ४, ४); इन प्रकृतियोंके क्रमसे एक, चार, दो, तीन, तीन, चार, पांच, दो, तीन और दो; ये भागहार जानने चाहिये ॥ २ ॥

इस गाथामें कही गयी प्रकृतियों और भागहारोंकी यह संदृष्टि है—

प्रकृति	३९	३०	७	२०	१	१	१२	४	४	४
भागहार	१	४	२	३	३	४	५	२	३	२

। इसे इस प्रकारसे स्थापित करके इस गाथाका अर्थ कहते हैं। यथा— पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, संज्वलन लोभ, पंचेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्त वर्ण रस गन्ध व स्पर्श, अगुरुलघु, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्त विहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, यशकीर्ति, निर्माण और पांच अन्तराय; इन उनतालीस प्रकृतियोंका एक अधःप्रवृत्तसंक्रम ही होता है, क्योंकि, पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पांच अन्तरायका मिथ्यादृष्टिसे लेकर सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानके अन्तिम समय तक

---

१ उगुदाल-तीस-सत्तय-वीसे एक्केक्क-बार तिचउक्के। इगि-चदु-दुगु-तिग-तिग-चदु-पण-दुग-दुग-तिण्णि-संकमणा ॥ गो. क. ४१८. २ सुहुमस्स बंधघादी सादं संजलणलोह-पंचिंदी। तेजदु-सम-वण्णचऊ अगुरुग-परघाद-उस्सासं ॥ सत्थगदी तसदसयं णिमिणुगदाले अधापवत्तो दु। गो. क. ४१९-२०. ३ ताप्रतौ 'णाणावरण-पंचंतराइयाणं' इति पाठः। ४ अप्रतौ '-इत्थि' इति पाठः।

मधापवत्तसंकमं मोत्तूण णत्थि अण्णसंकमो। बंधवोच्छेदे जादे वि संकमो णत्थि, पडिग्गहाभावादो। पंचिंदियजादि-तेजा-कम्मइयसरीर-समचउरससंठाण-पसत्थवण्ण-गंध-रस-फास-अगुरुअलहुअ-परघादुस्सास-पसत्थविहायगइ-तस- बादर-पज्जत्त - पत्तेयसरीर - थिरादिछक्क[1]-णिमिणाणं बंधवोच्छेदे संते विज्झादो गुणसंकमो वा किण्ण जायदे ? ण एस दोसो, पसत्थत्तादो। लोहसंजलणस्स अधापवत्तसंकमो चेव, बंधे संते चेव आणुपुव्विसंकमेण ओसारिदसंकमत्तादो[2]। एदासिं पयडीणं सव्वसंकमो किण्ण होदि ? ण, परपयडिसंछोहणेण विणासाभावादो।

थीणगिद्धितिय-बारसकसाय-इत्थि-णवुंसयवेद-अरदि-सोग - तिरिक्खगदि - एइंदिय-बेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदियजादि-तिरिक्खगइपाओग्गाणुपुव्वी -आदावुज्जोव - थावर-सुहुम-साहारणाणं तीसण्णं पयडीणं उव्वेल्लणेण विणा चत्तारि संकमा होंति[3]। तं जहा— थीणगिद्धि-

---

बन्ध ही है। इसीलिये इन प्रकृतियोंके अधःप्रवृत्तसंक्रमको छोड़कर अन्य संक्रम नहीं होते। बन्धव्युच्छित्तिके हो जानेपर उनका संक्रम नहीं होता, क्योंकि, प्रतिग्रह (जिनमें विवक्षित प्रकृतियां संक्रान्त होती हैं) प्रकृतियोंका यहां अभाव है।

शंका— पंचेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्त वर्ण गन्ध रस व स्पर्श, अगुरुलघु, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्त विहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, स्थिर आदि छह और निर्माण; इनकी बन्धव्युच्छित्ति हो जानेपर विध्यात अथवा गुणसंक्रम क्यों नहीं होता ?

समाधान— यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, वे प्रशस्त प्रकृतियां हैं।

संज्वलन लोभका एक अधःप्रवृत्तसंक्रम ही होता है, क्योंकि, बन्धके होनेपर ही आनुपूर्वीसंक्रम (संज्वलन क्रोधका संज्वलन मान आदिमें, संज्वलन मानका संज्वलन माया आदिमें, इत्यादि) द्वारा उनका संक्रम होता है।

शंका— इन प्रकृतियोंका सर्वसंक्रम क्यों नहीं होता ?

समाधान— नहीं, क्योंकि अन्य प्रकृतियोंमें क्षेपण करके इनका विनाश नहीं होता।

स्त्यानगृद्धि आदि तीन, बारह कषाय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, अरति, शोक, तिर्यग्गति, एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जाति, तिर्यग्गतिप्रायोग्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म और साधारणशरीर; इन तीस प्रकृतियोंके उद्वेलनके विना चार संक्रम होते हैं।

---

१ प्रतिपु 'थिरादिओजोछक्क' इति पाठः। २ अंतरकरणम्मि कए चरित्तमोहे णुपुव्विसंकमणं। अन्नत्थ सेसिगाणं च सव्वहिं सव्वहा बंधे ॥ क. प्र. २, ४. × × × चरित्रमोहे -पुरुषवेद-संज्वलनचतुष्टयलक्षणे। अत्र हि चरित्रमोहनीयग्रहणेनैता एव पंच प्रकृतयो गृह्यन्ते, न शेषाः; बन्धाभावात्। तत्रानुपूर्वी (र्व्या) परिपाट्या संक्रमणं भवति, न त्वनानुपूर्व्या। तथा हि— पुरुषवेदं संज्वलनक्रोधादावेव संक्रमयति, नान्यत्र। संज्वलनक्रोधमपि संज्वलनमानादावेव, न तु पुरुषवेदे। संज्वलनमानमपि संज्वलनमायादावेव, न तु संज्वलनक्रोधादौ। संज्वलनमायामपि संज्वलनलोभ एव, न तु संज्वलनमानादाविति। मलय. ३ थीणति-बारकसाया संढित्थी अरइ सोगो य ॥ तिरियेयारं तीसे उव्वेल्लणहीणचत्तारिसंकमणा। गो. क. ४२०–२१.

तिय - इत्थिवेद - तिरिक्खगइ - तिरिक्खगइपाओग्गाणुपुव्वी-उज्जोव-अणंताणुबंधिचउक्काणं मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव सासणसम्माइट्ठि त्ति अधापवत्तसंकमो, तत्थ बंधुवलंभादो । सम्मामिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव अप्पमत्तसंजदो त्ति ताव विज्झादसंकमो, तत्थ बंधाभावादो । सगसगअपुव्वखवगपढमसमयप्पहुडि जाव चरिमट्ठिदिखंडयदुचरिमफालि त्ति ताव गुणसंकमो। चरिमफालीए सव्वसंकमो ।

णउंसयवेद-एइंदिय-बेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदियजादि-आदाव- थावर-सुहुम- साहारणाणं मिच्छाइट्ठिम्हि अधापवत्तसंकमो, तत्थ एदासिं बंधुवलंभादो । सासणसम्माइट्ठिप्पहुडि जाव अप्पमत्तसंजदो त्ति ताव विज्झादसंकमो, अप्पसत्थत्ते संते बंधाभावादो । एइंदिय-बेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदिय-आदाव-थावर-सुहुम- साहारणाणं देव-णेरइयमिच्छाइट्ठीसु विज्झादसंकमो, तत्थ एदासिं बंधाभावादो । णवरि एइंदिय-आदाव-थावराणं ईसाणंता देवा अधापवत्तेण संकामया, तत्थ एदासिं बंधदंसणादो । अपुव्वकरणपढमसमयप्पहुडि जाव चरिमट्ठिदिखंडयदुचरिमफालि त्ति ताव एदासिं पयडीणं गुणसंकमो, अप्पसत्थत्ते तेसिं[1] बंधाभावादो । चरिमफालीए सव्वसंकमो, संछोहणेण णट्ठत्तादो ।

अपच्चक्खाणचउक्कस्स मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव असंजदसम्माइट्ठि त्ति ताव अधा-

---

यथा— स्त्यानगृद्धित्रय, स्त्रीवेद, तिर्यग्गति, तिर्यग्गतिप्रायोग्यानुपूर्वी, उद्योत और अनन्तानुबन्धिचतुष्कका मिथ्यादृष्टिसे लेकर सासादनसम्यग्दृष्टि तक अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है, क्योंकि, वहां इनका वन्ध पाया जाता है। सम्यग्मिथ्यादृष्टिसे लेकर अप्रमत्तसंयत तक उनका विध्यातसंक्रम होता है, क्योंकि, वहां उनके वन्धका अभाव है। अपूर्वकरण क्षपकके प्रथम समयसे लेकर अपने अपने अन्तिम स्थितिकाण्डककी द्विचरम फालि तक उनका गुणसंक्रम होता है। अन्तिम फालिका सर्वसंक्रम होता है।

नपुंसकवेद, एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जाति, आतप, स्थावर, सूक्ष्म और साधारणशरीरका मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है, क्योंकि, वहांपर इनका वन्ध पाया जाता है। सासादनसम्यग्दृष्टिसे लेकर अप्रमत्तसंयत तक उनका विध्यातसंक्रम होता है, क्योंकि अप्रशस्तताके होनेपर वहां वन्धका अभाव है। एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, आतप, स्थावर, सूक्ष्म और साधारण; इनका देव व नारक मिथ्यादृष्टियोंमें विध्यातसंक्रम होता है; क्योंकि, उनके इनका वन्ध नहीं होता। विशेष इतना है कि एकेन्द्रिय, आतप और स्थावर इनके ईशान कल्प तकके देव अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा संक्रामक हैं; क्योंकि, उनमें इनका वन्ध देखा जाता है। अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर अन्तिम स्थितिकाण्डककी द्विचरम फालि तक इन प्रकृतियोंका गुणसंक्रम होता है, क्योंकि, अप्रशस्तताके होनेपर उनके वन्धका अभाव है, इनकी अन्तिम फालिका सर्वसंक्रम होता है, क्योंकि, उसका विनाश निक्षेपपूर्वक होता है।

अप्रत्याख्यानावरणचतुष्कका मिथ्यादृष्टिसे लेकर असंयतसम्यग्दृष्टि तक अधःप्रवृत्तसंक्रम

---

१ अ-काप्रत्योः 'अप्पसत्थत्ते सिंते इति पाठः ।

पवत्तसंकमो, तत्थ बंधदंसणादो। उवरि जाव अप्पमत्तसंजदचरिमसमओ ताव विज्झाद-संकमो। उवरिमपुव्वकरणपढमसमयप्पहुडि जाव चरिमट्ठिदिखंडयदुचरिमफालि त्ति ताव गुणसंकमो। कारणं सुगमं। चरिमफालीए सव्वसंकमो, परपयडिसंछोहणेण विणट्ठत्तादो।

पच्चक्खाणचदुक्कस्स अपच्चक्खाणचदुक्कभंगो। णवरि संजदासंजदो त्ति एदेसि-मधापवत्तसंकमो।

अरदि-सोगाणं मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव पमत्तसंजदो त्ति ताव अधापवत्तसंकमो, तत्थ एदासिं बंधुवलंभादो। अप्पमत्तसंजदम्हि[1] विज्झादसंकमो, तत्थ बंधाभावादो। अपुव्वकरणपढमसमयप्पहुडि जाव अप्पणो चरिमट्ठिदिखंडयदुचरिमफालि त्ति ताव गुणसंकमो, अप्पसत्था त्ति बंधाभावादो। चरिमफालीए सव्वसंकमो। कारणं सुगमं।

णिद्दा-पयला-अप्पसत्थ[2]वण्ण-गंध-रस-फास-उवधादाणं अधापवत्तसंकमो गुणसंकमो चेदि दो चेव संकमा[3]। तं जहा— णिद्दा-पयलाणं मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव अपुव्व-करणस्स पढम-सत्तमभागो त्ति ताव अधापवत्तसंकमो, एत्थ एदासिं बंधुवलंभादो। उवरिं जाव सुहुमसांपराइयचरिमसमओ त्ति ताव गुणसंकमो, बंधाभावादो। अप्पसत्थ-वण्णचदुक्कस्स मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव अपुव्वकरणस्स छ-सत्तमभागा त्ति अधापवत्तसंकमो।

होता है, क्योंकि, वहां इनका बन्ध देखा जाता है। आगे अप्रमत्तसंयतके अन्तिम समय तक उनका विध्यातसंक्रम होता है। ऊपर अपूर्वकरके प्रथम समयसे लेकर अन्तिम स्थितिकाण्डकको द्विचरम फालि तक उनका गुणसंक्रम होता है। इसका कारण सुगम है। अन्तिम फालिका सर्वसंक्रम होता है, क्योंकि, वह अन्य प्रकृतिमें प्रक्षिप्त होकर नष्ट होती है।

प्रत्याख्यानावरणचतुष्ककी प्ररूपणा अप्रत्याख्यानावरणचतुष्कके समान है। विशेष इतना है कि संयतासंयत गुणस्थान तक इनका अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है।

अरति और शोकका मिथ्यादृष्टिसे लेकर प्रमत्तसंयत तक अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है, क्योंकि, उनमें इनका बन्ध पाया जाता है। अप्रमत्तसंयतमें इनका विध्यातसंक्रम होता है, क्योंकि, वहां इनका बन्ध नहीं है। अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर अपने अन्तिम स्थितिकाण्डकको द्विचरम फालि तक उनका गुणसंक्रम होता है, क्योंकि, वहां अप्रशस्तता होनेपर उनका बन्ध नहीं है। उनकी अन्तिम फालिका सर्वसंक्रम होता है। इसका कारण सुगम है।

निद्रा, प्रचला तथा अप्रशस्त वर्ण, गन्ध, रस व, स्पर्श और उपघातके अधःप्रवृत्तसंक्रम और गुणसंक्रम ये दो ही संक्रम होते हैं। यथा— निद्रा और प्रचलाका मिथ्यादृष्टिसे लेकर अपूर्वकरणके प्रथम सप्तम भाग तक अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है, क्योंकि, यहां इनका बन्ध पाया जाता है। आगे सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समय तक उनका गुणसंक्रम होता है, क्योंकि, यहां उनका बन्ध नहीं है।

अप्रशस्त वर्णादि चारका मिथ्यादृष्टिसे लेकर अपूर्वकरणके सात भागोंमेंसे छठे भाग

---

१ अ-काप्रत्योः 'अप्पमत्तसंजदेहि' इति पाठः। २ अ-काप्रत्योः 'पयलायअप्पसत्थ' इति पाठः। ३ अ-काप्रत्योः 'संकमो' इति पाठः। णिद्दा पलया असुहं वण्णचउक्कं च उवघादे ॥ सत्तण्हं गुणसंकम-मधापवत्तो य × × ×। गो. क. ४२१–२२.

उवरि जाव सुहुमसांपराइयचरिमसमओ त्ति ताव गुणसंकमो। तत्तो उवरि संकमो णत्थि, बंधाभावेण पडिग्गहाभावादो।

उवघादस्स वण्णचदुक्कभंगो। एदासिं सत्तण्णं पयडीणं विज्झादसंकमो णत्थि, खवग-उवसामियसेडीसु वोच्छिण्णबंधत्तादो। उव्वेल्लणसंकमो णत्थि, अणुव्वेल्लणपयडित्तादो। सव्वसंकमो णत्थि, परपयडिसंछोहणेण अविणट्ठत्तादो।

असादावेदणीय-पंचसंठाण-पंचसंघडण-अप्पसत्थविहायगइ-अपज्जत्त-अथिर-असुह-दूभग-दुस्सर-अणादेज्ज-अजसगित्ति-णीचागोदाणं वीसण्णं पयडीणं अधापवत्तसंकमो, विज्झादसंकमो गुणसंकमो चेदि तिण्णिसंकमा[2]। तं जहा— असादावेदणीय-अथिर-असुहाणं मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव पमत्तसंजदो त्ति ताव अधापमत्तसंकमो, एत्थ एदासिं बंधुवलंभादो। अप्पमत्तसंजदम्मि विज्झादसंकमो, बंधाभावादो। उवरि गुणसंकमो जाव सुहुमसांपराइयचरिमसमयो त्ति, अप्पसत्थत्तादो। उवरि संकमो णत्थि, पडिग्गहाभावादो। हुंडसंठाण-असंपत्तसेवट्टसंघडणाणं मिच्छाइट्ठिम्हि अधापवत्तसंकमो, तत्थ[1] एदासिं बंधुवलंभादो। उवरि जाव अप्पमत्तसंजदो त्ति विज्झादसंकमो, बंधाभावादो।

तक इनका अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है। आगे सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समय तक उनका गुणसंक्रम होता है। इसके आगे उनका संक्रम नहीं है, क्योंकि, वन्धके न होनेसे उनकी प्रतिग्रह प्रकृतियोंका वहां अभाव है।

उपघातकी प्ररूपणा वर्णचतुष्कके समान है। इन निद्रा आदि सात प्रकृतियोंका विध्यातसंक्रम नहीं होता, क्योंकि, क्षपक और उपशामक श्रेणियोंमें इनकी वन्धव्युच्छित्ति होती है। इनका उद्वेलनसंक्रम भी नहीं होता, क्योंकि, वे उद्वेलन प्रकृतियोंसे भिन्न हैं। सर्वसंक्रम भी उनका सम्भव नहीं है, क्योंकि, अन्य प्रकृतियोंमें प्रक्षिप्त होकर उनका विनाश नहीं होता।

असातावेदनीय, पांच संस्थान, पांच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, अपर्याप्त, अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय, अयशकीर्ति और नीचगोत्र; इन बीस प्रकृतियोंके अधःप्रवृत्तसंक्रम, विध्यातसंक्रम और गुणसंक्रम ये तीन संक्रम होते हैं। यथा— असातावेदनीय, अस्थिर और अशुभ इनका मिथ्यादृष्टिसे लेकर प्रमत्तसंयत तक अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है; क्योंकि, यहां इनका वन्ध पाया जाता है। अप्रमत्तसंयतमें उनका विध्यातसंक्रम होता है, क्योंकि, वहां इनका वन्ध नहीं होता। आगे सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समय तक उनका गुणसंक्रम होता है, क्योंकि, वे अप्रशस्त प्रकृतियां हैं। इससे आगे उनका संक्रम नहीं होता, क्योंकि, प्रतिग्रह प्रकृतियोंका अभाव है।

हुण्डकसंस्थान और असंप्राप्तासृपाटिकासंहननका मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है, क्योंकि, वहांपर इनका बन्ध पाया जाता है। आगे अप्रमत्तसंयत तक इनका विध्यात-

---

१ अ-काप्रत्योरेतस्य स्थाने 'तत्थ' इति पाठः। २ अ-काप्रत्योः 'तिण्णिसंकमो' इति पाठः। दुक्खमसुहगदी। संहदि-संठाणदसं णीचापुण्णथिरछक्कं च॥ वीसण्हं विज्झादं अधापवत्तो गुणो य × × ×। गो. क. ४२२-२३.

असंखेज्जवासाउअतिरिक्ख-मणुसमिच्छाइट्ठीसु वि विज्झादसंकमो चेव, बंधाभावादो। अपुव्वकरणपढमसमयप्पहुडि जाव सुहुमसांपराइयचरिमसमयो त्ति ताव गुणसंकमो, बंधाभावादो। उवरि असंकमो, पडिग्गहाभावादो।

चदुसंठाण-चदुसंघडण - दूभग-दुस्सर-अणादेज्ज - णीचागोद- अप्पसत्थविहायगदीणं मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव सासणसम्माइट्ठि त्ति ताव अधापवत्तसंकमो। उवरिं जाव अप्पमत्तसंजदचरिमसमयो त्ति ताव विज्झादसंकमो, बंधाभावादो। अपुव्वकरणपढमसमयप्पहुडि जाव सुहुमसांपराइयचरिमसमयो त्ति ताव गुणसंकमो, अप्पसत्थत्तादो। उवरि असंकमो, पडिग्गहाभावादो। एवमपज्जत्तस्स वि। णवरि मिच्छाइट्ठिम्हि चेव एदस्स अधापवत्तसंकमो। अजसकित्तीए अपज्जत्तभंगो। णवरि मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव पमत्तसंजदो त्ति एदिस्से अधापवत्तसंकमो, एदेसु गुणट्ठाणेसु बंधुवलंभादो।

मिच्छत्तस्स विज्झादसंकमो गुणसंकमो सव्वसंकमो चेदि तिण्णि संकमा[1]। तं जहा— पढमसमयप्पहुडि जाव अंतोमुहुत्तकालं उवसमसम्माइट्ठिम्हि मिच्छत्तस्स गुणसंकमो। खवणाए वि अपुव्वकरणपढमसमयप्पहुडि जाव चरिमट्ठिदिखंडयदुचरिमफालि त्ति गुण-

---

संक्रम होता है, क्योंकि, वहां इनका बन्ध नहीं होता। असंख्यातवर्षायुष्क तिर्यंच व मनुष्य मिथ्यादृष्टियोंमें भी उनका विध्यातसंक्रम ही होता है, क्योंकि, उनके इनका बन्ध नहीं होता। अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समय तक उनका गुणसंक्रम होता है, क्योंकि, वहांपर इनके बन्धका अभाव है। आगे उनका संक्रम नहीं होता, क्योंकि, प्रतिग्रह प्रकृतियोंका अभाव है।

चार संस्थान, चार संहनन, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय, नीचगोत्र और अप्रशस्त विहायोगति; इनका मिथ्यादृष्टिसे लेकर सासादनसम्यग्दृष्टि तक अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है। आगे अप्रमत्तसंयतके अन्तिम समय तक उनका विध्यातसंक्रम होता है, क्योंकि, आगे उनका बन्ध नहीं होता। अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समय तक उनका गुणसंक्रम होता है, क्योंकि, वे अप्रशस्त प्रकृतियां हैं। आगे उनका संक्रम नहीं है, क्योंकि, प्रतिग्रह प्रकृतियोंका अभाव है। इसी प्रकार अपर्याप्त नामकर्मके भी विषयमें कहना चाहिये। विशेष इतना है कि इसका अधःप्रवृत्तसंक्रम केवल मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें ही होता है।

अयशकीर्तिकी प्ररूपणा अपर्याप्तके समान है। विशेष इतना है कि मिथ्यादृष्टिसे लेकर प्रमत्तसंयत तक इसका अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है, क्योंकि, इन गुणस्थानोंमें उसका बन्ध पाया जाता है।

मिथ्यात्व प्रकृतिके विध्यातसंक्रम, गुणसंक्रम और सर्वसंक्रम ये तीन संक्रम होते हैं। यथा— प्रथम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्त काल तक उपशमसम्यग्दृष्टि जीवके मिथ्यात्वका गुणसंक्रम होता है। क्षपणामें भी अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर अन्तिम स्थितिकाण्डककी

---

१ अ-काप्रत्योः 'तिण्णिसंकमो' इति पाठः। मिच्छत्ते। विज्झाद-गुणे सव्वं × × ×॥ गो. क. ४२३.

संकमो। चरिमफालीए सव्वसंकमो। उवसमसम्माइट्ठिम्हि य मिच्छत्तस्स विज्झादसंकमो।

वेदगसम्मत्तस्स चत्तारि संकमा अधापवत्तसंकमो उव्वेल्लणसंकमो गुणसंकमो सव्व-संकमो चेदि[1]। तं जहा— मिच्छत्तं गदसम्माइट्ठिम्हि जाव अंतोमुहुत्तकालं ताव अधा-पवत्तसंकमो। तदो प्पहुडि जाव पलिदो० असंखे० भागमेत्तकालं ताव उव्वेल्लणसंकमो अंगुलस्स असंखे० भागपडिभागिगो। उव्वेलण[2]चरिमखंडयपढमसमयप्पहुडि ताव गुणसंकमो जाव तस्सेव दुचरिमफालि त्ति। चरिमफालीए सव्वसंकमो।

सम्मामिच्छत्त[3]-देवगइ-देवगइपाओग्गाणुपुव्वी-णिरयगइ-णिरयगइपाओग्गाणुपुव्वी-वेउव्वियसरीर-वेउव्वियसरीरंगोवंग-मणुसगइ-मणुसगइपाओग्गाणुपुव्वी-आहारसरीर-आहारसरीरंगोवंग-उच्चागोदाणं बारसण्णं पयडीणं पंच संकमा[4]। तं जहा— मिच्छत्तं गदसम्माइट्ठिम्हि अंतोमुहुत्तकालं सम्मामिच्छत्त० अधापवत्तसंकमो। तदो उवरि पलिदो० असंखे० भागमेत्तकालं सम्मामिच्छत्त० उव्वेल्लणसंकमो। चरिमखंडए गुणसंकमो जाव तस्सेव दुचरिमफालि त्ति। चरिमफालीए सव्वसंकमो। दंसणमोहक्खवगअपुव्वकरणपढम-समयप्पहुडि ताव सम्मामिच्छत्तस्स गुणसंकमो जाव चरिमट्ठिदिखंडयस्स दुचरिमफालि त्ति। चरिमफालीए सव्वसंकमो। उवसम-वेदगसम्माइट्ठीसु विज्झादसंकमो

द्विचरम फालि तक उसका गुणसंक्रम होता है। अन्तिम फालिका सर्वसंक्रम होता है। उप-शमसम्यग्दृष्टिके ही मिथ्यात्वका विध्यातसंक्रम भी होता है।

वेदकसम्यक्त्वके अधःप्रवृत्तसंक्रम, उद्वेलनसंक्रम, गुणसंक्रम और सर्वसंक्रम ये चार संक्रम होते हैं। यथा— मिथ्यात्वको प्राप्त हुए सम्यग्दृष्टिके सम्यक्त्वप्रकृतिका अन्तर्मुहूर्त काल तक अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है। उसके आगे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र काल तक अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रतिभागवाला उसका उद्वेलनसंक्रम होता है। उद्वेलनके अन्तिम काण्डकके प्रथम समयसे लेकर उसकी ही द्विचरम फालि तक उसका गुणसंक्रम होता है। उसकी अन्तिम फालिका सर्वसंक्रम होता है।

सम्यग्मिथ्यात्व, देवगति, देवगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, नरकगति, नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकशरीरांगोपांग, मनुष्यगति, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, आहारकशरीर, आहारकशरीरांगोपांग नामकर्म और उच्चगोत्र इन बारह प्रकृतियोंके पांच संक्रम होते हैं। यथा— मिथ्यात्वको प्राप्त सम्यग्दृष्टिके अन्तर्मुहूर्त काल सम्यग्मिथ्यात्वका अधःप्रवृत्त संक्रम होता है। उसके आगे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र काल तक सम्यग्मिथ्यात्वका उद्वेलनसंक्रम होता है। अन्तिम काण्डकमें उसकी ही द्विचरम फालि तक गुणसंक्रम होता है। चरम फालिका सर्वसंक्रम होता है। दर्शनमोहक्षपक अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर अन्तिम स्थितिकाण्डकी द्विचरम फालि तक सम्य-ग्मिथ्यात्वका गुणसंक्रम होता है। उसकी अन्तिम फालिका सर्वसंक्रम होता है। उपशमसम्यग्दृष्टि

---

१ अ-काप्रत्योः 'चत्तारिसंकमो' इति पाठः। सम्मे विज्झादपरिहीणा ॥ गो. क. ४२३. २ ताप्रतौ 'उव्वे-ल्लणसंकमो। अंगुलस्स असंखे० भागपडिभागिगो उव्वेल्लण-' इति पाठः। ३ अ-काप्रत्योः 'मिच्छत्त', ताप्रतौ '[सम्मा] मिच्छत्त' इति पाठः। ४ सम्मविहीणुव्वेल्ले पंचेव य तत्थ होंति संकमणा। गो. क. ४२४.

अंगुलस्स असंखे० भागपडिभागियो।

देवगइ-देवगइपाओग्गाणुपुव्वीणं मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव अपुव्वकरणछसत्तभागे[1] त्ति अधापवत्तसंकमो, तत्थ एदासिं बंधुवलंभादो। तत्तो उवरिं पि बंधाभावे वि अधापमत्तसंकमो चेव, पसत्थत्तादो। देव-णेरइएसु विज्झादसंकमो, बंधाभावादो। एइंदिय-विगलिंदिएसु उव्वेल्लणसंकमो जाव उव्वेल्लणचरिमखंडयमपत्तो त्ति। चरिमखंडए गुणसंकमो जाव तस्सेव दुचरिमफालि त्ति। चरिमफालीए सव्वसंकमो।

वेउव्वियसरीर-वेउव्वियसरीरंगोवंगाणं देवगइभंगो। णिरयगइ-णिरयगइपाओग्गाणुपुव्वीणं पि देवगइभंगो। णवरि मिच्छाइट्ठिम्हि चेव अधापवत्तसंकमो। सासणसम्माइट्ठिप्पहुडि जाव अप्पमत्तसंजदो त्ति विज्झादसंकमो। देव-णेरइएसु वि विज्झादसंकमो, बंधाभावादो। अपुव्वकरणप्पहुडि जाव सगचरिमट्ठिदिखंडयदुचरिमफालि त्ति गुणसंकमो। चरिमफालीए सव्वसंकमो। एइंदिय-विगलिंदिएसु उव्वेल्लणसंकमो। उव्वेल्लणचरिमखंडए गुणसंकमो। तस्सेव चरिमफालीए सव्वसंकमो। एवं पंच संकमा होंति।

मणुसगइ-मणुसगइपाओग्गाणुपुव्वीणं मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव असंजदसम्मादिट्ठि

और वेदकसम्यग्दृष्टिके उसका अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रतिभागवाला विध्यातसंक्रम होता है।

देवगति और देवगतिप्रायोग्यानुपूर्वीका मिथ्यादृष्टिसे लेकर अपूर्वकरणके सात भागोंमेंसे छठे भाग तक अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है, क्योंकि, वहां इनका बन्ध पाया जाता है। उसके आगे भी बन्धका अभाव होनेपर भी अधःप्रवृत्तसंक्रम ही होता है, क्योंकि, वे प्रशस्त प्रकृतियां हैं। देवों व नारकियोंमें उनका विध्यातसंक्रम होता है, क्योंकि, उनके इनका बन्ध नहीं होता। एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवोंमें उद्वेलनके अन्तिम काण्डकके प्राप्त न होने तक उनका उद्वेलनसंक्रम होता है। अन्तिम काण्डकमें उसीकी द्विचरम फालि तक गुणसंक्रम होता है। अन्तिम फालिका सर्वसंक्रम होता है।

वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिकशरीरांगोपांगकी प्ररूपणा देवगतिके समान है। नरकगति और नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्वीकी भी प्ररूपणा देवगतिके समान है। विशेष इतना है कि मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें ही इनका अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है। सासादनसम्यग्दृष्टिसे लेकर अप्रमत्तसंयत तक उनका विध्यातसंक्रम होता है। देवों और नारकियोंमें भी उनका विध्यातसंक्रम होता है, क्योंकि, उनके इनका बन्ध नहीं होता। अपूर्वकरणसे लेकर अपने अन्तिम स्थितिकाण्डककी द्विचरम फालि तक उनका गुणसंक्रम और अन्तिम फालिका सर्वसंक्रम होता है। एकेन्द्रियों और विकलेन्द्रियोंमें उनका उद्वेलनसंक्रम होता है। उद्वेलनके अन्तिम काण्डकमें [द्विचरम फालि तक] उनका गुणसंक्रम और उसीकी अन्तिम फालिका सर्वसंक्रम होता है। इस प्रकार उक्त दो प्रकृतियोंके पांच संक्रम होते हैं।

मनुष्यगति और मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वीका मिथ्यादृष्टिसे लेकर असंयतसम्यग्दृष्टि तक

---

१ ताप्रतौ 'भागो' इति पाठः।

त्ति अधापवत्तसंकमो, तत्थ बंधुवलंभादो। संजदासंजदप्पहुडि जाव अप्पमत्तसंजदो त्ति विज्झादसंकमो। असंखेज्जवासाउअतिरिक्ख-मणुस्सेसु विज्झादसंकमो, बंधाभावादो। तेउ-वाउकाइएसु उव्वेल्लणसंकमो जाव दुचरिमुव्वेल्लणकंडयो[1] त्ति। चरिमुव्वेल्लणखंडए गुणसंकमो। तस्सेव चरिमफालीए सव्वसंकमो।

आहारसरीर-आहारसरीरंगोवंगाणं अप्पमत्तसंजदप्पहुडि जाव अपुव्वकरणो त्ति ताव अधापवत्तसंकमो, तत्थ बंधुवलंभादो। हेट्ठिमगुणट्ठाणेसु विज्झादसंकमो, बंधाभावादो। असंजमं गदो आहारसरीरसंतकम्मियो संजदो अंतोमुहुत्तेण उव्वेल्लणमाढवेदि जाव असंजदो जाव असंतकम्मं च अत्थि ताव उव्वेल्लेदि।

संपहि सव्वुव्वेलणपयडीणमुव्वेल्लणकमो वुच्चदे। तं जहा— अधापवत्तट्ठिदिखंडयं पलिदो० असंखे० भागो। तासिं ट्ठिदीणं पढमसमए जमुक्कीरिज्जदि पदेसग्गं तं थोवं। बिदियसमए जमुक्कीरिज्जदि पदेसग्गं तमसंखेज्जगुणं। तदियसमए जमुक्कीरिज्जदि पदेसग्गं तमसंखेज्जगुणं। एवमसंखेज्जगुणवड्ढीए णेयव्वं जाव अंतोमुहुत्तं त्ति। एत्थ गुणगारपमाणं पलिदो० असंखे० भागो।

परपयडीसु जं पदेसग्गं दिज्जदि तं थोवं। जं सत्थाणे दिज्जदि तमसंखेज्जगुणं।

अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है, क्योंकि, वहां इनका बन्ध पाया जाता है। संयतासंयतसे लेकर अप्रमत्तसंयत तक उनका विध्यातसंक्रम होता है। असंख्यातवर्षायुष्क तिर्यंचों और मनुष्योंमें उनका विध्यातसंक्रम होता है, क्योंकि, उनमें इनका बन्ध नहीं होता। तेजकायिकों और वायुकायिकोंमें द्विचरम उद्वेलन काण्डक तक उनका उद्वेलनसंक्रम होता है। अन्तिम उद्वेलनकाण्डकमें [द्विचरम फालि तक] गुणसंक्रम और उसीकी अन्तिम फालिका सर्वसंक्रम होता है।

आहारकशरीर और आहारकशरीरांगोपांग नामकर्मोंका अप्रमत्तसंयतसे लेकर अपूर्वकरण तक अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है, क्योंकि, वहां इनका बन्ध पाया जाता है। अधस्तन गुणस्थानोंमें उनका विध्यातसंक्रम होता है, क्योंकि, वहां इनका बन्ध नहीं होता। आहारशरीरसत्कर्मिक संयत असंयमको प्राप्त होकर अन्तर्मुहूर्तमें उद्वेलना प्रारम्भ करता है, जब तक वह असंयत है और जब तक सत्कर्मसे रहित है तब तक वह उद्वेलना करता है।

अब सब उद्वेलनप्रकृतियोंकी उद्वेलनाके क्रमकी प्ररूपणा की जाती है। यथा— अधःप्रवृत्तस्थितिकाण्डक पल्योपमके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। उन स्थितियोंका जो प्रदेशाग्र प्रथम समयमें उत्कीर्ण किया जाता है वह स्तोक है। द्वितीय समयमें जो प्रदेशाग्र उत्कीर्ण किया जाता है वह असंख्यातगुणा है। तृतीय समयमें जो प्रदेशाग्र उत्कीर्ण किया जाता है वह असंख्यातगुणा है। इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त काल तक असंख्यातगुणी वृद्धिके क्रमसे ले जाना चाहिये। यहां गुणकारका प्रमाण पल्योपमका असंख्यातवां भाग है।

अन्य प्रकृतियोंमें जो प्रदेशाग्र दिया जाता है वह स्तोक है। स्वस्थानमें जो प्रदेशाग्र दिया जाता है वह असंख्यातगुणा है। जो प्रदेशाग्र स्वस्थानमें दिया जाता है वह गुणश्रेणिक्रमसे

---

१ अ-काप्रत्योः 'दुचरिसमुव्वेल्लणकंडयो' इति पाठः।

जं सत्थाणे तं गुणसेडीए दिज्जदि, जं परत्थाणे तं पदेसग्गं विसेसहाणीए दिज्जदि। एस विही पढमस्स ट्ठिदिकंडयस्स। जो विही पढमस्स ट्ठिदिखंडयस्स परूविदो सो चेव विही विदियखंडयप्पहुडि जाव दुचरिमखंडओ त्ति ताव सव्वखंडयाणं परूवेयव्वो। चरिमट्ठिदिखंडयपमाणं पलिदो० असंखे० भागो। तस्स पदेसग्गं सव्वं[1] परत्थाणे चेव दिज्जदि असंखेज्जगुणाए सेढीए। पढमट्ठिदिखंडयस्स ट्ठिदीओ वहुगाओ। विदियस्स विसेसहीणाओ। तदियस्स ट्ठिदिखंडयस्स ट्ठिदीओ विसेसहीणाओ। एवमणंतरोवणिधाए णेयव्वं जाव दुचरिमट्ठिदिखंडओ त्ति। दुचरिमट्ठिदिखंडयट्ठिदीहिंतो चरिमट्ठिदिखंडयस्स[2] ट्ठिदीओ असंखे० गुणाओ।

परंपरोवणिधाए पढमट्ठिदिखंडयमुवणिहाय अत्थि काणिचि[3] ट्ठिदिखंडयाणि संखेज्जगुणहीणाणि काणिचि असंखे० गुणहीणाणि। तत्थ जं दुचरिमट्ठिदिखंडयमाहारदुगस्स तस्स जं चरिमसमए संकमदि पदेसग्गं परत्थाणे सो जहण्णओ उव्वेल्लणसंकमो। तेण संकममाणेण तिस्से पयडीए ताधे जं सेसयं कम्मं तं पलिदोवमस्स असंखे० भागेण अवहिरिज्जदि। सव्वकम्मं पुण अंगुलस्स असंखे० भागेण अवहिरिज्जदि।

संपहि पयदं परूवेमो— आहारदुगस्स उव्वेल्लणकालब्भंतरे उव्वेल्लणसंकमो। चरिमट्ठिदिखंडए गुणसंकमो। तत्थेव चरिमफालीए सव्वसंकमो।

दिया जाता है और जो प्रदेशाग्र परस्थानमें दिया जाता है वह विशेषहानिके क्रमसे दिया जाता है। यह विधि प्रथम स्थितिकाण्डककी है। जो विधि प्रथम स्थितिकाण्डककी कही गयी है वही विधि द्वितीय काण्डकसे लेकर द्विचरम काण्डक तक सब काण्डकोंकी कहना चाहिये। अन्तिम स्थितिकाण्डकका प्रमाण पल्योपमका असंख्यातवां भाग है। उसका सब प्रदेशाग्र असंख्यातगुणित श्रेणिसे परस्थानमें ही दिया जाता है। प्रथम स्थितिकाण्डकको स्थितियां बहुत हैं। द्वितीय स्थितिकाण्डककी स्थितियां विशेष हीन हैं। तृतीय स्थितिकाण्डककी स्थितियां विशेष हीन हैं। इस प्रकार अनन्तरोपनिधासे द्विचरम स्थितिकाण्डक तक ले जाना चाहिये। द्विचरम स्थितिकाण्डककी स्थितियोंसे चरम स्थितिकाण्डककी स्थितियां असंख्यातगुणी हैं।

परम्परोपनिधाकी अपेक्षा प्रथम स्थितिकाण्डक उपनिधामें कितने ही स्थितिकाण्डक संख्यातगुणे हीन हैं और कितने ही असंख्यातगुणे हीन हैं। उनमें जो आहारद्विकका द्विचरम स्थितिकाण्डक है उसका जो प्रदेशाग्र अन्तिम समयमें परस्थानमें संक्रान्त होता है वह जघन्य उद्वेलनासंक्रम है। उसके द्वारा संक्रान्त होता हुआ उक्त प्रकृतिका जो उस समय शेष कर्म है वह पल्योपमके असंख्यातवें भागसे अपहृत होता है। परन्तु सब कर्म अंगुलके असंख्यातवें भागसे अपहृत होता है।

अब प्रकृतकी प्ररूपणा करते हैं— आहारद्विकका उद्वेलनकालके भीतर उद्वेलनसंक्रम होता है। अन्तिम स्थितिकाण्डकमें गुणसंक्रम होता है। उसमें ही अन्तिम फालिका सर्वसंक्रम होता है।

---

१ अ-काप्रत्योः 'सद्दं', ताप्रतौ 'सद्दं (व्वं)' इति पाठः। २ प्रतिषु 'चट्ठिदिखंडयस्स' इति पाठः। ३ ताप्रतौ 'खंडयमुवणिहा य अत्थि। काणिचि' इति पाठः।

उच्चागोदस्स मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव सासणसम्माइट्ठि त्ति अधापवत्तसंकमो । उवरि असंकमो, पडिग्गहाभावादो । सत्तमपुढविणेरइएसु विज्झादसंकमो । तेउ-वाउ-काइएसु उव्वेल्लणसंकमो, तत्थ उव्वेल्लणपाओग्गपरिणामाणमुवलंभादो। चरिमुव्वेल्लणखंडए गुणसंकमो । तस्सेव चरिमफालीए सव्वसंकमो ।

तिण्णिसंजलण-पुरिसवेदाणमधापवत्तसंकमो सव्वसंकमो चेदि दोण्णि संकमा होंति । तं जहा— तिण्णं संजलणाणं पुरिसवेदस्स मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव अणियट्टि त्ति अधापवत्तसंकमो । चरिमखंडयचरिमफालीए एदासिं सव्वसंकमो ।

हस्स-रदि-भय-दुगुंछाणं अधापवत्तसंकमो गुणसंकमो सव्वसंकमो चेदि तिण्णि-संकमा होंति । तं जहा— मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव अपुव्वकरणचरिमसमयो त्ति एदासिमधापवत्तसंकमो । उवरि गुणसंकमो जाव चरिमट्ठिदिखंडयदुचरिमफालि त्ति । चरिमफालीए सव्वसंकमो ।

ओरालियसरीर-ओरालियसरीरंगोवंग-वज्जरिसह-तित्थयराणमधापवत्तसंकमो विज्झाद-संकमो चेदि दोण्णि संकमा[1] । तं जहा— ओरालियदुग-पढमसंघडणाणं मिच्छाइट्ठि-प्पहुडि जाव असंजदसम्मादिट्ठि त्ति अधापवत्तसंकमो, तत्थ बंधदंसणादो । असंखेज्ज-वासाउअतिरिक्ख-मणुस्सेसु विज्झादसंकमो, तत्थ एदासिं बंधाभावादो । तित्थयरस्स

उच्चगोत्रका मिथ्यादृष्टिसे लेकर सासादनसम्यग्दृष्टि तक अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है । आगे उसका संक्रम नहीं होता है, क्योंकि, प्रतिग्रह प्रकृतिका अभाव है । सातवीं पृथिवीके नारकियोंमें उसका विध्यातसंक्रम होता है । तेजकायिक और वायुकायिक जीवोंमें उसका उद्वेलन-संक्रम होता है, क्योंकि, वहां उद्वेलनके योग्य परिणाम पाये जाते हैं । अन्तिम उद्वेलनकाण्डकमें गुणसंक्रम होता है । उसीकी अन्तिम फालिका सर्वसंक्रम होता है ।

तीन संज्वलन और पुरुषवेदके अधःप्रवृत्तसंक्रम और सर्वसंक्रम ये दो संक्रम होते हैं । यथा— तीन संज्वलन कषायों और पुरुषवेदका मिथ्यादृष्टिसे लेकर अनिवृत्तिकरण तक अधःप्रवृत्त-संक्रम होता है । इनके अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालिका सर्वसंक्रम होता है ।

हास्य, रति, भय और जुगुप्साके अधःप्रवृत्तसंक्रम, गुणसंक्रम और सर्वसंक्रम ये तीन संक्रम होते हैं । यथा— मिथ्यादृष्टिसे लेकर अपूर्वकरणके अन्तिम समय तक इनका अधःप्रवृत्त-संक्रम होता है । आगे अन्तिम स्थितिकाण्डकको द्विचरम फालि तक गुणसंक्रम होता है । अन्तिम फालिका सर्वसंक्रम होता है ।

औदारिकशरीर, औदारिकशरीरांगोपांग, वज्रर्षभनाराचसंहनन और तीर्थंकर प्रकृतिके अधःप्रवृत्तसंक्रम और विध्यातसंक्रम ये दो संक्रम होते हैं । यथा— औदारिकद्विक और प्रथम संहननका मिथ्यादृष्टिसे लेकर असंयतसम्यग्दृष्टि तक अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है, क्योंकि, वहां-पर उनका बन्ध देखा जाता है । असंख्यातवर्षायुष्क तिर्यंचों और मनुष्योंमें इनका विध्यातसंक्रम होता है, क्योंकि, उनमें इनका बन्ध नहीं होता । तीर्थंकर प्रकृतिका असंयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर

---

१ अ-काप्रत्योः 'दोण्णिसंकमो' इति पाठः ।

असंजदसम्मादिट्ठिप्पहुडि जाव अपुव्वकरणो त्ति ताव अधापवत्तसंकमो । मिच्छाइट्ठिम्हि विज्झादसंकमो, तत्थ बंधाभावादो[1] ।

गुणसंकमेण संकममाणस्स अवहारकालो थोवो । अधापवत्तसंकमेण संकामयंतस्स अवहारकालो असंखेज्जगुणो । विज्झादसंकमेण संकामयंतस्स अवहारकालो असंखे० गुणो । एदमप्पाबहुअं उक्कस्सपदेससंकमभागहाराणं, ण सव्वेसिं; विज्झादसंकमभागहारादो अधापवत्तभागहारस्स विसेसहीणत्तुवलंभादो । एदं कुदो णव्वदे ? पच्चक्खाण-लोभजहण्णसंकमदव्वादो केवलणाणावरणजहण्णसंकमदव्वं विसेसाहियं ति उवरिम-अप्पाबहुगादो । उव्वेल्लणसंकमेण संकामयंतस्स अवहारकालो असंखे० गुणो । एदमप्पाबहुअं एत्थ अवहारेयव्वं । एवं परूवणा समत्ता ।

एत्तो सामित्तं । तं जहा— मदिआवरणस्स उक्कस्सओ[2] पदेससंकमो कस्स ? जो गुणिदकम्मंसियो सत्तमादो पुढवीदो मदो तिरिक्खो जादो तदो तस्स आवलियतब्भवत्थस्स उक्कस्सगो मदिआवरणस्स पदेससंकमो । चदुणाणावरण-चदुदंसणावरण पंचंतराइयाणं मदिणाणावरणभंगो[3] । णिद्दा-पयलाणं उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? गुणिद-

---

अपूर्वकरण तक अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है । मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें उसका विध्यातसंक्रम होता है, क्योंकि, वहां उसका बन्ध नहीं होता ।

गुणसंक्रमके द्वारा संक्रान्त होनेवाले प्रदेशाग्रका अवहारकाल स्तोक है । अधःप्रवृत्त-संक्रमके द्वारा संक्रान्त होनेवाले प्रदेशाग्रका अवहारकाल असंख्यातगुणा है । विध्यातसंक्रमके द्वारा संक्रान्त होनेवाले प्रदेशाग्रका अवहारकाल असंख्यातगुणा है । यह अल्पबहुत्व उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमभागहारोंका है, न कि सब भागहारोंका; क्योंकि, विध्यातसंक्रमभागहारसे अधः-प्रवृत्तसंक्रमभागहार विशेष हीन पाया जाता है ।

शंका— यह कहांसे जाना जाता है ?

समाधान— वह प्रत्याख्यानावरणलोभके जघन्य संक्रमद्रव्यसे केवलज्ञानावरणका जघन्य संक्रमद्रव्य विशेष अधिक है, इस आगे कहे जानेवाले अल्पबहुत्वसे जाना जाता है ।

उसकी अपेक्षा उद्वेलनसंक्रमसे संक्रान्त होनेवाले द्रव्यका अवहारकाल असंख्यातगुणा है । इस अल्पबहुत्वका यहां अवधारण करना चाहिये । इस प्रकार प्ररूपणा समाप्त हुई ।

यहां स्वामित्वकी प्ररूपणा की जाती है । वह इस प्रकार है— मतिज्ञानावरणका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो गुणितकर्मांशिक सातवीं पृथिवीसे मरकर तिर्यंच हुआ है उसके आवली कालवर्ती तद्भवस्थ होनेपर मतिज्ञानावरणका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है । शेष चार ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पांच अन्तराय प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमके स्वामित्वकी प्ररूपणा मतिज्ञानावरणके समान है । निद्रा और प्रचलाका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम

---

१ ताप्रतौ 'तत्थ बंधाभावादो' इत्येतावानयं पाठो नास्ति । २ अप्रतौ 'आवरणउक्कस्सओ' इति पाठः । ३ तत्तो उव्वट्टित्ता आवलिगासमयतब्भवत्थस्स । आवरण-विग्घचोद्दसगोरालियसत्त उक्कोसो ॥ क. प्र. २-७९.

कम्मंसियस्स चरिमसमयसुहुमसांपराइयस्स खवगस्स। थीणगिद्धितियस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? गुणिदकम्मंसियस्स अणियट्टिखवयस्स सव्वसंकमेण थीणगिद्धि-तियचरिमफालिं संकामेंतस्स[1]। सादस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? जो गुणिद-कम्मंसियो सत्तमादो पुढवीदो मदो तिरिक्खो जादो, ताधे चेव सादं पबद्धं, तप्पाओग्ग-उक्कस्सियाए सादबंधगद्धाए गदो, पुणो असादं पबद्धं, तस्स आवलियादिक्कंतस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो[2]। असादस्स णिद्दाभंगो।

मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्ताणं उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? गुणिदकम्मंसियस्स सव्वलहुं दंसणमोहणीयं खवेंतस्स अणियट्टिकरणे सव्वसंकमेण मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्ताणं चरिमफालीयो संकामेंतस्स[3]। सम्मत्तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? जो सत्तमाए

किसके होता है ? वह गुणितकर्मांशिक चरम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपकके होता है। स्त्यानगृद्धित्रयका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? वह सर्वसंक्रम द्वारा स्त्यानगृद्धित्रयकी अन्तिम फालिको संक्रान्त करनेवाले गुणितकर्मांशिक अनिवृत्तिकरण क्षपकके होता है। साता-वेदनीयका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो गुणितकर्मांशिक सातवीं पृथिवीसे मरकर तिर्यंच हुआ है, जिसने उसी समयमें सातावेदनीयका वन्ध किया है, तथा जिसने तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट सातावन्धककालको विताकर फिर असातावेदनीयका वन्ध किया है, उसके वन्धावलीके वीतनेपर उसका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। असातावेदनीयके प्रकृत स्वामित्वकी प्ररूपणा निद्राके समान है।

मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? वह सर्वलघु-कालमें दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करते हुए अनिवृत्तिकरणमें सर्वसंक्रम द्वारा मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अन्तिम फालियोंको संक्रान्त करनेवाले गुणितकर्मांशिकके होता है। सम्यक्त्व प्रकृतिका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो सातवीं पृथिवीका नारकी गुणितकर्मांशिक

---

१ अप्रतौ 'चरिमफाली संकमेतस्स', काप्रतौ 'चरिमफालिसंकमोतस्स', ताप्रतौ 'चरिमफालि (लिं) संकामेंतस्स' इति पाठः। कम्मचउक्के असुभाण बज्झमाणीण सुहुम (खवग) रागंते। संछोभणम्मि नियगे चउवीसाए नियट्टिस्स ॥ क. प्र. २-८०. कर्मचतुष्के दर्शनावरण-वेदनीय-नाम-गोत्रलक्षणे या अशुभाः सूक्ष्मसंपरायावस्थाया-मवध्यमानाः प्रकृतयो निद्राद्विकासातवेदनीय-प्रथमवर्जसंस्थान-प्रथमवर्जसंहननाशुभवर्णादिनवकोपघाताप्रशस्त-विहायोगत्यपर्याप्तास्थिराशुभ-दुर्भग-दुःस्वरानादेयायशःकीर्ति-नीचैर्गोत्रलक्षणा द्वात्रिंशत् प्रकृतयस्तासां गुणितकर्मांशस्य क्षपकस्य सूक्ष्मसंपरायस्यान्ते चरमसमये उत्कृष्टः प्रदेशसंक्रमो भवति। तथाऽनिवृत्तिबादरस्य गुणितकर्मांशस्य क्षपकस्य मध्यमकषायाष्टक-स्त्यानर्द्धित्रिक-तिर्यग्द्विक-द्वि-त्रि-चतुरिन्द्रियजाति-सूक्ष्म-साधारण—नोकषायषट्करूपाणां चतुर्विंशतिप्रकृतीनां (२४) आत्मीय आत्मीये चरमसंछोभे चरमसंक्रमे उत्कृष्टप्रदेशसंक्रमो भवति। (मलय).

२ तत्तो अणंतरागयसमयादुक्कस्स सायबंधद्धं। बंधिय असायबंधालिगंतसमयम्मि सायस्स ॥ क. प्र. २-८१. ततो नरकभवादनन्तरभवे समागतः ······। मलय.

३ मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेससंकमो कस्स ? गुणिदकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदो दो तिण्णि

पुढवीए णेरइयो गुणिदकम्मंसियो अंतोमुहुत्तसेसे सम्मत्तं पडिवण्णो, उक्कस्सेण गुणसंकमकालेण सम्मत्तमावूरिय मिच्छत्तं गदो, तस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो[1]।

अणंताणुबंधीणं उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स? सत्तमपुढविणेरइयस्स गुणिदकम्मंसियस्स सव्वजहण्णमंतोमुहुत्तमेत्तमाउअं अत्थि त्ति अणंताणुबंधिचउक्कविसंजोजणमाढविय सव्वसंकमेण अणंताणुबंधिचउक्कचरिमफालिं संकामेंतस्स[2]। अट्ठकसायाणमुक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स? गुणिदकम्मंसियस्स सव्वलहुं खवणाए अब्भुट्ठियस्स अणियट्टि-

---

आयुमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहनेपर सम्यक्त्वको प्राप्त हो उत्कृष्ट गुणसंक्रमकालमें सम्यक्त्वको पूर्ण करके मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है उस प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके सम्यक्त्व प्रकृतिका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है।

अनन्तानुबन्धी कषायोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो सातवीं पृथिवीमें स्थित गुणितकर्मांशिक नारकी जीव सर्वजघन्य अन्तर्मुहूर्त मात्र आयुके शेष रहनेपर अनन्तानुबन्धिचतुष्ककी विसंयोजनाको प्रारम्भ करके सर्वसंक्रमण द्वारा अनन्तानुबन्धिचतुष्ककी अन्तिम फालिको संक्रान्त कर रहा है उसके उनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। आठ कषायोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो गुणितकर्मांशिक अनिवृत्तिकरण क्षपक सर्वलघु कालमें क्षपणामें उद्यत होकर आठ कषायोंकी अन्तिम फालिको सर्वसंक्रम द्वारा संक्रान्त कर रहा है उसके

भवग्गहणाणि पंचिंदियतिरिक्खपज्जत्तएसु उववण्णो अंतोमुहुत्तेण मणुस्सेसु आगदो। सव्वलहुं दंसणमोहणीयं खवेदुमाढत्तो, जावे मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्ते संछुभमाणं संछुद्धं ताधे तस्स मिच्छत्तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो। क. पा. सु. पृ ४०१, १९-२३. सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स? जेण मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसग्गं सम्मामिच्छत्ते पक्खित्तं, तेणेव जावे सम्मामिच्छत्तं सम्मत्ते संपक्खित्तं ताधे तस्स सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो। पृ. ४०२, २७-२८. संछोभणाए दोण्हं मोहाणं वेयगस्स खणसेसे। उप्पाइय सम्मत्तं मिच्छत्तगए तमतमाए॥ क. प्र. २-८२. क्षपकस्य द्वयोर्मोहनीययोर्मिथ्यात्व-सम्यग्मिथ्यात्वरूपयोरात्मीयात्मीयचरमसंछोभे सर्वसंक्रमेणोत्कृष्टः प्रदेशसंक्रमो भवति।

१ सम्मत्तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स? गुणिदकम्मंसिएण सत्तमाए पुढवीए णेरइएण मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेससंतकम्ममंतोमुहुत्तेण होहिदि त्ति सम्मत्तमुप्पाइदं, सव्वुक्कस्सियाए पूरणाए सम्मत्तं पूरिदं। तदो उवसंतद्धाए पुण्णाए मिच्छत्तमुदीरयमाणस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो। सो पुण अधापवत्तसंकमो। क. पा. सु. पृ. ४०२, २४-२६. × × × वेयगस्स खणसेसे। उप्पाइय सम्मत्तं मिच्छत्तगए तमतमाए॥ क. प्र. २, ८२. तथा क्षणशेषेऽन्तर्मुहूर्तावसेसे आयुषि तमस्तमाभिधानायां सप्तमपृथिव्यां वर्तमान औपशमिकं सम्यक्त्वमुत्पाद्य दीर्घेण च गुणसंक्रमकालेन वेदकसम्यक्त्वपुञ्जं समापूर्य सम्यक्त्वात्प्रतिपतितो मिथ्यात्वं च प्रतिपद्य तत्प्रथमसमय एव वेदकसम्यक्त्वस्य मिथ्यात्वे उत्कृष्टं प्रदेशसंक्रमं करोति। (मलय).

२ क. पा. सु. पृ. ४०३, २९-३०. भिन्नमुहुत्ते सेसे तच्चरमावस्सगाणि किच्चेत्थ। संजोयणा विसंजोयगस्स संछोभणा एसिं॥ क. प्र. २-८३.

खवगस्स अट्ठकसायचरिमफालीए सव्वसंकमेण संकामेंतस्स[1]।

णवुंसयवेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? ईसाणे गुणिदकम्मंसियस्स[2] इत्थिवेदेण पुरिसवेदेण वा सव्वलहुं खवणाए अब्भुट्ठियस्स णवुंसयवेदचरिमफालिं सव्वसंकमेण संकामेंतस्स[3]। इत्थिवेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? जो गुणिदकम्मंसियो असंखेज्जवासाउएसु उववण्णो, सव्वरहस्सेण कालेण पलिदो० असंखे० भाएण पूरिदइत्थिवेदो तदो मदो जहण्णियाए देवट्ठिदीए उववण्णो, तदो चुदो सव्वरहस्सेण[4] कालेण खवणाए अब्भुट्ठिदो, तदो तस्स जा इत्थिवेदचरिमफाली सव्वसंकमेण पुरिसवेदे संकमदि ताओ इत्थिवेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो[5]। पुरिसवेदस्स[6] उक्कस्सओ पदेससंकमो

उक्त आठ कषायोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है।

नपुंसकवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो गुणितकर्मांशिक देव ईशान कल्पमें [संक्लेश परिणामसे एकेन्द्रिय प्रायोग्य बन्ध करता हुआ नपुंसकवेदको बार बार बांधकर वहांसे च्युत हो स्त्री अथवा पुरुष उत्पन्न होता है और तत्पश्चात् मासपृथक्त्व अधिक आठ वर्षोंके बीतनेपर] स्त्री या पुरुषवेदके साथ सर्वलघु कालमें क्षपणामें उद्यत हो सर्वसंक्रम द्वारा नपुंसकवेदकी अन्तिम फालिको संक्रान्त करता है उसके नपुंसकवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। स्त्रीवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो गुणितकर्मांशिक असंख्यातवर्षायुष्क जीवोंमें उत्पन्न होकर सर्वलघु कालस्वरूप पल्योपमके असंख्यातवें भागमें स्त्रीवेदको पूर्ण करके मृत्युको प्राप्त होता हुआ जघन्य देवस्थिति (दस हजार वर्ष) के साथ देव उत्पन्न हुआ है, तत्पश्चात् वहांसे च्युत होकर सर्वलघु कालमें क्षपणामें उद्यत होकर जब वह स्त्रीवेदकी अन्तिम फालिको सर्वसंक्रम द्वारा पुरुषवेदमें संक्रान्त करता है तब उसके स्त्रीवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है ?

विशेषार्थ— यद्यपि तत्त्वार्थसूत्र आदि अधिकांश ग्रन्थोंमें भोगभूमियोंमें अकालमृत्यु (कदलीघातमरण) का प्रतिषेध किया गया है, तथापि कुछ आचार्य वहां अकालमरणको भी स्वीकार

---

१ अट्ठण्हं कसायाणमुक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? गुणिदकम्मंसिओ सव्वलहुं मणुसगइमागदो अट्ठवस्सिओ खवणाए अब्भुट्ठिदो। तदो अट्ठण्हं कसायाणमपच्छिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयसंछुहमाणयस्स तस्स अट्ठण्हं कसायाणमुक्कस्सओ पदेससंकमो। क. पा. सु. पृ. ४०३, ३१-३२.

२ अ-काप्रत्योः 'ईसाणे गुणियस्स', ताप्रतौ 'ईसाणे गुणि [दकम्मंसि] यस्स' इति पाठः।

३ णवुंसयवेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? गुणिदकम्मंसिओ ईसाणादो आगदो सव्वलहुं खवेदुमाढत्तो। तदो णवुंसयवेदस्स अपच्छिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयसंछुभमाणयस्स तस्स णवुंसयवेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो। क. पा. सु.. पृ. ४०४, २८-२९. ईसाणागयपुरिसस्स इत्थियाए य अट्ठवासाए। मासपुधत्तब्भहिए नपुंसगे सव्वसंकमणे॥ क. प्र. २-८४. ४ अ-काप्रत्योः 'तदो वुचदे सव्वरहस्सेण, ताप्रतौ 'तदो वुचदे (चुदो) सव्वरहस्सेण' इति पाठः। ५ इत्थिवेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? गुणिदकम्मंसिओ असंखेज्जवस्साउएसु इत्थिवेदं पूरेदूण तदो कमेण पूरिदकम्मंसिओ खवणाए अब्भुट्ठिदो तदो चरिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयसंछुहमाणयस्स तस्स इत्थिवदेस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो। क. पा. सु. पृ. ४०४, ३४-३५. इत्थीए भोगभूमिसु जीविय वासाणसंखियाणि तओ। हस्सठिई देवत्ता सव्वलहुं सव्वसंछोभे॥ क. प्र. २-८५.

६ अ-काप्रत्योः 'पुरिसवेदयस्स' इति पाठः।

कस्स ? जेण ईसाणदेवेसु णवुंसयवेदो पूरिदो, तदो असंखेज्जवासाउएसु[1] इत्थिवेदो पूरिदो, तदो मदो जहण्णाए देवट्ठिदीए उववण्णो, तदो मदो मणुस्सो जादो, सव्वलहुं अण्णदरेण लिंगेण खवणाए अब्भुट्ठिदो, तेण जाव सव्वसंकमेण पुरिसवेदो संकामिदो ताव तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो[2]।

छण्णोकसायाणमुक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स? जो गुणिदकम्मंसियो सव्वलहुं खवणाए अब्भुट्ठिदो, तेण जाधे सव्वसंकमेण छण्णोकसायाणं चरिमफाली संकामिदा ताधे तेसिमुक्कस्सओ पदेससंकमो।

कोधसंजलणाए उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स? जो ईसाणदेवेसु णवुंसयवेदं

करते हैं। इसी मतभेदके अनुसार यहां भोगभूमियोंमें अपमृत्युको स्वीकार कर उपर्युक्त स्त्रीवेदके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमको घटित किया गया है। यहां चूर्णिसूत्रकार यतिवृषभाचार्यका क्या अभिमत रहा है, यह ज्ञात नहीं होता; कारण कि उन्होंने 'असंखेज्जवस्साउएसु इत्थिवेदं पूरेदूण' इतना मात्र निर्देश किया है— पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र सर्वलघु कालका निर्देश नहीं किया। कर्मप्रकृति आदि श्वेताम्बर ग्रन्थोंमें यह अभिमत अवश्य पाया जाता है। वहां प्रसिद्ध टीकाकार आचार्य मलयगिरिने बतलाया है कि स्त्रीवेदका यह उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम इसी युक्तिसे बन सकता है, अतः इसी युक्तिका अनुसरण करना चाहिये; क्योंकि, इसके अतिरिक्त अन्य युक्तियां चिरन्तन ग्रन्थोंमें देखी नहीं जातीं। यथा— इहैवमेव स्त्रीवेदस्योत्कृष्टमापूरणमुत्कृष्टश्च प्रदेशसंक्रमः केवलज्ञानेनोपलब्धो नान्यथेत्येवैव युक्तिरत्रानुसर्तव्या, न युक्त्यन्तराणि; युक्त्यन्तराणां चिरन्तनग्रन्थेष्वदर्शनतो निर्मूलतयाऽन्यथापि कर्तुमशक्यत्वात्। क. प्र. २, ८५.

पुरुषवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जिसने ईशान कल्पके देवोंमें नपुंसक वेदको पूर्ण किया है, तत्पश्चात् असंख्यातवर्षायुष्कोंमें स्त्रीवेदको पूर्ण किया है, तत्पश्चात् मरणको प्राप्त होकर जो जघन्य देवस्थितिसे उत्पन्न हुआ है, और तत्पश्चात् मरणको प्राप्त होकर मनुष्य होता हुआ सर्वलघु कालमें अन्यतर लिंगके साथ क्षपणामें उद्यत होता है उसके जब तक सर्वसंक्रम द्वारा पुरुषवेद संक्रान्त होता है तब तक पुरुषवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है।

छह नोकषायोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो गुणितकर्मांशिक सर्वलघु कालमें क्षपणामें उद्यत होकर जब सर्वसंक्रम द्वारा छह नोकषायोंकी अन्तिम फालिको संक्रान्त करता है तब उसके उनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है।

संज्वलन क्रोधका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो ईशान कल्पके देवोंमें नपुंसक

---

१ अ-काप्रत्योः 'वासाउएसो' इति पाठः।

२ पुरिसवेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स? गुणिदकम्मंसिओ इत्थि-पुरिस-णवुंसयवेदे पूरेदूण तदो सव्वलहुं खवणाए अब्भुट्ठिदो, पुरिसवेदस्स अपच्छिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयसंछुहमाणयस्स तस्स पुरिसवेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो। क. पा. सु. पृ. ४०४, ३६–३७. वरिसवरित्थिं पूरिय सम्मत्तमसंखवासियं लहियं। गंता मिच्छत्तमओ जहन्नदेवठिई भोच्चा॥ आगंतु लहुं पुरिसं संछुभमाणस्स पुरिसवेयस्स। क. प्र. २, ८६-८७. ···वर्षवरो नपुंसकवेदः। मलय.

पूरिय, असंखेज्जवासाउएसु इत्थिवेदं पूरिय, पुणो इत्थिवेदे पडिवुण्णे सम्मत्तं लहिय तदो पुरिसवेदो पूरिदो, पुणो पुरिसवेदे पडिवुण्णे[1] मिच्छत्तं गदो, तदो मदो जहण्णियाए देवट्ठिदीए उववण्णो, तदो चुदो[2] मणुस्सेसु अट्ठवस्सिएसु उववण्णो, अट्ठवस्सिएण जादेण संजमो पडिवण्णो, अंतोमुहुत्तेण खवणाए अब्भुट्ठिदो, तदो तेण जावे[3] कोधो सव्वसंकमेण संकामिदो तावे[4] तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो। एदेणेव जीवेण सव्वसंकमेण माणे संकामिदे माणसंजलणाए उक्कस्सओ पदेससंकमो। [एदेणेव जीवेण सव्वसंकमेण मायाए संकामिदाए मायासंजलणाए उक्कस्सओ पदेससंकमो[5]।] लोहसंजलणाए उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? जेण गुणिदकम्मंसिएण सव्वरहस्सेण कालेण चत्तारिवारं कसाओ[6] उवसामिदो, तेण सव्वलहुएण कालेण खवणाए अब्भुट्ठिदेण चरिमसमयअकदं[7]अंतरेण

वेदको पूर्ण करके असंख्यातवर्षायुष्कोंमें स्त्री वेदको पूर्ण करता है, फिर स्त्रीवेदके पूर्ण हो जानेपर जो सम्यक्त्वको प्राप्त करके तत्पश्चात् पुरुषवेदको पूर्ण करता है, फिर पुरुषवेदके पूर्ण हो जानेपर मिथ्यात्वको प्राप्त होकर तत्पश्चात् मृत्युको प्राप्त होता हुआ जघन्य देवस्थितिसे उत्पन्न होता है, वहांसे च्युत होकर जो अष्टवर्षीय मनुष्योंमें उत्पन्न हो आठ वर्षका होता हुआ संयमको प्राप्त होकर अन्तर्मुहूर्त कालमें क्षपणामें उद्यत होता है, उसके जब संज्वलन क्रोध सर्वसंक्रम द्वारा संक्रमको प्राप्त होता है तब उसका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। यही जीव जब सर्वसंक्रम द्वारा संज्वलन मानको संक्रान्त करता है तब उसके संज्वलन मानका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। [यही जीव जब सर्वसंक्रम द्वारा संज्वलन मायाको संक्रान्त करता है तब उसके संज्वलन मायाका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है।] संज्वलन लोभका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो गुणितकर्मांशिक सर्वह्रस्व कालमें चार बार कषायोंका उपशम करके सर्वलघु कालमें क्षपणामें उद्यत होता हुआ जब अकृतअन्तरकरण रहनेके अन्तिम समयमें संज्वलन लोभको संक्रान्त

१ प्रतिषु 'पडिवण्णे' इति पाठः। २ अप्रतौ 'तदो वुचदो' इति पाठः।

३ काप्रतौ 'तेणेव जाव', ताप्रतौ 'तेण जावे' इति पाठः। ४ का-ताप्रत्योः 'तावे' इति पाठः।

५ कोहसंजलणस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? जेण पुरिसवेदो उक्कस्सओ संछुद्धो कोधे तेणेव जावे माणे कोधो सव्वसंकमेण संछुहदि तावे तस्स कोधस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो। एदस्स चेव माणसंजलणस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कायव्वो, णवरि जावे माणसंजलणो मायासंजलणे संछुभइ तावे। एदस्स चेव मायासंजलणस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कायव्वो, णवरि जावे मायासंजलणो लोभसंजलणे संछुभइ तावे। क. पा. सु. पृ. ४०४, ४०-४३. तस्सेव सगे कोहस्स माण-मायाणमवि कसिणो ॥ क. प्र. २-८७. तथा तस्यैव पुरुषवेदोत्कृष्टप्रदेशसंक्रमस्वामिनः संज्वलनक्रोधस्य संसारं परिभ्रमता उपचितस्य क्षपणकाले प्रकृत्यन्तरदलिकानां गुणसंक्रमेण प्रचुरीकृतस्य स्वके अस्मीये चरमसंछोभे उत्कृष्टः प्रदेशसंक्रमो भवति। अत्रापि बन्धव्यवच्छेदादर्वाक् आवलिकाद्विकेन कालेन यद् बद्धं तन्मुक्त्वा शेषस्य चरमसंछोभे उत्कृष्टः प्रदेशसंक्रमो द्रष्टव्यः। एवं मान-माययोरपि वाच्यम्। मलय.

६ अ-काप्रत्योः 'कसाय', ताप्रतौ 'कसायं' इति पाठः। ७ अ-काप्रत्योः 'अकड-' इति पाठः।

जावे[1] लोभो संकामिदो तावे[2] तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो[3] ।

आउआणं चदुण्णं पि णत्थि पदेससंकमो । णिरयगइ-णिरयगइपाओग्गाणुपुव्वीणं उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? जो गुणिदकम्मंसियो पुव्वकोडिपुधत्तं मणुस्स-तिरिक्खे[4] बंधंतो अच्छिदो, पच्छा खवणाए अब्भुट्ठिदो, तदो तेण जाधे सव्वसंकमेण णिरयगइ-णिरयगइपाओग्गाणुपुव्वीणं चरिमफालीयो संकामिदाओ ताधे तेसिमुक्कस्सओ पदेससंकमो[5] ।

तिरिक्खगइ-तिरिक्खगइपाओग्गाणुपुव्वीणं उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? जो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदो[6], समयाविरोहेण मणुस्सेसु उववण्णो,

---

करता है तब उसके संज्वलन लोभका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है ।

चारों ही आयुकर्मोंका प्रदेशसंक्रम नहीं होता । नरकगति और नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्वीका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो गुणितकर्मांशिक पूर्वकोटिपृथक्त्व काल तक बन्ध करता हुआ मनुष्य व तिर्यंचोंमें स्थित रहता है, पश्चात् क्षपणामें उद्यत होकर जब वह सर्वसंक्रम द्वारा नरकगति और नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्वीकी अन्तिम फालियोंको संक्रान्त करता है तब उसके उन दोनों प्रकृतियोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है ।

तिर्यग्गति और तिर्यग्गतिप्रायोग्यानुपूर्वीका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो गुणितकर्मांशिक सातवीं पृथिवीसे निकलकर और समयाविरोधसे मनुष्योंमें उत्पन्न होकर

---

१ का-ताप्रत्योः 'जावे' इति पाठः । २ काप्रतौ 'तावे' इति पाठः ।

३ लोभसंजलणस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? गुणिदकम्मंसिओ सव्वलहुं खवणाए अब्भुट्ठिदो अंतरं से काले कादूण लोहस्स असंकामगो होहिदि त्ति तस्स लोहस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो । क. पा. सु. पृ. ४०५, ४४-४५. चउरुवसमित्तु खिप्पं लोभ-जसाणं ससंकमस्संते । क. प्र. २, ८८. अनेकभवभ्रमणेन चतुरो वारान् यावन्मोहनीयमुपशमय्य, चतुर्थोपशमनानन्तरं शीघ्रमेव क्षपकश्रेणिं प्रतिपन्नस्य तस्यैव गुणितकर्मांशस्य स्वसंक्रमस्यान्ते चरमसंछोभे इत्यर्थः, संज्वलनलोभ-यशःकीर्त्योरुत्कृष्टः प्रदेशसंक्रमो भवति । इहोपशमश्रेणिं प्रतिपन्नेन सता प्रकृत्यन्तरदलिकानां प्रभूतानां गुणसंक्रमेण तत्र प्रक्षेपात् द्वे अपि संज्वलनलोभ-यशःकीर्तिप्रकृती निरन्तरमापूर्येते, तत उपशमश्रेणिग्रहणम् । आसंसारं च परिभ्रमता जन्तुना मोहनीयस्य चतुर एव वारान् यावदुपशमः क्रियते, न पंचममपि वारम्, ततश्चतुरुपशमय्येत्युक्तम् । तथा संज्वलनलोभस्य चरमसंछोभोऽन्तरकरणचरमसमये द्रष्टव्यः, न परतः; परतस्तस्य संक्रमाभावात् , "अंतरकरणम्मि कए चरित्तमोहे णु (णं)-पुव्विसंकमणं" इति वचनात् । मलय.

४ अ-काप्रत्योः 'मणुस्समणुस्सतिरिक्खे', ताप्रतौ [मणुस] मणुस-तिरिक्खे इति पाठः ।

५ पूरित्तु पुव्वकोडीपुहुत्त संछोभगस्स निरयदुगं । क. प्र. २-९०. पूरित्तुत्ति— नरकद्विकं नरकगति-नरकानुपूर्वीलक्षणं पूर्वकोटिपृथक्त्वं यावत्पूरयित्वा, सप्तसु पूर्वकोट्यायुष्केषु तिर्यग्भवेषु भूयो भूयो बध्वेत्यर्थः । ततोऽष्टमभवे मनुष्यो भूत्वा क्षपकश्रेणिं प्रतिपन्नोऽन्यत्र तन्नरकद्विकं संक्रमयन् चरमसंक्षोभे सर्वसंक्रमेण तस्योत्कृष्टं प्रदेशसंक्रमं करोति । मलय.

६ अ-काप्रत्योः 'उवट्टिदो', ताप्रतौ 'उवट्टिदो' इति पाठः ।

सव्वलहुं खवणाए अब्भुट्ठिदो, जाधे तेण एदासिं चरिमफाली सव्वसंकमेण संकामिदा ताधे तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो ।

मणुसगइ-मणुसगइ-पाओग्गाणुपुव्वीणमुक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? जो गुणिद-कम्मंसिओ सत्तमाए पुढवीए अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पडिवण्णो सव्वणिरुद्धे सेसे मिच्छत्तं गदो, उव्वट्टिदो[1], तिरिक्खेसुववण्णो, तस्स[2] पढमसमयतिरिक्खस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो[3] ।

देवगइ-देवगइपाओग्गाणुपुव्वी-वेउव्वियसरीर-वेउव्वियसरीरंगोवंग-बंधण-संघादाण-मुक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? जो गुणिदकम्मंसियो मणुस्स-तिरिक्खेसु एदाओ पयडीओ पुव्वकोडिपुधत्तं बंधिय खवणाए अब्भुट्ठिदो, तस्स जाधे परभवियणामाणं बंधवोच्छेदो जादो, तदो उवरि बंधावलियाए अदिक्कंताए एदासिं पयडीणं उक्कस्सओ पदेससंकमो[4] ।

सर्वलघु कालमें क्षपणामें उद्यत होता है, वह जब इनकी अन्तिम फालिको सर्वसंक्रम द्वारा संक्रान्त करता है तब इसके उनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है ।

मनुष्यगति और मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वीका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो गुणितकर्मांशिक सातवीं पृथिवीमें प्रारम्भिक अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त होकर सर्वनिरुद्ध अर्थात् आयुमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहनेपर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है, फिर वहांसे निकलकर जो तिर्यंचोंमें उत्पन्न हुआ है उसके तिर्यंच होनेके प्रथम समयमें मनुष्यगति और मनुष्यगति-प्रायोग्यानुपूर्वीका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है ।

देवगति, देवगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकशरीरांगोपांग, वैक्रियिकबन्धन और वैक्रियिकसंघातका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो गुणितकर्मांशिक जीव मनुष्यों व तिर्यंचोंमें इन प्रकृतियोंको पूर्वकोटिपृथक्त्व तक बांधकर क्षपणामें उद्यत होता है, उसके जब परभविक नामकर्मोंकी बन्धव्युच्छित्ति हो जाती है तब उसके पश्चात् बन्धावलीके व्यतीत होनेपर इन प्रकृतियोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है ।

---

१ अ-काप्रत्योः 'उवट्ठिदो' इति पाठः । २ अ-काप्रत्योर्नोपलभ्यते पदमिदम् ।

३ सव्वचिरं सम्मत्तं अणुपालिय पूरइत्तु मणुयदुगं । सत्तमखिइनिग्गइए पढमे समए नरदुगस्स ॥ क. प्र. २–९१. सव्वचिर ति— सव्वचिरं सर्वोत्कृष्टं कालं अन्तर्मुहूर्तोनानि त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणीत्यर्थः । सम्यक्त्वमनुपाल्य नारकः सप्तमक्षितौ वर्तमानः सम्यक्त्वप्रत्ययं तावन्तं कालं मनुजद्विकं मनुजगति-मनुजानु-पूर्वीलक्षणमापूर्य बद्ध्वा चरमेऽन्तर्मुहूर्ते मिथ्यात्वं गतः । ततस्तन्निमित्तं तिर्यग्द्विकं तस्य बध्नतो गुणितकर्मांशस्य सप्तमपृथिव्याः सकाशाद् विनिर्गतस्य प्रथमसमये एव मनुजद्विकं यथाप्रवृत्तसंक्रमेण तस्मिन् तिर्यग्द्विके बध्यमाने संक्रमयतस्तस्य मनुजद्विकस्योत्कृष्टः प्रदेशसंक्रमो भवति । मलय.

४ देवगईनवगस्स य सगबंधंतालिगं गंतुं ॥ २ क. प्र. २–९०. तथा देवगतिनवकं देवगति-देवानुपूर्वी-वैक्रियिकसप्तकलक्षणं यदा पूर्वकोटिपृथक्त्वं यावदापूर्याष्टमभवे क्षपकश्रेणिं प्रतिपन्नः सन् स्वकबन्धान्तात् स्वबन्ध-व्यवच्छेदादनन्तरमावलिकामात्रं कालमतिक्रम्य यशःकीर्तौ प्रक्षिपति तदा तस्योत्कृष्टप्रदेशसंक्रमो भवति । तदानीं हि प्रकृत्यन्तरदलिकानामपि गुणसंक्रमेण लब्धानां संक्रमावलिकातिक्रान्तत्वेन संक्रमः प्राप्यत इति कृत्वा । मलय.

आहारसरीर-आहारसरीरंगोवंग-बंधण-संघादाणं उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? जेण गुणिदकम्मंसिएण एदाहि चदुहि पयडीहि चिरसंचिदाहि चत्तारिवारं कसाया[1] उवसामिदा, तदो तस्स खवणाए अब्भुट्ठियस्स परभवियणामाणं बंधे वोच्छिण्णे आवलिया-दिक्कंतस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो[2] ।

ओरालिय-तेजा-कम्मइयसरीर-तदंगोवंग-बंधण-संघादाणं मदिआवरणभंगो । पसत्थ-संठाण-संघडण-सुभगादेज्ज-सुस्सराणमुक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? जो गुणिदकम्मंसिओ बेछावट्ठीयो सम्मत्तमणुपालेदूण चदुक्खुत्तं कसाए उवसामिय खवणाए अब्भुट्ठिदो, तस्स परभवियणामाणं बंधवोच्छेदादो आवलियादिक्कंतस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो । णवरि वज्जरिसहसंघडणस्स चरिमदेवभवचरिमसमए उक्कस्सओ पदेससंकमो[3] ।

आहारशरीर, आहारशरीरांगोपांग, आहारशरीरबन्धन और आहारशरीरसंघातका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जिस गुणितकर्मांशिक जीवने चिरसंचित इन चार प्रकृतियोंके साथ चार वार कषायोंका उपशम किया है और तत्पश्चात् जो क्षपणामें उद्यत हुआ है उसके परभविक नामकर्मोंकी बन्धव्युच्छित्ति हो जानेके पश्चात् आवली मात्र कालके बीतनेपर उक्त चार प्रकृतियोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है ।

औदारिक, तैजस व कार्मण शरीर तथा उनके आंगोपांग, बन्धन और संघातकी प्ररूपणा मतिज्ञानावरणके समान है । प्रशस्त संस्थान, प्रशस्त संहनन, सुभग, आदेय और सुस्वरका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो गुणितकर्मांशिक दो छयासठ सागरोपम काल तक सम्यक्त्वका पालन करके और चार वार कषायोंको उपशमा करके क्षपणामें उद्यत हुआ है, उसके परभविक नामकर्मोंकी बन्धव्युच्छित्ति हो जानेके पश्चात् आवली मात्र कालके बीतनेपर उनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है । विशेष इतना है कि वज्रर्षभनाराचसंहननका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम अन्तिम देवभवके अन्तिम समयमें होता है ।

---

१ अ-काप्रत्योः 'कसाय', ताप्रतौ 'कसायया' इति पाठः । २ आहारग-तित्थयरं थिरसममुक्कस्स सम(ग)कालं ॥ क. प्र. २–९२. इयमत्र भावना— आहारसप्तकं तीर्थंकरनाम चोत्कृष्टं स्वबन्धकालं यावदापूर्य तत्राहारसप्तकस्य स्वबन्धकाल उत्कृष्टो देशोनां पूर्वकोटीं यावत्संयममनुपालयतो यावानप्रमत्तताकालस्तावान् सर्वो वेदितव्यः । मलय.

३ सम्मदिट्ठिस्स सुभधुवाओ वि । सुभसंघयणजुयाओ बत्तीससयोदहिचियाओ ॥ क. प्र. २–८९. सम्यग्दृष्टेर्या शुभध्रुवबन्धिन्यः पंचेन्द्रियजाति-समचतुरस्रसंस्थान-पराघातोच्छ्वास-प्रशस्तविहायोगति-त्रस-बादर-पर्याप्त-प्रत्येक-सुभग-सुस्वरादेयलक्षणा द्वादशप्रकृतयः शुभसंहननयुता वज्रर्षभनाराचसंहननसहिताः । × × × तथाहि— षट्षष्टिसागरोपमाणि यावत्सम्यक्त्वमनुपालयन् एता बध्नाति । ततोऽन्तर्मुहूर्तं कालं यावत् सम्यग्मिथ्यात्वमनुभूय पुनरपि सम्यक्त्वं प्रतिपद्यते । ततो भूयोऽपि सम्यक्त्वमनुभवन् षट्षष्टिसागरोपमाणि यावदेताः प्रकृतीः बध्नाति । तदेवं द्वात्रिंशदभ्यधिकं सागरोपमशतं यावत् सम्यग्दृष्टिर्भूत्वा आपूर्य, वज्रर्षभनाराचसंहननं तु मनुष्यभवहीनं यथासंभवमुत्कृष्टं कालमापूर्य, ततः सम्यग्दृष्टिर्भूत्वा अपूर्वकरणगुणस्थानके बन्धव्यवच्छेदानन्तर-मावलिकामात्रं कालमतिक्रम्य यशःकीर्तौ संक्रमयतस्तासामुत्कृष्टः प्रदेशसंक्रमः । मलय.

पसत्थाणं धुवबंधिणामाणं[1] सम्मत्तद्धा सव्वरहस्सा कायव्वा, अण्णहा गुणिदत्ता-[2] णुववत्तीदो। चदुक्खुत्तं कसाए उवसामेदूण खवणाए अब्भुट्ठिदो तस्स परभविय-णामबंधवोच्छेदादो आवलियादिक्कंतस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो। एवं थिर-सुभाणं। परघादुस्सास-पसत्थविहायगइ-तस-बादर-पज्जत्त-पत्तेयसरीराणं सुहणामभंगो। जसकित्तीए सुहणामभंगो। णवरि परभवियणामाणं बंधवोच्छेदस्स चरिमसमए उक्कस्सओ पदेस-संकमो कायव्वो।

एइंदिय-आदाव-थावरणामाणं उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स? जो गुणिदकम्मंसिओ ईसाणदेवे पच्छायदो साइं पि अणुवसामिदकसाओ सव्वलहुं खवणाए अब्भुट्ठिदो, तस्स चरिमसमयसंछुहमाणयस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो[3]। उज्जोवणामाए वि ईसाणदेव-पच्छायदे खवगे सव्वसंकमेण संकामेंतए उक्कस्ससामित्तं दादव्वं। किं कारणं? तसजादि-णामाओ बहुआओ पयडीओ बंधदि, एइंदियजादिणामाओ थोवाओ बंधदि। तदो णेरइयो तसजादिणामपडिभागं[4] बंधदि उज्जोवणामं, ईसाणदेवा पुण[5] तं चेव एइंदिय-

---

प्रशस्त ध्रुवबन्धी नामकर्मोंका सम्यक्त्वकाल सबसे ह्रस्व करना चाहिये, क्योंकि, इसके विना गुणितत्व बन नहीं सकता। चार बार कषायोंको उपशमा कर जो क्षपणामें उद्यत होता है उसके परभविक नामकर्मोंकी बन्धव्युच्छित्तिके पश्चात् आवली मात्र कालके बीतनेपर उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। इसी प्रकार स्थिर और शुभ प्रकृतियोंके विषयमें कहना चाहिये।

परघात, उच्छ्वास, प्रशस्त विहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त और प्रत्येकशरीकी प्ररूपणा शुभ नामकर्मके समान है। यशकीर्तिकी भी प्ररूपणा शुभ नामकर्मके समान है। विशेषता इतनी है कि उसका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम परभविक नामोंकी बन्धव्युच्छित्तिके अन्तिम समयमें करना चाहिये।

एकेन्द्रिय, आतप और स्थावर नामकर्मोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो गुणितकर्मांशिक ईशान देव देवपर्यायसे पीछे आकर एक वार भी कषायोंको न उपशमा कर सर्वलघु कालमें क्षपणामें उद्यत होता है उसके निक्षेपण करते हुए अन्तिम समयमें उनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। ईशानकल्पगत देवपर्यायसे पीछे आकर सवसंक्रमके द्वारा उद्योत नामकर्मका संक्रमण करनेवाले क्षपकके उसके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका स्वामित्व देना चाहिये।

शंका—इसका करण क्या है?

समाधान— त्रसजाति नामकर्मोंको बहुत बांधता है और एकेन्द्रियजाति नामकर्मोंको स्तोक बांधता है। इसलिये नारक जीव उद्योत नामकर्मको त्रसजाति नामकमके प्रतिभाग रूप बांधता है, परन्तु ईशान देव उसको ही एकेन्द्रियजाति नामकर्मके प्रतिभाग रूप बांधते हैं।

---

१ प्रतिषु 'धुवबंधविणामाणं' इति पाठः। २ अप्रतौ 'गुणदत्ता-', ताप्रतौ 'गुण (णि) दत्ता-', इति पाठः। ३ थावर-तव्वा-आयावुज्जोयाओ नपुंसगसमाओ। क. प्र. २, ९२. ४ ताप्रतौ 'पयडिभागं' इति पाठः। ५ ताप्रतौ 'बंधदि, उज्जोवणामं ईसाणदेवा, पुण' इति पाठः।

जादिणामपडिभागं बंधदि। एदेण कारणेण ईसाणदेवपच्छायदे उक्कस्ससामित्तं दादव्वं।

अप्पसत्थसंठाण - अप्पसत्थसंघडण - अप्पसत्थवण्ण- गंध-रस-फास - उवघाद-अप्पसत्थविहायगइ-णीचागोद-अथिर - असुह - दूभग-दुस्सर-अणादेज्ज-अजसगित्तीणं उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स? जो णेरइयो गुणिदकम्मंसियो सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदो, सव्वरहस्सेण कालेण खवणाए अब्भुट्ठिदो, तस्स चरिमसमयसुहुमसांपराइयस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो[1]। वेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदिय-सुहुम-अपज्जत्त-साहारणाणं उक्क०[2] कस्स? तिरिक्ख-मणुस्सेसु पुव्वकोडिपुधत्तं वियट्टिदूण कसाए अणुवसामिय सव्वलहुं जो खवेदि, तस्स चरिमसमयसंछोहयस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो। णवरि अपज्जत्तयस्स सुहुमसांपराइय-चरिमसमए।

उच्चागोदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स? जो गुणिदकम्मंसिओ चदुक्खुत्तं[3] कसाए उवसामेऊण मिच्छत्तं गदो, तदो चरिमस्स णीचागोदबंधयस्स पढमसमए रहस्सेण कालेण सिज्झिहिदि त्ति उच्चागोदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो[4]। एवमुक्कस्स-सामित्तं समत्तं

इस कारण ईशानगत देवपर्यायसे पीछे आये हुए जीवके उद्योत नामकर्मके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका स्वामित्व देना चाहिये।

अप्रशस्त संस्थान, अप्रशस्त संहनन, अप्रशस्त वर्ण, गन्ध, रस व स्पर्श, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति, नीचगोत्र, अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय और अयशकीर्ति; इनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो गुणितकर्मांशिक नारकी जीव सातवीं पृथिवीसे निकलकर सर्वलघु कालमें क्षपणामें उद्यत होता है उस अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके उक्त प्रकृतियोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जाति, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण नामकर्मोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो तिर्यंचों और मनुष्योंमें पूर्वकोटिपृथक्त्व तक विचरण करके कषायोंको न उपशमा कर सर्वलघु कालमें क्षपणा करता है उसके संक्रम करते हुए अन्तिम समयमें उनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। विशेष इतना है कि अपर्याप्त नामकर्मका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समयमें होता है।

उच्चगोत्रका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो गुणितकर्मांशिक चार वार कषायोंको उपशमा कर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है, तत्पश्चात् [नीचगोत्रको बांधता हुआ जो नीचगोत्रकी बन्धव्युच्छित्तिके पश्चात्] थोड़े ही कालमें सिद्धिको प्राप्त होनेवाला है उस अन्तिम समयवर्ती नीचगोत्रबन्धकके उक्त अल्प सिद्धिकालके प्रथम समयमें उच्चगोत्रका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। इस प्रकार उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम स्वामित्व समाप्त हुआ।

---

१ कम्मचउक्के असुभाण वज्झमाणीण सुहुम (खवग) रागंते। क. प्र. २, ८०. २ काप्रतौ 'साहारणाणं कुदो उक्क०' इति पाठः। ३ अ-काप्रत्योः 'चदुक्खेत्ते', ताप्रतौ 'चदुक्खे (क्खु)' त्तं इति पाठः।

४ चउरुवसमित्तु मोहं मिच्छत्तगयस्स नीयबंधंतो। उच्चागोउक्कोसो तत्तो लहु सिज्झओ होइ॥ क. प्र. २, ९३. चतुष्कृत्वश्च मोहोपशमः किल भवद्वयेन भवति। ततस्तृतीये भवे मिथ्यात्वं गतः सन् नीचैर्गोत्रं बध्नाति। तच्च बध्नन् तत्रोच्चैर्गोत्रं संक्रमयति। ततः पुनरपि सम्यक्त्वमासाद्योच्चैर्गोत्रं बध्नन् तत्र

एत्तो जहण्णयं पदेससंकमस्स सामित्तं । तं जहा— मदिआवरणस्स जहण्णपदेस-संकामओ को होदि ? जो अभवसिद्धियपाओग्गेण सव्वजहण्णसंतकम्मेण चदुक्खुत्तो कसाए उवसामेदूण संजमासंजमं संजमं च बहुसो लद्धूण उप्पण्णोहिणाणो संतो खवेदि, तस्स चरिमसमयसुहुमसांपराइयस्स जहण्णओ पदेससंकमो । सुद-मणपज्जव-केवल-णाणावरणाणं मदिआवरणभंगो । एवं ओहिणाणावरणस्स वि । णवरि खवेंतस्स ओहि-णाणं णत्थि त्ति वत्तव्वं[1] ।

चक्खु-अचक्खु-केवलदंसणावरणाणं मदिआवरणभंगो । ओहिदंसणावरणस्स ओहि-णाणावरणभंगो[2] । णिद्दा-पयलाणं सुदावरणभंगो । णवरि णिद्दा-पयलाणं जहण्णसंकमो ओहिणाणिस्स चेव होदि त्ति णियमो णत्थि । णिद्दा-पयलाणं बंधवोच्छेदस्स[3] चरिमसमए चेव जहण्णसंकमो दायव्वो[4] । थीणगिद्धितियस्स जहण्णपदेससंकमो कस्स ? जो खविद-

---

अब यहां जघन्य प्रदेशसंक्रमके स्वामित्वकी प्ररूपणा की जाती है । यथा— मतिज्ञाना-वरणका जघन्य प्रदेश संक्रामक कौन होता है ? जो अभव्यसिद्धिक प्रायोग्य सर्वजघन्य सत्कर्मके साथ चार बार कषायोंको उपशमा कर और बहुत बार संयमासंयम एवं संयमको प्राप्त करके उत्पन्न हुए अवधिज्ञानसे संयुक्त होता हुआ क्षपणा करता है उस अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्म-साम्परायिकके मतिज्ञानावरणका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है । श्रुतज्ञानावरण, मनःपर्ययज्ञानावरण और केवलज्ञानावरणकी प्ररूपणा मतिज्ञानावरणके समान है । अवधिज्ञानावरणकी भी प्ररूपणा इसी प्रकार ही है । विशेष इतना है कि क्षपणा करते हुए उसके अवधिज्ञान नहीं होता, यह कहना चाहिये ।

चक्षु, अचक्षु और केवलदर्शनावरणकी प्ररूपणा मतिज्ञानावरणके समान है । अवधिदर्शनावरणकी प्ररूपणा अवधिज्ञानावरणके समान है । निद्रा और प्रचलाकी प्ररूपणा श्रुतज्ञानावरणके समान है । विशेष इतना है कि निद्रा और प्रचलाका जघन्य संक्रम अवधि-ज्ञानीके ही होता है, ऐसा नियम नहीं है । निद्रा और प्रचलाके जघन्य संक्रमको बन्धव्युच्छेदके अन्तिम समयमें ही देना चाहिये । स्त्यानगृद्धित्रयका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता

नीचैर्गोत्रे संक्रमयति । एवं भूयो भूय उच्चैर्गोत्रं नीचैर्गोत्रं च बध्नतो नीचैर्गोत्रबन्धव्यवच्छेदानन्तरं क्षीणमोह-सिद्धिं गन्तुकामस्य नीचैर्गोत्रबन्धचरमसमये उच्चैर्गोत्रस्य गुणसंक्रमणेन कृतेन योगनिर्वाहितस्योत्कृष्टः प्रदेश-संक्रमो भवति । मलयगिरि.

[1] आवरणसव्वगम्मि उ सहोहिणा तं विणोहिजुयलम्मि । क.प्र. २, ९७. [2] अ-काप्रत्योः 'ओहिदंसणावरण-भंगो' इति पाठः । [3] मप्रतिपाठोऽयम् । अ-काप्रत्योः '-वोच्छेदो हस्स', ताप्रतौ '-वोच्छेदे हस्स' इति पाठः ।
[4] निद्दादुगंतराइय-हासचउक्के य बंधंते ॥ क. प्र. २, ९७. निद्राद्विकं निद्रा-प्रचलारूपं, अन्तरायपंचकं हास्यचतुष्कं हास्य-रति-भय-जुगुप्सालक्षणं, एतासामेकादशप्रकृतीनां (११) स्वबन्धान्तसमये यथाप्रवृत्तसंक्रमेण जघन्यः प्रदेशसंक्रमो भवति । निद्राद्विक-हास्यचतुष्टययोर्बन्धव्यवच्छेदानन्तरं गुणसंक्रमेण संक्रमो जायते । ततः प्रभूतं दलिकं लभ्यते । अन्तरायपञ्चकस्य (तु) बन्धव्यवच्छेदानन्तरं संक्रम एव न भवति, पतद्ग्रहाप्राप्तेः, ततो बन्धान्तसमयग्रहणम् । मलय.

कम्मंसियलक्खणेणागंतूण संजमं[1] पडिवण्णो, सव्वजहण्णमंतोमुहुत्तावसेसे संसारे चरिमसमयअधापवत्तकरणो जादो, ताधे तस्स जहण्णगो पदेससंकमो[2]।

सादस्स जहण्णपदेससंकमो कस्स ? जो अभवसिद्धियपाओग्गेण जहण्णेण संतकम्मेण कसाए अणुवसामेदूण खवेदि, तस्स जाधे चरिमो असादबंधो तस्स बंधस्स चरिमसमए सादस्स जहण्णओ पदेससंकमो[3]। असादस्स जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ? जो जहण्णेण संतकम्मेण चदुक्खुत्तो कसाए उवसामेयूण खवेदि, तस्स अधापवत्तकरणचरिमसमयम्हि जहण्णगो पदेससंकमो[4]।

मिच्छत्तस्स जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ? जो जहण्णेण संतकम्मेण बेछावट्ठीओ सम्मत्तमणुपालेयूण, चदुक्खुत्तो कसाए उवसामिय, संजमं संजमासंजमं च बहुसो लद्धूण, सव्वमहंतिं सम्मत्तद्धमणुपालेदूण अंतोमुहुत्तेण सिज्झिहिदि त्ति दंसणमोहणीयं खवेदि, तदो दंसणमोहक्खवगअधापवत्तकरणस्स चरिमसमए जहण्णओ पदेससंकमो[5]। सम्मत्त-

है ? जो क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकर संयमको प्राप्त हो सर्वजघन्य अन्तर्मुहूर्त मात्र संसारके शेष रहनेपर अन्तिम समयवर्ती अधःप्रवृत्तकरण हुआ है उसके उस समय स्त्यानगृद्धित्रयका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है।

सातावेदनीयका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो अभव्यसिद्धिक प्रायोग्य जघन्य सत्कर्मके साथ कषायोंको न उपशमा कर क्षय करता है, उसके जब असातावेदनीयका अन्तिम बन्ध होता है तब उस बन्धके अन्तिम समयमें सातावेदनीयका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है। असातावेदनीयका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो जघन्य सत्कर्मके साथ चार वार कषायोंको उपशमा कर क्षय करता है उसके अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें असातावेदनीयका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है।

मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो जघन्य सत्कर्मके साथ दो छयासठ सागरोपम तक सम्यक्त्वका पालन कर, चार वार कषायोंको उपशमा कर, संयम और संयमासंयमको बहुत वार प्राप्त कर, तथा सबसे महान् सम्यक्त्वकालका पालन करके अन्तर्मुहूर्त कालमें सिद्ध होनेवाला है, इसीलिये जो दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करता है, उस दर्शनमोहक्षपकके अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है। सम्यक्त्व और

१ अ-काप्रत्योः 'गंतूण णा संजमं', ताप्रतौ 'गंतूण [णा] संजमं' इति पाठः।

२ अयरछावट्ठिदुगं गालिय थीवेय-थीणगिद्धितिगे। सगखवणहापवत्तस्संत (ते)×××॥ २, ९९.

३ सायस्स णुवसमित्ता असायबंधाण चरिमबंधंते। क. प्र. २, ९८.

४ अट्ठकसायासाए य असुभधुवबंधि अत्थिरतिगे य। सव्वलहुं खवणाए अहापवत्तस्स चरिमम्मि॥ क. प्र. २, १०२.

५ मिच्छत्तस्स जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ? खविदकम्मंसिओ एइंदियकम्मेण जहण्णएण मणुसेसु आगदो सव्वलहुं चेव सम्मत्तं पडिवण्णो संजमं संजमासंजमं च बहुसो लभिदाउगो चत्तारिवारे कसाए उवसामित्ता बे छावट्ठि-सागरोवमाणि सादिरेयाणि सम्मत्तमणुपालिदं। तदो मिच्छत्तं गदो अंतोमुहुत्तेण पुणो तेण सम्मत्तं लद्धं। पुणो सागरोवमपुधत्तं सम्मत्तमणुपालिदं। तदो दंसणमोहणीयक्खवणाए अब्भुट्ठिदो। तस्स चरिमसमयअधापवत्तकरणस्स मिच्छत्तस्स जहण्णओ पदेससंकमो। क. पा. सु. पृ. ४०५, ४८-४९. 'एमेव मिच्छत्त इति' एवमेव

सम्मामिच्छत्ताणं जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ? जेण जहण्णेण मिच्छत्तसंतकम्मेण सम्मत्तमुप्पाइदं, जहण्णेण गुणसंकमेण जहण्णपूरणकालेण च सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि पूरिदाणि, तदो बे-छावट्ठीयो सम्मत्तमणुपालेदूण मिच्छत्तं गदो, सव्वमहंतेण उव्वेल्लण-कालेण उव्वेल्लेदि, तदो दुचरिमस्स उव्वेल्लणखंडयस्स चरिमसमए सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जहण्णओ पदेससंकमो[1] ।

अणंताणुबंधीणं जहण्णगो पदेससंकमो कस्स ? अभवसिद्धियपाओग्गेण जहण्णेण संतकम्मेण चदुक्खुत्तो कसाए उवसामेदूण तदो अणंताणुबंधिविसंजोइदं संजोइदं कादूण[2] सव्वमहंतिं सम्मत्तद्धमणुपालेदूण तदो विसंजोयणं गदो, विसंजोयणाए अधापवत्तकरणस्स चरिमसमए अणंताणुबंधीणं जहण्णओ पदेससंकमो[3] । अट्ठण्णं कसायाणं जहण्णओ

सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जिसने मिथ्यात्वके जघन्य सत्कर्मके साथ सम्यक्त्वको उत्पन्न कर लिया है तथा जघन्य गुणसंक्रम और जघन्य पूरणकालके द्वारा सम्यक्त्व एवं सम्यग्मिथ्यात्वको [मिथ्यात्वके प्रदेशाग्रसे] पूर्ण किया है, तत्पश्चात् जो दो छयासठ सागरोपम काल तक सम्यक्त्वका परिपालन करके मिथ्यात्वको प्राप्त होता हुआ सबसे महान् उद्वेलनकालके द्वारा उद्वेलना करता है उसके द्विचरम उद्वेलनकाण्डकके अन्तिम समयमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है ।

अनन्तानुबन्धी कषायोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? अभव्यसिद्धिक प्रायोग्य जघन्य सत्कर्मके साथ चार वार कषायोंको उपशमा कर तत्पश्चात् [मिथ्यात्वको प्राप्त होकर अल्प काल तक विसंयोजित] अनन्तानुबन्धीको संयोजित करके जो सबसे महान् सम्यक्त्वकालका पालन करते हुए विसंयोजनको प्राप्त हुआ है, उसके विसंयोजन करते हुए अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें अनन्तानुबन्धी कषायोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है । आठ कषायोंका जघन्य

पूर्वोक्तप्रकारेण मिथ्यात्वस्य जघन्यप्रदेशसंक्रमोऽवगन्तव्यः । तद्यथा— द्वे षट्षष्टी सागरोवमाणां यावत्सम्यक्त्व-मनुपाल्य तावन्तं कालं मिथ्यात्वं गालयित्वा किंचिच्छेषस्य मिथ्यात्वस्य क्षपणाय समुद्यतस्य स्वकीययथाप्रवृत्त-करणान्तसमये वर्तमानस्य विध्यातसंक्रमेण मित्थात्वस्य जघन्यः प्रदेशसंक्रमो भवति, परतो गुणसंक्रमः प्रवर्तते, तेन स न प्राप्यते । क. प्र. (मलय.) २, ९९.

१ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ? एसो चेव जीवो मिच्छत्तं गदो । तदो पलिदो-वमस्स असंखेज्जदिभागं गंतूण अप्पप्पणो दुचरिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयउव्वेल्लमाणयस्स जघण्णओ पदेससंकमो । क. पा. सु. पृ. ४०७, ४९–५० हस्सगुणसंकमद्धाए पूरयित्ता समीस-सम्मत्तं । चिरसंमत्ता मिच्छत्तगयस्सुव्वलण-थोगो सिं ॥ क. प्र. २, १००.

२ ताप्रतौ 'अणंताणुबंधिविसंजोइदं कादूण' इति पाठः ।

३ अणंताणुबंधीणं जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ? एइंदियकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगदो । संजमं संजमा-संजमं च बहुसो लद्धूण चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता तदो एइंदिएसु पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमच्छिद ज्जाव उवसामयसमयपबद्धा णिग्गलिदा त्ति । तदो पुणो तसेसु आगदो सव्वलहुं सम्मत्तं लद्धं अणंताणुबंधिणो च

पदेससंकमो कस्स ? जो जहण्णसंतकम्मेण चदुक्खुत्ते कसाए उवसामेयूण खवेदि, तदो खवणाए अधापवत्तकरणस्स चरिमसमए वट्टमाणस्स तेसिं जहण्णओ पदेससंकमो[1]।

एवमरदि-सोगाणं[2]। हस्स-रदि-भय-दुगुंछाणं पि एवं चेव। णवरि आवलियअपुव्वकरणस्स[3]। तिण्णिसंजलण-पुरिसवेदाणं जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ? उवसामयस्स अपच्छिमसमयपबद्धं घोलमाणजहण्णजोगेण बद्धं अपच्छिमसंकामयंतस्स जहण्णओ पदेससंकमो[4]। [लोहसंजलणाए[5] जहण्णओ पदेससंकमो] कस्स ? जो जहण्णएण संतकम्मेण कसाए अणुवसामेयूण खवेदि तस्स अपुव्वकरणस्स आवलियपविट्ठस्स लोभसंजलणाए

प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो जघन्य सत्कर्मके साथ चार बार कषायोंको उपशमा कर क्षपणा करता है और तत्पश्चात् क्षपणा करते हुए जो अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें वर्तमान है उसके उनका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है।

इसी प्रकार अरति और शोकके जघन्य प्रदेशसंक्रमका कथन करना चाहिये। हास्य, रति, भय और जुगुप्साके भी जघन्य प्रदेशसंक्रमकी प्ररूपणा इसी प्रकार करना चाहिये। विशेष इतना है कि इनका जघन्य प्रदेशसंक्रम आवली कालवर्ती अपूर्वकरणके होता है। तीन संज्वलन और पुरुषवेदका जघन्य प्रदेसंक्रम किसके होता है ? जो घोलमान जघन्य योगके द्वारा बांधे गये अन्तिम समयप्रबद्धका संक्रम कर रहा है ऐसे उपशामक जीवके संक्रमके अन्तिम समयमें उन चार प्रकृतियोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है। [संज्वलन लोभका जघन्य प्रदेशसंक्रम] किसके होता है ? जो जघन्य सत्कर्मके साथ कषायोंका उपशम न करके क्षय करता है उस आवली

विसंजोइदा। पुणो मिच्छत्तं गंतूण अंतोमुहुत्तं संजोएदूण पुणो तेण सम्मत्तं लद्धं। तदो सागरोवमवेछावट्ठीओ अणुपालिदं। तदो विसंजोएदुमाढत्तो। तस्स अधापवत्तकरणचरिमसमए अणंताणुबंधीणं जहण्णओ पदेससंकमो। क. पा. सु. पृ. ४०७, ५१-५२. संजोयणाण चतुरुवसमित्तु संजोजइत्तु अप्पद्धं। अयरच्छावट्ठिदुगं पालिय सकहप्पवत्तंते ॥ क. प्र. २, १०१.

१ अट्ठण्हं कसायाणं जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ? एइंदियकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगदो संजमासंजमं संजमं च बहुसो गदो। चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता तदो एइंदिएसु गदो। असंखेज्जाणि वस्साणि अच्छिदो जाव उवसामयसमयपबद्धा णिग्गलंति। तदो तसेसु आगदो संजमं संव्वलहुं लद्धो। पुणो कसायक्खवणाए उवट्ठिदो। तस्स अधापवत्तकरणस्स चरिमसमए अट्ठण्हं कसायाणं जहण्णओ पदेससंकमो। क. पा. सु. पृ. ४०८, ५३-५४. अट्ठकसायासाए य असुमधुवबंधि अथिरतिगे य। सव्वलहुं खवणाए अहापवत्तस्स चरिमम्मि ॥ क. प्र. २, १०२.

२ असाएण समा अरई य सोगो य ॥ क. प्र. २, १०३.

३ हस्स-रइ-भय-दुगुंछाणं पि एवं चेव, णवरि अपुव्वकरणस्सावलियपविट्ठस्स। क. पा. सु. पृ. ४०७, ५६.

४ कोहसंजलणस्स जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ? उवसामयस्स चरिमसमयपबद्धो जाधे उवसामिज्जमाणो उवसंतो ताधे तस्स कोहसंजलणस्स जहण्णओ पदेससंकमो। एवं माण-मायासंजलण-पुरिसवेदाणं। क. पा. सु. पृ. ४०८, ५७-५९. पुरिसे संजलणतिगे य घोलमाणेण चरमबद्धस्स। सगअंतिमे × × × ॥ क. प्र. २, १०३.

५ ताप्रतौ 'बद्धं अपच्छिमसंकामयंतस्स। [लोभसंजलणाए' इति पाठः।

जहण्णओ पदेससंकमो[1] ।

इत्थिवेदस्स जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ? जो जहण्णसंतकम्मेण वे-छावट्ठीओ सम्मत्तमणुपालिय चदुक्खुत्तो कसाए उवसामिय तदो खवेंतस्स अधापवत्तकरणस्स चरिमसमए इत्थिवेदस्स जहण्णओ पदेससंकमो[2] । णवुंसयवेदस्स इत्थिवेदभंगो । णवरि पुव्वं चेव तिपलिदोवमिएसु उप्पाइय अवसाणे सम्मत्तं घेत्तूण वे-छावट्ठीयो[3] हिंडावेयव्वो[4] ।

आउआणं णत्थि संकमो । णिरयगइणामाए जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ? जो उव्वेल्लिदेण कम्मेण अंतोमुहुत्तं संजोएदूण सत्तमपुढविं गदो, तदो उव्वट्टिदो[5] संतो अणंताणुवंधीणं एत्तदो (?) तदो एइंदिएसु जीवेसु महंतेण[6] उव्वेल्लणकालेण उव्वेल्लमाणस्स जं दुचरिमट्ठिदिखंडयं तस्स चरिमसमए णिरयगइणामाए जहण्णओ पदेससंकमो[7] । देवगईए णिरयगइभंगो ।

कालवर्ती अपूर्वकरणके संज्वलन लोभका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है ।

स्त्रीवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो जघन्य सत्कर्मके साथ दो छ्यासठ सागरोपम काल तक सम्यक्त्वको पालकर और चार वार कषायोंको उपशमा कर फिर क्षय करनेमें प्रवृत्त होता है उसके अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें स्त्रीवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है । नपुंसकवेदकी प्ररूपणा स्त्रीवेदके समान है । विशेष इतना है कि पहिले ही तीन पल्योपम आयुवालोंमें उत्पन्न कराकर अन्तमें सम्यक्त्वको ग्रहण करके दो छ्यासठ सगरोपम तक घुमाना चाहिये ।

आयु कर्मोंका संक्रम नहीं होता । नरकगति नामकर्मका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो उद्वेलित कर्मके साथ अन्तर्मुहूर्त काल संयुक्त होकर सातवीं पृथिवीको प्राप्त हुआ है, तत्पश्चात् वहांसे निकलकर [पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंमें उत्पन्न हो अल्प काल उसका बन्ध करके] फिर एकेन्द्रिय जीवोंमें महान् उद्वेलनकाल द्वारा उद्वेलना कर रहा है उसका जो द्विचरम स्थितिकाण्डक है उसके अन्तिम समयमें नरकगति नामकर्मका जघन्य प्रवेशसंक्रम होता है । देवगति नामकर्मकी प्ररूपणा नरकगतिके समान है ।

---

१ लोहसंजणस्स जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ? एइंदियकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगदो संजमासंजमं संजमं च वहुसो लद्धूण कसाएसु किं पि णो उवसामेदि । दीहं संजमद्धमणुपालिदूण खवणाए अब्भुट्ठिदो तस्स अपुव्वकरणस्स आवलियपविट्ठस्स लोहसंजलणस्स जहण्णओ पदेससंकमो । क. पा. सु. पृ. ४०९, ६०-६१. खवणाए लोभस्स वि अपुव्वकरणालिगाअंते ॥ क. प्र. २, ९८. २ क. पा. सु. पृ. ४१०, ६४.

३ अप्रतौ 'वेछावट्ठिं', काप्रतौ 'वेछावट्ठि' इति पाठः । ४ क. पा. सु. पृ. ४०९, ६२-६३.

५ अप्रतौ 'उवट्ठिदो', काप्रतौ 'उव्वेल्लिदो' इति पाठः । ६ अप्रतौ 'जीवेसु हत्तेण', काप्रतौ 'जीवेसु सुहत्तेण', ताप्रतौ 'जीवेसु हत्तेण (महंतेण)' इति पाठः ।

७ वेउव्वि(व्वे)क्कारसगं उव्वलियं बंधिऊण अप्पद्धं । जिट्ठठिई निरयाओ उव्वट्टित्ता अबंधित्तु ॥ थावरगयस्स चिरउव्वलणे(णे) × × × क. प्र. २, १०४-५. वेउव्वित्ति– देवद्विक-नरकद्विक-वैक्रियिकसप्तकलक्षणं वैक्रियैकादशकं एकेन्द्रियभवे उद्वर्तमानेनोद्वलितं पुनरपि पंचेन्द्रियत्वमुपागतेन सतात्पाद्धमल्पकालं अन्तर्मुहूर्तकालं

मणुसगइणामाए जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ? जो तेउकाइओ वाउकाइओ वा उव्वेल्लिदमणुसगइणामकम्मो जहण्णेण कम्मेण तेउ-वाउवज्जेसु सुहुमेसु खुद्दाभव-ग्गहणमच्छिऊण संजुत्तो, पुणो तेउजीवे वा वाउजीवे वा गदो तस्स सव्वमहंतेण उव्वेलण-कालेण मणुसगइं उव्वेल्लमाणस्स जं दुचरिमुव्वेल्लणखंडयं तस्स चरिमसमए जहण्णओ पदेससंकमो[1] ।

तिरिक्खगइ-उज्जोवणामाणं जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ? जो जहण्णएण संत-कम्मेण मणुसगइं गदो, तिपलिदोवमिएसु उववण्णो, अंतोमुहुत्ते सेसे सम्मत्तं लद्धूण पलिदोवमिओ देवो जादो, तदो अपरिवडिदेण सम्मत्तेण मणुसगदिं गदो, पुणो वि अपरिवडिदेण एक्कत्तीससागरोवमिओ देवो जादो, अंतोमुहुत्तुववण्णो मिच्छत्तं गदो, तदो तस्स देवभवस्स अंतोमुहुत्तसेसे सम्मत्तं लद्धं, तदो वे-छावट्ठिसेसा सम्मत्तमणुपालिय,

---

मनुष्यगति नामकर्मका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? मनुष्यगति नामकर्मकी उद्वेलना करनेवाला जो तेजकायिक अथवा वायुकायिक जीव जघन्य कर्मके साथ तेजकायिक और वायुकायिकको छोड़कर शेष सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंमें क्षुद्रभवग्रहण काल रहकर उसको बांधता है, फिर तेजकायिक अथवा वायुकायिक जीवोंमें जाकर सबसे महान् उद्वेलनकालके द्वारा मनुष्य-गतिकी उद्वेलना कर रहा है, उसका जो द्विचरम उद्वेलनकाण्डक है उसके अन्तिम समयमें उसका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है ।

तिर्यंचगति और उद्योत नामकर्मका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो जघन्य सत्कर्मके साथ मनुष्यगतिको प्राप्त होकर तीन पल्योपम प्रमाण आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ है, वहां अन्तर्मुहूर्त आयुके शेष रहनेपर सम्यक्त्वको प्राप्त कर पल्योपम प्रमाण आयुवाला देव हुआ, तत्पश्चात् अप्रतिपतित सम्यक्त्वके साथ मनुष्यगतिको प्राप्त हुआ, फिरसे भी अप्रतिपतित सम्यक्त्वके साथ इकतीस सागरोपम प्रमाण आयुवाला देव हुआ, वहां उत्पन्न होनेके पश्चात् अन्तर्मुहूर्तमें मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ, पश्चात् उस देवभवके अन्तर्मुहूर्त शेष रहनेपर सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ, पश्चात् जो शेष दो छयासठ सागरोपम तक सम्यक्त्वका परिपालन करके चार

यावदित्यर्थः । वध्वा, ततो ज्येष्ठस्थितिरुत्कृष्टस्थितिस्त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमस्थितिक इत्यर्थः । सप्तमनरकपृथिव्यां नारको जातः । ततस्तावन्तं कालं यावत् यथायोगं तद्वैक्रियैकादशकमनुभूय ततो नरकादुद्धृत्य पंचेन्द्रिय-तिर्यक्षु मध्ये समुत्पन्नः । तत्र च तद्वैक्रियकदशकमवध्वा स्थावरेष्वेकेन्द्रियेषु मध्ये समुत्पन्नः । तस्य चिरोद्वलनया पल्योपमासंख्येयभागमात्रेण कालेनोद्वलनया तदुद्वलयतो यत् द्विचरमखण्डस्य चरमसमये प्रकृत्यन्तरे दलिकं संक्रामति, स तस्य वैक्रियैकादशकस्य जघन्यः प्रदेशसंक्रमः । मलय.

१ ××× एयस्स एव उच्चस्स । मणुयदुगस्स य तेउसु वाउसु वा सुहुमबद्धाणं ॥ क. प्र. २, १०५. ××× इयमत्र भावना— मनुजद्विकमुच्चैर्गोत्रं च प्रथमतस्तेजोवायुभवे वर्तमानेननोद्वलितम्, पुनरपि सूक्ष्मैकेन्द्रियभवमुपागतेनान्तर्मुहूर्तं यावद् बद्धम्, ततः पंचेन्द्रियभवं गत्वा सप्तमनरकपृथिव्यामुत्कृष्टस्थितिको नारको जातः । तत उद्धृत्य पंचेद्रियतिर्यक्षु मध्ये समुत्पन्नः । एतावन्तं च कालमवध्वा प्रदेशसंक्रमेण चानुभूय तेजोवायुषु मध्ये समागतः । तस्य मनुजद्विकोच्चैर्गोत्रे चिरोद्वलनयोद्वलयतो द्विचरमखण्डस्य चरमसमये परप्रकृतौ यद्दलं संक्रामति स तयोर्जघन्यः प्रदेशसंक्रमः । मलय.

चदुक्खुत्तो कसाए उवसामिय, तिस्से उक्कस्सियाए सम्मत्तद्धाए अंतोमुहुत्ते सेसे खवणाए अब्भुट्ठिदो, तदो अधापवत्तकरणस्स चरिमसमए तिरिक्खगइ-उज्जोवणामाणं जहण्णओ पदेससंकमो[1]।

जहा गईणं तहा तासिमाणुपुव्वीणं पि वत्तव्वं। वेउव्वियसरीर-वेउव्वियसरीर-अंगोवंग-बंधण-संघादाणं णिरयगइभंगो। आहारसरीर-आहारसरीरंगोवंग-बंधण-संघादाणं जहण्णपदेससंकमो कस्स? जो अभवसिद्धियपाओग्गाणं जहण्णेण कम्मेण पढमदाए जहण्णियं संजमद्धमणुपालेयूण मिच्छत्तं गदो, तदो तस्स उक्कस्सउव्वेलणकालस्स जं दुचरिमसुव्वेल्लणखंडयं तस्स चरिमसमए तेसिं[2] जहण्णओ पदेससंकमो[3]।

ओरालियसरीर-ओरालियसरीरंगोवंग-बंधण-संघादाणं जहण्णओ पदेससंकमो कस्स? जो जहण्णएण कम्मेण तिपलिदोवमिएसु मणुस-तिरिक्खेसु उववण्णो तस्स चरिम-

---

चार कषायोंको उपशमा कर उस उत्कृष्ट सम्यक्त्वकालमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहनेपर क्षपणामें उद्यत हुआ है, उसके अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें तिर्यंचगति और उद्योत नामकर्मका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है।

जैसे गतियोंके जघन्य प्रदेशसंक्रमकी प्ररूपणा की गयी है वैसे ही उनकी आनुपूर्वियोंकी भी प्ररूपणा करना चाहिये। वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकशरीरांगोपांग, वैक्रियिकबन्धन और वैक्रियिक-संघातकी प्ररूपणा नरकगतिके समान है। आहारकशरीर, आहारकशरीरांगोपांग, आहारक-बन्धन और आहारकसंघातका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो अभव्यसिद्धिक प्रायोग्य उक्त प्रकृतियोंके जघन्य सत्कर्मके साथ प्रथमतः जघन्य संयमकालका पालन कर फिर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है, उसके उत्कृष्ट उद्वेलनकालका जो द्विचरम उद्वेलनकाण्डक है उसके चरम समयमें उक्त प्रकृतियोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है।

औदारिकशरीर, औदारिकशरीरांगोपांग, औदारिकबन्धन और औदारिकसंघातका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो जघन्य सत्कर्मके साथ तीन पल्योपम आयुवाले

---

१ तेवट्ठिसयं उदहीणं स चउपल्लाहियं अबंधित्ता। अंते अहप्पवत्तकरणस्स उज्जोव-तिरियदुगे ॥ क. प्र. २,१०७. × × × कथं त्रिषष्ट्यधिकं सागरोपमाणं शतं चतुःपल्याधिकं च यावद् बध्नेति चेदुच्यते– स क्षपितकर्मांशस्त्रिपल्योपमायुष्केषु मनुजेषु मध्ये समुत्पन्नस्तत्र देवद्विकमेव बध्नाति, न तिर्यद्विकं नाप्युद्योतम्। तत्र चान्तर्मुहूर्ते शेषे सत्यायुषि सम्यक्त्वमवाप्य ततोऽप्रतिपतितसम्यक्त्व एव पल्योपमस्थितिको देवो जातः। ततोऽप्यप्रतिपतितसम्यक्त्वो देवभवाच्च्युत्वा मनुष्येषु मध्ये समुत्पन्नः। ततस्तेनैवाप्रतिपतितेन सम्यक्त्वेन सहित एकत्रिंशत्सागरोपमस्थितिको ग्रैवेयकेषु मध्ये देवो जातः। तत्र चोत्पत्त्यनन्तरमन्तर्मुहूर्तादूर्ध्वं मिथ्यात्वं गतः। ततोऽन्तर्मुहूर्तावशेषे आयुषि पुनरपि सम्यक्त्वं लभते। ततो द्वे षट्षष्टी सागरोपमाणां यावन्मनुष्यानुत्तर-सुरादिषु सम्यक्त्वमनुपाल्य तस्याः सम्यक्त्वाद्धाया अन्तर्मुहूर्ते शेषे शीघ्रमेव क्षपणाय समुद्यतः। ततोऽनेन विधिना त्रिषष्ट्यधिकं सागरोपमाणां शतं चतुष्पल्याधिकं च यावत्तिर्यग्द्विकमुद्योतं च बन्धरहितं भवतीति। मलय. २ काप्रतौ 'जेसिं' इति पाठः। ३ हस्सं कालं बंधिय विरओ आहारसत्तगं गतुं। अविरइ महुव्वलंतस्स जा थोव उव्वलणा ॥ क. प्र. २, १०६.

समयतब्भवत्थस्स एदासिं पयडीणं जहण्णओ पदेससंकमो[1] ।

तेजा-कम्मइयसरीर-तब्बंधण[2]-संघाद-पसत्थवण्ण-गंध-रस-फास-अगुरुअलहुअ-परघाद-उवघाद पसत्थविहायगइ-तस-बादर-पज्जत्त-पत्तेयसरीर-थिर-सुभ-सुभग-सुस्सर-आदेज्ज-जसकित्ति-णिमिणणामाणं जहण्णओ पदेससंकमो कस्स[3] ? जो कसाए अणुवसामेदूण[4] सेसेहि पयारेहि जहण्णयं संतकम्मं कादूण तदो खवणाए अब्भुट्ठिदो तस्स आवलिय-अपुव्वकरणस्स एदासिं पयडीणं जहण्णओ पदेससंकमो[5] ।

पसत्थसंठाण-संघडणाणं कम्मइयभंगो । अप्पसत्थवण्ण-गंध-रस-फास-उवघाद-अथिर-असुह-अजसकित्तीणं जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ? जो[6] जहण्णेण कम्मेण चदुक्खुत्ते कसाए उवसामेयूण गुणसेडीहि गालिय सव्वलहुं खवणाए अब्भुट्ठिदो तस्स चरिमसमयअधापवत्तकरणे वट्टमाणस्स जहण्णओ पदेससंकमो । अप्पसत्थसव्वसंठाण-संघडणाणं अप्पसत्थविहायगइ-दूभग-दुस्सर-अणादेज्ज-णीचागोदाणं णवुंसयवेदभंगो[7] । आदाव-थावर-सुहुम-अपज्जत्त-साहारणसरीराणं तिरिक्खगइभंगो । णवरि छट्ठीए पुढवीए

मनुष्यों या तिर्यंचोंमें उत्पन्न हुआ है उसके तद्भवस्थ होनेके अन्तिम समयमें इन प्रकृतियोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है ।

तैजस व कार्मण शरीर तथा उनके बन्धन व संघात, प्रशस्त वर्ण गन्ध रस व स्पर्श, अगुरुलघु, परघात, उपघात, प्रशस्त विहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, स्थिर, शुभ सुभग, सुस्वर, आदेय, यशकीर्ति और निर्माण नामकर्मोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो कषायोंका उपशम न करके शेष प्रकारों द्वारा जघन्य सत्कर्म करके तत्पश्चात् क्षपणामें उद्यत हुआ है; उस आवली कालवर्ती अपूर्वकरणके इन प्रकृतियोंका जघन्य प्रदेश-संक्रम होता है ।

प्रशस्त संस्थान और प्रशस्त संहननकी प्ररूपणा कार्मणशरीरके समान है । अप्रशस्त वर्ण, गन्ध, रस व स्पर्श, उपघात, अस्थिर, अशुभ और अयशकीर्तिका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो जघन्य सत्कर्मके साथ चार वार कषायोंको उपशमा करके गुणश्रेणियोंके द्वारा गलाकर सर्वलघु कालमें क्षपणामें उद्यत हुआ है, उसके अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें वर्तमान होनेपर उक्त प्रकृतियोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है । अप्रशस्त सब संस्थानों और संहननोंका तथा अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय और नीचगोत्रकी प्ररूपणा नपुंसक-वेदके समान है । आतप, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणशरीरकी प्ररूपणा तिर्यंचगतिके

---

१ नर-तिरियाण तिपल्लस्संते ओरालियस्स पाउग्गा । क. प्र. २, १११. २ काप्रतौ 'सरीर-बंधण', ताप्रतौ 'सरीर २-बंधण' इति पाठः । ३ 'अ-काप्रत्योर्नोपलभ्यते पदमिदम् । ४ अप्रतौ उवसामेदूण' इति पाठः । ५ छत्तीसाए सुभाणं सेढिमणारुहिय सेसगविहीहिं । कट्टु जहन्नं खवणं अपुव्वकरणालिया अंते ॥ क. प्र. २, १०९. ६ अ-काप्रत्योः 'जे' इति पाठः । ७ सम्मद्दिट्ठिअजोग्गाण सोलसण्हं पि असुभपगईणं । थीवेएण सरिसगं नवरं पढमं तिपल्लेसु ॥ क. प्र. २, ११०,

अंते सम्मत्तं घेत्तूण सम्मत्तेण सह णिग्गदो, पुणो सव्वं पि पंचासीदिसागरोवमसदं पूरेदव्वं। एसो तिरिक्खगदीदो एदासिं विसेसो[1]। विगलिंदियजादिणामाणं साहारणसरीरभंगो।

उच्चागोदस्स मणुसगइभंगो। तित्थयरणामाए जहण्णओ पदेससंकमो कस्स? जहण्णएण कम्मेण पढमदाए जहण्णजोगेण जो बद्धो समयपबद्धो तमावलियादीदं संकामेंतस्स जहण्णओ पदेससंकमो, चरिमसमयमिच्छाइट्ठिस्स वा विज्झादेण जहण्णसंकमो[2]। एवं सामित्तं समत्तं।

समान है। विशेषता इतनी है कि छठी पृथिवीमें अन्तमें सम्यक्त्वको ग्रहण करके और सम्यक्त्वके साथ निकलकर फिर सभीको एक सौ पचासी सागरोपम तक पूरा करना चाहिये। यह इन प्रकृतियोंके तिर्यंचगतिसे विशेषता है।

विशेषार्थ— तिर्यंचगतिके जघन्य प्रदेशसंक्रमकी प्ररूपणामें १६३ सागरोपम और ४ पल्योपम तक उसके बन्धका अभाव निर्दिष्ट किया गया है। परन्तु इन आतप आदि प्रकृतियोंके बन्धका अभाव १८५ सागरोपम और ४ पल्य तक रहता है। वह इस प्रकारसे— कोई क्षपितकर्मांशिक जीव छठी पृथिवीमें २२ सागरोपम आयुवाला नारकी उत्पन्न हुआ। वहां वह आयुमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहनेपर सम्यक्त्वको प्राप्त होकर उस अविनष्ट सम्यक्त्वके साथ मनुष्य होता है और वहांपर सम्यक्त्वके साथ संयमासंयमको पालकर फिर सौधर्म स्वर्गमें चार पल्योपम आयुवाला देव उत्पन्न होता है। वहां भी अविनष्ट सम्यक्त्वके साथ देवभवसे च्युत होकर मनुष्य भवको प्राप्त होता हुआ यहां संयमको पालता है और तब मृत्युको प्राप्त हो ग्रैवेयकोंमें ३१ सागरोपम प्रमाण आयुवाला देव उत्पन्न होता है। यहां उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त पश्चात् वह मिथ्यात्वको प्राप्त होकर आयुमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहनेपर पुनः सम्यक्त्वको प्राप्त कर लेता है। तत्पश्चात् दो छ्यासठ (१३२) सागरोपम काल तक सम्यक्त्वको पालकर और चार वार कषायोंको उपशमा कर इस उत्कृष्ट सम्यक्त्वकालमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहनेपर क्षपणामें उद्यत होता है। उस समय अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें उसके उपर्युक्त आतप आदि प्रकृतियोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है। इस प्रकार सौधर्म देवकी आयुके ४ पल्योपमोंके साथ १८५ (२२ + ३१ + १३२) सागरोपम काल तक इन प्रकृतियोंके बन्धका अभाव रहता है जब कि तिर्यंचगतिके बन्धका अभाव ४ पल्योपमोंसे अधिक १६३ सागरोपम काल तक ही रहता है। यही उससे इन प्रकृतियोंके जघन्य प्रदेशसंक्रममें विशेषता है।

विकलेन्द्रिय जाति नामकर्मोंकी प्ररूपणा साधारणशरीर नामकर्मके समान है।

उच्चगोत्रकी प्ररूपणा मनुष्यगतिके समान है। तीर्थंकर नामकर्मका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जघन्य सत्कर्मके साथ प्रथमतया जघन्य योगके द्वारा जो समयप्रबद्ध बांधा गया है बन्धावलीके पश्चात् उसका संक्रम करनेवालेके तीर्थंकर प्रकृतिका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है। अथवा, अन्तिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके विध्यातसंक्रमके द्वारा उसका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है। इस प्रकार स्वामित्वकी प्ररूपणा समाप्त हुई।

---

१ इग-विगलिंदियजोग्गा अट्ठ पज्जत्तगेण सह ते(ता)सिं। तिरियगइसमं नवरं पंचासीउदहिसयं तु ॥ क. प्र. २, १०८. २ तित्थयरस्स य बंधा जहन्नओ आलिगं गंतु ॥ क. प्र. २, १११.

मदिआवरणस्स उक्कस्सपदेससंकामओ केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ । अणुक्कस्सपदेससंकमो केवचिरं० ? जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० अणंतकालं । चदुणाणावरण-चदुदंसणावरण-पंचंतराइयाणं मदिआवरणभंगो ।

सव्वकम्माणं पि उक्कस्सपदेससंकमस्स जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ । अणुक्कस्सपदेस-संकमस्स कालो पंचण्णं दंसणावरणीयाणं अणादिओ अपज्जवसिदो, अणादिओ सपज्ज-वसिदो, सादिओ सपज्जवसिदो वा । जो सो सादिओ सपज्जवसिदो सो जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । सादासादाणमणुक्कस्सपदेससंकमो केवचिरं० ? जहण्णेण एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं । मिच्छत्तस्स जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० छावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि । सम्मामिच्छत्तस्स जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० बे-छावट्ठिसागरोवमाणि पलिदोवमस्स असंखे० भागेण सादिरेयाणि । सम्मत्तस्स जहण्णेण अंतोमुहुत्तं, उक्क० पलिदो० असंखे० भागो । अणंताणुबंधीणं अणादियो अपज्जवसिदो, अणादियो सपज्ज-वसिदो, सादियो सपज्जवसिदो वा । जो सो सादिओ सपज्जवसिदो तस्स जहण्णेण अंतोमुहुत्तं, उक्क०उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । सेसाणं चरित्तमोहणीयपयडीणमणंताणुबंधिभंगो ।

सादियसंतकम्माणं णामपयडीणं जह० उक्क० जच्चिरं पयडिसंकमकालो तच्चिरं अणुक्कस्सपदेससंकमकालो । अणादियसंतकम्मियासु पयडीसु जासिं पयडीणं भवसिद्धिओ

मतिज्ञानावरणके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका काल कितना है ? जघन्य और उत्कर्पसे वह एक समय मात्र है । उसके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका काल कितना है ? वह जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्पसे अनन्त काल प्रमाण है । शेप चार ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पांच अन्तराय; इनके प्रकृत कालकी प्ररूपणा मतिज्ञानावरणके समान है ।

सब कर्मोंके ही उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका काल जघन्य और उत्कर्पसे एक समय मात्र है । अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका काल पांच दर्शनावरण प्रकृतियोंका अनादि-अपर्यवसित, अनादि-सपर्यवसित और सादि-सपर्यवसित भी है। इनमें जो सादि-सपर्यवसित है वह जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्पसे उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन मात्र है । साता और असाता वेदनीयके अनुत्कृष्ट प्रदेश-संक्रमका काल कितना है ? वह जघन्यसे एक समय और उत्कर्पसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है । मिथ्यात्व प्रकृतिका वह काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्पसे साधिक छयासठ सागरोपम मात्र है । प्रकृत काल सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्पसे पल्योपमके असंख्यातवें भागसे अधिक दो छयासठ सागरोपम मात्र है । सम्यक्त्व प्रकृतिका यह काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्पसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है । अनन्तानुवन्धी प्रकृतियोंका यह काल अनादि-अपर्यवसित, अनादि-सपर्यवसित और सादि-सपर्यवसित भी है । जो सादि-सपर्यवसित है उसका प्रमाण जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्पसे उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। शेप चारित्र-मोहनीय प्रकृतियोंके उपर्युक्त कालकी प्ररूपणा अनन्तानुवन्धीके समान है ।

सादि सत्कर्मवाली नामप्रकृतियोंका जघन्य व उत्कर्पसे जितना प्रकृतिसंक्रमकाल है उतना ही उनका अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमकाल भी है । अनादि सत्कर्मवाली प्रकृतियोंमें भव्यसिद्धिक जिन

उक्कस्सं करेदि तासिमणुक्कस्सपदेससंकमकालो अणादिओ अपज्जवसिदो, अणादिओ सपज्जवसिदो, सादिओ सपज्जवसिदो वा। तत्थ जो सो सादिओ सपज्जवसिदो तस्स जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। इदरासिं पयडीणं णाणावरणभंगो।

उच्चागोदस्स अणुक्कस्सपदेससंकमो जह० अंतोमुहुत्तं एगसमओ वा, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि सादिरेयाणि। णीचागोदस्स जह० एगसमओ, उक्क० वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। एवमुक्कस्सपदेससंकमकालो समत्तो।

जहण्णपदेससंकमकालो सामित्तादो साहेयूण वत्तव्वो। एयजीवेण अंतरं पि सामित्तादो साहेयव्वो। णाणाजीवेहि भंगविचओ कालो अंतरं च सामित्तादो साहेदूण भाणियव्वं। पुणो एत्थ सण्णियासो वत्तव्वो।

एत्तो अप्पाबहुअं। तं जहा— उक्कस्सपदेससंकमो सम्मत्ते थोवो। केवलणाणावरणे असंखेज्जगुणो। केवलदंसणावरणे विसेसाहिओ। पयलाए असंखेज्जगुणो। णिद्दाए विसेसाहिओ। अपच्चक्खाणमाणे असंखे० गुणो। कोहे विसेसाहिओ। माया० विसे०। लोभे विसे०। पच्चक्खाणमाणे विसे०। कोहे विसे०। मायाए विसे०। लोभे विसे०। अणंताणुबंधिमाणे विसे०। कोधे विसे०। मायाए विसे०। लोभे विसे०। मिच्छत्ते

प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमको करता है उनके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका काल अनादि-अपर्यवसित, अनादि-सपर्यवसित और सादि-सपर्यवसित भी है। उनमें जो सादि-सपर्यवसित है उसका प्रमाण जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन है। अन्य प्रकृतियोंके प्रकृत कालकी प्ररूपणा ज्ञानावरणके समान है।

उच्चगोत्रके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त व एक समय और उत्कर्षसे साधिक तेतीस सागरोपम मात्र है। उक्त काल नीचगोत्रका जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे साधिक दो छयासठ सागरोपम मात्र है। इस प्रकार उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमकाल समाप्त हुआ।

जघन्य प्रदेशसंक्रमकालका कथन स्वामित्वसे सिद्ध करके करना चाहिये। एक जीवकी अपेक्षा अन्तरकी भी प्ररूपणा स्वामित्वसे सिद्ध करके करना चाहिये। नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय, काल और अन्तरको भी स्वामित्वसे सिद्ध करके कहना चाहिये। फिर यहां संनिकर्षका कथन करना चाहिये।

अब यहां अल्पबहुत्वका कथन करते हैं। यथा— उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम सम्यक्त्व प्रकृतिमें स्तोक है। केवलज्ञानावरणमें असंख्यातगुणा है। केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। प्रचलामें असंख्यातगुणा है। निद्रामें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। अनन्तानुबन्धी मानमें विशेष अधिक है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। मिथ्यात्वमें

विसे० । सम्मामिच्छत्ते विसे० । पचलापचलाए असंखे० गुणो । णिद्दाणिद्दाए विसे० । थीणगिद्धीए विसे० । आहारसरीरणामाए अणंतगुणो । जसकित्तीए अणंतगुणो । वेउव्वियसरीरणामाए असंखे० गुणो । ओरालिय० विसे० । तेजइय० विसे० । कम्मइय० विसे० । देवगइणामाए असंखेज्जगुणो । मणुसगइणामाए विसे० । साद० संखे० गुणो । लोहसंजलणाए संखे० गुणो । दाणंतराए विसे० । लाहंतराए विसे० । भोगंतराए विसे० । परिभोगंतराए विसे० । वीरियंतराए विसे० । मणपज्जवणाणावरणे विसे० । ओहिणाणावरणे विसे० । सुदणाणावरणे विसे० । मदिणाणावरणे विसे० । ओहिदंसणावरणे विसे० । अचक्खुदंसणावरणे विसे० । चक्खुदं० विसे० । उच्चागोदे संखे० गुणो । णिरयगइणामाए असंखे० गुणो । अजसकित्ति० असंखे० गुणो । असादे संखे० गुणो । णीचागोदे विसे० । तिरिक्खगइणामाए असंखे० गुणो । हस्से संखे० गुणो । रदीए विसे० । इत्थिवेदे संखे० गुणो । सोगे विसे० । अरदीए विसे० । णवुंसयवेदे विसे० । दुगुंछाए विसे० । भय० विसे० । पुरिसवेदे संखे० गुणो । कोहसंजलणाए संखे० गुणो । माणसंजलणाए विसेसा० । मायासंजलणाए विसेसाहियो । एवमोघुकस्सपदेससंकमदंडओ समत्तो ।

विशेष अधिक है । सम्यग्मिथ्यात्वमें विशेष अधिक है । प्रचलाप्रचलामें असंख्यातगुणा है । निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है । स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है । आहारशरीर नामकर्ममें अनन्तगुणा है । यशकीर्तिमें अनन्तगुणा है । वैक्रियिकशरीर नामकर्ममें असंख्यातगुणा है । औदारिकशरीर नामकर्ममें विशेष अधिक है । तैजसशरीरमें विशेष अधिक है । कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है । देवगति नामकर्ममें असंख्यातगुणा है । मनुष्यगति नामकर्ममें विशेष अधिक है । सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । संज्वलन लोभ में संख्यातगुणा है । दानान्तरायमें विशेष अधिक है । लाभान्तरायमें विशेष अधिक है । भोगान्तरायमें विशेष अधिक है । परिभोगान्तरायमें विशेष अधिक है । वीर्यान्तरायमें विशेष अधिक है । मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । उच्चगोत्रमें संख्यातगुणा है । नरकगति नामकर्ममें असंख्यातगुणा है । अयशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है । असातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । नीचगोत्रमें विशेष अधिक है । तिर्यग्गति नामकर्ममें असंख्यातगुणा है । हास्यमें संख्यातगुणा है । रतिमें विशेष अधिक है । स्त्रीवेदमें संख्यातगुणा है । शोकमें विशेष अधिक है । अरतिमें विशेष अधिक है । नपुंसकवेदमें विशेष अधिक है । जुगुप्सामें विशेष अधिक है । भयमें विशेष अधिक है । पुरुषवेदमें संख्यातगुणा है । संज्वलन क्रोधमें संख्यातगुणा है । संज्वलन मानमें विशेष अधिक है । संज्वलन मायामें विशेष अधिक है । इस प्रकार ओघ उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमदण्डक समाप्त हुआ ।

णिरयगईए सव्वत्थोवो सम्मत्ते उक्कस्ससंकमो। सम्मामिच्छत्ते असंखे० गुणो। अपच्चक्खाणमाणे असंखे० गुणो। कोहे विसे०। मायाए विसे०। लोभे विसे०। पच्चक्खाण-माणे विसे०। कोहे विसे०। मायाए विसे०। लोभे विसे०। केवलणाणावरणे विसे०। पयलाए विसे०। णिद्दाए विसे०। पयलापयलाए विसे०। णिद्दाणिद्दाए विसे०। थीणगिद्धीए विसे०। केवलदंसणावरणे विसे०। मिच्छत्ते असंखे० गुणो। अणंताणु-बंधिमाणे असंखे० गुणो। कोहे विसे०। मायाए विसे०। लोभे विसे०। णिरयगइ-णामाए अणंतगुणो। वेउव्वियसरीरणामाए असंखे० गुणो। देवगइ० संखे० गुणो। आहारसरीर० असंखे० गुणो। जसकित्ति० असंखे गुणो। ओरालिय० संखे० गुणो। तेजइय० विसे०। कम्मइय० विसे। अजसकित्ति० असंखे० गुणो। तिरिक्खगइ० विसे०। मणुसगइ० विसे०। हस्से संखे० गुणो। रदि० विसे०। सादे संखे० गुणो। इत्थिवेदे संखे० गुणो। सोगे विसे०। अरदि० विसे०। णवुंस० विसे०। दुगुंछा० विसे०। भय० विसे०। पुरिसवे० विसे०। संजलणमाणे विसे०। कोधे विसे०। मायाए विसे०। लोभे विसे०। दाणंतराइए विसे०। लाहंतराइए विसे०। भोगंतरा० विसे०। परिभोगंतरा० विसे०। वीरियंतराइए विसे०। मणपज्जवणाणावरणे

नरकगतिमें सम्यक्त्व प्रकृतिमें उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम सबसे स्तोक है। सम्यग्मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है। अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। केवल-ज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। प्रचलामें विशेष अधिक है। निद्रामें विशेष अधिक है। प्रचला-प्रचलामें विशेष अधिक है। निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है। स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है। केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है। अनन्तानुबन्धी मानमें असंख्यातगुणा है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। नरकगति नामकर्ममें अनन्तगुणा है। वैक्रियिकशरीर नामकर्ममें असंख्यातगुणा है। देवगति नामकर्ममें संख्यातगुणा है। आहारकशरीर नामकर्ममें असंख्यातगुणा है। यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है। औदारिकशरीर नामकर्ममें संख्यातगुणा है। तैजसशरीर नामकर्ममें विशेष अधिक है। कार्मणशरीर नामकर्ममें विशेष अधिक है। अयशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है। तिर्यंचगति नामकर्ममें विशेष अधिक है। मनुष्यगति नामकर्ममें विशेष अधिक है। हास्यमें संख्यातगुणा है। रतिमें विशेष अधिक है। सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। स्त्रीवेदमें संख्यातगुणा है। शोकमें विशेष अधिक है। अरतिमें विशेष अधिक है। नपुंसकवेदमें विशेष अधिक है। जुगुप्सामें विशेष अधिक है। भयमें विशेष अधिक है। पुरुषवेदमें विशेष अधिक है। संज्वलन मान में विशेष अधिक है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। दानान्तरायमें विशेष अधिक है। लाभान्तरायमें विशेष अधिक है। भोगान्तरायमें विशेष अधिक है। परिभोगान्तरायमें विशेष अधिक है। वीर्यान्तरायमें विशेष अधिक है। मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है।

विसे० । ओहिणाणवरणे विसे० । सुदणाणा० विसेसा० । मदिणाणावरणे विसे० । अचक्खुदंसणावरणे विसे० । चक्खुदंस० विसे० । असादे[1] संखे० गुणो । उच्चागोदे विसे० । णीचागोदे विसे० । एवं[2] णिरयगईए उक्कस्सओ पदेससंकमदंडओ समत्तो ।

तिरिक्खगईए उक्कस्सओ पदेससंकमो सम्मत्ते थोवो । सम्मामिच्छत्ते असंखे० गुणो । अपच्चक्खाणमाणे असंखे० गुणो । कोधे विसे० । माया० विसे० । लोभे विसे० । पच्चक्खाणमाणे विसे० । कोधे विसे० । माया० विसे० । लोभे विसे० । केवलणाणावरणे विसे० । पयलाए विसे० । णिद्दाए विसे० । पयलापयला० विसे० । णिद्दाणिद्दाए विसे० । थीणगिद्धीए विसे० । केवलदंसणावरणे विसे० । मिच्छत्ते असंखे० गुणो । अणंताणुबंधिमाणे असंखे० गुणो । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोभे विसे० । णिरयगइणामाए अणंतगुणो । आहारसरीर० असंखे० गुणो । जसकित्ति० असंखे० गुणो । वेउव्विय० संखे० गुणो । ओरालिय० विसे० । तेजा० विसे० । कम्मइय० विसे० । अजसकित्ति० संखे० गुणो । देवगदीए विसे० । तिरिक्खगईए विसे० । मणुसगई० विसे० । हस्से० संखे० गुणो । रदीए विसे० । सादे संखे० गुणो । इत्थिवेदे

अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । मतिज्ञानावरणमें विशेप अधिक है । अचक्षुदर्शनावरणमें विशेप अधिक है । चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । असातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । उच्चगोत्रमें विशेष अधिक है । नीचगोत्रमें विशेष अधिक है । इस प्रकार नरकगति में उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमदण्डक समाप्त हुआ ।

तिर्यंचगतिमें उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम सम्यक्त्व प्रकृतिमें सबसे स्तोक है । सम्यग्मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है । अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेप अधिक है । लोभमें विशेप अधिक है । प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है । क्रोधमें विशेप अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । केवलज्ञानावरणमें विशेप अधिक है । प्रचलामें विशेप अधिक है । निद्रामें विशेष अधिक है । प्रचलाप्रचलामें विशेष अधिक है । निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है । स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है । केवलदर्शनावरणमें विशेप अधिक है । मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है । अनन्तानुबन्धी मानमें असंख्यातगुणा है । क्रोधमें विशेप अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । नरकगति नामकर्ममें अनन्तगुणा है । आहारकशरीर नामकर्ममें असंख्यातगुणा है । यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है । वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है । औदारिकशरीरमें विशेष अधिक है । तैजसशरीरमें विशेष अधिक है । कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है । अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है । देवगतिमें विशेष अधिक है । तिर्यंचगतिमें विशेष अधिक है । मनुष्यगतिमें विशेप अधिक है । हास्यमें संख्यातगुणा है । रतिमें विशेष अधिक है । सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । स्त्रीवेदमें संख्यातगुणा है । शोकमें विशेष अधिक है ।

---

१ अ-काप्रत्योः 'असादयो', ताप्रतौ 'असादाए' इति पाठः । २ अ-काप्रत्योर्नोपलभ्यते पदमिदम् ।

संखे० गुणो। सोगे विसे०। अरदि० विसे०। णवुंस० विसे०। दुगुंछा० विसे०। भय० विसे०। पुरिस० विसे०। संजलणमाणे विसे०। कोधे विसे०। मायाए विसे०। लोभे विसे०। दाणंतराइए विसे०। लाहंतराइए विसे०। भोगंतराइए विसे०। परिभोगंतराइए विसे०। विरियंतराइए विसे०। मणपज्जवणाणावरणे विसे०। ओहिणाणावरणे विसे०। सुदणा० विसे०। मदिणा० विसे०। ओहिदंसणावरणे विसे०। अचक्खुदंस० विसे०। चक्खुदंस० विसे०। असादे संखे० गुणो। उच्चागोदे विसे०। णीचागोदे विसेसाहिओ। एवं तिरिक्खगदीए उक्कस्सओ पदेससंकमदंडओ समत्तो।

जहा तिरिक्खगदीए तहा तिरिक्खजोणिणीसु। मणुस्सेसु मणुसिणीसु च मूलोघं। देवाणं देवीणं च णेरइयभंगो।

असण्णीसु सम्मत्ते उक्कस्सपदेससंकमो थोवो। सम्मामिच्छत्ते असंखे० गुणो। अपच्चक्खाणमाणे असंखे० गुणो। कोधे विसे०। मायाए विसे०। लोभे विसे०। पच्चक्खाणमाणे विसे०। कोधे विसे०। मायाए विसे०। लोभे विसे०। अणंताणुबंधिमाणे विसे०। कोधे विसे०। मायाए विसे०। लोभे विसे०। केवलणाणावरणे विसेसा०। पयलाए विसे०। णिद्दाए विसे०। पयलापयलाए विसे०। णिद्दाणिद्दाए

अरतिमें विशेष अधिक है। नपुंसकवेदमें विशेष अधिक है। जुगुप्सामें विशेष अधिक है। भयमें विशेष अधिक है। पुरुषवेदमें विशेष अधिक है। संज्वलन मानमें विशेष अधिक है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। दानान्तरायमें विशेष अधिक है। लाभान्तरायमें विशेष अधिक है। भोगान्तराय में विशेष अधिक है। परिभोगान्तरायमें विशेष अधिक है। वीर्यान्तरायमें विशेष अधिक है। मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। असातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। उच्चगोत्रमें विशेष अधिक है। नीचगोत्रमें विशेष अधिक है। इस प्रकार तिर्यंचगतिमें उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमदण्डक समाप्त हुआ।

जैसे तिर्यंचगतिमें प्रकृत अल्पबहुत्वका कथन किया गया है वैसे ही तिर्यंच योनिमतियोंमें भी समझना चाहिये। मनुष्यों और मनुष्यणियोंमें इस अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा मूलोघके समान है। देवों और देवियोंका यह प्ररूपणा नारकियोंके समान है।

असंज्ञी जीवोंमें उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम सम्यक्त्व प्रकृतिमें सबसे स्तोक है। सम्यग्मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है। अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। अनन्तानुबन्धी मानमें विशेष अधिक है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। केवलज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। प्रचलामें विशेष अधिक है। निद्रामें विशेष अधिक है। प्रचलाप्रचलामें विशेष अधिक है। निद्रानिद्रामें विशेष अधिक

विसे० । थीणगिद्धीए विसे० । केवलदंसणावरणे विसे० । णिरयगई० अणंतगुणो । आहारसरीरे असंखे० गुणो । जसकित्ति० असंखे० गुणो । वेउव्वियसरीरे संखे० गुणो । ओरालिय० विसे० । तेजा० विसे० । कम्मइय० विसे० । अजसकित्ति० संखे० गुणो । देवगदिणामा० विसे० । तिरिक्खगई० विसे० । मणुस्सगई० विसे० । हस्से संखे० गुणो । रदी० विसे० । सादे संखे० गुणो । इत्थिवेदे संखे० गुणो । सोगे विसे० । अरदि० विसे० । णवुंसयवेदे विसे० । दुगुंछा० विसे० । भय० विसे० । पुरिसवेदे० विसे० । संजलणमाणे विसे० । कोधे विसे० । मायाए विसे० । लोभे विसे० । दाणंतराइए विसे० । लाहंतराइए विसे० । भोगंतराइए विसे० । परिभोगंतराइए विसे० । विरियंतराइए विसे० । मणपज्जवणाणावरणे विसे० । ओहिणाणा० विसे० । सुदणाणा० विसे० । मदिणा० विसे० । ओहिदंसणाव० विसे० । अचक्खुदंस० विसे० । चक्खुदंस० विसे० । असादे संखे० गुणो । उच्चागोदे विसे० । णीचागोदे विसे० । एवं असण्णीसु उक्कस्सओ पदेससंकमदंडओ समत्तो ।

जहासण्णीसु तहा एइंदिय-विगलिंदिएसु ।

है । स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है । केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । नरकगतिमें अनन्तगुणा है । आहारशरीरमें असंख्यातगुणा है । यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है । वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है । औदारिकशरीरमें विशेष अधिक है । तैजसशरीरमें विशेष अधिक है । कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है । अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है । देवगति नामकर्ममें विशेष अधिक है । तिर्यंचगति नामकर्ममें विशेष अधिक है । मनुष्यगति नामकर्ममें विशेष अधिक है । हास्यमें संख्यातगुणा है । रतिमें विशेष अधिक है । सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । स्त्रीवेदमें संख्यातगुणा है । शोकमें विशेष अधिक है । अरतिमें विशेष अधिक है । नपुंसकवेदमें विशेष अधिक है । जुगुप्सामें विशेष अधिक है । भयमें विशेष अधिक है । पुरुषवेदमें विशेष अधिक है । संज्वलन मानमें विशेष अधिक है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । दानान्तरायमें विशेष अधिक है । लाभान्तरायमें विशेष अधिक है । भोगन्तरायमें विशेष अधिक है । परिभोगन्तरायमें विशेष अधिक है । वीर्यान्तरायमें विशेष अधिक है । मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । असातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । उच्चगोत्रमें विशेष अधिक है । नीचगोत्रमें विशेष अधिक है । इस प्रकार असंज्ञी जीवोंमें उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमदण्डक समाप्त हुआ ।

जैसे असंज्ञी जीवोंमें यह प्ररूपणा की गयी है वैसे ही एकेन्द्रियों और विकलेन्द्रियोंके विषयमें भी जानना चाहिये ।

---

१ अ-काप्रत्योः 'मणुस्सिणीसु', ताप्रतौ 'मणुसिणीसु (असण्णीसु)' इति पाठः ।

एत्तो ओघजहण्णपदेससंकमदंडओ कायव्वो । तं जहा— सव्वत्थोवो सम्मत्ते जहण्णओ पदेससंकमो । सम्मामिच्छत्ते असंखे० गुणो । मिच्छत्ते असंखे० गुणो । अणंताणुबंधिमाणे असंखे० गुणो । कोधे विसे० । मायाए विसे० । लोभे विसे० । पयलापयला० असंखे० गुणो । णिद्दाणिद्दाए विसे० । थीणगिद्धीए विसे० । अपच्चक्खाणमाणे असंखे० गुणो । कोधे विसे० । मायाए विसे० । लोभे विसे० । पच्चक्खाणमाणे विसे० । कोधे विसे० । मायाए विसे० । लोभे विसे० । केवलणाणावरणे विसे० ।

कुदो विसेसाहियत्तं ? विज्झादभागहारादो चरिमसमयसुहुमसांपराइयअधापवत्त-भागहारस्स विसेसहीणत्तादो । ण च अधापवत्तभागहारो अवट्ठिदो, एदम्हादो चेव तदणवट्ठिदत्तावगमादो । ण च पुव्विल्लभागहारप्पाबहुएण सह विरोहो, सव्वजहण्ण-भागहारे पडुच्च तदुप्पत्तीदो ।

पयलाए विसे० पयडिविसेसेण । णिद्दाए विसे० । केवलदंस० विसे० । णिरयगइ-णामाए अणंतगुणो । देवगइणामाए असंखे० गुणो । वेउव्वियसरीर० संखे गुणो । आहारसरीर० असंखे० गुणो । मणुसगइ० संखे० गुणो । उच्चागोदे संखे० गुणो । तिरिक्खगइ० असंखे० गुणो । कुदो ? उव्वेल्लणभागहारादो तेवट्ठिसागरोवमसदण्णोण्ण-

---

अब यहां ओघ जघन्य प्रदेशसंक्रमदण्डक करते हैं । वह इस प्रकार है— जघन्य प्रदेश-संक्रम सम्यक्त्व प्रकृतिमें सबसे स्तोक है । सम्यग्मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है । मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है । अनन्तानुबन्धी मानमें असंख्यातगुणा है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । प्रचलाप्रचलामें असंख्यातगुणा है । निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है । स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । केवलज्ञानावरणमें विशेष अधिक है ।

शंका— उसमें विशेष अधिक क्यों है ?

समाधान— इसका कारण यह है कि विध्यातभागहारकी अपेक्षा अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकका अधःप्रवृत्तभागहार विशेष हीन है । और यह अधःप्रवृत्तभागहार कुछ अवस्थित नहीं है, क्योंकि, इसीसे उसकी अनवस्थितता जानी जाती है । पूर्वोक्त भागहारके अल्पबहुत्वके साथ इसका विरोध होगा, यह भी कहना ठीक नहीं है; क्योंकि, उसकी उत्पत्ति सबसे जघन्य भागहारके आश्रित है ।

केवलज्ञानावरणकी अपेक्षा वह प्रचलामें प्रकृतिविशेषसे विशेष अधिक है । निद्रामें विशेष अधिक है । केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । नरकगति नामकर्ममें अनन्तगुणा है । देवगति नामकर्ममें असंख्यातगुणा है । वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है । आहारकशरीर-में असंख्यातगुणा है । मनुष्यगति नामकर्ममें संख्यातगुणा है । उच्चगोत्रमें संख्यातगुणा है । तिर्यंचगति नामकर्ममें असंख्यातगुणा है, क्योंकि, उद्वेलनभागहारकी अपेक्षा एक सौ तिरेसठ

ब्भत्थरासिगुणिदविज्झादभागहारस्स असंखे० गुणहीणत्तादो । णवुंसयवेद० असंखे० गुणो । णीचागोद० संखेज्जगुणो । इत्थिवेद० असंखे० गुणो । ओरालिय० असंखे० गुणो । कोधसंजलण० असंखे०गुणो । माणसंजल० विसे० । पुरिस० विसे० । मायासं० विसे० । जसकित्ति० असंखे० गुणो । तेजइय० संखे० गुणो, धुवबंधित्तादो । कम्मइय० विसे० । अजसकित्ति० संखे० गुणो । हस्से संखे० गुणो । रदी० विसेसा० । सादे संखे० गुणो । सोगे संखे० गुणो । कुदो अधापवत्तभागहारादो विज्झादभागहारस्स संखेज्जगुणहीणत्तं णव्वदे ? एदम्हादो चेव सुत्तादो । अरदी० विसे० । दुगुंछा० विसे० । भय० विसे० । लोहसंजल० विसे० । दाणंतराइय० विसे० । लाहंतरा० विसे० । भोगंतरा० विसे० । परिभोगंतरा० विसे० । विरियंतरा० विसे० । मणपज्जव० विसे० । ओहिणा० विसे० । सुदणाणावरणे विसे० । आभिणिबोहियणाणाव० विसे० । ओहि-दंसणाव० विसे० । अचक्खु० विसे० । चक्खु० विसे० । असादे संखेज्जगुणो । एवमोघेण जहण्णओ पदेससंकमदंडओ समत्तो ।

णिरयगईए सव्वत्थोवो सम्मत्ते जहण्णओ पदेससंकमो । सम्मामिच्छत्ते असंखे०

सागरोपमोंकी अन्योन्याभ्यस्त राशिसे गुणित विध्यातभागहार असंख्यातगुणा हीन है। तिर्यंचगतिसे नपुंसकवेदमें असंख्यातगुणा है। नीचगोत्रमें संख्यातगुणा है। स्त्रीवेदमें असंख्यातगुणा है। औदारिकशरीरमें असंख्यातगुणा है। संज्वलन क्रोधमें असंख्यातगुणा है। संज्वलन मानमें विशेप अधिक है। पुरुपवेदमें विशेष अधिक है। संज्वलन मायामें विशेष अधिक है। यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है। तैजसशरीरमें संख्यातगुणा है, क्योंकि, वह ध्रुवबन्धी है। कर्मणशरीरमें विशेष अधिक है। अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है। हास्यमें संख्यातगुणा है। रतिमें विशेष अधिक है। सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। शोकमें संख्यातगुणा है।

शंका— अधःप्रवृत्तभागहारकी अपेक्षा विध्यातभागहार संख्यातगुणा हीन है, यह कहांसे जाना जाता है ?

समाधान— वह इसी सूत्रसे जाना जाता है।

उससे अरतिमें विशेष अधिक है। जुगुप्सामें विशेष अधिक है। भयमें विशेष अधिक है। संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है। दानान्तरायमें विशेष अधिक है। लाभान्तरायमें विशेष अधिक है। भोगान्तरायमें विशेष अधिक है। परिभोगान्तरायमें विशेष अधिक है। वीर्यान्तरायमें विशेष अधिक है। मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। आभिनिबोधिकज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। अचक्षुदर्शनावरणमें विशेप अधिक है। चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। असातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। इस प्रकार ओघसे जघन्य प्रदेशसंक्रमदण्डक समाप्त हुआ।

नरकगतिमें जघन्य प्रदेशसंक्रम सम्यक्त्व प्रकृतिमें सबसे स्तोक है। सम्यग्मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है। मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है। अनन्तानुबन्धी मानमें असंख्यातगुणा है।

गुणो । मिच्छत्ते असंखे० गुणो[1] । अणंताणुबंधिमाणे असंखे० गुणो । कोधे विसे० । मायाए विसे० । लोभे विसे० । पयलापयला० असंखे० गुणो । णिद्दाणिद्दा० विसे० । थीणगिद्धीए विसे० । अपच्चक्खाणमाणे असंखे० गुणो । कोधे विसे० । मायाए विसे० । लोभे विसे० । पच्चखाणमाणे विसे० । कोधे विसे० । मायाए विसे० । लोभे विसे० । केवलणाणावरणे विसे० । पयलापयलाए विसे० । णिद्दाए विसे० । केवलदंसणावरणे विसे० । आहार० अणंतगुणो । देवगइ० असंखे० गुणो । मणुसगइ० संखे० गुणो । वेउव्विय० संखे० गुणो । णिरयगइ० संखे० गुणो । उच्चागोदे संखे० गुणो । तिरिक्खगइ० असंखे० गुणो । इत्थिवेद० संखेज्जगुणो । णीचागोदे संखे० गुणो । जसकित्ति० असंखे० गुणो । ओरालिय० संखे० गुणो । तेजइय० विसे० । कम्मइय० विसे० । अजसकित्ति० संखे० गुणो । पुरिसवेदे संखे० गुणो । हस्से संखे० गुणो । रदि० विसे० । सादे संखे० गुणो । सोगे संखे० गुणो । अरदि० विसे० । दुगुंछा० विसे० । भय० विसे० । संजलणमाणे विसे० । कोधे विसे० । मायाए विसे० । लोभे विसेसाहिओ । दाणंतराए विसे० । लाहंतराए विसे० । भोगंतराए विसे० । परिभोगंतराए विसे० । वीरियंतराए विसे० । मणपज्जवणाणावरणे विसे० । ओहिणा० विसे० । सुदणा० विसे० । मदिणा० विसे० । ओहिदंस० विसे० ।

क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । प्रचलाप्रचलामें असंख्यातगुणा है । निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है । स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । केवलज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । प्रचलाप्रचलामें विशेष अधिक है । निद्रामें विशेष अधिक है । केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । आहारशरीरमें अनन्तगुणा है । देवगतिमें असंख्यातगुणा है । मनुष्यगतिमें संख्यातगुणा है । वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है । नरकगतिमें संख्यातगुणा है । उच्चगोत्रमें संख्यातगुणा है । तिर्यंचगतिमें असंख्यातगुणा है । स्त्रीवेदमें संख्यातगुणा है । नीचगोत्रमें संख्यातगुणा है । यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है । औदारिकशरीरमें संख्यातगुणा है । तैजसशरीरमें विशेष अधिक है । कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है । अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है । पुरुषवेदमें संख्यातगुणा है । हास्यमें संख्यातगुणा है । रतिमें विशेष अधिक है । सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । शोकमें संख्यातगुणा है । अरतिमें विशेष अधिक है । जुगुप्सामें विशेष अधिक है । भयमें विशेष अधिक है । संज्वलन मानमें विशेष अधिक है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । दानान्तरायमें विशेष अधिक है । लाभान्तरायमें विशेष अधिक है । भोगान्तरायमें विशेष अधिक है । परिभोगान्तरायमें विशेष अधिक है । वीर्यान्तरायमें विशेष अधिक है । मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक

[1] अप्रतौ 'मिच्छत्तअणंतगुणो' इति पाठः ।

अचक्खु० विसे० । चक्खु० विसे० । असादे संखे० गुणो । एवं णिरयगदीए संकमदंडओ समत्तो ।

तिरिक्खगदीए तिरिक्खेसु जावुच्चागोदं ति मूलोघं । तदो उच्चागोदादो ओरालिय० असंखे० गुणो । तिरिक्खगइ० संखे० गुणो । इत्थि० संखे० गुणो । णवुंस० संखे० गुणो । णीचागोद० संखे० गुणो । जसकित्ति० असंखे० गुणो । तेजा० संखे गुणो । कम्मइय० विसे० । अजसकित्ति० संखे० गुणो । पुरिस० संखे० गुणो । हस्से संखे० गुणो । रदि० विसे० । सादे संखे० गुणो । सोगे संखे० गुणो । अरदि० विसे० । दुगुंछा० विसे० । भय० विसे० । एत्तो उवरि णेरइयभंगो जाव असादं ति । एवं तिरिक्खगदीए जहण्णसंकमदंडओ समत्तो ।

एवं तिरिक्खजोणिणीसु । मणुसगदीए मणुस्सेसु जाव आहारसरीरं ति मूलोघो । तदो तिरिक्खगदीए असंखे० गुणो । णवुंस० असंखे० गुणो । णीचागोदे संखे० गुणो । इत्थिवेदे असंखे० गुणो । मणुसगई० असंखे० गुणो । ओरालिय० असंखे० गुणो । कोधसंजलण० असंखे०[1] गुणो । माणे विसे० । पुरिस० विसे० । माया० विसे० । उच्चागोद० असंखे० गुणो । जसकित्ति० असंखे० गुणो । सेसाणि

है । मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । असातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । इस प्रकार नरकगतिमें जघन्य प्रदेशसंक्रमदण्डक समाप्त हुआ ।

तिर्यंचगतिमें तिर्यंचोंमें प्रकृत अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा उच्चगोत्र तक मूल-ओघके समान है । तत्पश्चात् उक्त जघन्य प्रदेशसंक्रम उच्चगोत्रकी अपेक्षा औदारिकशरीरमें असंख्यातगुणा है । तिर्यंचगतिमें संख्यातगुणा है । स्त्रीवेदमें संख्यातगुणा है । नपुंसकवेदमें संख्यातगुणा है । नीचगोत्रमें संख्यातगुणा है । यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है । तैजसशरीरमें संख्यातगुणा है । कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है । अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है । पुरुषवेदमें संख्यातगुणा है । हास्यमें संख्यातगुणा है । रतिमें विशेष अधिक है । सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । शोकमें संख्यातगुणा है । अरतिमें विशेष अधिक है । जुगुप्सामें विशेष अधिक है । भयमें विशेष अधिक है । इसके आगे असातावेदनीय तक उक्त प्ररूपणा नारकियोंके समान है । इस प्रकार तिर्यंचगतिमें जघन्य प्रदेशसंक्रमदण्डक समाप्त हुआ ।

इसी प्रकार तिर्यंच योनिमतियोंमें भी प्रकृत संक्रमदण्डककी प्ररूपणा है । मनुष्यगतिमें मनुष्योंमें यह प्ररूपणा आहारकशरीर तक मूल-ओघके समान है । तत्पश्चात् वह जघन्य प्रदेशसंक्रम आहारकशरीरकी अपेक्षा तिर्यंचगतिमें असंख्यातगुणा है । नपुंसकवेदमें असंख्यातगुणा है । नीचगोत्रमें संख्यातगुणा है । स्त्रीवेदमें असंख्यातगुणा है । मनुष्यगतिमें असंख्यातगुणा है । औदारिकशरीरमें असंख्यातगुणा है । संज्वलन क्रोधमें असंख्यातगुणा है । मानमें विशेष अधिक है । पुरुषवेदमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । उच्चगोत्रमें

१. अप्रतौ 'कोधसंखे०', काप्रतौ 'कोधसं० असंखे०' इति पाठः ।

पदाणि ओघियाणि। एवं मणुसिणीसु।

देवेसु जाव केवलदंसणावरणं ति मूलोघो। तत्तो आहार० अणंतगुणो। णिरयगई० असंखे० गुणो। तिरिक्खगई० असंखे० गुणो। णवुंस० असंखे० गुणो। णीचागोद० संखे० गुणो। इत्थि० असंखे० गुणो। देवगई० असंखे० गुणो। वेउव्वि० संखे० गुणो। मणुसगइ० असंखे० गुणो। ओरालि० असंखे० गुणो। उच्चागोदे असंखे० गुणो। जसकित्ति० असंखे० गुणो। तेजइय० संखेज्जगुणो। एत्तो उवरि णेरइयभंगो। एवं देवेसु जहण्णसंकमदंडओ समत्तो।

असण्णीसु सव्वत्थोवो सम्मत्ते जहण्णसंकमो। सम्मामिच्छत्ते असंखे० गुणो। अणंताणुबंधिमाणे असंखे० गुणो। कोधे विसे०। मायाए विसे०। लोभे विसे०। अपच्चक्खाणमाणे असंखे० गुणो०। कोधे विसे०। माया० विसे०। लोभे विसे०। पच्चक्खाणमाणे विसे०। कोधे विसे०। माया० विसे०। लोभे विसे०। केवलणाणावरणे विसे०। पयलाए विसे०। णिद्दाए विसे०। पयलापयलाए विसे०। णिद्दाणिद्दाए विसे०। थीणगिद्धीए विसे०। केवलदंस० विसे०। णिरयगई० अणंतगुणो। देवगई० असंखे० गुणो। वेउव्वि० संखे० गुणो। आहार० असंखे० गुणो। मणुसगइ० संखे० गुणो।

असंख्यातगुणा है। यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है। शेष पद ओघके समान हैं। इसी प्रकार मनुष्यनियोंमें भी प्रकृत प्ररूपणा करना चाहिये।

देवोंमें केवलदर्शनावरण तक मूल-ओघके समान प्ररूपणा है। उससे उक्त जघन्य प्रदेश-संक्रम आहारशरीरमें अनन्तगुणा है। नरकगतिमें असंख्यातगुणा है। तिर्यंचगतिमें असंख्यात-गुणा है। नपुंसकवेदमें असंख्यातगुणा है। नीचगोत्रमें संख्यातगुणा है। स्त्रीवेदमें असंख्यात-गुणा है। देवगतिमें असंख्यातगुणा है। वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है। मनुष्यगतिमें असंख्यातगुणा है। औदारिकशरीरमें असंख्यातगुणा है। उच्चगोत्रमें असंख्यातगुणा है। यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है। तैजसशरीरमें संख्यातगुणा है। इसके आगे यह प्ररूपणा नारकियोंके समान है। इस प्रकार देवोंमें जघन्य प्रदेशसंक्रमदण्डक समाप्त हुआ।

असंज्ञी जीवोंमें जघन्य प्रदेशसंक्रम सम्यक्त्व प्रकृतिमें सबसे स्तोक है। सम्यग्मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है। अनन्तानुबन्धी मानमें असंख्यातगुणा है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। केवलज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। प्रचलामें विशेष अधिक है। निद्रामें विशेष अधिक है। प्रचलाप्रचलामें विशेष अधिक है। निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है। स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है। केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। नरकगतिमें अनन्तगुणा है। देवगतिमें असंख्यातगुणा है। वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है। आहारक-शरीरमें असंख्यातगुणा है। मनुष्यगतिमें संख्यातगुणा है। उच्चगोत्रमें संख्यातगुणा है।

उच्चागोदे संखे० गुणो। जसकित्ति० असंखे० गुणो। ओरालिय० संखे० गुणो। तेजा० विसे०। कम्मइय० विसे०। तिरिक्खगदीए संखे० गुणो। अजसकित्ति० विसे०। पुरिसवेदे संखे० गुणो। इत्थिवेदे संखे० गुणो। हस्से संखे० गुणो। रदी० विसे०। सादे० संखे० गुणो। सोगे संखे० गुणो। अरदी० विसे०। णवुंस० विसे०। दुगुंछ० विसे०। भय० विसे० संजलणमाणे विसे०। कोधे विसे०। मायाए विसे०। लोभे विसे०। दाणंतराइए विसे०। लाहंतराइए विसे०। भोगंतरा० विसे०। परिभोगंतरा० विसे०। वीरियंतरा० विसे०। मणपज्जव० विसे०। ओहिणाणावरण० विसे०। सुदणा० विसे०। मदिणाणाव० विसे०। ओहिदंसणाव० विसे०। अचक्खु० विसे०। चक्खु० विसे०। असादे असंखे० गुणो। णीचागोदे विसेसाहिओ। एवमसण्णीसु जहण्णओ पदेससंकमदंडओ समत्तो।

जहा असण्णीसु तहा एइंदिय-बेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदिएसु वि वत्तव्वं।

एत्तो भुजगारसंकमो उच्चदे— भुजगारे अट्ठपदं कादूण सामित्तं कायव्वं। तं जहा— मदिआवरणस्स भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिदसंकामगो को होदि? अण्णदरो। अवत्तव्व० को होइ? अण्णदरो उवसंतकसाओ परिवदमाणओ। चदुणाणावरणीय-

---

यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है। औदारिकशरीरमें संख्यातगुणा है। तैजसशरीरमें विशेष अधिक है। कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है। तिर्यंचगतिमें संख्यातगुणा है। अयशकीर्तिमें विशेष अधिक है। पुरुषवेदमें संख्यातगुणा है। स्त्रीवेदमें संख्यातगुणा है। हास्यमें संख्यातगुणा है। रतिमें विशेष अधिक है। सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। शोकमें संख्यातगुणा है। अरतिमें विशेष अधिक है। नपुंसकवेदमें विशेष अधिक है। जुगुप्सामें विशेष अधिक है। भयमें विशेष अधिक है। संज्वलन मानमें विशेष अधिक है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। दानान्तरायमें विशेष अधिक है। लाभान्तरायमें विशेष अधिक है। भोगान्तरायमें विशेष अधिक है। परिभोगान्तरायमें विशेष अधिक है। वीर्यान्तरायमें विशेष अधिक है। मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। असातावेदनीयमें असंख्यातगुणा है। नीचगोत्रमें विशेष अधिक है। इस प्रकार असंज्ञी जीवोंमें जघन्य प्रदेशसंक्रमदण्डक समाप्त हुआ।

जिस प्रकार असंज्ञियोंमें यह प्ररूपणा की गयी है उसी प्रकार एकेन्द्रियों, द्वीन्द्रियों, त्रीन्द्रियों और चतुरिन्द्रियोंमें भी उसे करना चाहिये।

अब यहां भुजाकारसंक्रमका कथन करते हैं— भुजाकारके विषयमें अर्थपद करके स्वामित्वकी प्ररूपणा की जाती है। यथा— मतिज्ञानावरणका भुजाकार, अल्पतर और अवस्थित संक्रामक कौन होता है? उसका संक्रामक अन्यतर जीव होता है। अवक्तव्य संक्रामक कौन होता है? उसका संक्रामक परिपतमान अर्थात् उपशमश्रेणिसे गिरनेवाला अन्यतर उपशान्तकषाय

णवदंसणावरणीय- मिच्छत्त-सोलसकसाय-भय - दुगुंछा- पुरिसवेद- पंचंतराइयाणं सम्मा-इट्ठीसु वा मिच्छाइट्ठीसु वा धुवबंधिणामपयडीणं च मदिआवरणभंगो। सादासाद-सम्मत्त-सम्मामि०-हस्स-रदि-अरदि-सोग-इत्थि-णवुंसयवेद-उच्च- णीचागोद-परियत्तमाण-णामपयडीणं पि एवं चेव। णवरि अवट्ठिदसंकमो णत्थि[1]। एवं सामित्तं समत्तं।

एयजीवेण कालो। तं जहा— मदिआवरणस्स भुज० जह० एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे० भागो। अप्पदरकालो जह० एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे० भागो। अवट्ठियस्स जह० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया। एवं चउणाणा-वरण-णवदंसणावरण-पंचंतराइयाणं। सादस्स भुजगारसंकामओ केव० ? जह० एग-समओ, उक्क० आवलिया समयूणा। अप्पदरसंकामओ केव० ? जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं। [[2]असादस्स भुजगार-अप्पदरसंक० केव० ? जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहुत्तं।

मिच्छत्तस्स भुज० जह० एगस०। उक्क० अंतोमुहुत्तं,] आवलिया समऊणा।

होता है। शेष चार ज्ञानावरणीय, नौ दर्शनावरणीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पुरुष-वेद और पांच अन्तराय इनकी सम्यग्दृष्टियों एवं मिथ्यादृष्टियोंमें तथा ध्रुवबन्धी नामप्रकृतियोंकी भी यह प्ररूपणा मतिज्ञानावरणके समान है। साता व असाता वेदनीय, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, हास्य, रति, अरति, शोक, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, उच्चगोत्र, नीचगोत्र और परिवर्तमान नाम-प्रकृतियोंकी भी प्रकृत प्ररूणा इसी प्रकार ही है। विशेषता इतनी है कि इनका अवस्थित संक्रम नहीं है। इस प्रकार स्वामित्व समाप्त हुआ।

एक जीवकी अपेक्षा कालकी प्ररूपणा करते हैं। यथा— मतिज्ञानावरणके भुजाकार संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है। इसके अल्पतर संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है। अवस्थित संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे संख्यात समय मात्र है। इसी प्रकार शेष चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण और पांच अन्तराय प्रकृतियोंके सम्बन्धमें कहना चाहिये। सातावेदनीयके भुजाकर संक्रामकका काल कितना है? वह जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे एक समय कम आवली प्रमाण है। उसके अल्पतर संक्रामकका काल कितना है? वह जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है। असातावेदनीयके भुजाकार और अल्पतर संक्रामकोंका काल कितना है? वह जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है।

मिथ्यात्वके भुजाकार संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त

१ मिच्छत्तस्स भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिद-अवत्तव्वसंकामया अत्थि। एवं सोलसकसाय-पुरिसवेद-भय-दुगुंछाणं। एवं चेव सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-इत्थि-णवुंसयवेद-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं। णवरि अवट्ठिदसंकामगा णत्थि। क. पा. सु. पृ. ४२३, २६४–६७.

२ कोष्ठकस्थोऽयं पाठ अ-का-ताप्रतिष्वनुपलभ्यमानो मप्रतितोऽत्र योजितः।

अप्पदर० जह० एगसमओ, उक्क० छावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि । अवट्ठिद० जह० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया[1]। सम्मत्तस्स भुजगार० जहण्णेण एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं । अप्पदर० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० पलिदो० असंखे० भागो । अवट्ठिद-संकमो णत्थि[2]। सम्मामिच्छत्तस्स भुजगार० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं । अप्प-दर० जह० अंतोमु०, उक्क० वे-छावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि[3]।

अणंताणुबंधीणं भुजगारकालो जह० एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे० भागो । अप्पदर० जह० एगसमओ, उक्क० वे-छावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि । अवट्ठिद० जह० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया[4]। बारसकसाय-भय-दुगुंछाणं[5] मदिआवरणभंगो[6]।

अथवा एक समय कम आवली मात्र है । अल्पतर संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्पसे साधिक छयासठ सागरोपम मात्र है । अवस्थित संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे संख्यात समय मात्र है । सम्यक्त्व प्रकृतिके भुजाकार संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्पसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है । अल्पतर संक्रामकका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है । उसका अवस्थित संक्रम नहीं होता । सम्य-ग्मिथ्यात्वके भुजाकार संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है । अल्पतर संक्रामकका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे साधिक दो छयासठ सागरोपम मात्र है ।

अनन्तानुवन्धिचतुष्टयके भुजाकार संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्पसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है । अल्पतर संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्पसे साधिक दो छयासठ सागरोपम मात्र है । अवस्थित संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्पसे संख्यात समय मात्र है । बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी प्ररूपणा

---

१ मिच्छत्तस्स भुजगारसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ उक्कस्सेण आवलिया समयूणा, अधवा अंतोमुहुत्तं । अप्पयरसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? एक्को वा समयो जाव आवलिया दुसमयूणा, अधवा अंतोमुहुत्तं । तदो समयुत्तरो जाव छावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि । अवट्ठिदसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण संखेज्जा समया । अवत्तव्वसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ । क. पा. सु. पृ. ४२७, २९९-३११.

२ सम्मत्तस्स भुजगारसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं । अप्पयरसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं । उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो । अवत्तव्वसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णुक्कस्सेण एयसमयो । क. पा. सु. पृ. ४२९, ३१२-१७.

३ सम्मामिच्छत्तस्स भुजगारसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? एक्को वा दो वा समया । एवं समयुत्तरो उक्कस्सेण जाव चरिमुव्वेल्लणकंडयुक्कीरणा त्ति । अधवा सम्मत्तमुप्पादेमाणयस्स वा तदो खवेमाणयस्स वा जो गुणसंकमकालो सो वि भुजगारसंकामयस्स कायव्वो । अप्पदरसंकामगो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं । एयसमओ वा । उक्कस्सेण छावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि । अवत्तव्वसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ । क. पा. सु. पृ. ४२९, ३२१-२८.

४ अणंताणुबंधीणं भुजगारसंकामगो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमयो । उक्कस्सेण पलिदोवमस्स

हस्स-रदि-अरदि-सोग-इत्थि - णवुंसयवेदाणं भुजगार-अप्पदरसंकमणकालो जह०. एग-समओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं[1] । अवट्ठिय० णत्थि । णवरि इत्थिवेद० अप्पदर० उक्क० वे-छावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि[2] । णवुंस० अप्पदर० सतिपलिदोवमाणि बे-छावट्ठिसागरो-वमाणि[3] । पुरिसवेदस्स मदिआवरणभंगो ।

णिरयगइणामाए भुजगार० जहण्णुक्क० अंतोमुहुत्तं । अप्पदर० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० बे-छावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि । अवट्ठिदसंकमो णत्थि । तिरिक्खगइणामाए भुजगारसंकमो हेदुणा उवएसेण च जहण्णुक्क० अंतोमुहुत्तं । अप्पदर० तिरिक्खगइणामाए जह० अंतोमुत्तं, उक्क० तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं । अवट्ठिय० णत्थि । मणुसगइ-

---

मतिज्ञानावरणके समान है । हास्य, रति, अरति, शोक, स्त्रीवेद और नपुंसकवेद; इनके भुजाकार व अल्पतर संक्रामकोंका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है । इनका अवस्थित संक्रम नहीं होता । विशेष इतना है कि स्त्रीवेदके अल्पतर संक्रामकका काल उत्पर्षसे साधिक दो छयासठ सागरोपम मात्र है, तथा नपुंसकवेदके अल्पतर संक्रामका उत्कृष्ट काल तीन पल्योपमोंसे सहित दो छयासठ सागरोपम मात्र है। पुरुपवेदकी प्ररूपणा मतिज्ञाना-वरणके समान है ।

नरकगति नामकर्मके भुजाकार संक्रामकका काल जघन्य और उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है। अल्पतर संक्रामकका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे साधिक दो छयासठ सागरोपम मात्र है। अवस्थित संक्रम उसका नहीं होता। तिर्यंचगति नामकर्मके भुजाकार संक्रमका जघन्य व उत्कृष्ट काल हेतु और उपदेशसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है । तिर्यंचगति नामकर्मके अल्पतर संक्रमका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे साधिक एक सौ तिरेसठ सागरोपम मात्र है। अवस्थित संक्रम उसका नहीं होता। मनुष्यगति नामकर्मके भुजाकार संक्रमका काल

असंखेज्जदिभागो । अप्पदरसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण बेछावट्ठिसागरो-वमाणि सादिरेयाणि । अवट्ठिदसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण संखेज्जा समया । अवत्तव्वसंकामगो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ । क. पा. सु. पृ. ४३०, ३२९–३९.

५ ताप्रतौ 'वारसकसाय-दुगुंछाणं' इति पाठः ।

६ बारसकसाय-पुरिसवेद-भय-दुगुंछाणं भुजगार-अप्पदरसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेणेयसमओ । उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो । अवट्ठिदसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण संखेज्जा समया । अवत्तव्वसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ । क. पा. सु. पृ. ४३१, ३४०-४७.

१ हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं, भुजगार-अप्पयरसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं । क. पा. सु. पृ. ४३२, ३६०-६२.

२ अप्पयरसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एगसमओ । उक्कस्सेण वे छावट्ठिसागरोवमाणि संखेज्जवस्सब्भहियाणि । क. पा. सु. पृ. ४३१, ३५१-५३.

३ णवुंसयवेदस्स अप्पयरसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण वे छावट्ठि-सागरोवमाणि तिण्णि पलिदोवमाणि सादिरेयाणि । सेसाणि इत्थिवेदभंगो । क. पा. सु. पृ. ४३२, ३५६-५९.

णामाए भुजगार० जह० एगसमओ । उक्क० पलिदो० असंखे० भागो, हेदुणा तेत्तीस-सागरोवमाणि समयूणाणि । अप्पदर० जह० एगसमओ । उक्क० पलिदो० असंखे० भागो, हेदुणा तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि। अवट्ठिद० जह० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया । देवगइणामाए भुजगार० जह० एगसमओ । उक्क० पलिदो० असंखे० भागो, हेदुणा तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि । अप्पदर० जह० एगसमओ । उक्क० पलिदो० असंखे० भागो, हेदुणा तेत्तीसं सागरोवमाणि सादि० । अवट्ठिय० जहण्णेण एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया ।

ओरालियसरीर० भुजगार० जह० एगसमओ । उक्क० पलिदो० असंखे० भागो, हेदुणा तेत्तीसं सागरोवमाणि समयूणाणि । अप्पदर० जह० एगस० । उक्क० पलिदो० असं० भागो, हेदुणा तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि । अवट्ठिय० जह० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया । वेउव्वियसरीरस्स देवगइभंगो ।

धुवबंधीणं सव्वणामपयडीणं मदिणाणावरणभंगो । समचउरससंठाणस्स भुजगार-अप्पदरकालो जह० एगसमओ । उक्क० उवदेसेण पलिदो० असंखे० भागो, हेदुणा भुजगारकालो अप्पदरकालो च तेत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि । अवट्ठिद० जह० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया । वज्जरिसहणारायणसंघडणस्स मणुसगइभंगो ।

जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है, युक्तिसे वह एक समय कम तेतीस सागरोपम मात्र है । उसके अल्पतर संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय मात्र है । उत्कर्षसे वह पल्योपमके असंख्यातवें भाग तथा हेतुसे साधिक तीन पल्य प्रमाण है । अवस्थि संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे संख्यात समय मात्र है । देवगति नामकर्मके भुजाकार संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय मात्र है । उत्कर्षसे वह पल्योपमके असंख्यातवें भाग तथा हेतुसे साधिक तीन पल्योपम प्रमाण है । अल्पतर संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय मात्र है । उत्कर्षसे वह पल्योपमके असंख्यातवें भाग तथा हेतुसे साधिक तेतीस सागरोपम मात्र है । अवस्थित संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे संख्यात समय मात्र है ।

औदारिकशरीरके भुजाकार संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय मात्र है । उत्कर्षसे वह पल्योपमके असंख्यातवें भाग तथा हेतुसे एक समय कम तेतीस सागरोपम मात्र है । अल्पतर संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय मात्र है । उत्कर्षसे वह पल्योपमके भाग असंख्यातवें तथा हेतुसे साधिक तीन पल्योपम मात्र है । अवस्थित संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे संख्यात समय मात्र है । वैक्रियिकशरीरकी प्ररूपणा देवगतिके समान है ।

सब ध्रुवबन्धी नामप्रकृतियोंकी प्ररूपणा मतिज्ञानावरणके समान है । समचतुरस्र-संस्थानके भुजाकार और अल्पतर संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय मात्र है । उत्कर्षतः वह उपदेशसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग तथा हेतुसे भुजाकार संक्रामक व अल्पतर संक्रामक दोनों ही काल साधिक तेतीस सागरोपम मात्र हैं । अवस्थित संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे संख्यात समय है । वज्रर्षभवज्रनाराचसंहननकी प्ररूपणा मनुष्यगतिके समान है ।

चदुण्णमाणुपुव्वीणं सग-सगगइभंगो । पंचसंठाण-पंचसंघडण-आदावुज्जोव-अप्पसत्थविहायगइ-थावर-सुहुम-अपज्जत्त-साहारणसरीर-थिराथिर-सुहासुह-अजसकित्ति-दूभग-दुस्सर-अणादेज्जाणं भुजगार० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु० । अप्पदर० जह० एगसमओ । उक्क० थिराथिर-सुहासुह-अजसकित्ति० अंतोमुहुत्तं, उज्जोवस्स तिपल्लाहियं तेवट्ठिसागरोवमसदं, आदाव-थावर-सुहुम-अपज्जत्त-साहारणाणं पंचासीदिसागरोवमसदं, पंचसंठाण-पंचसंघडण- अप्पसत्थविहायगइ- दूभग-दुस्सर-अणादेज्जाणं तिपलिदोवमाहिय-बे-छावट्ठिसागरोवमाणि । अवट्ठिय० णत्थि ।

परघाद-उस्सास-पसत्थविहायगइ-तस-बादर-पज्जत्त-पत्तेयसरीर-सुभग-आदेज्ज-सुस्सराणं समचउरससंठाणभंगो । उच्चागोदस्स भुजगारसंकमो जह० एगसमओ, उक्क० आवलिया । अप्पदर० जह० एगसमओ, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि सादिरेयाणि । उच्चागोदस्स उव्वेल्लणाए[1] अपच्छिमे ट्ठिदिखंडए भुजगारो अंतोमुहुत्तं । अवट्ठिय० णत्थि । णीचागोदस्स भुजगार० खवण-उवसामणाहि विणा आवलिया, खवण-उवसामणाहि अंतोमुहुत्तं । अप्पदर० जह० एगसमओ, उक्क० बे-छावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि । अवट्ठिय० णत्थि । एवमेयजीवेण कालो समत्तो ।

चार आनुपूर्वी प्रकृतियोंकी यह प्ररूपणा अपनी अपनी गतिके समान है । शेष पांच संस्थान, पांच संहनन, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारणशरीर, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, अयशकीर्ति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय; इनके भुजाकार संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त मात्र है । उनके अल्पतर संक्रामकका काल जघन्यसे एक समय है । उत्कर्षसे वह स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ और अयशकीर्तिका अन्तर्मुहूर्त; उद्योतका तीन पल्योंसे अधिक एक सौ तिरेसठ सागरोपम; आतप, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणशरीरका एक सौ पचासी सागरोपम; तथा पांच संस्थान, पांच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेयका तीन पल्योपमोंसे अधिक दो छयासठ सागरोपम मात्र है । उनका अवस्थित संक्रम नहीं होता ।

परघात, उच्छ्वास, प्रशस्तविहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, सुभग, आदेय और सुस्वरकी प्ररूपणा समचतुरस्रसंस्थानके समान है । उच्चगोत्रके भुजाकार संक्रमका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे आवली मात्र है । उसके अल्पतरसंक्रामकका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे साधिक तेतीस सागरोपम मात्र है । उच्चगोत्रकी उद्वेलनाके अन्तिम स्थितिकाण्डकमें भुजाकार संक्रमका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है । इसका अवस्थित संक्रम नहीं है । नीचगोत्रके भुजाकार संक्रमका काल क्षपणा व उपशामनाके विना एक आवली तथा क्षपणा व उपशामनाके साथ अन्तर्मुहूर्त मात्र है । अल्पतर संक्रमका काल जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे साधिक छयासठ सागरोपम मात्र है । अवस्थित संक्रम नहीं है । इस प्रकार एक जीवकी अपेक्षा कालकी प्ररूपणा समाप्त हुई ।

---

१ अप्रतौ 'उच्चागोदउव्वेल्लणाए' इति पाठः ।

एगजीवेण अंतरं णाणाजीवेहि भंगविचओ कालो अंतरं च सामित्तादो एयजीवेण कालादो च साधेदूण भाणियव्वं।

अप्पाबहुअं। तं जहा— मदिआवरणस्स अवत्तव्वसंकामया थोवा। अवट्ठिय० अणंतगुणा। अप्पदर० असंखे० गुणा। भुजगार० संखे० गुणा। सेसचदुणाणावरण-णवदंसणावरण-पंचंतराइयाणं मदिआवरणभंगो। सादासादाणं अवत्तव्व० थोवा। भुजगार० असंखे० गुणा। अप्पदर० संखे० गुणा, एगावलियसंचिदभुजगारसंकामयं-जीवेहिंतो अंतोमुहुत्तसंचिदअप्पदरसंकामयजीवाणं संखेज्जगुणत्तसिद्धीए णिव्वाहमुवलंभादो। सोलसकसाय-भय-दुगुंछाणं मदिआवरणभंगो[2]। हस्स-रदीणमवत्त० थोवा। भुज० अणंतगुणा। अप्पदर० संखे० गुणा। एवमित्थिवेदस्स[3]। अरदि-सोगाणमवत्त० थोवा। अप्पदर० अणंतगुणा। भुजगार० संखे० गुणा। एवं णवुंसयवेदस्स[4]। पुरिसवेदस्स

एक जीवकी अपेक्षा अन्तर एवं नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय, काल और अन्तरका कथन स्वामित्वसे तथा एक जीवकी अपेक्षा कालसे भी सिद्ध करके करना चाहिये।

अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा की जाती है। *यथा*—मतिज्ञानावरणके अवक्तव्य संक्रामक स्तोक हैं। अवस्थित संक्रामक अनन्तगुणे हैं। अल्पतर संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। भुजाकार संक्रामक संख्यातगुणे हैं। शेष चार ज्ञानावरण नौ, दर्शनावरण और पांच अन्तराय प्रकृतियोंका यह अल्पबहुत्व मतिज्ञानावरणके समान है।

साता और असाता वेदनीयके अवक्तव्य संक्रामक स्तोक हैं। भुजाकार संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अल्पतर संक्रामक संख्यातगुणे हैं, क्योंकि, एक आवलीमें संचित भुजाकार संक्रामक जीवोंकी अपेक्षा अन्तर्मुहूर्त संचित अल्पतर संक्रामक जीवोंके संख्यातगुणत्वकी सिद्धि-निर्बाध पायी जाती है।

सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी प्ररूपणा मतिज्ञानावरणके समान है। हास्य और रतिके अवक्तव्य संक्रामक स्तोक हैं। भुजाकार संक्रामक अनन्तगुणे हैं। अल्पतर संक्रामक संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार स्त्रीवेदके सम्बन्धमें कहना चाहिये। अरति और शोकके अवक्तव्य संक्रामक स्तोक हैं। अल्पतर संक्रामक अनन्तगुणे हैं। भुजाकार संक्रामक संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार नपुंसकवेदके सम्बन्धमें कहना चाहिये। पुरुषवेदके अवक्तव्य संक्रामक स्तोक हैं।

१ प्रतिषु 'संकामिय' इति पाठः।

२ सोलसकसाय-भय-दुगुंछाणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया। अवट्ठिदसंकामया अणंतगुणा। अप्पयर-संकामया असंखेज्जगुणा। भुजगारसंकामया संखेज्जगुणा। क. पा. सु. पृ. ४४३, ५०४–७.

३ इत्थिवेद–हस्स-रदीणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया। भुजगारसंकामया अणंतगुणा। अप्पयरसंकामया संखेज्जगुणा। क. पा. सु. पृ. ४४३, ५०८-१०.

४ णवुंसयवेद-अरइ-सोगाणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया। अप्पदरसंकामया अणंतगुणा। भुजगारसंकामया संखेज्जगुणा। क. पा. सु. पृ. ४४४, ५१५–१७.

अवत्तव्व० थोवा। अवट्ठिय० असंखे० गुणा। भुजगार० अणंतगुणा। अप्पदर० संखे० गुणा।[1] मिच्छत्तस्स अवट्ठिदसंकामया थोवा। अवत्तव्व०असंखे० गुणा। भुजगार०असंखे० गुणा। अप्पदर० असंखे० गुणा।[2] सम्मत्तस्स अवत्तव्व० थोवा। भुजगार० असंखे० गुणा। अप्पदर० असंखे० गुणा। सम्मामिच्छत्तस्स सम्मत्तभंगो[3]।

णिरयगइ० अवत्तव्वया थोवा। भुजगार० असंखे० गुणा। अप्पदर० असंखे० गुणा। तिरिक्खगइणामाए अवत्त० थोवा। अप्पदर० अणंतगुणा। भुजगार० संखे० गुणा। मणुसगइणामाए अवट्ठिद० थोवा। अवत्तव्व० असंखे० गुणा। भुजगार० अणंतगुणा। अप्पदर० संखे० गुणा। देवगइणामाए अवट्ठिद० थोवा। अवत्तव्व० असंखे० गुणा। भुजगार० असंखे० गुणा। अप्पदर० असंखे० गुणा।

ओरालिय-तेजा-कम्मइयसरीराणं मदिआवरणभंगो। सव्वासिं धुवबंधिणामपयडीणं णाणावरणभंगो। पढमसंठाण-पढमसंघडणाणं मणुसगइभंगो। चदुसंठाण-चदुसंघडणाणं अवत्तव्व० थोवा। भुजगार० अणंतगुणा। अप्पदर० संखे० गुणा। हुंडसंठाण-असंपत्त-

---

अवस्थित संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। भुजाकार संक्रामक अनन्तगुणे हैं। अल्पतर संक्रामक संख्यातगुणे हैं। मिथ्यात्वके अवस्थित संक्रामक स्तोक हैं। अवक्तव्य संक्रामक असंख्यात-गुणे हैं। भुजाकार संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अल्पतर संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्व प्रकृतिके अवक्तव्य संक्रामक स्तोक हैं। भुजाकार संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अल्पतर संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। सम्यग्मिथ्यात्वकी प्ररूपणा सम्यक्त्व प्रकृतिके समान है।

नरकगति नामकर्मके अवक्तव्य संक्रामक स्तोक हैं। भुजाकार संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अल्पतर संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। तिर्यंचगति नामकर्मके अवक्तव्य संक्रामक स्तोक हैं। अल्पतर संक्रामक अनन्तगुणे हैं। भुजाकार संक्रामक संख्यातगुणे हैं। मनुष्यगति नामकर्मके अवस्थित संक्रामक स्तोक हैं। अवक्तव्य संक्रामक असंख्यातगुणे। भुजाकार संक्रामक अनन्त-गुणे हैं। अल्पतर संक्रामक संख्यातगुणे हैं। देवगति नामकर्मके अवस्थित संक्रामक स्तोक हैं। अवक्तव्य संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। भुजाकार संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। अल्पतर संक्रामक असंख्यातगुणे हैं।

औदारिक, तैजस और कार्मण शरीरोंके प्रकृत अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा मतिज्ञानावरणके समान है। सब ध्रुवबन्धी नामप्रकृतियोंकी यह प्ररूपणा ज्ञानावरणके समान है। प्रथम संस्थान और प्रथम संहननकी प्ररूपणा मनुष्यगतिके समान है। चार संस्थानों और चार संहननोंके अवक्तव्य संक्रामक स्तोक हैं। भुजाकार संक्रामक अनन्तगुणे हैं। अल्पतर संक्रामक संख्यातगुणे

---

१ पुरिसवेदस्स सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया। अवट्ठिदसंकामया असंखेज्जगुणा। भुजगारसंकामया अणंतगुणा। अप्पयरसंकामया संखेज्जगुणा। क. पा. सु. पृ. ४४३, ५११–१४.

२ सव्वत्थोवा मिच्छत्तस्स अवट्ठिदसंकामया। अवत्तव्वसंकामया असंखेज्जगुणा। भुजगारसंकामया असंखेज्ज-गुणा। अप्पयरसंकामया असंखेज्जगुणा। क. पा. सु. पृ. ४४२, ४९७–५००.

३ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया। भुजगारसंकामया असंखेज्जगुणा। अप्पयर-संकामया असंखेज्जगुणा। क. पा. सु. पृ. ४४३, ५०१–५०३.

सेवट्टसंघडणाणं अवत्तव्व० थोवा । अप्पदर० अणंतगुणा । भुजागार० संखे० गुणा । णीचुच्चागोदाणं सादासादभंगो । एवं भुजगारसंकमो । समत्तो ।

एत्तो पदणिक्खेवो । सामित्तं । तं जहा— मदिआवरणस्स उकस्सिया वड्ढी कस्स ? जो गुणिदकम्मंसियो तप्पाओग्गउकस्सियाए वड्ढीए वड्ढिदो तदो तं वड्ढि वड्ढिदूणं आवलियादिक्कंतं पुव्वकम्मं च संकामेंतस्स सत्तमाए पुढवीए णेरइयस्स उक० वड्ढी । उक० हाणी कस्स ? गुणिदकम्मंसियस्स सव्वुकस्सेण कम्मेण खवयस्स चरिम-समयसुहुमसांपराइयस्स तस्स उकस्सिया हाणी । उकस्समवट्ठाणं कत्थ ? वड्ढीए । चदुणाणावरण-चदुदंसणावरण-पंचंतराइयाणं मदिणाणावरणभंगो ।

णिद्दा-पयलाणं उक० वड्ढी कस्स ? गुणिदकम्मंसियस्स चरिमसुहुमसांपराइयस्स खवगस्स । उक० हाणी कस्स ? जो गुणिदकम्मंसियो पढमदाए उवसमसेढिं चढिय चरिमसमयसुहुमसांपराइयो होदूण मदो, तस्स पढमसमयदेवस्स उक० हाणी । उकस्स-मवट्ठाणं मदिआवरणअवट्ठाणतुल्लं । थीणगिद्धितियस्स उक० वड्ढी कस्स ? गुणिद-कम्मंसियस्स सव्वसंकमेण संकामेंतस्स । उक० हाणी अवट्ठाणं च जहा णिद्दाए

हैं । हुण्डसंस्थान और असंप्राप्तासृपाटिकासंहननके अवक्तव्य संक्रामक स्तोक हैं । अल्पतर संक्रामक अनन्तगुणे हैं । भुजाकार संक्रामक संख्यातगुणे हैं । नीच और उच्च गोत्रकी प्ररूपणा साता व असाता वेदनीयके समान है । इस प्रकार भुजाकार संक्रम समाप्त हुआ ।

यहां पदनिक्षेपमें स्वामित्वकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है— मतिज्ञानावरणकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशिक जीव तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट वृद्धिके द्वारा वृद्धिको प्राप्त हुआ है, पश्चात् उस वृद्धिसे वृद्धिंगत होकर आवली अतिक्रान्त उसका तथा पूर्व कर्मका भी संक्रम कर रहा है उस सातवीं पृथिवीके नारकीके मतिज्ञानावरणकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है । उसकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशिक सर्वोत्कृष्ट कर्मके साथ क्षपणा करता हुआ सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समयमें वर्तमान है उसके मतिज्ञानावरणकी उत्कृष्ट हानि होती है । उसका उत्कृष्ट अवस्थान कहांपर होता है ? उसका उत्कृष्ट अवस्थान वृद्धिमें होता है । शेष चार ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पांच अन्तरायकी प्ररूपणा मतिज्ञानावरणके समान है ।

निद्रा और प्रचलाकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? वह गुणितकर्मांशिक अन्तिम-समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपकके होती है । उनकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशिक जीव प्रथमतः उपशमश्रेणिपर आरूढ होता हुआ अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्म-साम्परायिक होकर मरणको प्राप्त हुआ है उसके प्रथमसमयवर्ती देव होनेपर उनकी उत्कृष्ट हानि होती है । उनके उत्कृष्ट अवस्थानकी प्ररूपणा मतिज्ञानावरणके अवस्थानके समान है । स्त्यानगृद्धित्रिककी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? वह सर्वसंक्रम द्वारा संक्रान्त करनेवाले गुणितकर्मांशिकके होती है । उनकी उत्कृष्ट हानि और अवस्थानकी प्ररूपणा निद्राके समान

१ अप्रतौ 'तं वड्ढिदूण' इति पाठः ।

तहा वत्तव्वं ।

सादस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स ? जो गुणिदकम्मंसियो कसाए तिखुत्तमुवसामेदूण चउत्थवारमुवसामेंतो चरिमसमयसुहुमसांपराइयो जादो, तदो मदो देवो जादो, तस्स आवलियतब्भवत्थस्स देवस्स उक्क० वड्ढी । एदिस्सेव से काले उक्क० हाणी । अवट्ठाणं णत्थि । असादस्स उक्क० वड्ढी कस्स ? जो गुणिदकम्मंसियो खवगसेडिमारुहिय चरिमसमयसुहुमसांपराइयो जादो तस्स उक्क० वड्ढी । उक्क० हाणी कस्स ? जो गुणिदकम्मंसियो उवसमसेडिमारुहिय सुहुमसांपराइयो जादो से काले मदो तस्स पढमसमयदेवस्स उक्क० हाणी । अवट्ठाणं णत्थि ।

मिच्छत्तस्स उक्क० वड्ढी कस्स ? जो गुणिदकम्मंसियो मिच्छत्तस्स चरिमफालिं सव्वसंकमेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु संकामेंतओ तस्स उक्क० वड्ढी । उक्क० हाणी कस्स ? जो गुणिदकम्मंसियो गहिदपढमसम्मत्तो सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि उक्कस्सगुणसंकमेण पूरिय से काले विज्झादसंकमं गदो तस्स उक्क० हाणी । उक्कस्समवट्ठाणं कस्स ? जो पुव्वाइदेण सम्मत्तेण गुणिदकम्मंसियो उक्कस्साए[1] जोगवड्ढीए वड्ढिदूण से काले जो समयपबद्धो तदो विसेसुत्तरे जोगट्ठाणे पडिवदिदो, तदो से काले सम्मत्तं

करना चाहिये ।

सातावेदनीयकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशिक कषायोंको तीन वार उपशमा कर चौथे वार उपशमाता हुआ अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक होकर मरणको प्राप्त हो देव हुआ है, उस आवली कालवर्ती तद्भवस्थ देवके उसकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है । इसीके अनन्तर कालमें उनकी उत्कृष्ट हानि होती है । अवस्थान नहीं होता । असातावेदनीयकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशिक क्षपकश्रेणिपर आरूढ होकर अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक हुआ है उसके उसकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है । उसकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशिक उपशमश्रेणिपर आरूढ होकर सूक्ष्मसाम्परायिक होता हुआ अनन्तर समयमें मृत्युको प्राप्त हुआ है उसके प्रथम समयवर्ती देव होनेपर असातावेदनीयकी उत्कृष्ट हानि होती है । अवस्थान उसका नहीं होता ।

मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशिक मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको सर्वसंक्रम द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रान्त रहा है उसके मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है । मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशिक प्रथम सम्यक्त्वको ग्रहण कर सम्यक्त्व प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्वको उत्कृष्ट गुणसंक्रमके द्वारा पूर्ण करके अनन्तर कालमें विध्यातसंक्रमको प्राप्त हुआ है उसके उसकी उत्कृष्ट हानि होती है । उसका उत्कृष्ट अवस्थान किसके होता है ? जो गुणितकर्मांशिक पूर्व आगत सम्यक्त्वके साथ उत्कृष्ट योगवृद्धिसे वृद्धिको प्राप्त होकर अनन्तर कालमें जो समयप्रबद्ध है उससे विशेषाधिक योगस्थानमें गिरता है, पश्चात् जो अनन्तर कालमें सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ है,

१ अ-काप्रत्योः 'उक्कस्सए' इति पाठः ।

पडिवण्णो, तस्स जाधे उक्कस्सिया वड्ढी आवलियमइक्कंता ताधे उक्कस्सिया मिच्छत्तस्स पदेससंकमवड्ढी। तिस्सेव से काले उक्कस्समवट्ठाणं[1]।

सम्मत्तस्स उक्क० वड्ढी कस्स? जो उक्क० कम्मेण मिच्छत्तं गदो, तदो सव्व-रहस्सेण उव्वेल्लणकालेणं[2] सम्मत्तमुव्वेल्लेदि, तस्स अपच्छिमट्ठिदिखंडयस्स चरिमसमए उक्क० वड्ढी। उक्क० हाणी कस्स? जो उक्कस्सएण कम्मेण मिच्छत्तं गदो तस्स दुसमय-मिच्छाइट्ठिस्स उक्क० हाणी। अवट्ठाणं णत्थि त्ति[3]।

सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सवड्ढि-हाणीणं मिच्छत्तस्स वड्ढि-हाणिभंगो। अव-ट्ठाणं णत्थि[4]।

अणंताणुबंधीणं उक्कस्सिया वड्ढी कस्स? गुणिदकम्मंसियस्स सव्वसंकमेण चरिमफालिं संकामेंतस्स। उक्क० हाणी कस्स? जो गुणिदकम्मंसियो सम्मत्तं पडिवण्णो

उसके जब उत्कृष्ट वृद्धि आवली अतिक्रान्त होती है तब मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमवृद्धि होती है। उसीमें उसका अनन्तर कालमें अवस्थान होता है।

सम्यक्त्व प्रकृतिकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो उत्कृष्ट सत्कर्मके साथ मिथ्यात्वको प्राप्त होकर पश्चात् सबसे थोड़े उद्वेलनकालमें सम्यक्त्वकी उद्वेलना करता है उसके अन्तिम स्थितिकाण्डकके अन्तिम समयमें उसकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उसकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो उत्कृष्ट सत्कर्मके साथ मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है उस द्वितीय समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके उसकी उत्कृष्ट हानि होती है। अवस्थान उसका नहीं है।

सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि और हानिकी प्ररूपणा मिथ्यात्वकी वृद्धि और हानिके समान है। अवस्थान उसका नहीं है।

अनन्तानुबन्धी कषायोंकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? उसकी उत्कृष्ट वृद्धि सर्वसंक्रम द्वारा अन्तिम फालिको संक्रान्त करनेवाले गुणितकर्मांशिकके होती है। उनकी उत्कृष्ट हानि

---

१ मिच्छत्तस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स? गुणिदकम्मंसियस्स मिच्छत्तक्खवयस्स सव्वसंकामयस्स। उक्कस्सिया हाणी कस्स? गुणिदकम्मंसियस्स सम्मत्तमुप्पाएदूण गुणसंकमेण संकामिदूण पढमसमयविज्झादसंकामयस्स। उक्कस्सयमवट्ठाणं कस्स? गुणिदकम्मंसिओ पुव्वुप्पण्णेण सम्मत्तेण मिच्छत्तादो सम्मत्तं गदो तं दुसमयसम्माइट्ठिमादिं कादूण जाव आवलियसम्माइट्ठि त्ति एत्थ अण्णदरम्मि समये तप्पाओग्गउक्कस्सेण वड्ढिं कादूण से काले तत्तियं संकामयमाणस्स तस्स उक्कस्सयमवट्ठाणं। क. पा. सु. पृ. ४४५, ५२६-३१.

२ ताप्रतौ 'उव्वेलणकाले [ण]' इति पाठः।

३ सम्मत्तस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स? उव्वेल्लमाणयस्स चरिमसमए। उक्कस्सिया हाणी कस्स? गुणिद-कम्मंसियो सम्मत्तमुप्पाएदूण लहुं मिच्छत्तं गओ। तस्स मिच्छाइट्ठिस्स पढमसमए अवत्तव्वसंकमो, विदियसमए उक्कस्सिया हाणी। क. पा. सु. पृ. ४४६, ५३२-३५.

४ सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स? गुणिदकम्मंसियस्स सव्वसंकामयस्स। उक्कस्सिया हाणी कस्स? उप्पादिदे सम्मत्ते सम्मामिच्छत्तादो सम्मत्ते जं संकामेदि तं पदेसग्गमंगुलस्सासंखेज्जभागपडिभागं। गुणिदकम्मंसिओ सम्मत्तमुप्पाएदूण लहुं चेव मिच्छत्तं गदो जहण्णियाए मिच्छत्तद्धाए पुण्णाए सम्मत्तं पडिवण्णो। तस्स पढमसमयसम्माइट्ठिस्स उक्कस्सिया हाणी। क. पा. सु. पृ. ४४६, ५३६-४०.

तस्स पढमसमयसम्माइट्ठिस्स उक्क० हाणी। उक्कस्समवट्ठाणं मदिआवरणउक्कस्साव-ट्ठाणतुल्लं[1]।

अट्ठण्णं कसायाणं उक्क० वड्ढी कस्स? जो गुणिदकम्मंसियो सव्वसंकमेण चरिम-फालिं संकामेंतओ तस्स उक्क० वड्ढी। दुविहस्स कोहस्स उक्क० हाणी कस्स? जो गुणिदकम्मंसियो उवसमसेढिमारुहिय दुविहे कोहे चरिमसमयअणुवसंते तदो से काले मदो तस्स पढमसमयदेवस्स उक्क० हाणी। दुविहमाण-माया-लोहाणं हाणीए दुविह-कोहभंगो। अट्ठण्णं कसायाणमुक्कस्समवट्ठाणं मदिआवरणअवट्ठाणतुल्लं[2]।

कोहसंजलणाए उक्क० वड्ढी कस्स? जो गुणिदकम्मंसियो सव्वसंकमेण चरिमफालिं संकामेंतओ तस्स उक्क० वड्ढी। तस्सेव से काले उक्क० हाणी। उक्कस्समवट्ठाणं हाणीए

किसके होती है? जो गुणितकर्मांशिक सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ है उस प्रथम समयवर्ती सम्यग्दृष्टिके उनकी उत्कृष्ट हानि होती है। उनके उत्कृष्ट अवस्थानका कथन मतिज्ञानावरणके उत्कृष्ट अवस्थानके समान है।

आठ कषायोंकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो गुणितकर्मांशिक सर्वसंक्रम द्वारा अन्तिम फालिको संक्रान्त कर रहा है उसके आठ कषायोंकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। दो प्रकार (अप्रत्याख्यानावरण और प्रत्याख्यानावरण) क्रोधकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो गुणितकर्मांशिक उपशमश्रेणिपर आरूढ होकर दो प्रकारके क्रोधके अनुपशान्त रहनेके अन्तिम समय पश्चात् अनन्तर कालमें मरणको प्राप्त हुआ है उस प्रथम समयवर्ती देवके उसकी उत्कृष्ट हानि होती है। दो प्रकारके मान, माया और लोभकी हानिकी प्ररूपणा दो प्रकारके क्रोधके समान है। आठ कषायोंके उत्कृष्ट अवस्थानकी प्ररूपणा मतिज्ञानावरणके अवस्थानके समान है।

संज्वलन क्रोधकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो गुणितकर्मांशिक सर्वसंक्रम द्वारा अन्तिम फालिको संक्रान्त कर रहा है उसके उसकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उसीके अनन्तर कालमें उसकी उत्कृष्ट हानि होती है। उत्कृष्ट अवस्थान हानिमें करना चाहिये। जैसे संज्वलन क्रोधकी

---

१ अणंताणुबंधीणमुक्कस्सियावड्ढी कस्स? गुणिदकम्मंसियस्स सव्वसंकामयस्स। उक्कस्सिया हाणी कस्स? गुणिदकम्मंसिओ तप्पाओग्गउक्कस्सयादो अधापवत्तसंकमादो सम्मत्तं पडिवज्जिऊण विज्झादसंकामगो जादो। तस्स पढमसमयसम्माइट्ठिस्स उक्कस्सिया हाणी। उक्कस्सयमवट्ठाणं कस्स? जो अधापवत्तसंकमेण तप्पाओग्गु-क्कस्सएण वड्ढिदूण अवट्ठिदो तस्स उक्कस्सयमवट्ठाणं। क. पा. सु. पृ. ४४७, ५४१–४६.

२ अट्ठकसायाणमुक्कस्सिया वड्ढी कस्स? गुणिदकम्मंसियस्स सव्वसंकामयस्स। उक्कस्सिया हाणी कस्स? गुणिदकम्मंसियो पढमदाए कसायउवसामणद्धाए जाधे दुविहस्स कोहस्स चरिमसमयसंकामगो जादो। तदो से काले मदो देवो जादो। तस्स पढमसमयदेवस्स उक्कस्सिया हाणी। एवं दुविहमाण-दुविहमाया-दुविहलोहाणं। णवरि अप्पप्पणो चरिमसमयसंकामगो होदूण से काले मदो देवो जादो। तस्स पढमसमयदेवस्स उक्कस्सिया हाणी। अट्ठण्हं कसायाणमुक्कस्सयमवट्ठाणं कस्स? अधापवत्तसंकमेण तप्पाओग्गउक्कस्सएण वड्ढियूण से काले अवट्ठिदसंकामगो जादो। तस्स उक्कस्सयमवट्ठाणं। क. पा. सु. पृ. ४४७, ५४७–५४.

कायव्वं[1]। जहा कोहसंजलणाए तहा माण-माया-पुरिसवेद[2]-छण्णोकसायाणं कायव्वं[3]। णवरि छण्णोकसायाणं उक्कस्सिया हाणी चरिमसमयअणुवसंते से काले मदो देवो जादो तस्स पढमसमयदेवस्स उक्क० हाणी। चदुणोकसायाणमवट्ठाणं णत्थि। भय-दुगुंछाण-मवट्ठाणं[4] मदिआवरणभंगो।

इत्थि-णवुंसयवेदाणमुक्क० वड्ढी कस्स? जो गुणिदकम्मंसियो सव्वसंकमेण चरिम-फालिं संकामेंतओ तस्स उक्कस्सिया वड्ढी। उक्क० हाणी कस्स? जो गुणिदकमंसियो

प्ररूपणा की गयी है उसी प्रकार संज्वलन मान, माया, पुरुषवेद और छह नोकषायोंकी प्ररूपणा करना चाहिये। विशेषता इतनी है कि छह नोकपायोंकी उत्कृष्ट हानि उनके अनुपशान्त रहनेके अन्तिम समयके पश्चात् अनन्तर कालमें (जहां वे उपशान्त होनेवाले थे) जो मरणको प्राप्त होकर देव हुआ है, उस प्रथम समयवर्ती देवके होती है। चार नोकपायोंका (हास्य, रति, अरति और शोक) का अवस्थान नहीं है। भय और जुगुप्साके अवस्थानकी प्ररूपणा मति-ज्ञानावरणके समान है।

विशेपार्थ— यहां संज्वलन लोभके स्वामित्वकी प्ररूपणा नहीं की गयी है (सम्भव है प्रतिलिपिकारकी असावधानीसे वह लिखनेसे रह गयी हो)। उसकी प्ररूपणा कसायपाहुड (चूर्णिसूत्र) में इस प्रकार की गयी है— संज्वलन लोभकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जिस गुणितकर्मांशिक जीवने अल्प कालमें चार वार कपायोंको उपशान्त किया है, तथा जो अन्तिम भवमें दो वार कपायोंको उपशान्त कर क्षपणामें उद्यत हुआ है, उसके जब अकृतअन्तरकरण अवस्थाका अन्तिम समय प्राप्त होता है तब उसकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उसकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो गुणितकर्मांशिक तीन वार कपायोंको उपशान्त कर चौथी वार उनके उपशान्त करनेमें प्रवर्तमान है वह जब अन्तिम समयवर्ती अकृतअन्तरकरण रहनेके अनन्तर समयमें मरणको प्राप्त होकर देव होता है तब उसके देव होनेके पश्चात् एक समय अधिक आवली मात्र कालके बीतनेपर उसकी उत्कृष्ट हानि होती है। उसके उत्कृष्ट अवस्थानकी प्ररूपणा अप्रत्याख्यानावरणके समान है। (देखिये क. पा. सु. पृ. ४४९, ५६३–६७)

स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो गुणितकर्मांशिक सर्व-संक्रमण द्वारा अन्तिम फालिको संक्रान्त कर रहा है उसके उनकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उनकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो गुणितकर्मांशिक अन्तिम समयवर्ती उपशामक होकर

१ कोहसंजलणस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स? जस्स उक्कस्सओ सव्वसंकमो तस्स उक्कस्सिया वड्ढी। तस्सेव से काले उक्कस्सिया हाणी। णवरि से काले संकमपाओग्गा समयपबद्धा जहण्णा कायव्वा। तं जहा— जेसिं से काले आवलियमेत्ताणं समयपबद्धाणं पदेसग्गं संकामिज्जहिदि ते समयपबद्धा तप्पाओग्गजहण्णा। एदीए परूवणाए सव्वसंकमं संछुहिदूण जस्स से काले पुव्वपरूविदो संकमो तस्स उक्कस्सिया हाणी कोहसंजलणस्स। तस्सेव से काले उक्कस्सयमवट्ठाणं। क. पा. सु. पृ. ४४८, ५५५–६१.

२ ताप्रतौ 'माण-माय······पुरिसवेद-' इति पाठः।

३ जहा कोहसंजलणस्स तहा माण-मायासंजलण-पुरिसवेदाणं। क. पा. सु. पृ. ४४९, ५६२.

४ अ-काप्रत्योः 'दुगुंछावट्ठाणं' इति पाठः।

चरिमसमयउवसामओ संतो मदो तस्स पढमसमयदेवस्स उक्क० हाणी। अवट्ठाणं णत्थि।

किमट्ठं छण्णोकसायाणं णावट्ठाणं ? वुच्चदे— बंधाभावकाले ण ताव अवट्ठाणसंकमो अत्थि, अद्धट्ठिदिगलणाए परपयडिसंकमेण च[2] पडिसमयं झिज्जमाण[3]कम्मपदेसाए पयडीए बंधाभावेण अपडिग्गहेण अण्णपयडीहिंतो आगच्छमाणकम्मपोग्गलविरहियाए हाणिसंकमं मोत्तूण[4] अवट्ठाणाणुववत्तीदो। बंधकाले वि णत्थि, वयादो असंखेज्जगुणायदंसणादो[5]। तं जहा— छण्णोकसाएसु अप्पिदपयडीए गलमाणदव्वमेगसमयपबद्धस्स संखेज्जदिभाग-मेत्तं संखेज्जा भागा वा होदि, आगच्छमाणदव्वं पुण कम्मइयवग्गणादो एग-समयपबद्धमेत्तं बंधविरहिदमोहपयडीहिंतो अधापवत्तसंकमेण असंखेज्जसमयपबद्धमेत्तं च दव्वमागच्छदि[6]। तेण बंधकाले वड्ढिसंकमो चेव, णावट्ठियसंकमो[7]।

सगदव्वमधापवत्तसंकमेण बज्झमाणपयडीसु गच्छंतमत्थि त्ति वओ वि असंखेज्ज-समयपबद्धमेत्तो[8] अत्थि त्ति किण्ण वुच्चदे ? ण, बंधपयडीदो बंधपयडीसु गच्छंतदव्व-

---

मरणको प्राप्त हुआ है उस प्रथम समयवर्ती देवके उनकी उत्कृष्ट हानि होती है। उनका अवस्थान नहीं है।

शंका छह नोकषायोंका अवस्थान किसलिये नहीं होता ?

समाधान— इस शंकाके उत्तरमें कहते हैं कि [यदि उनका अवस्थान सम्भव है तो क्या वह बन्धके अभावकालमें होता है या बन्धकालमें ?] बन्धके अभावकालमें तो उनका अवस्थानसंक्रम सम्भव नहीं है, क्योंकि, अद्धस्थितिगलनसे और परप्रकृतिसंक्रमणसे भी प्रतिसमयमें क्षीण होनेवाले कर्मप्रदेशसे संयुक्त तथा बन्धाभावके कारण प्रतिग्रह (अन्य प्रकृतिके द्रव्यका ग्रहण) रहित होनेसे अन्य प्रकृतियोंसे आनेवाले कर्म-पुद्गलोंसे विरहित विवक्षित प्रकृतिके हानिसंक्रमको छोड़कर अवस्थानसंक्रम बनता नहीं है। बन्धकालमें भी वह सम्भव नहीं है, क्योंकि, उस समय व्ययकी अपेक्षा आय असंख्यातगुणी देखी जाती है। वह इस प्रकारसे— उक्त छह नोकषायोंमें विवक्षित प्रकृतिका गलनेवाला द्रव्य एक समयप्रबद्धके संख्यातवें भाग मात्र अथवा संख्यात बहुभाग मात्र होता है, परन्तु उसका आनेवाला द्रव्य कार्मण वर्गणासे एक समयप्रबद्ध मात्र तथा बन्धरहित मोहप्रकृतियोंसे अधःप्रवृत्तसंक्रम द्वारा असंख्यात समय-प्रबद्ध मात्र द्रव्य आता है। इस कारण बन्धकालमें वृद्धिसंक्रम ही होता है, अवस्थान-संक्रम नहीं होता।

शंका— चूंकि अपना द्रव्य अधःप्रवृत्तसंक्रम द्वारा बध्यमान प्रकृतियोंमें जा रहा है, अतएव व्यय भी उनका असंख्यात समयप्रबद्ध मात्र है; ऐसा क्यों नहीं कहते ?

समाधान— नहीं, क्योंकि बन्धप्रकृतियोंसे बन्धप्रकृतियोंमें जानेवाले द्रव्यके समान ही

---

१ मप्रतिपाठोऽयम्। अ-का-ता प्रतिषु 'अघट्ठिदि' इति पाठः। २ अप्रतावस्य स्थाने 'वि' इति पाठः। ३ अप्रतौ 'छिज्जमाण' इति पाठः। ४ अ-काप्रत्योः 'घेत्तूण' इति पाठः।
५ प्रतिषु 'असंखेज्जगुणपदंसणादो' इति पाठः। ६ ताप्रतौ 'मेत्तं च [दव्वं] आगच्छदि' इति पाठः।
७ मप्रतौ 'णोवट्ठियसंकमो' इति पाठः। ८ अ-काप्रत्योः 'मेत्ता' इति पाठः।

समाणदव्वस्स तेहिंतो आगच्छमाणस्स उवलंभेण वयाभावादो। पदेससंतभुजगाराभावे वि परिणामवसेण संकमभुजगारस्सेव तव्वसेण अवट्ठाणसंकमो अत्थि त्ति किण्ण वुच्चदे ? ण, पडिसेहस्स दव्वणिबंधणावट्ठिदसंकमापडिसेहफलत्तादो।

पुरिसवेदस्स कधमवट्ठिदसंकमो ? ण, सम्माइट्ठीसु इत्थि-णवंसयवेदेसु बंधाभावेण विज्झादसंकमेण पुरिसवेदे संकामेंतेसु अधट्ठिदिगलणाए गलमाणदव्वेण समाणं इत्थि-णवुंसयवेदेहिंतो आगच्छमाणदव्वादो असंखेज्जगुणं वंधंतेसु तदुवलंभादो। अवज्झ-माणमोहपयडिदव्वं पुरिसवेदस्स किण्णागच्छदे ? ण, तस्स सदो णिग्गददव्वाणुसारेणेव आगमुवलंभादो।

एवं णामस्स सव्वधुववंधिपयडीणं पि अवट्ठाणपरूवणा कायव्वा। अण्णेण उवएसेण पुण सव्वणामपयडीणं णत्थि अवट्ठिदसंकमो। कुदो ? जसकित्ति-अजसकित्तीण-मागम-णिग्गमविसमदाए। तं जहा— जसकित्तीए तुल्लसंतकम्मे णिग्गमादो णिग्गमो तुल्लो वा विसेसुत्तरो वा। आगमो पुण णिग्गमादो संखे० गुणो। अजसकित्तीए वि तुल्लसंतकम्मे णिग्गमादो णिग्गमो तुल्लो वा असंखेज्जदिभागुत्तरो वा। आगमो पुण णिग्गमादो

द्रव्य चूंकि उनसे आनेवाला भी पाया जाता है, अतएव व्ययकी वहां सम्भावना नहीं है।

शंका— प्रदेशसत्त्वभुजाकारके अभावमें भी परिणामोंके वशसे जैसे भुजाकारसंक्रम होता है, वैसे ही परिणामोंके वशसे अवस्थानसंक्रम होता है, ऐसा क्यों नहीं कहते ?

समाधान— नहीं, क्योंकि इस प्रतिपेधका फल द्रव्यनिबन्धन अवस्थितसंक्रमका प्रतिपेध नहीं है।

शंका— पुरुपवेदका अवस्थितसंक्रम कैसे होता है ?

समाधान— नहीं, क्योंकि सम्यग्दृष्टि जीवोंमें बन्धकी सम्भावना न होनेसे स्त्री और नपुंसक वेदोंके विध्यातसंक्रम द्वारा पुरुपवेदमें संक्रान्त होनेपर चूंकि वे अधस्थितिगलनसे गलने-वाले द्रव्यके समान स्त्री और नपुंसक वेदोंसे आनेवाले द्रव्यकी अपेक्षा असंख्यातगुणे द्रव्यको बांधनेवाले होते हैं, अतएव उक्त सम्यग्दृष्टि जीवोंमें पुरुषवेदका अवस्थित संक्रम पाया जाता है।

शंका— अबध्यमान मोहप्रकृतियोंका द्रव्य पुरुषवेदमें क्यों नहीं आता ?

समाधान— नहीं, क्योंकि उसके अपनेमेंसे जानेवाले द्रव्यके अनुसार ही उनसे आनेवाला द्रव्य पाया जाता है।

इसी प्रकार नामकर्मकी सब ध्रुववन्धी प्रकृतियोंके भी अवस्थानकी प्ररूपणा करना चाहिये। परन्तु अन्य उपदेशके अनुसार सब नामप्रकृतियोंका अवस्थितसंक्रम नहीं होता। इसका कारण यशकीर्ति और अयशकीर्तिके आने व जानेवाले द्रव्यकी विषमता है। वह इस प्रकारसे— यशकीर्तिके समान सत्कर्ममें निर्गमकी अपेक्षा निर्गम तुल्य अथवा विशेष अधिक होता है। परन्तु आगमन निर्गमनकी अपेक्षा संख्यातगुणा होता है। अयशकीर्तिके भी समान सत्कर्ममें निर्गमसे निर्गम समान अथवा असंख्यातवें भागसे अधिक होता है। परन्तु

---

१ अ-काप्रत्योः 'अवट्ठिदि', ताप्रतौ 'अवट्ठिद' इति पाठः।

असंखे० भागुत्तरो। तदो धुवबंधीणं णामपयडीणं जदा जसकित्ती वज्झदि तदा आगमो थोवो, णिग्गमो बहुओ। जदा जसकित्ती ण वज्झदि तदा णिग्गमो थोवो, आगमो बहुओ। एदेण कारणेण णामस्स पयडीणं णत्थि अवट्ठाणं। एदेणेव हेदुणा पुरिसवेद-भय-दुगुंछाणं पि अवट्ठाणाभावो परूवेयव्वो। एदेहि दोहि उवदेसेहि भुजगार-पद-णिक्खेव-वड्ढिसंकमेसु सामित्तमप्पाबहुगं कायव्वं।

णिरयगइणामाए उक्कस्सिया वड्ढी कस्स? जो गुणिदकम्मंसियो सव्वसंकमेण चरिमफालिं संकामेंतओ तस्स उक्कस्सिया वड्ढी। उक्क० हाणी कस्स? जो गुणिद-कम्मंसियो पढमवारं चेव उवसमसेडिमारूढो चरिमसमयसुहुमसांपराइयो संतो मदो देवो जादो तस्स पढमसमयदेवस्स उक्क० हाणी। अवट्ठाणं णत्थि। तिरिक्खगदिणामाए णिरयगइभंगो। मणुसगइणामाए उक्कस्सिया वड्ढी कस्स? जो सत्तमाए पुढवीए णेरइयो गुणिदकम्मंसियो तेत्तीसं सागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालेदूण सव्वणिरुद्धकाले सेसे मिच्छत्तं गदो, तदो उव्वट्टियस्स[1] पढमसमयतिरिक्खस्स उक्कस्सिया पदेससंकम-वड्ढी। मणुसगइणामाए उक्कस्सिया हाणी कस्स? जो णेरइयो गुणिदकम्मंसियो तेत्तीसं सागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालेयूण सव्वणिरुद्धकाले सेसे मिच्छत्तं गदो तस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स उक्क० हाणी। अवट्ठाणं णत्थि।

आगम निर्गमकी अपेक्षा असंख्यातवें भागसे अधिक होता है। इस कारण ध्रुवबन्धी नाम-प्रकृतियोंका जब यशकीर्ति बंधती है तब आगम स्तोक और निर्गम बहुत होता है। तथा जब यशकीर्ति नहीं बंधती है तब निर्गम स्तोक और आगम बहुत होता है। इस कारण नामप्रकृतियोंका अवस्थान नहीं है। इसी हेतुसे पुरुषवेद, भय और जुगुप्साके भी अवस्थानके अभावकी प्ररूपणा करना चाहिये। इन दो उपदेशोंके अनुसार भुजाकार, पदनिक्षेप और वृद्धिसंक्रममें स्वामित्व व अल्पबहुत्वका कथन करना चाहिये।

नरकगति नामकर्मकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो गुणितकर्मांशिक सर्वसंक्रम द्वारा अन्तिम फालिको संक्रान्त कर रहा है उसके उसकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उसकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो गुणितकर्मांशिक प्रथम वार ही उपशम श्रेणिपर आरूढ होकर अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक होता हुआ मरणको प्राप्त होकर देव हुआ है उस प्रथम समयवर्ती देवके उसका उत्कृष्ट हानि होती है। अवस्थान उसका नहीं है। तिर्यंगति नामकर्मकी प्ररूपणा नरकगतिके समान है। मनुष्यगति नामकर्मकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो सातवीं पृथिवीका गुणितकर्मांशिक नारकी तेतीस सागरोपम काल तक सम्यक्त्वका पालन कर सर्वनिरुद्ध कालके शेष रहनेपर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है, तत्पश्चात् वहांसे निकलकर जो तिर्यंच हुआ है, उस प्रथम समयवर्ती तिर्यंचके उसकी उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमवृद्धि होती है। मनुष्यगति नामकर्मकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो नारकी गुणितकर्मांशिक तेतीस सागरोपम काल तक सम्यक्त्वका पालन कर सर्वनिरुद्ध कालके शेष रहनेपर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है उस प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके उसकी उत्कृष्ट हानि होती है। अवस्थान उसका नहीं है।

---

१ अ-काप्रत्योः 'उवट्टियस्स', ताप्रतौ 'उवट्टियस्स' इति पाठः।

मणुसगइणामाए सत्तमपुढविणेरइयसम्माइट्ठीहि तेत्तीसं सागरोवमाणि णिरंतरं बद्धाए किमिदि णावट्ठाणं ? जेसिमाइरियाणं णिग्गमाणुसारी आगमो तेसिमहिप्पाएण अत्थि अवट्ठिदसंकमो। जेसिं पुण आइरियाणं णिग्गमाणुसारी आगमो ण होदि, किंतु संकामिज्जमाणपयडिपदेसाणुसारी, तेसिमहिप्पाएण सव्वणामपयडीणं णत्थि अवट्ठाणं।

देवगइणामाए [उक्कस्सिया] वड्ढी कस्स ? जो गुणिदकम्मंसियो असंखेज्जवस्साउएसु पूरेदूण दसवस्ससहस्सिएसु देवेसु उववण्णो, तदो चुदो[1] तिरिक्खेसु मणुस्सेसु उववण्णो, तस्स तेसिं पढमसमए वट्टमाणस्स उक्क० वड्ढी। उक्क० हाणी कस्स ? जो गुणिदकम्मंसियो असंखेज्जवस्साउएसु पूरेदूण मदो देवो जादो तस्स पढमसमयदेवस्स देवगदिणामाए उक्क० हाणी। जेण उवदेसेण अवट्ठाणं तेण उवदेसेण तिपलिदोवमियस्स तप्पाओग्गउक्कस्सियाए वड्ढीए वड्ढिदूण अवट्ठिदस्स उक्कस्समवट्ठाणं। मणुसगइणामाए वि णिरयगदीए तेत्तीसं सागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालेयूण तत्थ तप्पाओग्गउक्कस्सियाए वड्ढीए वड्ढिदूण अवट्ठिदस्स उक्कस्समवट्ठाणं। एवं तिरिक्खगदीए सत्तमपुढविणेरइएसु तिरिक्खगदिं चेव णिरंतरं बंधमाणेसु अवट्ठाणं वत्तव्वं।

शंका— सातवीं पृथिवीके नारकी सम्यग्दृष्टियोंके द्वारा तेतीस सागरोपम काल तक निरन्तर मनुष्यगतिके बांधे जानेपर उसका अवस्थान क्यों नहीं होता ?

समाधान— जिन आचार्योंके मतमें निर्गमके समान आगम होता है उनके अभिप्रायके अनुसार उसका अवस्थितसंक्रम होता है। परन्तु जिन आचार्योंके मतमें निर्गमके अनुसार आगम नहीं होता, किन्तु संक्रान्त की जानेवाली प्रकृतियोंके प्रदेशके अनुसार आगम होता है; उनके अभिप्रायके अनुसार सब नामप्रकृतियोंका अवस्थानसंक्रम नहीं होता।

देवगति नामकर्मकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशिक असंख्यातवर्षायुष्कोंमें उसको परिपूर्ण करके दस हजार वर्षकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न हुआ है और फिर वहांसे च्युत होकर तिर्यंचों व मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ है उसके उक्त भवोंके प्रथम समयमें वर्तमान होनेपर उसकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उसकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशिक असंख्यातवर्षायुष्कोंमें उसे पूर्णकर (बांधकर) मरणको प्राप्त हो देव उत्पन्न हुआ है उस प्रथम समयवर्ती देवके देवगति नामकर्मकी उत्कृष्ट हानि होती है। जिस उपदेशके अनुसार अवस्थान होता है उस उपदेशके अनुसार तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट वृद्धिके द्वारा वृद्धिंगत होकर अवस्थानको प्राप्त हुए तीन पल्योपम आयुवाले जीवके उसका उत्कृष्ट अवस्थान होता है। नरकगतिमें तेतीस सागरोपम काल तक सम्यक्त्वको पालकर और वहां तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट वृद्धिके द्वारा वृद्धिंगत होकर अवस्थानको प्राप्त हुए जीवके मनुष्यगति नामकर्मका भी उत्कृष्ट अवस्थान होता है। इसी प्रकार तिर्यंचगतिको ही निरन्तर बांधनेवाले सातवीं पृथिवीके नारकियोंमें तिर्यंचगति नामकर्मके उत्कृष्ट अवस्थानका कथन करना चाहिये।

---

१ ताप्रतौ 'तदो [उ] चुदो' इति पाठः।

ओरालियसरीरणामाए उक्क० हाणी कस्स ? जो गुणिदकम्मंसियो सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदो[1] सण्णिमिच्छाइट्ठीसु उववण्णो, सव्वलहुं सम्मत्ते लद्धे विज्झादसंकमो जादो, तस्स पढमसमयसम्माइट्ठिस्स उक्कस्सिया हाणी। सो चेव जहण्णियाए सम्मत्तद्धाए अंतो देवलोगं गच्छेज्ज, देवलोगं गदस्स ओरालियसरीरस्स अधापवत्तसंकमो जादो, तस्स सव्वरहस्सेण कालेण देवलोगं गदस्स पढमसमयदेवस्स उक्क० वड्ढी। अवट्ठाणं जहा मणुसगदीए कदं तहा कायव्वं। वेउव्वियसरीरस्स देवगइभंगो। आहारसरीरणामाए उक्क० वड्ढी कस्स ? जो गुणिदकम्मंसियो आहारसरीरं सव्वचिरं पूरेदूणं[2] चदुक्खुत्तो कसाए उवसामेदूण खवेमाणस्स[3] परभवियबंधवोच्छेदेण आवलियं गंतूण उक्कस्सिया वड्ढी। तस्स चेव से काले उक्क० हाणी। अवट्ठाणं णेव अत्थि। एवसद्देण उवदेसा वि पडिसिद्धा। तेजा-कम्मइयाणं उक्कस्सिया वड्ढी कस्स ? जो गुणिदकम्मंसियो चदुक्खुत्तो कसाए उवसामेदूण खवेमाणओ, तस्स परभवियणामाणं बंधवोच्छेदादो[4] आवलियं गदस्स उक्क० वड्ढी। तस्सेव से काले उक्क० हाणी। अवट्ठाणं[5] उवदेसेण जहा मणुसगइणामाए कदं[6] तहा कायव्वं।

पढमसंठाण-पढमसंघडणाणं उक्क० वड्ढी कस्स ? जो गुणिदकम्मंसियो बे-छा-

---

औदारिकशरीर नामकर्मकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशिक सातवीं पृथिवीसे निकल कर संज्ञी मिथ्यादृष्टियोंमें उत्पन्न हुआ है तथा जिसके सर्वलघु कालमें सम्यक्त्वको प्राप्त कर लेनेपर विध्यातसंक्रम हुआ है उस प्रथम समयवर्ती सम्यग्दृष्टिके उसकी उत्कृष्ट हानि होती है। वही जघन्य सम्यक्त्वकालके भीतर देवलोकको प्राप्त होता है, देवलोकको प्राप्त होनेपर उसके औदारिकशरीरका अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है, सर्वलघु कालमें देवलोकको प्राप्त हुए उस प्रथम समयवर्ती देवके उसकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। अवस्थानका कथन जैसे मनुष्यगतिके सम्बन्धमें किया है वैसे यहां भी करना चाहिए। वैक्रियिकशरीरकी प्ररूपणा देवगतिके समान है। आहारशरीर नामकर्मकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशिक सबसे दीर्घ कालमें अहारकशरीरको पूर्ण कर चार वार कषायोंको उपशमा कर क्षपणामें उद्यत है उसके परभविक नामप्रकृतियोंकी बन्धव्युच्छित्तिसे आवली मात्र काल जाकर आहारकशरीरकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उसीके अनन्तर कालमें उसकी उत्कृष्ट हानि होती है। अवस्थान नहीं है। 'एव' शब्दसे यहां उपदेशोंका भी प्रतिषेध किया गया है। तैजस और कार्मण शरीरोंकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशिक चार वार कषायोंको उपशमा कर क्षपणामें उद्यत है उसके परभविक नामप्रकृतियोंकी बन्धव्युच्छित्तिके पश्चात् आवली मात्र कालके बीतनेपर उनकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उसीके अनन्तर कालमें उनकी उत्कृष्ट हानि होती है। अवस्थानकी प्ररूपणा उपदेशके आश्रयसे मनुष्यगति नामकर्मके समान करना चाहिये।

प्रथम संस्थान और प्रथम संहननकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशिक

---

१ अ-काप्रत्योः 'उवट्टिदो', ताप्रतौ 'अवट्ठिदो' इति पाठः। २ अप्रतौ 'पूणेदूण' इति पाठः। ३ ताप्रतौ 'खवेमाणस्स (खवेमाणओ तस्स)' इति पाठः। ४ अ-काप्रत्योः 'बंधवोच्छेदो', ताप्रतौ 'बंधवोच्छे [दा-] दो' इति पाठः। ५ ताप्रतौ नोपलभ्यते पदमिदम्। ६ ताप्रतौ 'कधं (दं)' इति पाठः।

वड्डीयो सम्मत्तमणुपालेयूण कसाए चदुक्खुत्तो उवसामेदूण तदो खवेंतस्स[1] वंधवोच्छादादो आवलियं गदस्स उक्क० वड्ढी। तस्सेव से काले उक्कस्सिया हाणी। अवट्ठाणं जहा मणुसगइणामाए तहा कायव्वं। पंचसंठाण-पंचसंघडणाणं उक्क० वड्ढी कस्स? जो गुणिदकम्मंसियो कसाए अणुवसामेदूण सव्वलहुं खवेंतओ तस्स चरिमसमयसुहुमसांपराइयस्स उक्क० वड्ढी। उक्क० हाणी कस्स? जो गुणिदकम्मंसियो उवसमसेडिमारुहिय चरिमसमयसुहुमसांपराइयो होदूण मदो देवो जादो तस्स पढमसमयदेवस्स उक्कस्सिया हाणी। अवट्ठाणं णेव अत्थि। जहा तेजा-कम्मइयसरीराणं उक्कस्सवड्ढि-हाणीयो कदाओ तहा[2] सव्वासिं सत्थाणं धुववंधीणं कायव्वं। अप्पसत्थाणं धुववंधीणं णामपयडीणं उक्कस्सिया वड्ढी कस्स? जो गुणिदकम्मंसियो कसाए अणुवसामेदूण सव्वलहुं खवेदि तस्स चरिमसमयसुहुमसांपराइयस्स उक्क० वड्ढी। उक्क० हाणी कस्स? जो गुणिदकम्मंसियो पढमवारं चेव कसाए उवसामेदि सो चरिमसमयसुहुमसांपराइयो होदूण मदो देवो जादो तस्स[3] पढमसमयदेवस्स उक्क० हाणी। अवट्ठाणं जहा मणुसगइणामाए तहा कायव्वं।

चदुण्णमाणुपुव्वीणामाणं वड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणं सग-सगगइभंगो। अप्पसत्थाण-

दो छयासठ सागरोपम काल तक सम्यक्त्वका पालन कर व चार वार कषायोंको उपशमा कर क्षपणामें तत्पर है उसके बन्धव्युच्छित्तिसे आवली मात्र कालके बीतनेपर उनकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उसीके अनन्तर कालमें उनकी उत्कृष्ट हानि होती है। अवस्थानकी प्ररूपणा मनुष्यगति नामकर्मके समान करना चाहिये। शेष पांच संस्थानों और पांच संहननोंकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो गुणितकर्मांशिक कषायोंको न उपशमा कर सर्वलघु कालमें क्षपणा करता हुआ अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक होता है उसके उनकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उनकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो गुणितकर्मांशिक उपसमश्रेणिपर आरूढ होता हुआ अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक होकर मरणको प्राप्त हो देव हो जाता है उस प्रथम समयवर्ती देवके उनकी उत्कृष्ट हानि होती है। अवस्थान नहीं है। जिस प्रकारसे तैजस और कार्मण शरीरोंकी उत्कृष्ट वृद्धि और हानिको किया है उसी प्रकारसे सब प्रशस्त ध्रुवबन्धी नामप्रकृतियोंकी भी वृद्धि और हानिको करना चाहिये। अप्रशस्त ध्रुवबन्धी नामप्रकृतियोंकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो गुणितकर्मांशिक कषायोंको न उपशमा कर सर्वलघु कालमें उनका क्षय करता है उस अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके उनकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उनकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो गुणितकर्मांशिक प्रथम वार ही कषायोंको उपशमाता है वह अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक होकर मरणको प्राप्त हो जब देव होता है तब उस प्रथम समयवर्ती देवके उनकी उत्कृष्ट हानि होती है। अवस्थानका कथन मनुष्यगति नामकर्मके समान करना चाहिये।

चार आनुपूर्वी नामप्रकृतियोंकी वृद्धि, हानि और अवस्थानकी प्ररूपणा अपनी अपनी

१ ताप्रतौ खवेंतस्स '(खवेंतओ तस्स)' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'तहा' इत्येतत्पदं नास्ति।
३ अ-काप्रत्योः 'सांपराइयो जादो तस्स', ताप्रतौ 'सांपराइयो जादो [मदो-] तस्स' इति पाठः।

मद्धुवबंधिणामपयडीणं अप्पसत्थधुवबंधिणामपयडिभंगो। णवरि अवट्ठाणं णत्थि। परघाद-उस्सास-पसत्थविहायगइ-तस-बादर-पज्जत्त-पत्तेयसरीर-सुभगादेज्ज-सुस्सराणमुक्कस्सिया वड्ढी कस्स? जो गुणिदकम्मंसियो बे-छावट्ठीओ सम्मत्तमणुपालेदूण चदुक्खुत्तो कसाए उवसामेदूण तदो खवेंतस्स[1] परभवियणामाणं बंधवोच्छेदादो आवलियं गदस्स उक्कस्सिया वड्ढी। तस्सेव से काले उक्क० हाणी। अवट्ठाणं जहा मणुसगइणामाए तहा कायव्वं। आदावुज्जोवणामाणं उक्क० वड्ढी सव्वसंकमे दादव्वा। उक्क० हाणी कस्स? जो गुणिद-कम्मंसियो पढमदाए [कसाए] उवसामेदूण चरिमसमयसुहुमसांपराइयो संतो मदो तस्स पढमसमयदेवस्स उक्क० हाणी। अवट्ठाणं णेव अत्थि। अप्पसत्थविहायगइ-अथिर-असुभ-अजसकित्तीणं उक्क० वड्ढी हाणी वा जहा अप्पसत्थाणं संठाणाणं कदा तहा कायव्वा। थिर-जसकित्ति-सुभाणं एदासिं तिण्णं णामपयडीणं उक्क० वड्ढी कस्स? जो गुणिदकम्मंसियो चदुक्खुत्तो कसाए उवसामेदूण तदो खवेदि तस्स खवेमाणस्स परभवियणामाणं बंधादो[2] आवलियमदिक्कंतस्स उक्क० वड्ढी। तस्सेव से काले उक्क० हाणी। णवरि जसकित्तीए परभविबंधवोच्छेदचरिमसमए उक्क० वड्ढी। चउत्थीए

गतिके समान है। अप्रशस्त अध्रुवबन्धी नामप्रकृतियोंकी प्ररूपणा अप्रशस्त ध्रुवबन्धी नामप्रकृतियोंके समान है। विशेषता इतनी है कि उनका अवस्थान नहीं है। परघात, उच्छ्वास, प्रशस्त विहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, सुभग, आदेय और सुस्वर; इनकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो गुणितकर्मांशिक दो छयासठ सागरोपम काल तक सम्यक्त्वका पालन कर व चारवार कषायोंको उपशमा कर पश्चात् क्षपणामें प्रवृत्त होता है तब उसके परभविक नामकर्मोंकी बन्ध-व्युच्छित्तिसे आवली मात्र काल जाकर उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उसके ही अनन्तर कालमें उनकी उत्कृष्ट हानि होती है। अवस्थानकी प्ररूपणा मनुष्यगति नामकर्मके समान करना चाहिये। आतप और उद्योत नामकर्मोंकी उत्कृष्ट वृद्धिको सर्वसंक्रममें देना चाहिये। इनकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो गुणितकर्मांशिक प्रथमतः कषायोंको उपशमा कर अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक होता हुआ मरणको प्राप्त हो [देव होता है] उस प्रथम समयवर्ती देवके उनकी उत्कृष्ट हानि होती है। अवस्थान है ही नहीं। अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर, अशुभ और अयशकीर्ति इनकी उत्कृष्ट वृद्धि और हानिकी प्ररूपणा जैसे अप्रशस्त संस्थानोंकी की गयी है वैसे करना चाहिये। स्थिर, यशकीर्ति और शुभ इन तीन नामप्रकृतियोंको उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो गुणितकर्मांशिक चार वार कषायोंको उपशमा कर तत्पश्चात् क्षपणा करता है उस क्षपणा करनेवालेके परभविक नामकर्मोंके बन्धसे आवली मात्र काल जाकर उनकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उसीके अनन्तर कालमें उनकी उत्कृष्ट हानि होती है। विशेष इतना है कि यशकीर्तिकी उत्कृष्ट वृद्धि परभविक नामप्रकृतियोंके बन्धव्युच्छेदके अन्तिम समयमें होती है। चतुर्थ उपशामनामें

---

१ ताप्रतौ 'खवेंतस्स (खवेंतओ तस्स)' इति पाठः।

२ मप्रतिपाठोऽयम्। अ-का-ताप्रतिषु 'बंधवोच्छेदाभावादो' इति पाठः।

उवसामणाए मदचरिमसमयसुहुमसांपराइयस्स देवेसुप्पज्जिय समयाहियावलियादिक्कस्स[1] उक्कस्सियो हाणी। अवट्ठाणं णेव अत्थि।

णीचागोदस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स? चरिमसमयसुहुमसांपराइयस्स खवयस्स। उक्क० हाणी कस्स? उवसामओ चरिमसमयसुहुमसांपराइयो मदो संतो जो देवो जादो तस्स पढमसमए उक्क० हाणी। अवट्ठाणं णेव अत्थि। उच्चागोदस्स वड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणं मणुसगइभंगो। एवमुक्कस्ससामित्तं समत्तं।

मदिआवरणस्स जहण्णिया वड्ढी कस्स? जो जहण्णएण संतकम्मेण चदुक्खुत्तो कसाए उवसामेदूण एइंदिएसु गदो तत्थ जाधे बंधो च णिज्जरा च्च सुसमो तस्स ताधे जहण्णिया वड्ढी अवट्ठाणं वा होदि। सेसचदुणाणावरण-णवदंसणावरण-पंचंतराइयाणं मदिणाणावरणभंगो। सादस्स जह० वड्ढी कस्स? जो जहण्णेण संतकम्मेण कसाए अणुवसामेदूण[2] संजमासंजम-संजमगुणसेडीहि बहुक्खुत्तो[3] कम्मं खवेदूण एइंदिएसु गदो, तत्थ सव्वचिरं कालं जोगजवमज्झस्स हेट्ठा बंधिदूण सव्वमहंतीयो असादबंधगद्धाओ कादूण तदो जं तं सव्वचिरं कालं जोगजवमज्झस्स हेट्ठा बंधिदाओ तस्स कालस्स पज्जवसाणबंधगद्धाए तिस्से अपच्छिमाए सादबंधगद्धाए समऊणाए आवलिया-सेसाए णिज्जरादो किंचि विसेसुत्तरो बंधो जादो, तदो जाधे असादबंधो तदो बिदियसमए

मरणको प्राप्त हुए अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके देवोंमें उत्पन्न होकर एक समय अधिक आवली मात्र कालके बीतनेपर उसकी उत्कृष्ट हानि होती है। अवस्थान है ही नहीं।

नीचगोत्रकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? वह अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपकके होती है। उसकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक मरणको प्राप्त होकर देव हो जाता है उसके प्रथम समयमें उसकी उत्कृष्ट हानि होती है। अवस्थान है ही नहीं। उच्चगोत्रकी वृद्धि, हानि और अवस्थानकी प्ररूपणा मनुष्यगतिके समान है। इस प्रकार उत्कृष्ट स्वामित्व समाप्त हुआ।

मतिज्ञानावरणकी जघन्य वृद्धि किसके होती है? जो जघन्य सत्कर्मके साथ चार वार कषायोंको उपशमा कर एकेन्द्रियोंमें गया है उसके वहां जब बन्ध और निर्जरा दोनों समान होते हैं तब उसकी जघन्य वृद्धि और अवस्थान होता है। शेष चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण और पांच अन्तराय प्रकृतियोंकी प्ररूपणा मतिज्ञानावरणके समान है। सातावेदनीयकी जघन्य वृद्धि किसके होती है? जो जघन्य सत्कर्मके साथ कषायोंको न उपशमा कर संयमासंयम और संयम गुणश्रेणियों द्वारा बहुत वार कर्मका क्षयकर एकेन्द्रियोंमें गया है और वहांपर सबसे दीर्घ काल तक योगयवमध्यके नीचे बांधकर सबसे बड़े असातबन्धककालोंको करके पश्चात् जिस सर्वचिर कालके द्वारा योगयवमध्यके नीचे बन्ध किया है उस कालके अन्तिम बन्धककालमें उस अन्तिम सातबन्धककालमें एक समय कम आवलीके शेष रहनेपर निर्जराकी अपेक्षा बन्ध कुछ

---

१ अ-काप्रत्योः 'समयाहियावलियादिउक्कस्सउक्कस्सिया', ताप्रतौ 'समयाहियावलियाहि [उक्कस्स] उक्कस्सिया' इति पाठः।

२ मप्रतिपाठोऽयम्। अ-का-ताप्रतिषु 'उवसामेदूण' इति पाठः। ३ काप्रतौ 'चदुक्खुत्तो' इति पाठः।

जहण्णिया वड्ढी सादस्स। जिस्से असादबंधाए जह० वड्ढी णिप्फण्णा तं चेव असादस्स बंधद्धं दीहं बंधिऊण तिस्से चरिमसमए जह० हाणी सादस्स। अवट्ठाणं णेव अत्थि। जहा सादस्स तहा असादस्स। णवरि चदुक्खुत्तो कसाया उवसामेयव्वा। जाओ च सादं जहण्णं कुणमाणेण असादबंधगद्धाओ कदाओ, ताओ चेव असादस्स जहण्णं कुणमाणेण सादबंधगद्धाओ कायव्वाओ।

मिच्छत्तस्स जहण्णिया वड्ढी कस्स ? जस्स तप्पाओग्गजहण्णमिच्छत्तसंतकम्मस्स अवट्ठाणं होज्ज तस्स मिच्छत्तस्स जह० वड्ढी हाणी वा अवट्ठाणं वा होज्ज। सम्मत्तस्स जह० वड्ढी कस्स ? जो जहण्णएण कम्मेण सम्मत्तं लहिदूण वे-छावट्ठीयो अणुपालिदूण पडिवदिदो, सव्वमहंतेण उव्वेल्लणकालेण उव्वेल्लमाणस्स अपच्छिमस्स ट्ठिदिखंडयस्स पढमसमए जहण्णिया वड्ढी। दुचरिमट्ठिदिखंडयस्स चरिमसमए जहण्णिया हाणी। अवट्ठाणं णेव अत्थि। सम्मामिच्छत्तस्स सम्मत्तभंगो।

अणंताणुबंधीणं जहण्णिया वड्ढी कस्स ? अभवसिद्धियपाओग्गेण जहण्णेण कम्मेण जो आगदो संजमासंजम-संजमगुणसेढीहि कम्मं खवेदूण कसाए अणुवसामेदूण एइंदिएसु गदो, तस्स जम्हि योगासेसकम्मस्स (?) अवट्ठाणं होदि तम्हि जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं [वा] होज्ज। एसो ताव एक्को उवदेसो। अण्णेण उवएसेण अणंताणुबंधीणं

विशेष अधिक हो जाता है, तत्पश्चात् जब असाताका बन्ध होता है तब उसके द्वितीय समयमें सातावेदनीयकी जघन्य वृद्धि होती है। जिस असातबन्धककालमें जघन्य वृद्धि उत्पन्न हुई है उसी दीर्घ असातबन्धककालमें बांधकर उसके अन्तिम समयमें सातावेदनीयकी जघन्य हानि होती है। सातावेदनीयका अवस्थान नहीं है। जैसे सातावेदनीयकी प्ररूपणा की गयी है वैसे ही असातावेदनीयकी भी प्ररूपणा करना चाहिये। विशेष इतना है कि चार बार कषायोंको उपशमाना चाहिये। इसके अतिरिक्त सातावेदनीयको जघन्य करनेवाले जीवके द्वारा जो असाताबन्धककाल किये गये हैं वे ही असातावेदनीयको जघन्य करनेवालेके द्वारा साताबन्धककाल कराने चाहिये।

मिथ्यात्वकी जघन्य वृद्धि किसके होती है ? तत्प्रायोग्य जघन्य मिथ्यात्वसत्कर्म युक्त जिस जीवके अवस्थानसंक्रम होता है उसके मिथ्यात्वकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान होता है। सम्यक्त्व प्रकृतिकी जघन्य वृद्धि किसके होती है ? जो जघन्य सत्कर्मके साथ सम्यक्त्वको प्राप्त कर व उसका दो छयासठ सागरोपम काल तक पालन करके च्युत होता हुआ सबसे महान् उद्वेलनकालके द्वारा उद्वेलना कर रहा है उसके अन्तिम स्थितिकाण्डकके प्रथम समयमें उसकी जघन्य वृद्धि होती है। द्विचरम स्थितिकाण्डकके अन्तिम समयमें उसकी जघन्य हानि होती है। अवस्थान नहीं है। सम्यग्मिथ्यात्वकी प्ररूपणा सम्यक्त्वके समान है।

अनन्तानुबन्धी कषायोंकी जघन्य वृद्धि किसके होती है ? जो अभव्यसिद्धिक प्रायोग्य जघन्य कर्मके साथ आकर संयमासंयम व संयम गुणश्रेणियोंके द्वारा कर्मका क्षय कर तथा कषायोंको न उपशमा कर एकेन्द्रियोंमें गया है उसके जिस जघन्य योगमें सत्कर्मका अवस्थान होता है उसमें उनकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान होता है। यह एक उपदेश है। दूसरे उपदेशके

जह० हाणी कस्स ? जो जहण्णएण कम्मेण चदुक्खुत्तो कसाए उवसामेऊण तदो संजोएदूण बे-छावट्ठीयो सम्मत्तमणुपालिय अणंताणुबंधीणं विसंजोयणाए उवट्ठिदो तस्स अधापवत्तकरणस्स चरिमसमए जहण्णिया हाणी। एरिसो चेव बे-छावट्ठीयो अणुपालेदूण मिच्छत्तं गदो तस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स जह० वड्ढी। अवट्ठाणं णत्थि। एसो विदियो उवदेसो।

बारसण्णं कसायाणं जेण उवएसेण अवट्ठाणमत्थि तेण उवदेसेण उच्चदे—जहण्णियाणि संतकम्माणि काऊण एइंदियं गदस्स जम्हि जहण्णयस्स संतकम्मस्स अवट्ठाणं होदि तम्हि जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं वा होज्ज। एवं भय-दुगुंछा-पुरिस-वेदाणं। हस्स-रदि-अरदि-सोगाणं जहण्णवड्ढि-हाणीयो जहा सादासादाणं कदाओ तहा कायव्वाओ।

इत्थिवेदस्स जहण्णिया हाणी कस्स ? जो जहण्णएण कम्मेण चदुक्खुत्तो कसाए उवसामेयूण बे-छावट्ठीयो सम्मत्तमणुपालेदूण से काले मिच्छत्तं गाहदि त्ति तस्स जहण्णिया हाणी। तस्स चेव से काले पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स जहण्णिया वड्ढी। अवट्ठाणं णेव अत्थि। णवुंसयवेदस्स इत्थिवेदभंगो। णवरि पुव्वमेव तिण्णि पलिदोवमाणि तिपलिदो-वमेसु अच्छिय तदो पच्छा बे-छावट्ठीओ सम्मत्तमणुपालेदव्वो।

अनुसार अनन्तानुबन्धी कषायोंकी जघन्य हानि किसके होती है ? जो जघन्य सत्कर्मके साथ चार बार कषायोंको उपशमाकर फिर संयोजन कर दो छ्यासठ सागरोपम काल तक सम्यक्त्वका पालन करके अनन्तानुबन्धी कषायोंकी विसंयोजनामें उद्यत होता है उसके अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें उनकी जघन्य हानि होती है। ऐसा ही जो जीव दो छ्यासठ सागरोपम काल तक सम्यक्त्वका पालन कर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है उस प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके उनकी जघन्य वृद्धि होती है। अवस्थान उनका नहीं है। यह दूसरा उपदेश है।

जिस उपदेशके अनुसार अवस्थान है उस उपदेशके अनुसार बारह कषायोंकी प्ररूपणा करते हैं— जघन्य सत्कर्मोंको करके एकेन्द्रिय भवको प्राप्त हुए जीवके जहांपर जघन्य सत्कर्मका अवस्थान होता है वहां उनकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान होता है। इसी प्रकार भय, जुगुप्सा और पुरुषवेदकी प्ररूपणा करना चाहिये। हास्य, रति, अरति और शोककी जघन्य वृद्धि और हानि जैसे साता व असाता वेदनीयकी की गयी हैं वैसे करनी चाहिये।

स्त्रीवेदकी जघन्य हानि किसके होती है ? जो जघन्य सत्कर्मके साथ चार बार कषायोंको उपशमा कर व दो छ्यासठ सागरोपम काल तक सम्यक्त्वका पालन कर अनन्तर कालमें मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाला है उसके उसकी जघन्य हानि होती है। अनन्तर कालमें मिथ्यात्वको प्राप्त हुए उसी प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके उसकी जघन्य वृद्धि होती है। अवस्थान नहीं है। नपुंसकवेदकी प्ररूपणा स्त्रीवेदके समान है। विशेष इतना है कि पहिले ही तीन पल्योपमकाल तक तीन पल्योपम प्रमाण आयुवाले जीवोंमें रहकर पीछे दो छ्यासठ सागरोपम तक सम्यक्त्वका पालन कराना चाहिये।

णिरयगइणामाए जह० हाणी कस्स ? एइंदियकम्मेण जहण्णएण णिरयगइणाम-मंतोमुहुत्तं संजोएदूण तदो बावीससागरोवट्ठिदिणिरयं गदो, बावीससागरोवमाणं अंतो-मुहुत्ते सेसे सम्मत्तं पडिवण्णो, मदो मणुसो जादो, एक्कत्तीससागरोवमट्ठिदिं देवगदिं गदो, अंतोमुहुत्तं उववण्णो मिच्छत्तं गदो, एक्कत्तीससागरोवमेसु अंतोमुहुत्ते सेसेसु सम्मत्तं पडिवण्णो, बे-छावट्ठीयो अणुपालेदूण सोधम्मकप्पम्हि मिच्छत्तं गदो संतो एइंदिए गदो, तदो सव्वमहंतेण उव्वेल्लणकालेण उव्वेल्लमाणस्स दुचरिमउव्वेलणखंडयस्स चरिमसमए जहण्णिया हाणी। तस्सेव से काले जह० वड्ढी।

मणुसगइणामाए जह० वड्ढी कस्स ? जो एइंदियकम्मेण वस्सपुधत्तेण अणुत्तर-वेमाणिएसु देवेसु उववण्णो, तस्स तप्पाओग्गजहण्णसंतकम्मस्स जम्हि अवट्ठाणं होदि तम्हि जह० वड्ढी हाणी अवट्ठाणं वा होदि। देवगइणामाए जहण्णवड्ढि-हाणि- अवट्ठाणाणि कस्स ? [जो] एइंदियकम्मेण तिपलिदोवमिएसु उववण्णो तस्स जाधे तप्पाओग्ग-जहण्णएण कम्मेण अवट्ठाणं होज्ज तम्हि जह० वड्ढी हाणी अवट्ठाणं वा। तिरिक्खगइ-णामाए जहण्णिया हाणी कस्स ? जो जहण्णएण कम्मेण तिपलिदोवमिएसु उववण्णो, अंतोमुहुत्ते सेसे सम्मत्तं पडिवण्णो, तदो देवेसु पलिदोवमपुधत्ताउट्ठिदिएसु उववण्णो,

---

नरकगति नामकर्मकी जघन्य हानि किसके होती है ? जो जघन्य एकेन्द्रिय योग्य कर्मके साथ अन्तर्मुहूर्त काल तक नरकगति नामकर्मका संयाजन करके पश्चात् बाईस सागरोम आयुवाले नरकको प्राप्त हुआ है, बाईस सागरोपमोंमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहनेपर सम्यक्त्वको प्राप्त होकर मरा व मनुष्य हुआ है, पश्चात् इकतीस सागरोपम स्थितिवाली देवगतिको प्राप्त होकर उत्पन्न होनेके पश्चात् अन्तर्मुहूर्तमें मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है, फिर इकतीस सागरोपमोंमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहनेपर सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ है, दो छयासठ सागरोपम काल तक सम्यक्त्वका पालन कर सौधर्म कल्पमें मिथ्यात्वको प्राप्त होता हुआ एकेन्द्रियमें गया है, और तत्पश्चात् जो सबसे महान् उद्वेलनकाल द्वारा उद्वेलना कर रहा है; उसके द्विचरम उद्वेलनकाण्डकके अन्तिम समयमें नरकगति नामकर्मकी जघन्य हानि होती है। उसीके अनन्तर कालमें उसकी जघन्य वृद्धि होती है।

मनुष्यगति नामकर्मकी जघन्य वृद्धि किसके होती है ? जो एकेन्द्रिय योग्य कर्मके साथ वर्षपृथक्त्वमें अनुत्तर विमानवासी देवोंमें उत्पन्न हुआ है उसके तत्प्रायोग्य जघन्य सत्कर्मका जहां अवस्थान होता है वहां उसकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान होता है। देवगति नामकर्मकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान किसके होते हैं ? जो एकेन्द्रिय योग्य सत्कर्मके साथ तीन पल्योपम आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ है उसके जब तत्प्रायोग्य जघन्य सत्कर्मके साथ अवस्थान होता है तब उसकी जघन्य वृद्धि हानि और अवस्थान होता है। तिर्यंगति नामकर्मकी जघन्य हानि किसके होती है ? जो जघन्य सत्कर्मके साथ तीन पल्योपम आयुवालोंमें उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्त शेष रहनेपर सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ है, तत्पश्चात् पल्योपमपृथक्त्व आयुस्थिति-

---

१ काप्रतौ 'अंतोमुहुत्तेसु सेसेसु', ताप्रतौ 'अंतोमुहुत्तसेसेसु' इति पाठः।

२ अ-काप्रत्योः 'णामाए दीहणवड्ढी', ताप्रतौ 'णामाए वड्ढि' इति पाठः।

अपडिवदिदेण सम्मत्तेण मणुस्सेसु गदो, तदो अपडिवदिदेण एक्कत्तीससागरोवमिएसु देवेसु उववण्णो, अंतोमुहुत्तमुववण्णो मिच्छत्तं गदो, अंतोमुहुत्तावसेसे सम्मत्तं पडिवण्णो, वे-छावट्ठीयो[1] अणुपालेदूण जाधे चरिमसमयसम्माइट्ठी ताधे जहण्णिया हाणी। तस्सेव से काले जहण्णिया वड्ढी। तिरिक्खगइणामाए अवट्ठाणं णेव अत्थि। वे-छावट्ठीयो सम्मत्तमणुपालिय तदो खवणाए अहिमुहचरिमसमयअधापवत्तकरणं मोत्तूण जहण्णिया हाणी केण[2] कारणेण चरिमसमयसम्माइट्ठिस्स कीरदि त्ति वुत्ते वुच्चदे— वे-छावट्ठीयो सम्मत्तमणुपालेदूण जो तत्तो खवेदि तस्स उकस्सिया सम्मत्तद्धा थोवा, वे छावट्ठीयो सम्मत्तमणुपालेदूण जो मिच्छत्तं गच्छदि तस्स सम्मत्तद्धा विसेसाहिया। एदेण कारणेण चरिमसमयसम्माइट्ठिस्स जहण्णिया तिरिक्खगइणामाए हाणी कदा, चरिमसमयअधापवत्तकरणे ण[3] कदा।

सव्वेसिं धुवबंधियाणं णामाणं जहण्णवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणि कस्स ? तप्पाओग्ग-जहण्णाणि कम्माणि कादूण जम्हि अवट्ठाणं कम्मस्स होज्ज तम्हि वड्ढी हाणी अवट्ठाणं वा जहण्णयं होदि। वेउव्वियसरीर-पढमसंठाण-पढमसंघडण-परघाद-उस्सास-पसत्थ-विहायगइ-तस-बादर-पज्जत्त-पत्तेयसरीर-सुभग-आदेज्ज-सुस्सरणामाणं जहण्णिया वड्ढी

वाले देवोंमें उत्पन्न हुआ है, पुनः अप्रतिपतित सम्यक्त्वके साथ मनुष्योंमें गया है, तत्पश्चात् अप्रतिपतित सम्यक्त्वके साथ इकतीस सागरोपम प्रमाण आयुवाले देवोंमें उत्पन्न हुआ है, वहां उत्पन्न होनेके पश्चात् अन्तर्मुहूर्तमें मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है, अन्तर्मुहूर्त शेष रहनेपर पुनः सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ है, तथा जो दो छयासठ सागरोपम काल तक उसका पालन कर जब अन्तिम समयवर्ती सम्यग्दृष्टि होता है तब उसके तिर्यग्गति नामकर्मकी जघन्य हानि होती है। उसीके अनन्तर कालमें उसकी जघन्य वृद्धि होती है। तिर्यग्गति नामकर्मका अवस्थान नहीं है।

शंका— दो छयासठ सागरोपम काल तक सम्यक्त्वका पालन कर तत्पश्चात् क्षपणाके अभिमुख अन्तिम समयवर्ती अधःप्रवृत्तकरणको छोड़कर अन्तिम समयवर्ती सम्यग्दृष्टिके किस कारणसे उसकी जघन्य हानि की जाती है ?

समाधान— दो छयासठ सागरोपम तक सम्यक्त्वका पालन कर पश्चात् जो क्षपणा करता है उसका उत्कृष्ट सम्यक्त्वकाल स्तोक होता है, परन्तु दो छयासठ सागरोपम तक सम्यक्त्वका पालन कर पश्चात् जो मिथ्यात्वको प्राप्त होता है उसका सम्यक्त्वकाल विशेष अधिक होता है। इस कारण अन्तिम समयवर्ती सम्यग्दृष्टिके तिर्यग्गति नामकर्मकी जघन्य हानि की गयी है और अन्तिम समयवर्ती अधःप्रवृत्तकरणके वह नहीं की गयी है।

सब ध्रुवबन्धी नामप्रकृतियोंकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान किसके होते हैं ? तत्प्रायोग्य जघन्य कर्मोंको करके जहांपर कर्मका अवस्थान होता है वहां पर उनकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान होते हैं। वैक्रियिकशरीर, प्रथम संस्थान, प्रथम संहनन, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्त विहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, सुभग, आदेय और सुस्वर नामकर्मोंकी

१ ताप्रतौ 'पडिवण्णो, [मि] वे छावट्ठीयो' इति पाठः।
२ ताप्रतौ 'हाणी। केण' इति पाठः। ३ ताप्रतौ 'करणेण' इति पाठः।

कस्स ? जत्थ एदेसिं कम्माणं तप्पाओग्गजहण्णाणं जहण्णमवट्ठाणं होज्ज तत्थ जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं वा होज्ज। अप्पसत्थविहायगइ-थावर-सुहुम-अपज्जत्त-साहारण-सरीर-दूभग-अणादेज्ज-दुस्सराणं णवुंसयवेदभंगो। णीचागोदस्स वि णवुंसयवेदभंगो। उच्चागोदस्स मणुसगइभंगो। एवं जहण्णसामित्तं समत्तं।

अप्पाबहुअं। तं जहा— मदिआवरणस्स उक्कस्समवट्ठाणं थोवं। वड्ढी विसेसाहिया, भिण्णसामित्तादो। हाणी असंखेज्जगुणा। सेसचदुणाणावरण-चदुदंसणावरण-पंचंतराइयाणं मदिणाणावरणभंगो। णिद्दा-पयलाणं उक्कस्समवट्ठाणं थोवं। हाणी असंखेज्जगुणा। वड्ढी असंखेज्जगुणा। थीणगिद्धितियस्स णिद्दाभंगो। सादस्स उक्कस्सिया हाणी थोवा। वड्ढी विसेसाहिया। असादस्स उक्कस्सिया हाणी थोवा। वड्ढी असंखे० गुणा।

मिच्छत्तस्स उक्कस्समवट्ठाणं [थोवं]। हाणी असंखे० गुणा। वड्ढी असंखे० गुणा। सम्मत्तस्स उक्क० वड्ढी थोवा, उव्वेलणकंडयचरिमसमए जादत्तादो। उक्क० हाणी असंखे० गुणा, दुसमयमिच्छाइट्ठिस्स जादत्तादो। अवट्ठाणं णत्थि। सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सिया हाणी थोवा। वड्ढी असंखे० गुणा। अणंताणुबंधीणं उक्कस्समवट्ठाणं थोवं। हाणी असंखे० गुणा। वड्ढी असंखे० गुणा। अट्ठण्णं कसायाणमुक्कस्समवट्ठाणं थोवं। हाणी असंखे० गुणा। वड्ढी असंखे०गुणा। तिण्णं संजलणाणं पुरिसवेदस्स य उक्क०

जघन्य वृद्धि किसके होती है? जहांपर इन तत्प्रायोग्य जघन्य कर्मोंका जघन्य अवस्थान होता है वहांपर उनकी जघन्य वृद्धि, हानि व अवस्थान होता है। अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारणशरीर, दुर्भग, अनादेय और दुस्वर प्रकृतियोंकी प्ररूपणा नपुंसकवेदके समान है। नीचगोत्रकी भी प्ररूपणा नपुंसकवेदके समान है। उच्चगोत्रकी प्ररूपणा मनुष्यगतिके समान है। इस प्रकार जघन्य स्वामित्व समाप्त हुआ।

अल्पबहुत्वका कथन करते हैं। वह इस प्रकार है— मतिज्ञानावरणका उत्कृष्ट अवस्थान स्तोक है। वृद्धि विशेष अधिक है, क्योंकि, उसका स्वामी भिन्न है। हानि असंख्यातगुणी है। शेष चार ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पांच अन्तराय प्रकृतियोंकी प्ररूपणा मतिज्ञानावरणके समान है। निद्रा और प्रचलाका उत्कृष्ट अवस्थान स्तोक है। हानि असंख्यातगुणी है। वृद्धि असंख्यातगुणी है। स्त्यानगृद्धि आदि तीनकी प्ररूपणा निद्राके समान है। सातावेदनीयकी उत्कृष्ट हानि स्तोक है। वृद्धि विशेष अधिक है। असाताकी उत्कृष्ट हानि स्तोक है। वृद्धि असंख्यातगुणी है।

मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अवस्थान स्तोक है। हानि असंख्यातगुणी है। वृद्धि असंख्यातगुणी है। सम्यक्त्व प्रकृतिकी उत्कृष्ट वृद्धि स्तोक है, क्योंकि, वह उद्वेलनकाण्डकके अन्तिम समयमें होती है। उत्कृष्ट हानि असंख्यातगुणी है, क्योंकि, वह द्वितीय समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके होती है। अवस्थान नहीं है। सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि स्तोक है। वृद्धि असंख्यातगुणी है। अनन्तानुबन्धी कषायोंका उत्कृष्ट अवस्थान स्तोक है। हानि असंख्यातगुणी है। वृद्धि असंख्यातगुणी है। आठ कषायोंका उत्कृष्ट अवस्थान स्तोक है। हानि असंख्यातगुणी है। वृद्धि असंख्यातगुणी

वड्ढी थोवा। उक्क० हाणी अवट्ठाणं च विसेसाहियं। लोभसंजलणाए उक्कस्समवट्ठाणं थोवं। हाणी असंखे० गुणा। वड्ढी विसेसा०। छण्णं णोकसायाणमुक्क० हाणी थोवा। वड्ढी असंखे० गुणा०। अवट्ठाणं णत्थि। इत्थि-णवुंसयवेदाणं हस्स-रदिभंगो।

णिरयगइणामाए उक्क० हाणी थोवा। वड्ढी असंखे०गुणा। एवं तिरिक्खगइणामाए। दोण्णमवट्ठाणं णत्थि। मणुसगइणामाए उक्कस्समवट्ठाणं थोवं। वड्ढी असंखे० गुणा। हाणी विसेसा०। देवगइणामाए उक्कस्समवट्ठाणं थोवं। वड्ढी असंखे० गुणा। हाणी विसेसा०। जहा देवगइणामाए तहा जादिणाम-आणुपुव्वीणामाणं च। ओरालियसरीर-णामाए उक्कस्समवट्ठाणं थोवं। वड्ढी असंखे० गुणा। हाणी विसेसा०। वेउव्वियसरीर-वेउव्वियसरीरअंगोवंग-बंधण-संघादाणं देवगइभंगो। आहारसरीरणामाए उक्क० हाणी थोवा। वड्ढी विसेसा०। तेजा-कम्मइयसरीराणं सव्वासिं चेव धुवबंधिणामाणं उक्कस्समवट्ठाणं थोवं। हाणी असंखे० गुणा। वड्ढी विसेसा०। वज्जरिसहणारायणसंघडणणामाए उक्कस्समवट्ठाणं थोवं। वड्ढी असंखेज्जगुणा। हाणी विसेसा०। समचउरससंठाण-परघाद-उस्सास-पसत्थविहायगइ-तस-बादर-पज्जत्त-पत्तेयसरीर-सुभगादेज्ज-सुस्सराणमुक्कस्समवट्ठाणं थोवं। हाणी असंखे० गुणा। वड्ढी विसेसा०। पंचसंठाण-पंचसंघडण-अथिर-अजस-कित्ति-असुभ-दूभग-दुस्सर-अणादेज्ज-अप्पसत्थविहायगदीणं उक्क० हाणी थोवा। वड्ढी

है। तीन संज्वलन कषायों और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट वृद्धि स्तोक है। उत्कृष्ट हानि और अवस्थान विशेष अधिक हैं। संज्वलन लोभका उत्कृष्ट अवस्थान स्तोक है। हानि असंख्यातगुणी है। वृद्धि विशेष अधिक है। छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट हानि स्तोक है। वृद्धि असंख्यातगुणी है। अवस्थान नहीं है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी प्ररूपणा हास्य और रतिके समान है।

नरकगति नामकर्मकी उत्कृष्ट हानि स्तोक है। वृद्धि असंख्यातगुणी है। इसी प्रकार तिर्यंचगति नामकर्मकी प्ररूपणा है। अवस्थान दोनोंका नहीं है। मनुष्यगति नामकर्मका उत्कृष्ट अवस्थान स्तोक है। वृद्धि असंख्यातगुणी है। हानि विशेष अधिक है। देवगति नामकर्मका उत्कृष्ट अवस्थान स्तोक है। वृद्धि असंख्यातगुणी है। हानि विशेष अधिक है। जैसे देवगति नामकर्मकी प्ररूपणा की गयी है वैसे ही जाति नामकर्मों और आनुपूर्वी नामकर्मोंकी भी करना चाहिये। औदारिकशरीर नामकर्मका उत्कृष्ट अवस्थान स्तोक है। वृद्धि असंख्यातगुणी है। हानि विशेष अधिक है। वैक्रियिकशरीर व उसके आंगोपांग, बन्धन एवं संघात नामकर्मोंकी प्ररूपणा देवगतिके समान है। आहारकशरीर नामकर्मकी उत्कृष्ट हानि स्तोक है। वृद्धि विशेष अधिक है। तैजस व कार्मण शरीरों तथा सब ही ध्रुवबन्धी नामप्रकृतियोंका उत्कृष्ट अवस्थान स्तोक है। हानि असंख्यातगुणी है। वृद्धि विशेष अधिक है। वज्रर्षभनाराचसंहनन नामकर्मका उत्कृष्ट अवस्थान स्तोक है। वृद्धि असंख्यातगुणी है। हानि विशेष अधिक है। समचतुरस्र-संस्थान, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्त विहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, सुभग, आदेय और सुस्वर इनका उत्कृष्ट अवस्थान स्तोक है। हानि असंख्यातगुणी है। वृद्धि विशेष अधिक है। पांच संस्थान, पांच संहनन, अस्थिर, अयशकीर्ति, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और अप्रशस्त विहायोगति; इनकी उत्कृष्ट हानि स्तोक है। वृद्धि असंख्यातगुणी है। अवस्थान नहीं

असंखे० गुणा। अवट्ठाणं णत्थि। अप्पसत्थाणं धुवबंधीणमुक्कस्समवट्ठाणं थोवं। हाणी असंखे० गुणा। वड्ढी असंखे० गुणा। णिरयगइ-तिरिक्खगइपाओग्गणामाणं आदा-वुज्जोवाणं च उक्क० हाणी थोवा। वड्ढी असंखे० गुणा। णीचागोदस्स गुणसंकमेण उक्क० हाणी थोवा। वड्ढी असंखे० गुणा। उच्चागोदस्स उक्क० हाणी सत्तमाए पुढवीए पढमसमयणेरइयस्स हाणी[1] थोवा। तस्स चेव उव्वट्टियस्स[2] पढमसमयतिरिक्खस्स णीचागोदस्स बंधमाणयस्स उक्क० वड्ढी विसे०, णेरइयस्स सम्माइट्ठीसु संचिदत्तादो। उच्च-णीचाणमवट्ठाणं णत्थि। एवमुक्कस्सप्पाबहुअं समत्तं।

णाणावरणपंचयस्स जहण्णवड्ढी हाणी अवट्ठाणं सरिसं। णवदंसणावरण-मिच्छत्त-सोलसकसाय-भय-दुगुंछा-पुरिसवेद-पंचंतराइयाणं जह० वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च तिण्णि वि तुल्लाणि। सादस्स जह० हाणी थोवा। वड्ढी विसेसाहिया। अवट्ठाणं णत्थि। असादस्स सादभंगो। सम्मत्तस्स जह० हाणी थोवा। वड्ढी असंखे० गुणा। सम्मा-मिच्छ० सम्मत्तभंगो। हस्स-रदि-अरदि-सोगाणं जह० हाणी थोवा। वड्ढी विसेसा०। अवट्ठाणं णत्थि। इत्थि-णवुंसयवेदाणं जह० हाणी थोवा। वड्ढी असंखे० गुणा। अवट्ठाणं णत्थि।

णिरयगइणामाए जह० हाणी थोवा। वड्ढी असंखे० गुणा। तिरिक्खगइणामाए

है। अप्रशस्त ध्रुवबन्धी प्रकृतियोंका उत्कृष्ट अवस्थान स्तोक है। हानि असंख्यातगुणी है। वृद्धि असंख्यातगुणी है। नरकगति और तिर्यग्गतिप्रायोग्यानुपूर्वी नामकर्मों तथा आतप और उद्योत नामकर्मोंकी भी उत्कृष्ट हानि स्तोक है। वृद्धि असंख्यातगुणी है।

नीचगोत्रकी गुणसंक्रमके द्वारा उत्कृष्ट हानि स्तोक है। वृद्धि असंख्यातगुणी है। उच्चगोत्रकी उत्कृष्ट हानि सातवीं पृथिवीके प्रथम समयवर्ती नारकीके होती है, जो स्तोक है। वहांसे निकलकर नीचगोत्रको बांधनेवाले उसी प्रथम समयवर्ती तिर्यंचके उसकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है, जो हानिसे विशेष अधिक है; क्योंकि, वह नारक सम्यग्दृष्टियोंमें संचित है। उच्च और नीच गोत्रोंका अवस्थान नहीं है। इस प्रकार उत्कृष्ट अल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

पांच ज्ञानावरण प्रकृतियोंकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान सदृश हैं। नौ दर्शना-वरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पुरुषवेद और पांच अन्तराय प्रकृतियोंकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान तीनों ही तुल्य हैं। सातावेदनीयकी जघन्य हानि स्तोक है। वृद्धि विशेष अधिक है। अवस्थान नहीं है। असातावेदनीयके प्रकृत अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा सातावेदनीयके समान है। सम्यक्त्व प्रकृतिकी जघन्य हानि स्तोक है और वृद्धि उससे असंख्यातगुणी है। सम्यग्मिथ्यात्वकी प्ररूपणा सम्यक्त्व प्रकृतिके समान है। हास्य, रति, अरति और शोक इनकी जघन्य हानि स्तोक व वृद्धि उससे विशेष अधिक है। अवस्थान नहीं है। स्त्री और नपुंसक वेदोंकी जघन्य हानि स्तोक व वृद्धि असंख्यातगुणी है। अवस्थान नहीं है।

नरकगति नामकर्मकी जघन्य हानि स्तोक व वृद्धि असंख्यातगुणी है। तिर्यंचगति

---

१ ताप्रतौ '[हाणी]' इति पाठः। २ प्रतिषु 'उवट्टियस्स' इति पाठः।

जह० हाणी थोवा। वड्ढी असंखे० गुणा। मणुसगइणामाए जह० वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च तुल्लं। एवं देवगदीए। ओरालिय-वेउव्विय-तेजा-कम्मइयसरीर-तप्पाओग्ग-बंधण-संघाद-अंगोवंग-वण्ण-गंध-रस-फास-अगुरुअलहुअ-उवघाद-परघाद-उस्सास-पसत्थ-विहायगइ-तस बादर-पज्जत्त-पत्तेयसरीर-सुभग-सुस्सर-आदेज्ज-णिमिणणामाणं जह० वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च तुल्लं।

णीचागोदस्स जह० हाणी थोवा। वड्ढी असंखे० गुणा। अवट्ठाणं णत्थि। उच्चागोदस्स जह० हाणी थोवा। वड्ढी असंखे० गुणा। अवट्ठाणं णत्थि। एवं पदेससंकमे[1] पदणिक्खेवो समत्तो।

पदेससंकमो वड्ढिसंकमो कायव्वो। तं जहा— मदिणाणावरणस्स अत्थि असंखेज्जभागवड्ढि-असंखेज्जभागहाणि-अवट्ठाण-अवत्तव्वसंकमा। सेसपदाणि णत्थि। सेसचदुणाणावरणीय-चदुदंसणावरणीय-पंचंतराइयाणं मदिणाणावरणभंगो। णिद्दा-पलयाणं अत्थि असंखेज्जभागवड्ढि-हाणि-असंखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणहाणि-अवट्ठाण-अवत्तव्व-संकमा। थीणगिद्धितियस्स अत्थि असंखेज्जभागवड्ढि-असंखेज्जभागहाणी। संखेज्ज-भागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढीयो वि अत्थि, मिच्छत्तं गदसम्माइट्ठिम्मि थीणगिद्धितिय-संतादो अण्णपयडीहिंतो[2] आगयदव्वस्स संखेज्जभाग-गुणब्भहियस्स वि उवलंभादो। अत्थि

नामकर्मकी जघन्य हानि स्तोक और वृद्धि उससे असंख्यातगुणी है। मनुष्यगति नामकर्मकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान तीनों समान हैं। इसी प्रकार देवगतिके सम्बन्धमें भी कहना चाहिये। औदारिक, वैक्रियिक, तैजस व कार्मण शरीर, उनके योग्य बन्धन, संघात व आंगोपांग, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्त विहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण; इन नामप्रकृतियोंकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान तीनों तुल्य हैं।

नीचगोत्रकी जघन्य हानि स्तोक व वृद्धि असंख्यातगुणी है। अवस्थान नहीं है। उच्चगोत्रकी जघन्य हानि स्तोक व वृद्धि असंख्यातगुणी है। अवस्थान नहीं है। इस प्रकार प्रदेशसंक्रममें पदनिक्षेप समाप्त हुआ।

प्रदेशसंक्रममें वृद्धिसंक्रमका कथन करते हैं। यथा— मतिज्ञानावरणके असंख्यात-भागवृद्धि, असंख्यातभागहानि, अवस्थान और अवक्तव्य ये चार संक्रमपद हैं। शेष पद नहीं हैं। शेष चार ज्ञानावरणीय, चार दर्शनावरणीय और पांच अन्तराय कर्मोंकी प्ररूपणा मतिज्ञाना-वरणके समान है। निद्रा और प्रचलाके असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि, असंख्यात-गुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि, अवस्थान और अवक्तव्य ये संक्रमपद हैं। स्त्यानगृद्धित्रिकके असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानि संक्रम हैं। संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धि पद भी हैं, क्योंकि, मिथ्यात्वको प्राप्त हुए सम्यग्दृष्टिमें स्त्यानगृद्धि आदि तीनोंके सत्त्वकी अपेक्षा अन्य प्रकृतियोंसे आया हुआ द्रव्य संख्यातभाग अधिक व संख्यातगुणा अधिक भी पाया

---

१ अ-काप्रत्योः 'पदेससंकमो' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'संतादो। अण्णपयडीहिंतो' इति पाठः।

असंखे० गुणवड्ढि-हाणि-अवट्ठाण-अवत्तव्वसंकमा। सादस्स अत्थि असंखे० भागवड्ढि-असंखे० भागहाणि-अवत्तव्वसंकमा। सेसाणि पदाणि णत्थि। असादस्स असंखे० भागवड्ढि-असंखे० भागहाणि-असंखे० गुणवड्ढी- असंखे० गुणहाणि-अवत्तव्वसंकमा अत्थि। सेस-पदाणि[1] णत्थि। मिच्छत्तस्स असंखे० भागवड्ढि-हाणि-असंखेज्जगुणवड्ढि-असंखे० गुणहाणि-अवट्ठाण-अवत्तव्वसंकमा अत्थि। सेसाणि पदाणि णत्थि। सम्मामिच्छत्तस्स अत्थि असंखे० भागवड्ढि-हाणि-असंखे० गुणवड्ढि-असंखे० गुणहाणि-अवत्तव्वसंकमा। सेसाणि पदाणि णत्थि। सम्मत्तस्स असंखे० भागहाणि-असंखे० गुणवड्ढि-हाणि-अवत्तव्वसंकमा अत्थि। सेसपदाणि णत्थि। अणंताणुबंधीणं अत्थि असंखे० भागवड्ढि-असंखे० भागहाणि-संखे० भागवड्ढि-संखे० गुणवड्ढि-असंखे० गुणवड्ढि-असंखे० गुणहाणि-अवट्ठाण-अवत्तव्वसंकमा[2]। सेसाणि पदाणि णत्थि। अट्ठण्णं कसायाणं अत्थि असंखे० भागवड्ढि-असंखे० भागहाणि-असंखे० गुणवड्ढि-असंखे० गुणहाणि-अवट्ठाण-अवत्तव्वसंकमा। सेसपदाणि णत्थि। तिण्णं संजलणाणं अत्थि असंखे० भागवड्ढि-असंखे० भागहाणि-संखे० भागवड्ढि-संखे० भागहाणि-संखे० गुणवड्ढि-संखे० गुणहाणि-असंखे० गुणवड्ढि-असंखे० गुणहाणि-अवट्ठाण-अवत्तव्वसंकमा। लोभसंजलणाए अत्थि असंखे० भागवड्ढि-असंखे० भागहाणि-अवट्ठाण-अवत्तव्वसंकमा। सेसाणि पदाणि णत्थि।

जाता है। उनके असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि, अवस्थान और अवक्तव्य संक्रम हैं।

सातावेदनीयके असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवक्तव्य संक्रम हैं। शेष पद नहीं हैं। असातावेदनीयके असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य संक्रम हैं। उसके शेष पद नहीं हैं। मिथ्यात्वके असंख्यात-भागवृद्धि, असंख्यातभागहानि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि, अवस्थान और अवक्तव्य संक्रम हैं। शेष पद नहीं हैं। सम्यग्मिथ्यात्वके असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात-भागहानि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य संक्रम हैं। शेष पद नहीं हैं। सम्यक्त्व प्रकृतिके असंख्यातभागहानि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य संक्रम हैं। शेष पद नहीं हैं।

अनन्तानुवन्धी क्रोधादिकोंके असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि, अवस्थान और अवक्तव्य संक्रम हैं। शेष पद नहीं हैं। आठ कषायोंके असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि, अवस्थान और अवक्तव्य संक्रम हैं। शेष पद नहीं हैं। तीन संज्वलन कषायोंके असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यात-गुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि, अवस्थान और अवक्तव्य संक्रमपद हैं। संज्वलन लोभके असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि, अवस्थान और

---

१ अप्रतौ 'विसेसपदाणि', काप्रतौ त्रुटितोऽत्र पाठः, ताप्रतौ [वि] सेसपदाणि' इति पाठः।

२ ताप्रतौ 'अवत्तव्व-अवट्ठाणसंकमा' इति पाठः।

हस्स-रदि-अरदि-सोगाणं असादभंगो। पुरिसवेदस्स कोधसंजलणभंगो। इत्थि-णवुंसयवेदाणं अत्थि असंखे० भागवड्ढि-असंखे० भागहाणि-संखे० भागवड्ढि-संखे० गुणवड्ढि-असंखे० गुणवड्ढि-असंखे० गुणहाणि-अवत्तव्वसंकमा। सेसपदाणि णत्थि। भय-दुगुंछाणं अत्थि असंखे० भागवड्ढि-असंखे० भागहाणि-असंखे० गुणवड्ढि-असंखे० गुणहाणि-अवट्ठाण-अवत्तव्वसंकमा। सेसपदाणि णत्थि[1]।

णिरयगइणामाए अत्थि असंखे० भागवड्ढि-संखे० गुणवड्ढि-असंखे० गुणवड्ढि-असंखे० भागहाणि-असंखे० गुणहाणि-अवत्तव्वसंकमा। तिरिक्खगइणामाए अत्थि असंखे० भागवड्ढि-संखे० भागवड्ढि-संखे० गुणवड्ढि-असंखे० गुणवड्ढि-असंखे० भागहाणि-असंखे० गुणहाणि-अवत्तव्वसंकमा। मणुस्सगइणामाए अत्थि असंखे० भावगड्ढि-संखे० भागवड्ढि-संखे० गुणवड्ढि-असंखे० गुणवड्ढि-असंखे० भागहाणि-असंखे० गुणहाणि-अवत्तव्वसंकमा। सेसपदाणि णत्थि। देवगइणामाए अत्थि असंखे० भागवड्ढि-संखे० भागवड्ढि-संखे० गुणवड्ढि-असंखे० गुणवड्ढि-असंखे० भागहाणि-संखे० गुणहाणि-अवट्ठाण-अवत्तव्वसंकमा। सेसं जाणिदूण वत्तव्वं। एवं संकमे त्ति समत्तमणियोगद्दारं।

अवक्तव्य संक्रम पद हैं। शेष पद नहीं हैं।

हास्य, रति, अरति और शोककी प्ररूपणा असातावेदनीयके समान है। पुरुषवेदकी प्ररूपणा संज्वलन क्रोधके समान है। स्त्री और नपुंसक वेदोंके असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात-भागहानि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य संक्रमपद हैं। शेष पद नहीं हैं। भय और जुगुप्साके असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात-भागहानि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि, अवस्थान और अवक्तव्य संक्रमपद हैं। शेष पद नहीं हैं।

नरकगति नामकर्मके असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यात-भागहानि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य संक्रमपद हैं। तिर्यग्गति नामकर्मके असंख्यातभाग-वृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातभागहानि, असंख्यातगुण-हानि और अवक्तव्य संक्रमपद हैं। मनुष्यगति नामकर्मके असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातभागहानि असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य संक्रमपद हैं। शेष पद नहीं हैं। देवगति नामकर्मके असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि, अवस्थान और अवक्तव्य संक्रमपद हैं। शेष कथन जानकर करना चाहिये। इस प्रकार संक्रम अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

---

१ क. पा. सु. पृ. ४५६, ६२५–३१.

लेस्साणियोगद्दारं

असुर-सुर-णरवरोरग-मुणिदविंदेहि वंदिए चलणे[1]।
णमिऊण अरस्स तदो लेस्सणियोगं परूवेमो ॥ १ ॥

एत्थ लेस्सा णिक्खिविदव्वा, अण्णहा पयदलेस्सावगमाणुववत्तीदो। तं जहा— णामलेस्सा ट्ठवणलेस्सा दव्वलेस्सा भावलेस्सा चेदि लेस्सा चउव्विहा। लेस्सा-सद्दो णामलेस्सा। सब्भावासब्भावट्ठवणाए[2] ट्ठविदव्वं ट्ठवणलेस्सा। दव्वलेस्सा दुविहा आगमदव्वलेस्सा णोआगमदव्वलेस्सा चेदि। आगमदव्वलेस्सा सुगमा। णोआगमदव्वलेस्सा तिविहा जाणुगसरीर-भविय [-तव्वदिरित्तणोआगमदव्वलेस्साभेएण। जाणुगसरीर-भविय] णोआगमदव्वलेस्साओ सुगमाओ। तव्वदिरित्तदव्वलेस्सा पोग्गलक्खंधाणं चक्खिदियगेज्झो वण्णो। सो छव्विहो किण्णलेस्सा णीललेस्सा काउलेस्सा तेउलेस्सा पम्मलेस्सा सुक्कलेस्सा चेदि। तत्थ भमरंगार-कज्जलादीणं किण्णलेस्सा। णिंब-कदली-दावपत्तादीणं णीललेस्सा। छार-खर-कवोदादीणं काउलेस्सा। कुंकुम-जवाकुसुम-कुसुंभादीणं तेउलेस्सा। तडवड-पउमकुसुमादीणं पम्मलेस्सा। हंस-वलायादीणं सुक्कलेस्सा। वुत्तं च—

असुरेन्द्र, सुरेन्द्र, नरेन्द्र, नागेन्द्र और मुनीन्द्र इनके समूहोंके द्वारा वन्दित ऐसे अर जिनेन्द्रके चरणोंको नमस्कार करके लेश्या अनुयोगद्वारकी प्ररूपणा करते हैं ॥ १ ॥

यहां लेश्याका निक्षेप करना चाहिये, क्योंकि, उसके बिना प्रकृत लेश्याका अवगम नहीं हो सकता। उसका निक्षेप इस प्रकार है— नामलेश्या, स्थापनालेश्या, द्रव्यलेश्या और भावलेश्या इस प्रकार लेश्या चार प्रकारकी है। उनमें 'लेश्या' यह शब्द नामलेश्या कहा जाता है। सद्भावस्थापना और असद्भावस्थापना रूपसे जो लेश्याकी स्थापना की जाती है वह स्थापनालेश्या है। द्रव्यलेश्या दो प्रकारकी है— आगमद्रव्यलेश्या और नोआगमद्रव्यलेश्या। इनमें आगमद्रव्यलेश्या सुगम है। नोआगमद्रव्यलेश्या ज्ञायकशरीर, भावी और तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यलेश्याके भेदसे तीन प्रकारकी है। इनमें ज्ञायकशरीर और भावी नोआगमद्रव्यलेश्यायें सुगम हैं। चक्षु इन्द्रियके द्वारा ग्रहण करने योग्य पुद्गलस्कन्धोंके वर्णको तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यलेश्या कहते हैं। वह छह प्रकारकी है— कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या, तेजलेश्या, पद्मलेश्या और शुक्ललेश्या। उनमें कृष्णलेश्या भ्रमर, अंगार और कज्जल आदिके होती है। नीम, कदली और दावके पत्तों आदिके नीललेश्या होती है। छार, खर और कबूतर आदिके कापोतलेश्या जानना चाहिये। कुंकुम, जपाकुसुम और कसूम कुसुम आदिकी लेश्या तेजलेश्या कहलाती है। तडवडा और पद्म पुष्पादिकोंके पद्मलेश्या होती है। हंस और बलाका आदिकी शुक्ललेश्या अनुभूत है। कहा भी है—

---

१ ताप्रतौ 'वरणे' इति पाठः। २ अ-काप्रत्योः 'भावावब्भाव' इति पाठः।

किण्णं भमरसवण्णा णीला पुण णीलिगुणियसंकासा।
काऊ कवोदवण्णा तेऊ तवणिज्जवण्णाभा ॥ १ ॥
पम्मा पउमसवण्णा सुक्का पुण कासकुसुमसंकासा।
किण्णादिदव्वलेस्सावण्णविसेसा मुणेयव्वा ॥ २ ॥

भावलेस्सा दुविहा आगम-णोआगमभेएण। आगमभावलेस्सा सुगमा। णोआगमभावलेस्सा मिच्छत्तासंजम-कसायाणुरंजियजोगपवुत्ती कम्मपोग्गलादाणणिमित्ता, मिच्छत्तासंजम-कसायजणिदसंसकारो त्ति वुत्तं होदि। एत्थ णेगमणयवत्तव्वएण णोआगमदव्व-भावलेस्साए पयदं। तत्थ ताव दव्वलेस्सावण्णणं कस्सामो— जीवेहि अपडिगहिदपोग्गलक्खंधाणं किण्ण-णील-काउ-तेउ-पम्म-सुकसण्णिदाओ छलेस्साओ होंति। अणंतभागवड्ढि-असंखे०भागवड्ढि-संखे०भागवड्ढि-संखे०गुणवड्ढि-असंखे०गुणवड्ढि-अणंतगुणवड्ढिकमेण असंखे० लोगमेत्तवण्णभेदेण पोग्गलेसु ट्ठिदेसु किमट्ठं छच्चेव लेस्साओ त्ति एत्थ णियमो कीरदे? ण एस दोसो, पज्जवणयप्पणाए लेस्साओ असंखे०-लोगमेत्ताओ, दव्वट्ठियणयप्पणाए पुण लेस्साओ छच्चेव होंति।

संपहि एदासिं छण्णं लेस्साणं सरीरमस्सिदूण परूवणं कस्सामो। तं जहा— तिरिक्खजोणियाणं सरीराणि छलेस्साणि— काणिचि किण्णलेस्सियाणि काणिचि णील-

---

कृष्णलेश्या भ्रमरके सदृश, नीललेश्या नील गुणवालेके सदृश, कापोतलेश्या कबूतर जैसे वर्णवाली, तेजलेश्या सुवर्ण जैसी प्रभावाली, पद्मलेश्या पद्मके वर्ण समान, और शुक्ललेश्या कांसके फूलके समान होती है। इन कृष्ण आदि द्रव्यलेश्याओंको क्रमसे उक्त वर्णविशेषों रूप जानना चाहिये ॥ १-२ ॥

आगम और नोआगमके भेदसे भावलेश्या दो प्रकारकी है। इनमें आगमभावलेश्या सुगम है। कर्म-पुद्गलोंके ग्रहणमें कारणभूत जो मिथ्यात्व, असंयम और कषायसे अनुरंजित योगप्रवृत्ति होती है उसे नोआगमभावलेश्या कहते हैं। अभिप्राय यह है कि मिथ्यात्व, असंयम और कषायसे उत्पन्न संस्कारका नाम नोआगमभावलेश्या है। यहां नैगम नयके कथनकी अपेक्षा नोआगम द्रव्यलेश्या और भावलेश्या प्रकृत हैं। उनमें पहिले द्रव्यलेश्याका वर्णन करते हैं—जीवोंके द्वारा अप्रतिगृहीत पुद्गलस्कन्धोंकी कृष्ण, नील, कापात, तेज, पद्म और शुक्ल संज्ञावाली छह लेश्यायें होती हैं।

शंका— अनन्तभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धिके क्रमसे असंख्यात लोक प्रमाण वर्णोंके भेदसे पुद्गलोंके स्थित रहनेपर 'छह ही लेश्यायें हैं' ऐसा नियम किसलिये किया जाता है?

समाधान— यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि यद्यपि पर्यायार्थिक नयकी विवक्षासे लेश्यायें असंख्यात लोक मात्र हैं, परन्तु द्रव्यार्थिक नयकी विवक्षासे वे लेश्यायें छह ही होती हैं।

अब शरीरका आश्रय करके इन छह लेश्याओंकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है— तिर्यंच योनिवाले जीवोंके शरीर छहों लेश्यावाले होते हैं— कितने ही शरीर कृष्णलेश्यावाले,

लेस्सियाणि काणिचि काउ० काणिचि तेउ० काणिचि पम्म० काणिचि सुक्कलेस्सियाणि त्ति[1]। तिरिक्खजोणिणीणं मणुस्साणं मणुसिणीणं च छच्चेव लेस्साओ। देवाणं मूलणिव्वत्तणादो तेउ-पम्म-सुक्काणि त्ति तिलेस्साणि सरीराणि, उत्तरणिव्वत्तणादो छलेस्साणि सरीराणि। देवीणं मूलणिव्वत्तणादो तेउलेस्साणि सरीराणि, उत्तरणिव्वत्तणादो छलेस्साणि। णेरइयाणं किण्णलेस्साणि। पुढविकाइयाणं छलेस्साणि। आउकाइयाणं सुक्कलेस्साणि। अगणिकाइयाणं तेउलेस्साणि। वाउकाइयाणं काउलेस्साणि। वणप्फदिकाइयाणं छलेस्साणि। सव्वेसिं सुहुमाणं सरीराणि काउलेस्साणि। जहा बादरपज्जत्ताणं तहा बादर-अपज्जत्ताणं[2]। ओरालियसरीराणि छलेस्साणि। वेउव्वियं मूलणिव्वत्तणादो किण्णलेस्सियं तेउले० पम्मले० सुक्कले० वा। तेजइयं तेउले०[3]। कम्मइयं सुक्कलेस्सियं। सरीरेसु सव्ववण्णपोग्गलेसु संतेसु कधमेदस्स सरीरस्स एसा चेव लेस्सा होदि त्ति णियमो? ण एस दोसो, उक्कट्ठवण्णं पडुच्च तण्णिद्देसादो। तं जहा— कालयवण्णुक्कट्ठं जं सरीरं तं

कितने ही नीललेश्यावाले, कितने ही कापोतलेश्यावाले, कितने ही तेजलेश्यावाले, कितने ही पद्मलेश्यावाले, और कितने ही शुक्ललेश्यावाले होते हैं। तिर्यंच योनिमतियों, मनुष्यों और मनुष्यनियोंके भी छहों लेश्यायें होती हैं। देवोंके शरीर मूल निर्वर्तनाकी अपेक्षा तेज, पद्म और शुक्ल इन तीन लेश्याओंसे युक्त होते हैं। परन्तु उत्तर निर्वतनाकी अपेक्षा उनके शरीर छहों लेश्याओंसे संयुक्त होते हैं। देवियोंके शरीर मूल निर्वतनाकी अपेक्षा तेजलेश्यासे संयुक्त होते हैं, परन्तु उत्तर निर्वर्तनाकी अपेक्षा वे छहों लेश्याओंमेंसे किसी भी लेश्यासे संयुक्त होते हैं। नारकियोंके शरीर कृष्णलेश्यासे युक्त होते हैं। पृथिवीकायिकोंके शरीर छहों लेश्याओंमें किसी भी लेश्यासे संयुक्त होते हैं। अप्कायिक जीवोंके शरीर शुक्ललेश्यावाले होते हैं। अग्निकायिक जीवोंके शरीर तेजलेश्यासे युक्त होते हैं। वायुकायिकोंके शरीर कापोत-लेश्यावाले तथा वनस्पतिकायिकोंके शरीर छहों लेश्यावाले होते हैं। सब सूक्ष्म जीवोंके शरीर कापोतलेश्यासे संयुक्त होते हैं। बादर अपर्याप्तोंके शरीर बादर पर्याप्तोंके समान लेश्यावाले होते हैं। औदारिकशरीर छह लेश्या युक्त होते हैं। वैक्रियिकशरीर मूलनिर्वतनाकी अपेक्षा कृष्णलेश्या, तेजलेश्या, पद्मलेश्या अथवा शुक्ललेश्यासे संयुक्त होता है। तैजसशरीर तेजलेश्यावाला तथा कार्मणशरीर शुक्ललेश्यावाला होता है।

शंका—शरीर तो सब वर्णवाले पुद्गलोंसे संयुक्त होते हैं; फिर इस शरीरकी यही लेश्या होती है, ऐसा नियम कैसे हो सकता है?

समाधान— यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि उत्कृष्ट वर्णकी अपेक्षा वैसा निर्देश किया

१ अप्रतौ 'सुक्कलेस्सिया त्ति' इति पाठः।

२ णिरया किण्हा कप्पा भावाणुगया हु तिसुर-णर-तिरिये। उत्तरदेहे छक्कं भोगे रवि-चंद-हरिदंगा॥ बादर-आउ तेऊ सुक्का तेऊ य वाउकायाणं। गोमुत्त-मुग्गवण्णा कमसो अव्वत्तवण्णो य॥ सव्वेसिं सुहुमाणं कावोदा सव्वविग्गहे सुक्का। सव्वो मिस्सो देहो कवोदवण्णो हवे णियमा॥ गो. जी. ४९५-९७.

३ ताप्रतौ 'तेउलेस्सियं तेजइयं' इति पाठः।

किण्णलेस्सियं। णीलवण्णुकट्ठं जं तं णीललेस्सियं। लोहियवण्णुकट्ठं जं सरीरं तं तेउलेस्सियं। हालिद्दवण्णुकट्ठं पम्मलेस्सियं। सुक्किल्लवण्णुकट्ठं सुक्कलेस्सियं। एदेहि वण्णेहि वज्जिय वण्णंतरावण्णं काउलेस्सियं।

संपहि य लेस्सावंतचक्खुप्पामदव्वस्स गुणाणमप्पाबहुअं कीरदे। तं जहा— किण्णलेस्सदव्वस्स सुक्किलगुणा थोवा, हालिद्द्या अणंतगुणा, लोहिदया अणंतगुणा, णीलया अणंतगुणा, कालया अणंतगुणा। णीललेस्सदव्वस्स सुक्किलगुणा थोवा, हालिद्द्या अणंतगुणा, लोहिदया अणंतगुणा, कालया अणंतगुणा, णीलया अणंतगुणा। काउलेस्सिए तिण्णिवियप्पा। तं जहा— सुक्किला थोवा, हालिद्द्या अणंतगुणा, कालया अणंतगुणा, लोहिदया अणंतगुणा, णीलया अणंतगुणा। बिदियवियप्पो उच्चदे— सुक्किला थोवा, कालया अणंतगुणा, हालिद्द्या अणंतगुणा, णीलया अणंतगुणा, लोहिदया अणंतगुणा। तदियवियप्पो उच्चदे— कालया थोवा, सुक्किला अणंतगुणा, णीलया अणं० गुणा, हालिद्द्या अणंतगु०, लोहिदया अणंतगुणा। तेउलेस्सिएसु कालगुणा थोवा, णीलया अणंतगुणा, सुक्किला अणंतगुणा, हालिद्द्या अणंतगुणा, लोहिदया अणंतगुणा। पम्माए तिण्णिवियप्पा। त जहा[1]— कालया थोवा, णीलया अणंतगुणा, सुक्किलया अणंतगुणा,

---

गया है। यथा— जिस शरीरमें श्याम वर्णकी उत्कृष्टता है वह कृष्णलेश्या युक्त कहा जाता है। जिसमें नील वर्णकी प्रधानता है वह नीललेश्यावाला, लोहित-वर्णकी प्रधानता युक्त जो शरीर है वह तेजलेश्यावाला, हरिद्रा वर्णकी उत्कर्षता युक्त शरीर पद्मलेश्यावाला, तथा शुक्ल वर्णकी प्रधानता युक्त शरीर शुक्ललेश्यावाला कहा जाता है। इन वर्णोंको छोड़कर वर्णान्तरको प्राप्त हुए शरीरको कापोतलेश्यावाला समझना चाहिये।

अब चक्षुसे ग्रहण किये जानेवाले लेश्यायुक्त द्रव्यके गुणोंके अल्पबहुत्वको बतलाते हैं। यथा— कृष्णलेश्यायुक्त द्रव्यके शुक्ल गुण स्तोक, हारिद्र गुण अनन्तगुणे, लोहित गुण अनन्तगुणे, नील गुण अनन्तगुणे, और श्याम गुण अनन्तगुणे होते हैं। नीललेश्यायुक्त द्रव्यके शुक्ल गुण स्तोक, हारिद्र गुण अनन्तगुणे, लोहित गुण अनन्तगुणे, श्याम गुण अनन्तगुणे, और नील गुण अनन्तगुणे होते हैं।

कापोतलेश्यावालेके विषयमें तीन विकल्प हैं। यथा—उसके शुक्ल गुण स्तोक हैं, हारिद्र गुण अनन्तगुणे हैं, श्याम गुण अनन्तगुणे हैं, लोहित गुण अनन्तगुणे हैं, और नील गुण अनन्तगुणे हैं। द्वितीय विकल्पका कथन करते हैं— शुक्ल गुण स्तोक हैं, श्याम गुण अनन्तगुणे हैं, हारिद्र गुण अनन्तगुणे हैं, नील गुण अनन्तगुणे हैं, और लोहित गुण अनन्तगुणे हैं। तृतीय विकल्पका कथन करते हैं— श्याम गुण स्तोक हैं, शुक्ल गुण अनन्तगुणे हैं, नील गुण अनन्तगुणे हैं, हारिद्र गुण अनन्तगुणे हैं, और लोहितगुण अनन्तगुणे हैं।

तेजलेश्यावालोंमें श्याम गुण स्तोक, नील गुण अनन्तगुणे, शुक्ल गुण अनन्तगुणे, हारिद्र गुण अनन्तगुणे, और लोहित गुण अनन्तगुणे होते हैं। पद्मलेश्यावालेके विषयमें तीन विकल्प हैं। यथा— प्रथम विकल्पके अनुसार श्याम गुण स्तोक, नील गुण अनन्तगुणे, शुक्ल

---

१ अ-काप्रत्योः 'वियप्पा जहा' इति पाठः।

लोहिद्या अणंतगुणा, हालिद्या अणंतगुणा, विदियवियप्पो उच्चदे— कालया थोवा, णीलया अणंतगुणा, लोहिदया अणंतगुणा, सुक्किलया अणंतगुणा, हालिद्या अणंतगुणा। तदियवियप्पो वुच्चदे। तं जहा— कालया थोवा, णीलया अणंतगुणा, लोहिदया अणंतगुणा, हालिद्या अणंतगुणा, सुक्किला अणंतगुणा[1]। णादिविक्कत्थेण गारेण एसा सुक्कुक्कदा[2] पम्मा (?)। सुक्काए[3] एक्को वियप्पो, तं जहा— कालया थोवा, णीलया अणंतगुणा, लोहिदया अणंतगुणा, हालिद्या अणंतगुणा। सुक्किला वियट्ठेण अणंतगुणा। एवं किण्णाए एक्को वियप्पो, णीलाए एक्को, काऊए तिण्णि, तेऊए एक्को, पम्माए तिण्णि, सुक्काए एक्को। काउलेस्सा णियमा दुट्ठाणिया, सेसाओ लेस्साओ दुट्ठाण-तिट्ठाण-चदुट्ठाणियाओ। एवं दव्वलेस्सा परूविदा।

संपहि भावलेस्सा वुच्चदे। तं जहा— मिच्छत्तासंजम-कसाय-जोगजणिदो जीवसंसकारो भावलेस्सा णाम। तत्थ जो तिव्वो सा काउलेस्सा। जो तिव्वयरो सा णीललेसा। जो तिव्वतमो सा किण्णलेस्सा। जो मंदो सा तेउलेस्सा। जो मंदयरो सा पम्मलेस्सा। जो मंदतमो सा सुक्कलेस्सा। एदाओ छप्पि लेस्साओ अणंतभागवड्ढि-असंखे०भागवड्ढि-संखे०भागवड्ढि-संखे०गुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढि-

---

गुण अनन्तगुणे, लोहित गुण अनन्तगुणे, और हारिद्र गुण अनन्तगुणे होते हैं। द्वितीय विकल्पके अनुसार श्याम गुण स्तोक, नील गुण अनन्तगुणे, लोहित गुण अनन्तगुणे, शुक्ल गुण अनन्तगुणे, और हारिद्र गुण अनन्तगुणे होते हैं। तृतीय विकल्पके अनुसार श्याम गुण स्तोक, नील गुण अनन्तगुणे, लोहित गुण अनन्तगुणे, हारिद्र गुण अनन्तगुणे, और शुक्ल गुण अनन्तगुणे होते हैं। अन्तमें गौर वर्णकी विशेषता होनेसे तीसरे विकल्पमें इसे शुक्लोत्कृष्ट कहते हैं।

शुक्ललेश्याके विषयमें एक विकल्प है। यथा— श्याम गुण स्तोक हैं, नील गुण अनन्तगुणे हैं, लोहित गुण अनन्तगुणे हैं, हारिद्र गुण अनन्तगुणे हैं, और शुक्ल उत्कटगुण अनन्तगुणे हैं। इस प्रकार कृष्णलेश्याके एक, नीललेश्याके एक, कापोतके तीन, तेजके एक, पद्मके तीन और शुक्लके एक; इतने इन द्रव्यलेश्याओंके विषयमें अल्पबहुत्वके विकल्प हैं।

कापोतलेश्या नियमसे द्विस्थानिक तथा शेष लेश्यायें द्विस्थानिक, त्रिस्थानिक व चतुःस्थानिक हैं। इस प्रकार द्रव्य लेश्याकी प्ररूपणा की गयी है।

अब भावलेश्याका कथन करते हैं। यथा— मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योगसे उत्पन्न हुए जीवके संस्कारको भावलेश्या कहते हैं। उसमें जो तीव्र संस्कार है उसे कापोतलेश्या, उससे जो तीव्रतर संस्कार है उसे नीललेश्या, और जो तीव्रतम संकार है उसे कृष्णलेश्या कहा जाता है। जो मन्द संस्कार है उसे तेजलेश्या, जो मन्दतर संस्कार है उसे पद्मलेश्या, और जो मन्दतम संस्कार है उसे शुक्ललेश्या कहते हैं। इन छहों लेश्याओंमेंसे प्रत्येक अनन्तभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्त-

---

१ काप्रतौ 'सुक्किला वियट्ठेण अणंतगुणा' इति पाठः। २ मप्रतौ 'सुक्कुकदा' इति पाठः। ३ ताप्रतौ 'सुक्कुक्कदा। ॐ पम्मा-सुक्काए' इति पाठः।

अणंतगुणवड्ढिकमेण पादेक्कं[1] छट्ठाणपदिदाओ।

काउलेस्सा णियमा दुट्ठाणिया, सेसाओ लेस्साओ दुट्ठाण-तिट्ठाण-चदुट्ठाणियायो।

एत्थ तिव्व-मंददाए अप्पाबहुअं। तं जहा— सव्वमंदाणुभागं जहण्णयं काउट्ठाणं। णीलाए जहण्णयमणंतगुणं। किण्णाए जहण्णयमणंतगुणं। तेऊए जहण्णय-मणंतगुणं। पम्माए जहण्णयमणंतगुणं। सुक्काए जहण्णयमणंतगुणं। काऊए उक्कस्सय-मणंतगुणं। णीलाए उक्कस्सयमणंतगुणं। किण्णाए उक्कस्सयमणंतगुणं। तेऊए उक्कस्सय-मणंतगुणं। पम्माए उक्कस्सयमणंतगुणं। सुक्काए उक्कस्सयमणंतगुणं। एवं लेस्से त्ति समत्तमणियोगद्दारं।

गुणवृद्धिके क्रमसे छह स्थानोंमें पतित हैं।

कापोतलेश्या नियमसे द्विस्थानिक तथा शेष लेश्यायें द्विस्थानिक, त्रिस्थानिक व चतुस्थानिक हैं।

यहां तीव्रता और मन्दताका अल्पबहुत्व इस प्रकार है— कापोतका जघन्य स्थान सबसे मन्द अनुभागसे संयुक्त है। नीललेश्याका जघन्य स्थान उससे अनन्तगुणा है। कृष्णलेश्याका जघन्य स्थान अनन्तगुणा है। तेजलेश्याका जघन्य स्थान अनन्तगुणा है। पद्मलेश्याका जघन्य स्थान अनन्तगुणा है। शुक्ललेश्याका जघन्य स्थान अनन्तगुणा है। कापोतका उत्कृष्ट स्थान अनन्तगुणा है। नीलका उत्कृष्ट स्थान अनन्तगुणा है। कृष्णका उत्कृष्ट स्थान अनन्तगुणा है। तेजका उत्कृष्ट स्थान अनतगुणा है। पद्मका उत्कृष्ट स्थान अनन्तगुणा है। शुक्लका उत्कृष्ट स्थान अनन्तगुणाहै। इस प्रकार लेश्या-अनुयोद्वार समाप्त हुआ।

---

१ प्रतिपु 'पादेक' इति पाठः।



१४
लेस्साकम्माणियोगद्दारं

कुंथुमहंतं संथुवमणंतणाणं[1] अणाइ-मज्झंतं ।
णमिऊण लेस्सयम्मं अणियोगं वण्णइस्सामो ॥ १ ॥

[लेस्साओ] किण्णादियाओ[2], तासिं कम्मं[3] मारण-विदारण-चूरणादि[4]किरिया-विसेसो, तं लेस्सायम्मं वत्तइस्सामो । तं जहा— किण्णलेस्साए परिणदजीवो णिद्दयो कलहसीलो रउद्दो अणुबद्धवेरो चोरो चप्पलओ पारदारियो[5] महु-मांस-सुरापसत्तो जिणसासणे अदिण्णकण्णो असंजमे मेरु व्व अविचलियसरूवो होदि । वुत्तं च—

चंडो ण मुवइ वेरं भंडणसीलो य धम्मदयरहिओ ।
दुट्ठो ण य एइ वसं किण्णाए संजुओ जीवो[6] ॥ १ ॥

दावण्णादिसु पादवविवज्जियं णिव्विण्णाणं[7] णिब्बुद्धिं[8] माण-मायबहुलं णिद्दालुअं सलोहं हिंसादिसु मज्झिमज्झवसायं कुणइ णीललेस्सा । वुत्तं च—

मंदो बुद्धीहीणो णिव्विण्णाणी य विसयलोलो य ।
माणी मायी य तहा आलस्सो चेव भेज्जो[9] य ॥ २ ॥

इन्द्रादिकोंसे संस्तुत, अनन्तज्ञानी, महान् और आदि मध्य व अन्तसे रहित ऐसे कुंथु जिनेन्द्रको नमस्कार करके लेश्याकर्म अनुयोगद्वारका कथन करते हैं ॥ १ ॥

लेश्यायें कृष्णादिक हैं; उनका कर्म जो मारण, विदारण और चोरी आदि क्रियाविशेष रूप है वह लेश्याकर्म कहलाता है ; उस लेश्याकर्मका कथन करते हैं । वह इस प्रकार है— कृष्ण-लेश्यासे परिणत जीव निर्दय, झगड़ालु, रौद्र, वैरकी परम्परासे संयुक्त, चोर, असत्यभाषी, पर-दाराका अभिलाषी, मधु मांस व मद्यमें आसक्त, जिनशासनके श्रवणमें कानको न देनेवाला, और असंयममें मेरुके समान स्थिर स्वभाववाला होता है । कहा भी है—

कृष्णलेश्यासे संयुक्त जीव तीव्रक्रोधी, वैरको न छोड़नेवाला, गाली देने रूप स्वभावसे सहित, दयाधर्मसे रहित, दुष्ट, और दूसरोंके वशमें न आनेवाला होता है ॥ १ ॥

नीललेश्या जीवको दावण्ण आदिकोंमें पादवसे रहित (?), विवेक रहित, बुद्धिविहीन, मान व मायाकी अधिकतासे सहित, निद्रालु, लोभसंयुक्त, और हिंसादि कर्मोंमें मध्यम अध्यवसायसे युक्त करती है । कहा भी है—

जीव नीललेश्याके वशमें होकर मन्द, बुद्धिविहीन, विवेकसे रहित, विषयलोलुप,

---

१ प्रतिषु 'संथुवमणंतगुणाणं' इति पाठः । २ ताप्रतौ 'किण्णदियाओ' इति पाठः ।
३ प्रतिषु 'कम्माणं' इति पाठः । ४ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-का-ताप्रतिषु 'चोरणादि' इति पाठः ।
५ प्रतिषु 'पारारियो' इति पाठः । ६ गो. जी. ५०८.
७ अ-काप्रत्योः 'णिव्विण्णाण', ताप्रतौ 'णिव्विण्णाणी' इति पाठः । ८ अ-काप्रत्योः 'णिब्बुद्धि', ताप्रतौ 'णिब्बुद्धी' इति पाठः । ९ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-का-ताप्रतिषु 'चेव भुज्जो' इति पाठः ।

णिद्दावंचणबहुलो धणधण्णे[1] होइ तिव्वसण्णाओ
णीलाए लेस्साए वसेण जीवो हु पारंभो[2] ॥ ३ ॥

किण्णलेस्साए वुत्तसव्वकज्जेसु जहण्णुज्जमं[3] काउलेस्सा कुणइ । वुत्तं च—

रूसइ णिंदइ अण्णे दूसइ बहुसो य सोय-भयबहुलो ।
असुअइ परिहवइ परं पसंसइ य अप्पयं बहुसो ॥ ४ ॥

ण य पत्तियइ परं सो अप्पाणं पि व परे वि मण्णंतो ।
तूसइ[4] अहित्थुवंतो ण य जाणइ हाणि-वड्ढीयो ॥ ५ ॥

मरणं पत्थेइ रणे देइ सुबहुअं पि थुव्वमाणो[5] दु ।
ण गणइ कज्जमकज्जं काऊए पेरियो जीवो[6] ॥ ६ ॥

अहिंसयं महु-मांस-सुरासेवावज्जियं[7] सच्चमइं चत्तचोरियं-परयारं[8] एदेसु कज्जेसु जहण्णुज्जमं जीवं तेउलेस्सा कुणइ । वुत्तं च—

जाणइ कज्जमकज्जं सेयमसेयं च सव्वसमपासी ।
दय-दाणरओ मउओ तेऊए कीरए जीवो[9] ॥ ७ ॥

अभिमानी, मायाचारी, आलसी, अभेद्य, निद्रा (या निन्दा) व धोखेबाजीमें अधिक, धन-धान्यमें तीव्र अभिलाषा रखनेवाला, तथा अधिक आरम्भको करनेवाला होता है ॥ २-३ ॥

कापोतलेश्या जीवको कृष्णलेश्याके सम्बन्धमें ऊपर कहे गये समस्त कार्योंमें जघन्य उद्यमशील करती है । कहा भी है—

यह जीव कापोतलेश्यासे प्रेरित होकर रुष्ट होता है; दूसरोंकी निन्दा करता है, उन्हें बहुत प्रकारसे दोष लगाता है, प्रचुर शोक व भयसे संयुक्त होता है, दूसरोंसे असूया (ईर्षा) करता है, परका तिरस्कार करता है, अपनी अनेक प्रकारसे प्रशंसा करता है, वह अपने ही समान दूसरोंको भी समझता हुआ अन्यका कभी विश्वास नहीं करता है, अपनी प्रशंसा करनेवालोंसे संतुष्ट होता है, हानि-लाभको नहीं जानता है, युद्धमें मरणकी प्रार्थना करता है, दूसरोंके द्वारा प्रशंसित होकर उन्हें बहुतसा पारितोषिक देता है, तथा कर्तव्य और अकर्तव्यके विवेकसे रहित होता है ॥ ४-६ ॥

तेजलेश्या अहिंसक, मधु मांस व मद्यके सेवनसे रहित, सत्यबुद्धि तथा चोरी व परदाराका त्यागी; इन कार्योंमें जीवको जघन्य उद्यमवाला करती है । कहा भी है—

तेजलेश्या जीवको कर्तव्य-अकर्तव्य तथा सेव्य-असेव्यका जानकार, समस्त जीवोंको समान समझनेवाला, दया-दानमें लवलीन, और सरल करती है ॥ ७ ॥

---

१ प्रतिषु 'वणधण्णो' इति पाठः । २ गो. जी. ५०९-१०.
३ अ-काप्रत्योः 'जहण्णुज्जमं' इति पाठः । ४ अप्रतौ 'तूसहि' इति पाठः ।
५ अ-काप्रत्योः 'धुव्वमाणो' इति पाठः । ६ गो. जी. ५११-१३.
७ ताप्रतौ 'मांससेवासुरावजियं' इति पाठः । ८ प्रतिषु 'सच्चमइचत्तंचोरिय' इति पाठः ।
९ गो. जी. ५१४.

अहिंसादिसु कज्जेसु जीवस्स मज्झिमुज्जमं[1] पम्मलेस्सा कुणइ। वुत्तं च—

चाई भद्दो[2] चोक्खो उज्जुवकम्मो य खमइ बहुअं पि।
साहु-गुरुपूजणरओ पम्माए परिणओ जीवो[3] ॥ ८ ॥

अहिंसाइसु कज्जेसु तिव्वुज्जमं सुक्कलेस्सा कुणइ। वुत्तं च—

ण य कुणइ पक्खवायं ण वि य[4] णिदाणं समो य सव्वेसु।
णत्थि य राग-दोसा[5] णेहो वि य सुक्कलेस्साए[6] ॥ ९ ॥

एवं दव्वलेस्साए वि कज्जाणं परूवणा जाणिदूण कायव्वा। एवं लेस्सायम्मे त्ति समत्तमणियोगद्दारं।

पद्मलेश्या जीवको उपर्युक्त अहिंसादि कार्योंमें मध्यम उद्यम करनेवाला करती है। कहा भी है—

पद्मलेश्यामें परिणत जीव त्यागी, भद्र, चोखा (पवित्र), ऋजुकर्मा (निष्कपट), भारी अपराधको भी क्षमा करनेवाला तथा साधुपूजा व गुरुपूजामें तत्पर रहता है ॥ ८ ॥

शुक्लेश्या उक्त अहिंसादि कार्योंमें तीव्र उद्यमशील करती है। कहा भी है—

शुक्ललेश्याके होनेपर जीव न पक्षपात करता है और न निदान भी करता है, वह सब जीवोंमें समान रहकर राग, द्वेष व स्नेहसे रहित होता है ॥ ९ ॥

इसी प्रकार द्रव्यलेश्याके कार्योंकी भी प्ररूपणा जानकर करना चाहिये। इस प्रकार लेश्या-कर्म अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

---

१ अ-काप्रत्योः 'मज्झिमुज्जुमं' इति पाठः। २ अ-काप्रत्योः 'भंडो' इति पाठः। ३ गो. जी. ५१५. तत्थ 'खवइ' इत्येतस्य स्थाने 'खमदि' इति पाठः। ४ अ-काप्रत्योः 'ण रि य' इति पाठः। ५ अ-काप्रत्योः 'रागं दोसा', ताप्रतौ 'रागं दोसो' इति पाठः। ६ गो. जी. ५१६.



१५

लेस्सापरिणामाणियोगद्दारं

अहिणंदणमहिवंदिय अहिणंदियतिहुवणं सुहत्तीए।
लेस्सपरिणामसण्णियमणियोगं वण्णइस्सामो ॥१॥

लेस्सापरिणामे त्ति अणियोगद्दारं काओ लेस्साओ[1] केण सरूवेण काए वड्ढीए हाणीए वा परिणमंति त्ति जाणावणट्ठमागयं। किण्णलेस्साए ताव परिणमणविहाणं वुच्चदे। तं जहा— किण्णलेस्सियो संकिलिस्समाणो ण अण्णं संकमदि, सट्ठाणे चेव छट्ठाणपदिदेण ठाणसंकमणेण वड्ढदि[2]। किं छट्ठाणपदिदत्तं? जत्तो ठाणादो संकिलिट्ठो तत्तो ट्ठाणादो अणंतभागब्भहिया असंखेज्जभागब्भहिया संखेज्जभागब्भहिया संखेज्जगुणब्भहिया असंखेज्ज-गुणब्भहिया अणंतगुणब्भहिया वा लेस्सा होज्ज, एदं छट्ठाणपदिदत्तं। विसुज्झमाणो सट्ठाणे अणंतभागहाणि-असंखे०भागहाणि-संखे० भागहाणि-संखे० गुणहाणि-असंखे० गुणहाणि-अणंतगुणहाणि त्ति छट्ठाणपदिदेण हायदि, णीललेस्साए अणंतगुणहीणेण संकमदि। एवं किण्णलेस्सस्स संकिलेसमाणस्स एक्को वियप्पो किण्णलेस्सवड्ढीए।

तीनों लोकोंको आनन्दित करनेवाले अभिनन्दन जिनेन्द्रकी अतिशय भक्तिपूर्वक वन्दना करके 'लेश्यापरिणाम' संज्ञावाले अनुयोगद्वारका वर्णन करते हैं ॥ १ ॥

कौन लेश्यायें किस स्वरूपसे और किस वृद्धि अथवा हानिके द्वारा परिणमन करती हैं, इस बातके ज्ञापनार्थ 'लेश्यापरिणाम' अनुयोगद्वार प्राप्त हुआ है। उनमें पहिले कृष्णलेश्याके परिणमनविधानका कथन करते हैं। यथा— कृष्णलेश्यावाला जीव संक्लेशको प्राप्त होता हुआ अन्य लेश्यामें परिणत नहीं होता है, किन्तु षट्स्थानपतित स्थानसंक्रमण द्वारा स्वस्थानमें ही वृद्धिको प्राप्त होता है।

शंका—षट्स्थानपतितका क्या स्वरूप है?

समाधान—जिस स्थानसे संक्लेशको प्राप्त हुआ है उस स्थानसे अनन्तभाग अधिक, असंख्यातभाग अधिक, संख्यातभाग अधिक, संख्यातगुणी अधिक, असंख्यातगुणी अधिक और अनन्तगुणी अधिक लेश्याका होना; इसका नाम षट्स्थानपतित है।

उक्त कृष्णलेश्यावाला जीव विशुद्धिको प्राप्त होता हुआ अनन्तभागहानि, असंख्यातभाग-हानि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि, असंख्यातगुणहानि और अनन्तगुणहानि; इस प्रकार षट्स्थानपतित स्वरूपसे स्वस्थानमें हानिको प्राप्त होता है। वही अनन्तगुणहानिके द्वारा नीललेश्यारूपसे परिणत होता है। इस प्रकार संक्लेशको प्राप्त होनेवाले कृष्णलेश्या युक्त

१ ताप्रती 'काउलेस्साओ' इति पाठः। २ संकमणं सट्ठाण-परट्ठाणं होदि किण्ण-सुक्काणं। वड्ढीसु हि सट्ठाणं उभयं हाणिम्मि सेस उभये वि ॥ लेस्साणुक्कस्सादो वरहाणी अवरगादवरवड्ढी। सट्ठाणे अवरादो हाणी णियमा परट्ठाणे ॥ संकमणे छट्ठाणा हाणिसु वड्ढीसु होंति तण्णामा। परिमाणं च य पुव्वं उत्तकमं होदि सुदणाणे ॥ गो. जी. ५०३-५०५ ॥

विसुज्झमाणस्स दो वियप्पा— किण्णलेस्सहाणीए एक्को, णीललेस्ससंकमे बिदियो[1] चेव। एवं किण्णलेस्सस्स परिणमणविहाणं समत्तं।

संपहि णीललेस्सस्स वुच्चदे— णीललेस्सादो संकिलिस्संतो णीललेस्सं छट्ठाणपदिदेण वड्ढिसंकमट्ठाणेण संकमेइ[2], अधवा किण्णलेस्सं अणंतगुणवड्ढिकमेण परिणमदि। एवं संकिलेसंतस्स दो वियप्पा। णीललेस्सादो[3] विसुज्झंतो णीललेस्साए छट्ठाणपदिदाए हाणीए हायदि, काउलेस्साए अणंतगुणहीणहाणीए[4] वि हायमाणो परिणमदि। एवं णीललेस्सादो विसुज्झमाणस्स दो वियप्पा। एवं णीललेस्सस्स परिणमणविहाणं समत्तं।

काउलेस्सस्स वुच्चदे। तं जहा— काउलेस्सियो संकिलिस्संतो सट्ठाणे अणियमेण[5] छट्ठाणपदिदाए वड्ढीए वड्ढदि, णीललेस्साए अणंतगुणवड्ढीए णियमेण परिणमदि। एवं संकिलिस्संतस्स दो वियप्पा। काउलेस्सियो विसुज्झमाणो सट्ठाणे छट्ठाणपदिदाए हाणीए हायदि, तेउलेस्सिए अणंतगुणहीणहाणीए परिणमदि। एवं विसुज्झमाणस्स दो वियप्पा। काउलेस्सस्स संकमणविहाणं समत्तं।

तेउलेस्सिओ[6] संकिलिस्संतो सत्थाणे छट्ठाणपदिदाए हाणीए हायदि, काउलेस्साए

जीवका कृष्णलेश्याकी वृद्धि द्वारा एक विकल्प होता है। उसीके विशुद्धिको प्राप्त होनेपर दो विकल्प होते हैं— कृष्णलेश्याकी हानिसे एक, और नीललेश्याके संक्रममें दूसरा विकल्प होता है। इस प्रकार कृष्णलेश्यावाले जीवका परिणमनविधान समाप्त हुआ।

अब नीललेश्यावाले जीवके परिणमनविधानका कथन करते हैं— नीललेश्यासे संक्लेशको प्राप्त होता हुआ षट्स्थानपतित वृद्धिसंक्रमस्थानके द्वारा नीललेश्यामें ही संक्रमण करता है। अथवा वह अनन्तगुणवृद्धिके क्रमसे कृष्णलेश्यामें परिणत होता है। इस प्रकार संक्लेशको प्राप्त होनेपर दो विकल्प होते हैं। नीललेश्यासे विशुद्धिको प्राप्त होनेवाला षट्स्थानपतित हानिके द्वारा नीललेश्याकी हानिको प्राप्त होता है। वही अनन्तगुणहीन हानिके द्वारा हानिको प्राप्त होता हुआ कापोतलेश्या रूपसे परिणत होता है। इस प्रकार नीललेश्यासे विशुद्धिको प्राप्त होनेवालेके दो विकल्प हैं। इस प्रकार नीललेश्यावालेका परिणमनविधान समाप्त हुआ।

कापोतलेश्यावालेके परिणमनका विधान कहते हैं। यथा— कापोतलेश्यावाला संक्लेशको प्राप्त होता हुआ अनियमसे षट्स्थानपतित वृद्धिके द्वारा वृद्धिगत होता है। वही अनन्तगुण-वृद्धिके द्वारा नियमसे नीललेश्यामें परिणत होता है। इस प्रकार संक्लेशको प्राप्त हुए कापोत-लेश्यायुक्त जीवके दो विकल्प हैं। कापोतलेश्यावाला विशुद्धिको प्राप्त होता हुआ षट्स्थानपतित हानिके द्वारा स्वस्थानमें हानिको प्राप्त होता है। वही अनन्तगुणहीन हानि द्वारा तेजलेश्यामें परिणत होता है। इस प्रकार विशुद्धिको प्राप्त होते हुए कापोतलेश्यावालेके दो विकल्प हैं। कापोतलेश्यावालेके संक्रमणका विधान समाप्त हुआ।

तेजलेश्यावाला जीव संक्लेशको प्राप्त होकर षट्स्थानपतित हानिके द्वारा स्वस्थानमें

---

१ अ-काप्रत्योः 'बिदिया' इति पाठः। २ अ-काप्रत्योः 'संकमे' इति पाठः। ३ अ-काप्रत्योः 'णील-लेस्सा' इति पाठः। ४ अ-काप्रत्योः 'हीणाहाणीए' इति पाठः। ५ ताप्रतौ 'अ णियमेण' इति पाठः। ६ अ-काप्रत्योः 'तेउलेस्सिए' इति पाठः।

अणंतगुणहीणहाणीए परिणमइ । एवं तेउलेस्सस्स संकिलिस्संतस्स दो वियप्पा । तेउ-लेस्सिओ विसुज्झमाणो सत्थाणे छट्ठाणपदिदाए वड्ढीए वड्ढदि, पम्मलेस्साए अणंत-गुणवड्ढीए परिणमइ । एवं तेउलेस्सस्स परिणमणविहाणं समत्तं ।

संपहि पम्मलेस्साए वुच्चदे । तं जहा— पम्मलेस्सियो विसुज्झमाणो सत्थाणे छट्ठाणपदिदाए वड्ढीए वड्ढदि, सुक्कलेस्साए अणंतगुणवड्ढीए परिणमदि । संकिलिस्समाणओ पम्मलेस्सिओ सट्ठाणे छट्ठाणपदिदाए हाणीए हायदि, तेउलेस्साए अणंतगुणहाणीए हायदि । एवं पम्मलेस्सस्स परिणमणविहाणं समत्तं ।

सुक्कलेस्साए उच्चदे । तं जहा— सुक्कलेस्सियो संकिलिस्समाणो सत्थाणे छट्ठाण-पदिदाए हाणीए हायदि, पम्मलेस्साए अणंतगुणहीणहाणीए परिणमइ । एवं संकिलिस्संतस्स दो वियप्पा । सुक्कलेस्सियो विसुज्झमाणो सट्ठाणे छट्ठाणपदिदाए वड्ढीए वड्ढदि, अण्णलेस्ससंकमो णत्थि । सुक्कलेस्सस्स विसुज्झमाणस्स एक्को चेव वियप्पो । एवं सुक्कलेस्साए परिणमणविहाणं समत्तं ।

संकम-पडिग्गहाणं जहण्णुक्कस्सयाणं तिव्व-मंददाए एत्थ अप्पाबहुअं कायव्वं ।

हीनताको प्राप्त होता है, वही अनन्तगुणहीन हानिके द्वारा कापोतलेश्यासे परिणत होता है । इस प्रकार संक्लेशको प्राप्त होनेवाले तेजलेश्या युक्त जीवके दो विकल्प हैं । तेजलेश्यायुक्त जीव विशुद्धिको प्राप्त होता हुआ षट्स्थानपतित वृद्धिके द्वारा स्वस्थानमें वृद्धिको प्राप्त होता है, वही अनन्तगुणवृद्धिके द्वारा पद्मलेश्यासे परिणत होता है । [इस प्रकार विशुद्धिको प्राप्त होनेवाले तेजलेश्यायुक्त जीवके दो विकल्प हैं ।] इस प्रकार तेजलेश्यायुक्त जीवके परिणमनका विधान समाप्त हुआ ।

अब पद्मलेश्याके परिणमनविधानका कथन करते हैं । यथा— पद्मलेश्यायुक्त जीव विशुद्धिको प्राप्त होता हुआ षट्स्थानपतित वृद्धिके द्वारा स्वस्थानमें वृद्धिको प्राप्त होता है, वही अनन्तगुणवृद्धिके द्वारा शुक्ललेश्यासे परिणत होता है । संक्लेशको प्राप्त होनेवाला पद्मलेश्या संयुक्त जीव षट्स्थानपतित हानिके द्वारा स्वास्थानमें हीनताको प्राप्त होता है, वही अनन्तगुणी हानिके द्वारा तेजलेश्यामें जाकर हीनताको प्राप्त होता है । इस प्रकार पद्मलेश्यावालेके परिणमन-का विधान समाप्त हुआ ।

शुक्ललेश्याके परिणमनविधानका कथन करते हैं । यथा— शुक्ललेश्यावाला संक्लेशको प्राप्त होता हुआ षट्स्थानपतित हानिके द्वारा स्वास्थानमें हानिको प्राप्त होता है, वही अनन्तगुणहीन हानिके द्वारा पद्मलेश्यासे परिणत होता है । इस प्रकार संक्लेशको प्राप्त होते हुए शुक्ललेश्यायुक्त जीवके दो विकल्प हैं । शुक्ललेश्यायुक्त जीव विशुद्धिको प्राप्त होता हुआ षट्स्थानपतित वृद्धिके द्वारा स्वास्थानमें वृद्धिको प्राप्त होता है, उसका अन्य लेश्यामें संक्रम नहीं होता । विशुद्धिको प्राप्त होते हुए शुक्ललेश्यावालेका एक ही विकल्प है । इस प्रकार शुक्ललेश्याका परिणमनविधान समाप्त हुआ ।

यहां तीव्र-मंदताकी अपेक्षा जघन्य व उत्कृष्ट संक्रम और प्रतिग्रहके अल्पबहुत्वका कथन करते

तं जहा— ताणि किण्ण-णीललेस्साओ पडुच्च वुच्चदे। णीलाए जहण्णयं लेस्सट्ठाणं थोवं। किण्णादो जम्हि णीलाए पडिघेप्पदि तं णीलाए जहण्णयं पडिग्गहट्ठाणमणंतगुणं। किण्णाए जहण्णयं संकमट्ठाणं जहण्णयं च किण्णट्ठाणं दो वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि। णीलाए जहण्णयं संकमट्ठाणमणंतगुणं। किण्णाए जहण्णयं पडिग्गहट्ठाणमणंतगुणं। णीलाए उक्कस्सयं पडिग्गहट्ठाणमणंतगुणं। किण्णाए उक्कस्सयं संकमट्ठाणमणंतगुणं। णीलाए उक्कस्सयं संकमट्ठाणं उक्कस्सयं णीलट्ठाणं च दो वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि। किण्णाए उक्कस्सयं पडिग्गहट्ठाणमणंतगुणं। उक्कस्सयं किण्णलेस्सट्ठाणमणंतगुणं। एवं किण्ण-णीलाणं संकम-पडिग्गह[1]प्पाबहुअं समत्तं।

एत्तो णील-काऊणं संकम-पडिग्गहाणमप्पाबहुअं वुच्चदे। तं जहा— जहा किण्ण-णीलाणं तहा काउ-णीलाणं वत्तव्वं। णवरि काउलेस्समादिं कादूण वत्तव्वं। एवं णील-काउसंकम-पडिग्गहप्पाबहुअं समत्तं।

संपहि काउ-तेउलेस्साओ पडुच्च अप्पाबहुअं वुच्चदे। तं जहा— काऊए जहण्णओ संकमो जहण्णट्ठाणं च दो वि तुल्लाणि थोवाणि। तेऊए जहण्णयं ठाणं जहण्णो च संकमो तुल्लो अणंतगुणो। काऊए जहण्णयं पडिग्गहट्ठाणमणंतगुणं। तेऊए जहण्णओ पडिग्गहो अणंतगुणो। काऊए उक्कस्सयं संकमट्ठाणमणंतगुणं। तेऊए उक्कस्सयं संकम-

---

हैं। वह इस प्रकार है— उनका कथन कृष्ण व नील लेश्याओंके आश्रयसे करते हैं। नीललेश्याका जघन्य लेश्यास्थान स्तोक है। नीललेश्याके जिस स्थानमें कृष्णलेश्यासे प्रतिग्रहण होता है वह नीललेश्याका जघन्य प्रतिग्रहस्थान उससे अनन्तगुणा है। कृष्णका जघन्य संक्रमस्थान और जघन्य कृष्णस्थान दोनों ही तुल्य व अनन्तगुणे हैं। नीलका जघन्य संक्रमस्थान अनन्तगुणा है। कृष्णका जघन्य प्रतिग्रहस्थान अनन्तगुणा है। नीलका उत्कृष्ट प्रतिग्रहस्थान अनन्तगुणा है। कृष्णका उत्कृष्ट संक्रमस्थान अनन्तगुणा है। नीलका उत्कृष्ट संक्रमस्थान और उत्कृष्ट नीलस्थान दोनों ही तुल्य व अनन्तगुणे हैं। कृष्णका उत्कृष्ट प्रतिग्रहस्थान अनन्तगुणा है। उत्कृष्ट कृष्णलेश्यास्थान अनन्तगुणा है। इस प्रकार कृष्ण और नील लेश्याओंके संक्रम और प्रतिग्रहका अल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

यहां नील और कापोत लेश्याओंके संक्रम और प्रतिग्रहके अल्पबहुत्व कथन करते हैं। यथा— जैसे कृष्ण और नील लेश्याओंके सम्बन्धमें कथन किया है वैसे ही कापोत और नील लेश्याओंके सम्बन्धमें भी कथन करना चाहिये। विशेषता इतनी है कि कापोतलेश्याको आदि करके यह कथन करना चाहिये। इस प्रकार नील और कापोत लेश्याओंके संक्रम-प्रतिग्रहका अल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

अब कापोत और तेज लेश्याओंके आश्रयसे उक्त अल्पबहुत्वका कथन करते हैं। यथा— कापोतलेश्याका जघन्य संक्रम और जघन्य स्थान दोनों ही तुल्य व स्तोक हैं। तेजलेश्याका जघन्य स्थान और जघन्य संक्रम दोनों तुल्य व उनसे अनन्तगुणे हैं। कापोतका जघन्य प्रतिग्रहस्थान अनन्तगुणा है। तेजका जघन्य प्रतिग्रहस्थान अनन्तगुणा है। कापोतका उत्कृष्ट संक्रमस्थान अनन्तगुणा है। तेजका उत्कृष्ट संक्रमस्थान अनन्तगुणा है। कापोतका उत्कृष्ट प्रति-

---

१ अ-काप्रत्योः 'संकमदिपडिग्गह' ताप्रतौ संकम [दि] पडिग्गह' इति पाठः।

ट्ठाणमणंतगुणं। काऊए उक्कस्सओ पडिग्गहो अणंतगुणो। तेऊए उक्कस्सओ पडिग्गहो अणंतगुणो। काऊए उक्कस्सयं ट्ठाणमणंतगुणं। तेऊए उक्कस्सयं ट्ठाणमणंतगुणं। एवं तेउ-काऊणं संकम-पडिग्गहप्पाबहुअं समत्तं।

तेउ-पम्माणं संकम-पडिग्गहप्पाबहुअं वुच्चदे। तं जहा— तेऊए जहण्णयं ट्ठाणं थोवं। तेऊए जहण्णओ पडिग्गहो अणंतगुणो। पम्माए जहण्णयं ट्ठाणं संकमो च दोण्णि वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि। तेऊए जहण्णयं संकमट्ठाणमणंतगुणं। पम्माए जहण्णओ पडिग्गहो अणंतगुणो। तेऊए उक्कस्सओ पडिग्गहो अणंतगुणो। पम्माए उक्कस्सओ संकमो अणंतगुणो। तेऊए उक्कस्सओ संकमो उक्कस्सयं च ट्ठाणमणंतगुणं। पम्माए उक्कस्सओ पडिग्गहो अणंतगुणो। पम्माए उक्कस्सयं ट्ठाणमणंतगुणं। एवं तेउ-पम्माणं संकम-पडिग्गहप्पाबहुअं समत्तं।

संपहि पम्म-सुक्काणं वुच्चदे। तं जहा— पम्माए जहण्णयं ठाणं थोवं। पम्माए जहण्णओ पडिग्गहो अणंतगुणो। सुक्काए जहण्णओ संकमो जहण्णयं ठाणं च दोण्णि वि तुल्लाणि अणंतगुणाणि। पम्माए जहण्णओ संकमो अणंतगुणो। सुक्काए जहण्णओ पडिग्गहो अणंतगुणो। पम्माए उक्कस्सओ पडिग्गहो अणंतगुणो। सुक्काए उक्कस्सओ संकमो अणंतगुणो। पम्माए उक्कस्सयं ट्ठाणं संकमो च अणंतगुणो। सुक्काए उक्कस्सओ पडिग्गहो अणंतगुणो। उक्कस्सयं सुक्कलेस्सट्ठाणमणंतगुणं। एवं ति-चदु-पंच-छसंजोगाणं पि जाणिदूण अप्पाबहुअं कायव्वं। एवं लेस्सपरिणामे त्ति समत्तमणियोगद्दारं।

ग्रहस्थान अनन्तगुणा है। तेजका उत्कृष्ट प्रतिग्रह अनन्तगुणा है। कापोतका उत्कृष्ट स्थान अनन्तगुणा है। तेजका उत्कृष्ट स्थान अनन्तगुणा है। इस प्रकार तेज और कापोत लेश्याओंके संक्रम और प्रतिग्रहका अल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

तेज और पद्म लेश्याओंके संक्रम व प्रतिग्रहके अल्पबहुत्वका कथन करते हैं। यथा— तेजका जघन्य स्थान स्तोक है। तेजका जघन्य प्रतिग्रह अनन्तगुणा है। पद्मका जघन्य स्थान और संक्रम दोनों ही तुल्य व अनन्तगुणे हैं। तेजका जघन्य संक्रमस्थान अनन्तगुणा है। पद्मका जघन्य प्रतिग्रह अनन्तगुणा है। तेजका उत्कृष्ट प्रतिग्रह अनन्तगुणा है। पद्मका उत्कृष्ट संक्रम अनन्तगुणा है। तेजका उत्कृष्ट संक्रम और उत्कृष्ट स्थान अनन्तगुणा है। पद्मका उत्कृष्ट प्रतिग्रह अनन्तगुणा है। पद्मका उत्कृष्ट स्थान अनन्तगुणा है। इस प्रकार तेज और पद्म लेश्याओंके संक्रम-प्रतिग्रहका अल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

अब पद्म और शुक्ल लेश्याओंक प्रकृत अल्पबहुत्वका कथन करते हैं। यथा— पद्मका जघन्य स्थान स्तोक है। पद्मका जघन्य प्रतिग्रह अनन्तगुणा है। शुक्लका जघन्य संक्रम और जघन्य स्थान दोनों ही तुल्य व अनन्तगुणे हैं। पद्मका जघन्य संक्रम अनन्तगुणा है। शुक्लका जघन्य प्रतिग्रह अनन्तगुणा है। पद्मका उत्कृष्ट प्रतिग्रह अनन्तगुणा है। शुक्लका उत्कृष्ट संक्रम अनन्तगुणा है। पद्मका उत्कृष्ट स्थान और संक्रम अनन्तगुणा है। शुक्लका उत्कृष्ट प्रतिग्रह अनन्तगुणा है। उत्कृष्ट शुक्ललेश्यास्थान अनन्तगुणा है। इस प्रकार तीन, चार, पांच और छह संयोगोंके भी अल्पबहुत्वका कथन जानकर करना चाहिये। इस प्रकार लेश्यापरिणाम अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

१६

सादासादाणियोगद्दारं

अजियं जियसयलविसुं परमं जय-जीयबंधवं णमिउं ।
सादासादणियोगं समासदो वण्णइस्सामो ॥१॥

सादासादे त्ति अणियोगद्दारस्स पंच अणियोगद्दाराणि । तं जहा— समुक्कित्तणा अट्ठपदं पदमीमांसा सामित्तं अप्पाबहुअं चेदि । समुक्कित्तणा त्ति जं पदं तस्स विहासा । तं जहा— एयंतसादं अणेयंतसादं एयंतअसादं अणेयंतअसादं च अत्थि । समुक्कित्तणा गदा ।

अट्ठपदं । तं जहा— जं कम्मं सादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिच्छुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तमेयंतसादं । तव्वदिरित्तं अणेयंतसादं । जं कम्मं असादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिच्छुद्धं असादत्ताए वेदिज्जदि तमेयंतअसादं । तव्वदिरित्तमणेयंतअसादं । एवं अट्ठपदं गदं ।

पदमीमांसा । तं जहा— एयंतसादमत्थि उक्कस्सयमणुक्कस्सयं जहण्णमजहण्णयं च । एवं सेसाणं पि वत्तव्वं । पदमीमांसा[1] गदा ।

जिन्होंने समस्त विभुओंपर विजय प्राप्त कर ली है और जो जगत्के जीवोंके हितैषी हैं उन उत्कृष्ट अजित जिनेन्द्रको नमस्कार करके संक्षेपमें सातासातअनुयोगद्वारका वर्णन करते हैं ॥ १ ॥

'सातासात' इस अनुयोगद्वारके पांच अवान्तर अनुयोगद्वार हैं । यथा— समुत्कीर्तना, अर्थपद, पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व । समुत्कीर्तना यह जो पद है उसकी विभाषा बतलाते हैं । यथा— एकान्तसात, अनेकान्तसात, एकान्तअसात और अनेकान्तअसात है । समुत्कीर्तना समाप्त हुई ।

अर्थपदका कथन इस प्रकार है— सातास्वरूपसे बांधा गया जो कर्म संक्षेप व प्रतिक्षेपसे रहित होकर सातास्वरूपसे वेदा जाता है उसका नाम एकान्तसात है । इससे विपरीत अनेकान्तसात है । जो कर्म असातास्वरूपसे बांधा जाकर संक्षेप व प्रतिक्षेपसे रहित होकर असातास्वरूपसे वेदा जाता है उसका नाम एकान्तअसात है । इससे विपरीत अनेकान्तअसात कहा जाता है । इस प्रकार अर्थपद समाप्त हुआ ।

पदमीमांसाका कथन इस प्रकार है— एकान्तसात उत्कृष्ट है, अनुत्कृष्ट है, जघन्य है और अजघन्य भी है । इसी प्रकार शेष अनेकान्तसात आदिके सम्बन्धमें भी कहना चाहिये । इस प्रकार पदमीमांसा समाप्त हुई ।

---

१ ताप्रतौ 'एवं मीमांसा' इति पाठः ।

सामित्तं। तं जहा— उक्कस्समयमेयंतसादं कस्स होदि? अभवसिद्धियपाओग्गे पयदं। जो सत्तमाए पुढवीए णेरइयो गुणिदकम्मंसियो तत्तो उव्वट्टिदो[1] संतो सव्वलहुं एक्कत्तीसंसागरोवमट्ठिदियं देवलोगं गच्छिहिदि। किं कारणं? तस्स सादवेदयद्धाओ सव्वमहंतीयो बहुआओ च भविस्संति। तदो जो एवं देवलोगे भविस्सो सत्तमाए पुढवीए णेरइयो तस्स चरिमसमयणेरइयस्स उक्कस्सयमेयंतसादं। अणेयंतसादमुक्कस्सयं कस्स? जो सत्तमाए पुढवीए णेरइयो बादरपुढविकाइएसु तसकाइएसु च कम्मं गुणेदूण आगदो, तस्स पुण जो अधापवत्तसंकमेण असंकमस्स अवहारकालो तत्तियमेत्तं जीविदव्वस्स सेसं, सो च तं जीविदव्वसेसं सव्वमसादो भविस्सदि, तस्स पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागसेसाउअस्स णेरइयस्स उक्कस्सयमणेयंतसादं। उक्कस्सयमेयंतअसादं[2] कस्स? जारिसस्स[3] णेरइयस्स उक्कस्सयमणेयंतं सादं कदं तारिसस्सेव णेरइयस्स उक्कस्सयमेयंतअसादं। णवरि णाणत्तं बादर[4]काइएसु अच्छिदो वा ण वा। उक्कस्सयमणेयंतअसादं कस्स? जस्स उक्कस्सयमेयंतअसादं तस्सेव उक्कस्सयमणेयंतअसादं। णवरि बादरकाइएसु तसकाइएसु च कम्मं गुणेदूण णिरयगइं पवेसेदव्वो। तस्स देवलोगभाविस्स चरिमसमयणेरइयस्स उक्कस्सयमणेयंतं असादं।

स्वामित्वका कथन किया जाता है। यथा— उत्कृष्ट एकान्तसात किसके होता है? यहां अभव्यसिद्धिकप्रायोग्य प्रकृत है। जो सातवीं पृथिवीका नारकी गुणितकर्मांशिक वहांसे निकल कर सर्वलघु कालमें इकतीस सागरोपम आयुस्थितिवाले देवलोकको प्राप्त होगा उसके होता है।

शंका— इसका कारण क्या है?

समाधान— इसका कारण यह है कि उसके सातावेदककाल सबसे महान् और बहुत होंगे।

इसलिये जो इस प्रकारके देवलोकमें होनेवाला सातवीं पृथिवीका नारकी है उस अन्तिम समयवर्ती नारकीके उत्कृष्ट एकान्तसात होता है। उत्कृष्ट अनेकान्तसात किसके होता है? जो सातवीं पृथिवीका नारकी बादर पृथिवीकायिकों और त्रसकायिकोंमें कर्मको गुणित करके (गुणितकर्मांशिक होकर) आया है, उसका जो अधःप्रवृत्तसंक्रमसे असंक्रमका अवहारकाल है उतना मात्र जीवन शेष है, वह उस शेष सब जीवन पर्यन्त सातासे रहित होगा, उस पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र शेष आयुवाले नारकीके उत्कृष्ट अनेकान्तसात होता है। उत्कृष्ट एकान्त-असात किसके होता है? जिस प्रकारके नारकीके उत्कृष्ट अनेकान्तसात किया गया है उसी प्रकारके ही नारकीके उत्कृष्ट एकान्तअसात होता है। विशेष इतना है वह बादरकायिकोंमें रह भी सकता और नहीं भी। उत्कृष्ट अनेकान्तअसात किसके होता है? जिसके उत्कृष्ट एकान्तअसात होता है उसीके उत्कृष्ट अनेकान्तअसात होता है। विशेष इतना है कि बादरकायिकोंमें और त्रसकायिकोंमें कर्मको गुणित करके उसे नरकगतिमें प्रविष्ट कराना चाहिये। देवलोकमें उत्पन्न होनेवाले उसी अन्तिम समयवर्ती नारकीके उत्कृष्ट अनेकान्तअसात होता है।

---

१ प्रतिषु 'उवट्टिदो' इति पाठः। २ अ-काप्रत्योः 'मेयंतसादं' इति पाठः। ३ अप्रतौ 'जाविसस्स', ताप्रतौ 'जावि (रि) सस्स' इति पाठः। ४ अ-काप्रत्योः 'णाणत्तबादरं' इति पाठः।

जहण्णयमेयंतं सादं[1] कस्स ? जो पढमसमयो णेरइयो सव्वजहण्णएण जोगेण सादं बंधदि, जत्तियमेत्तो अधापवत्तसंकमेण असंकमस्स अवहारकालो उक्कस्सओ तत्तो समऊणं कालं[2] असादो होहिदि त्ति तदो जं तस्स तइया पढमसमयसादस्स अधाट्ठि-दियमुदयमेहिदि[3] तप्पढमसमयणेरइयस्स जहिण्णयमेयंतसादं[4]। जहण्णयमणेयंतसादं कस्स ? जो सुहुमसंतकम्मेण जहण्णएण तसेसु उववण्णो, तत्थ पढमसमयतब्भवत्थमादिं कादूण सव्वचिरमसादं बंधिदूण तस्स चरिमसमयअसादबंधयस्स जहण्णयमणेयंत-सादं। सो च पुण तं चरिमसमयअसादबंधमादिं कादूण सव्वरहस्सेण कालेण एक्कत्तीसं-सागरोवमाउट्ठिदिदेवगदिं गाहिदि। तत्थ सव्वमहंतीओ सव्वबहुगीओ च साद-वेदगद्धाओ भविस्संति। जहण्णयं एयंतं असादं कस्स ? जस्स जहण्णयं अणेयंतसादं तस्स चेव जहण्णयमेयंतअसादं भाणिदव्वं। णवरि असादेण जहण्णएण तसेसु उववण्णो, तत्थ च सादबंधयद्धमुक्कस्सयं बंधिदूण चरिमसमयसादबंधगो जादो, तस्स जहण्णय-मेयंतअसादं। जहण्णयमणेयंतमसादं कस्स ? एदस्स चेव, सुहुमेहि जहण्णएण असाद-कम्मेण आगदो तसेसु उववण्णो, उक्कस्सयं सादबंधयद्धं बंधिदूण जो चरिमसमयसाद-बंधओ जादो, तस्स जहण्णयमणेयंतअसादं। सो च पुण सव्वलहुं णिरयं गाहिदि, तत्थ पलिदोवमपुधत्तं वा चिरयरयं[5] वा असादो होहिदि, तदो तारिसस्स तिस्से पढम-

जघन्य एकान्तसात किसके होता है ? जो प्रथम समयवर्ती नारकी सर्वजघन्य योगसे साताको बांधता है, जितना मात्र अधःप्रवृत्तसंक्रमसे असंक्रमका उत्कृष्ट अवहारकाल है उससे एक समय कम काल साता रहित होगा, इसलिये उस प्रथम समयवर्ती असातके उस समय जो अधःस्थिति उदयप्राप्त होगी उसके प्रथम समयवर्ती नारकीके जघन्य एकान्तसात होता है। जघन्य अनेकान्तसात किसके होता है ? जो जघन्य सूक्ष्म सत्कर्मके साथ त्रसोंमें उत्पन्न हुआ है, वहां प्रथम समयवर्ती तद्भवस्थको आदि करके सर्वचिर काल असाताको बांधता है उस अन्तिम समयवर्ती असातबन्धकके जघन्य अनेकान्तसात होता है। वह भी उस अन्तिम समय रूप असातबन्धको आदि करके सर्वलघु कालमें इकतीस सागरोपम आयुस्थितियुक्त देवगतिको प्राप्त होगा। वहां सबसे महान् और सबसे अधिक सातवेदककाल होंगे। जघन्य एकान्तअसात किसके होता है ? जिसके जघन्य अनेकान्तसात होता है उसीके जघन्य एकान्त-असात कहना चाहिये। विशेष इतना है कि जघन्य असातके साथ त्रसोंमें उत्पन्न हुआ है और वहां उत्कृष्ट असातबन्धककाल तक उत्कृष्ट बन्ध करके अन्तिम समयवर्ती असातबन्धक हुआ है उसके जघन्य एकान्तअसात होता है। जघन्य अनेकान्तअसात किसके होता है ? वह इसीके होता है— सूक्ष्म योग्य जघन्य असातकर्मके साथ आकर, त्रसोंमें उत्पन्न होकर व उत्कृष्ट सातबन्धक-काल तक बन्ध करके जो अन्तिम समयवर्ती सातबन्धक हुआ है उसके जघन्य अनेकान्तअसात होता है। वह सर्वलघु कालमें नारक भवको प्राप्त करेगा, वहां पल्योपमपृथक्त्व काल अथवा चिरतर काल तक साता रहित होगा, इसलिये उक्त प्रकारके जीवके उस प्रथम सातबन्धक कालके

१ ताप्रतौ '-मेयंतसादं' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'समऊणकालं' इति पाठः। ३ अ-काप्रत्योः 'अधा-विदिय-' इति पाठः। ४ अ-काप्रत्योः 'जहण्णिया-' इति पाठः। ५ ताप्रतौ 'विरयरयं' इति पाठः।

सादबंधगद्धाए चरिमसमए जहण्णयमणेयंतअसादं । एवं अभवसिद्धियपाओग्गे सामित्तं गदं ।

भवसिद्धियपाओग्गे एयंतसादमुक्कस्सयं कस्स ? जो सत्तमादो पुढवीदो सव्वलहुं मणुसगइमागदो, सव्वलहुं खवणाए अब्भुट्ठिदो, चरिमसमयभवसिद्धियो वि संतो सादवेदगो होहिदि, तस्स चरिमसमयसुहुमसांपराइयस्स उक्कस्सयमेयंतसादं । उक्कस्सयमेयंतमसादं कस्स ? एरिसयस्सेव चरिमभवमणुस्सस्स चरिमे असादबंधे च चरिमसमयअसादबंधयस्स । सो च पुण चरिमसमयभवसिद्धियट्ठाणे असादवेदओ होदि । उक्कस्सयमणेयंतं सादं कस्स ? चरिमसमयभवसिद्धियस्स सादवेदयस्स । उक्कस्सयमणेयंतं असादं कस्स ? गुणिदकम्मंसियस्स चरिमसमयभवसिद्धियस्स असादवेदयस्स । जहण्णयाणि[1] सामित्ताणि जहा अभवसिद्धियस्स तारिसाणि चेव । एवं सामित्तं गदं ।

पदेसग्गस्स[2] पमाणाणुगमो— अभवसिद्धियस्स उक्कस्सं पि एयंतसादं एयंतअसादं वा समयपबद्धस्स असंखेज्जपलिदोवमवग्गमूलभागो । भवसिद्धियस्स उक्कस्सयमेयंतसादं एयंतअसादं[3] च समयपबद्धा अंतोमुहुत्तमेत्ता, जवमज्झसमयपबद्धा च अवहारकालमेत्ता । एवं पमाणपरूवणा गदा ।

अन्तिम समयमें जघन्य अनेकान्तअसात होता है । इस प्रकार अभव्यसिद्धिक प्रायोग्यके आश्रयसे स्वामित्वका कथन समाप्त हुआ ।

भव्यसिद्धिकप्रायोग्यके आश्रयसे उत्कृष्ट एकान्तसात किसके होता है ? जो सातवीं पृथिवीसे सर्वलघु कालमें मनुष्यगतिमें आकर और सर्वलघु कालमें क्षपणामें उद्यत होकर अन्तिम समयवर्ती भव्यसिद्धिक भी होता हुआ सातवेदक होगा उस अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके उत्कृष्ट एकान्तसात होता है । उत्कृष्ट एकान्तअसात किसके होता है ? वह ऐसे ही अन्तिम भववाले (चरमशरीरी) मनुष्यके अन्तिम असातबन्धमें अन्तिम समयवर्ती असातबन्धक होनेपर होता है । वह भी अन्तिम समयवर्ती भव्यसिद्धिक स्थानमें असातवेदक होता है । उत्कृष्ट अनेकान्तसात किसके होता है ? वह सातवेदक अन्तिम समयवर्ती भव्यसिद्धिकके होता है । उत्कृष्ट अनेकान्तअसात किसके होता है ? वह गुणितकर्मांशिक अन्तिम समयवर्ती भव्यसिद्धिक असातवेदकके होता है । जघन्य स्वामित्व जैसे अभव्यसिद्धिकके कहे गये हैं वैसे ही भव्यसिद्धिके भी हैं । इस प्रकार स्वामित्व समाप्त हुआ ।

प्रदेशाग्रके प्रमाणानुगमकी प्ररूपणा की जाती है— अभव्यसिद्धिकका उत्कृष्ट एकान्तसात और एकान्तअसात समयप्रबद्धके असंख्यात पल्योपम वर्गमूल प्रमाण है । भव्यसिद्धिकके उत्कृष्ट एकान्तसात और एकान्तअसात समयप्रबद्ध अन्तर्मुहूर्त मात्र हैं । यवमध्यसमयप्रबद्ध अवहारकाल मात्र हैं । प्रमाणप्ररूपणा समाप्त हुई ।

---

१ ताप्रतौ 'जहण्णयावि (णि)' इति पाठः । २ ताप्रतौ 'पदेसस्स' इति पाठः ।
३ ताप्रतौ 'एयंतं असादं' इति पाठः ।

एत्तो अभवसिद्धियपाओग्गे अप्पाबहुअं कायव्वं । तं जहा— सव्वत्थोवमुक्कस्सय-मेयंतं सादं । एयंतं असादं असंखेज्जगुणं । अणेयंतं असादं असंखे० गुणं ।

णिरयगईए तिरिक्खेसु तिरिक्खिणीसु मणुस्सेसु मणुस्सिणीसु देवेसु देवीसु च एइंदिय-बीइंदिय-तीइंदिय-चउरिंदिएसु उक्कस्सअप्पाबहुअस्स ओघभंगो ।

सव्वत्थोवं जहण्णयमेयंतसादं । एयंतअसादमसंखेज्जगुणं । अणेयंतसादं असंखे० गुणं । अणेयंतअसादं संखे० गुणं । सव्वासु गदीसु सव्वेसु एइंदिएसु[1] ओघभंगो । एवमभवसिद्धियपाओग्गे अप्पाबहुअं समत्तं ।

भवसिद्धियपाओग्गे उक्कस्सए अप्पाबहुअं । तं जहा— सव्वत्थोवमुक्कस्सयं एयंतसादं । एयंतअसादं संखेज्जगुणं । अणेयंतअसादं असंखे० गुणं । अणेयंतसादं विसेसाहियं ।

णिरयगईए उक्कस्सयमेयंतसादं थोवं । एयंतअसादं संखेज्जगुणं । अणेयंतसादम-संखे० गुणं । अणेयंतअसादं संखे० गुणं । मणुसगइवज्जासु[2] सव्वासु गदीसु एइंदिएसु च णिरयगइभंगो । मणुस्सेसु मणुसिणीसु ओघभंगो । जहा अभवसिद्धियपाओग्गे जहण्णयं तहा[3] भवसिद्धियपाओग्गे वि जहण्णयं कायव्वं ।

यहां अभव्यसिद्धिकप्रायोग्यके आश्रयसे अल्पबहुत्व करते हैं । यथा— उत्कृष्ट एकान्त-सात सबसे स्तोक है । एकान्तअसात उससे असंख्यातगुणा है । अनेकान्तअसात असंख्यात-गुणा है ।

नरकगतिमें, तिर्यंचोंमें, तिर्यंचनियोंमें, मनुष्योंमें, मनुष्यनियोंमें, देवोंमें, देवियोंमें, तथा एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय व चतुरिन्द्रिय जीवोंमें उत्कृष्ट अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा ओघके समान है ।

जघन्य एकान्तसात सबसे स्तोक है । एकान्तअसात उससे असंख्यातगुणा है । अनेकान्तसात असंख्यातगुणा है । अनेकान्तअसात संख्यातगुणा है ।

सब गतियों और सब एकेन्द्रियोंमें जघन्य अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा ओघके समान है । इस प्रकार अभव्यसिद्धिक प्रायोग्यके आश्रित अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

भव्यसिद्धिकप्रायोग्यके आश्रयसे अल्पबहुत्वका कथन करते हैं । वह इस प्रकार है— उत्कृष्ट एकान्तसात सबसे स्तोक है । एकान्तअसात संख्यातगुणा है । अनेकान्तअसात असंख्यातगुणा है । अनेकान्तसात विशेष अधिक है ।

नरकगतिमें उत्कृष्ट एकान्तसात सबसे स्तोक है । एकान्तअसात संख्यातगुणा है । अनेकान्तसात असंख्यातगुणा है । अनेकान्तअसात संख्यातगुणा है । मनुष्यगतिको छोड़कर शेष सब गतियोंमें और एकेन्द्रियोंमें नरकगतिके समान प्ररूपणा है । मनुष्यों और मनुष्यनियोंमें ओघके समान प्ररूपणा है । जघन्य अल्पबहुत्व जैसे अभव्यसिद्धिकप्रायोग्यके विषयमें किया गया है वैसे ही भव्यसिद्धिक प्रायोग्यके विषयमें भी करना चाहिये ।

---

१ ताप्रतौ 'सव्वेसु इंदिएसु' इति पाठः । २ अ-काप्रत्योः 'मणुसगईए' इति पाठः ।
३ अप्रतौ 'तम्हा' इति पाठः ।

एत्तो अट्ठहि पदेहि अप्पाबहुअं कायव्वं । तं जहा— सादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिसंछुद्धं जं सादत्ताए वेदिज्जदि तं थोवं । जं सादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिसंछुद्धं असादत्ताए वेदिज्जदि तं विसेसाहियं । विसेसो पुण संखे० भागो । जमसादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिसंछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं । जमसादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिसंछुद्धं असादत्ताए वेदिज्जदि तं विससाहियं । जं सादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तमसंखेज्जगुणं । जं सादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धं असादादत्ताए वेदिज्जदि तं विसेसाहियं । जमसादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं । जमसादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धं असादात्ताए वेदिज्जदि तं विसेसाहियं ।

अविपच्चिदासु[1] सव्वासु गदीसु एइंदिएसु च ओघभंगो । अध विपच्चिदे[2] कधं भवदि ? णिरयगदीए समुट्ठिदं जं णिरयगदीए चेव विपच्चदि[3] एदं विपच्चिदं[4] णाम । एदेण अट्ठपदेण विअंचिदस्स अप्पाबहुअं वुच्चदे । तं जहा— णिरयगईए ताव जं

यहां आठ पदोंके द्वारा अल्पबहुत्व करते हैं । वह इस प्रकार है— (१) सातस्वरूपसे बांधा गया जो असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त होकर सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह स्तोक है । (२) जो सातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह विशेष अधिक है । विशेषका प्रमाण उसका संख्यातवां भाग है । (३) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त होता हुआ सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है । (४) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह विशेष अधिक है । (५) जो सातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होता हुआ सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह असंख्यातगुणा है । (६) जो सातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह विशेष अधिक है । (७) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होकर सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है । (८) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह विशेष अधिक है ।

अविपच्चित अर्थात् विपाक रहित सब गतियों और एकेन्द्रियोंमें प्रकृत अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा ओघके समान है ।

शंका— विपच्चितमें अल्पबहुत्व किस प्रकार है ?

समाधान— नरकगतिमें उत्पन्न हुआ जो नरकगतिमें ही विपाकको प्राप्त होता है उसका नाम विपच्चित है । इस अर्थपदके अनुसार विपच्चितका अल्पबहुत्व कहते हैं । वह इस प्रकार है— (१) नरकगतिमें जो सातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त होता हुआ

१ अ-काप्रत्योः 'अधियंचिदासु', ताप्रतौ 'अधियंचिदासु (अविपच्चिदासु)' इति पाठः । २ अ-काप्रत्योः 'विअंचिदे', ताप्रतौ 'वियं (पच्चि) चिदे' इति पाठः । ३ काप्रतौ 'विपंचदि' इति पाठः । ४ प्रतिषु 'विपंचिदं' इति पाठः ।

सादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिसंछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तं सव्वत्थोवं। जमसादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिसंछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तं संखे० गुणं०। जं सादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिसंछुंद्धं असादत्ताए वेदिज्जदि तमसंखेज्जगुणं। जमसादत्ताए बद्धं असंछुद्धमपडिसंछुद्धमसादत्ताए वेदिज्जदि तं संखे० गुणं। जं सादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तं संखे० गुणं। जं असादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तमसंखे० गुणं। जमसादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धमसादत्ताए वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं। [3]जं सादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धं असादत्ताए वेदिज्जदि तमसंखे० गुणं। एवं णिरयगईए परूवणा गदा।

एत्तो मणुसगदीए विपच्चिदेण[4] अप्पाबहुअसाहणत्थं[5] एसा परूवणा करिदे। तं जहा— मणुसगईए असादवेदयद्धा[6] थोवा। सादबंधगद्धा संखेज्जगुणा। असादबंधगद्धा संखेज्जगुणा। सादवेदगद्धा[7] संखेज्जगुणा। जहा मणुसगईए तहा णिरयगईए वज्जाणं[8] सव्वेसिं तसाणं। एइंदिएसु सादबंधगद्धा सादवेदगद्धा च दो वि तुल्लाओ थोवाओ। असादवेदगद्धा असादबंधगद्धा च दो वि तुल्लाओ असंखेज्जगुणाओ।

सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह सबसे स्तोक है। (२) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त होता हुआ सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है। (३) जो सातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह असंख्यातगुणा है। (४) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है। (५) जो सातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होता हुआ सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है। (६) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होता हुआ सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह असंख्यातगुणा है। (७) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है। (८) जो सातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह असंख्यातगुणा है। इस प्रकार नरकगतिमें प्रकृत प्ररूपणा समाप्त हुई।

यहां मनुष्यगतिमें विपच्चित स्वरूपसे अल्पबहुत्वको सिद्ध करनेके लिये यह प्ररूपणा की जाती है। यथा— मनुष्यगतिमें असातवेदककाल स्तोक है। सातबंधककाल संख्यातगुणा है। असातबन्धककाल संख्यातगुणा है। सातवेदककाल संख्यातगुणा है। जिस प्रकार मनुष्यगतिमें यह क्रम है उसी प्रकार नरकगतिको छोड़कर शेष सब त्रसोंके भी यही क्रम समझना चाहिये। एकेन्द्रियोंमें सातबन्धककाल और सातवेदककाल दोनों ही तुल्य व स्तोक हैं। असातवेदककाल और असातबन्धककाल दोनों ही तुल्य व उनसे असंख्यातगुणे हैं।

---

१ अ-काप्रत्योः 'सादत्ताए', ताप्रतौ '[अ-] सादत्ताए' इति पाठः। २ ताप्रतौ '[अ] सादत्ताए', मप्रतौ 'सादत्ताए' इति पाठः। ३ अ-काप्रत्योर्नोपलभ्यते वाक्यमेतत्। ४ अप्रतौ 'अंचिदेण', का-ताप्रत्योः 'विअंचिदेण' इति पाठः। ५ ताप्रतौ 'अप्पाबहुअं साहणत्थमेसा' इति पाठः। ६ अप्रतौ 'असादबंधगद्धा' इति पाठः। ७ अप्रतौ 'सादबंधगद्धा' इति पाठः। ८ ताप्रतौ 'णिरयगइवज्जाणं' इति पाठः।

एदेण अट्ठपदेण मणुसगईए ताव अप्पाबहुअं। तं जहा— सादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिसंछुद्धं असादत्ताए जं[1] वेदिज्जदि तं थोवं। जमसादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिसंछुद्धं असादत्ताए वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं। जं सादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिसंछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं। असादत्ताए जं बद्धं असंछुद्धं अपडिसंछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं। सादत्ताए जं बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धं असादत्ताए वेदिज्जदि तमसंखेज्जगुणं। जमसादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धं असादत्ताए वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं। सादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं। जमसादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं।

जहा मणुस्सेसु तहा मणुसिणीसु पंचिंदियतिरिक्खेसु तिरिक्खिणीसु देवेसु देवीसु च कायव्वं। एइंदिएसु विपच्चिदेण[2]— जं सादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिसंछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तं थोवं। जं[3] सादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिसंछुद्धं असादत्ताए वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं। असादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिसंछुद्धं जं सादत्ताए वेदिज्जदि [तं] तत्तियं चेव। जमसादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिसंछुद्धं असादत्ताए

इस अर्थपदके अनुसार मनुष्यगतिमें अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा की जाती है। यथा— (१) जो सातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह स्तोक है। (२) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त होकर असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है। (३) जो सातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त होकर सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है। (४) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त होता हुआ सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है। (५) जो सातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह असंख्यातगुणा है। (६) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है। (७) जो सातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होता हुआ सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है। (८) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होता हुआ सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है।

जिस प्रकार मनुष्योंमें अल्पबहुत्व किया गया है उसी प्रकार मनुष्यनियों, पंचेन्द्रिय तिर्यंचों, तिर्यंचनियों, देवों और देवियोंमें भी करना चाहिये। एकेन्द्रियोंमें विपच्चितस्वरूपसे उक्त अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा की जाती है— (१) जो सातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त होता हुआ सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह स्तोक है। (२) जो सातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है। (३) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त होता हुआ सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह उतना ही है। (४) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त

---

१ ताप्रतौ 'जं' इत्येतत्पदं नास्ति। २ प्रतिषु 'विअंचिदेण' इति पाठः। ३ अप्रतौ 'जा' इति पाठः।

वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं। जं सादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तमसंखेज्जगुणं। जं सादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धं असादत्ताए वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं। जमसादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तं तत्तियं चेव। जमसादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धं असादत्ताए वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं।

बेइंदिएसु विपच्चिदेण[1]। तं जहा— जं सादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धं असादत्ताए वेदिज्जदि तं थोवं। जमसादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धं असादत्ताए वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं। जं सादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं। जमसादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिसंछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं। जं सादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिसंछुद्धं असादत्ताए वेदिज्जदि तमसंखेज्जगुणं। जमसादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिसंछुद्धं असादत्ताए वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं। जं सादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिसंछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं। जमसादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिसंछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं। जहा बीइंदिएसु तहा तीइंदिएसु चउरिंदिएसु च। एवं[2] सादासादे त्ति समत्तमणियोगद्दारं।

होता हुआ असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है। (५) जो सातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होता हुआ सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह असंख्यातगुणा है। (६) जो सातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है। (७) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होता हुआ सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह उतना मात्र ही है। (८) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है।

द्वीन्द्रियोंमें विपच्चितस्वरूपसे अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा इस प्रकार है— (१) जो सातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह स्तोक है। (२) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है। (३) जो सातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होता हुआ सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है। (४) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त व प्रतिसंक्षिप्त होता हुआ सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है। (५) जो सातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह असंख्यातगुणा है। (६) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है। (७) जो सातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त होकर सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है। (८) जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त व अप्रतिसंक्षिप्त होता हुआ सातस्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है। जिस प्रकार द्वीन्द्रियोंमें यह प्ररूपणा की गयी है उसी प्रकार त्रीन्द्रियों और चतुरिन्द्रियोंमें भी समझना चाहिये। इस प्रकार सातासात यह अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

---

१ प्रतिषु 'विभंचिदेण' इति पाठः। २ का-ताप्रत्योः 'तीइंदिय-चउरिंदिएसु एवं' इति पाठः।

१७

दीह-रहस्साणियोगद्दारं

संभवमरणविवज्जियमहिवंदिय संभवं पयत्तेणं ।
दीह-रहस्सणियोगं वोच्छामि जहाणुपुव्वीए ॥१॥

दीह-रहस्से त्ति अणियोगद्दारं भण्णमाणे तत्थ दीहं चउव्विहं पयडिदीहं ठिदिदीहं अणुभागदीहं पदेसदीहं चेदि । तत्थ पयडिदीहं दुविहं मूलपयडिदीहं उत्तरपयडिदीहं चेदि । तत्थ मूलपयडिदीहं दुविहं पयडिट्ठाणदीहं एगेगपयडिट्ठाणदीहं चेदि । तत्थ पयडिट्ठाणं पडुच्च अत्थि[2] दीहं । तं जहा— अट्ठसु पयडीसु वज्झमाणियासु पयडिदीहं, तदूणासु वज्झमाणियासु णोपयडिदीहं । संतं पडुच्च अट्ठसु पयडीसु संतासु पयडिदीहं, तदूणासु णोपयडिदीहं । उदयं पडुच्च अट्ठसु पयडीसु उदिण्णासु पयडिदीहं, तदूणासु णोपयडिदीहं । एगेगपयडिं पडुच्च णत्थि पयडिदीहं ।

उत्तरपयडीसु पंचणाणावरणीय-पचंतराइयाणं णत्थि पयडिदीहं । दंसणावरणीयस्स णव पयडीयो बंधमाणस्स अत्थि पयडिदीहं, तदूणं बंधमाणस्स णत्थि पयडिदीहं । एवं संतोदयमस्सिदूण वि वत्तव्वं । वेयणीयस्स बंधोदयमस्सिदूण णत्थि पयडिदीहं । संतं पडुच्च अत्थि, अजोगिचरिमसमए एयपयडिसंतं पेक्खिदूण तस्सेव

जन्म और मरणसे रहित ऐसे सम्भव जिनेन्द्रकी वन्दना करके प्रयत्नपूर्वक आनुपूर्वीके अनुसार दीर्घ-ह्रस्वानुयोगद्वारकी प्ररूपणा करता हूं ॥ १ ॥

दीर्घ-ह्रस्वानुयोगद्वारका कथन करनेमें वहां दीर्घ चार प्रकारका है— प्रकृतिदीर्घ, स्थितिदीर्घ, अनुभागदीर्घ और प्रदेशदीर्घ । उनमें प्रकृतिदीर्घके दो भेद हैं— मूलप्रकृतिदीर्घ और उत्तरप्रकृतिदीर्घ । इनमें मूलप्रकृतिदीर्घ दो प्रकारका है— प्रकृतिस्थानदीर्घ और एक-एकप्रकृतिस्थानदीर्घ । उनमें प्रकृतिस्थानकी अपेक्षा दीर्घ सम्भव है । वह इस प्रकारसे— आठ प्रकृतियोंका बन्ध होनेपर प्रकृतिदीर्घ और उनसे कमका बन्ध होनेपर नोप्रकृतिदीर्घ होता है । सत्त्वकी अपेक्षा आठ प्रकृतियांके सत्त्वके होनेपर प्रकृतिदीर्घ और उनसे कमका सत्त्व होनेपर नोप्रकृतिदीर्घ होता है । उदयकी अपेक्षा आठ प्रकृतियोंके उदीर्ण होनेपर प्रकृतिदीर्घ और उनसे कमके उदीर्ण होनेपर नोप्रकृतिदीर्घ होता है । एक एक प्रकृतिकी अपेक्षा प्रकृतिदीर्घ सम्भव नहीं है ।

उत्तर प्रकृतियोंमें पांच ज्ञानावरण और पांच अन्तराय प्रकृतियोंमें प्रकृतिदीर्घ सम्भव नहीं है । दर्शनावरणकी नौ प्रकृतियांको बांधनेवालेके प्रकृतिदीर्घ है, उनसे कम बांधनेवालेके प्रकृतिदीर्घ नहीं है । इसी प्रकारसे इनके सत्त्व और उदयका आश्रय करके भी कथन करना चाहिये । वेदनीयके बन्ध और उदयका आश्रय करके प्रकृतिदीर्घ नहीं है । सत्त्वकी अपेक्षा उसकी सम्भावना है, क्योंकि, अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें एक प्रकृतिके सत्त्वकी अपेक्षा

१ ताप्रतौ 'पत्तएण' इति पाठः । २ ताप्रतौ 'तत्थमपडिट्ठाणं अत्थि' इति पाठः ।

दुचरिमादिसमएसु दोपयडिसंतस्स दीहत्तुवलंभादो। मोहणीयस्स संतं पडुच्च अट्ठावीस-पयडीयो पयडिदीहं, तदूणं णोपयडिदीहं। बंधं पडुच्च बावीस पयडीयो बंधमाणस्स पयडिदीहं, तदूणं बंधमाणस्स णोपयडिदीहं। उदयं पडुच्च दस पयडीयो पयडिदीहं, तदूणं णोपयडिदीहं।

आउअस्स बंधोदयं पडुच्च णत्थि पयडिदीहं। संतं पडुच्च अत्थि, परभवियाउए बद्धे दोण्णं पयडीणं संतदंसणादो। णामस्स एक्कत्तीसपयडीओ बंधोदयं पडुच्च पयडिदीहं, तदूणं णोपयडिदीहं। संतं पडुच्च तिणउदिपयडीयो पयडिदीहं, तदूणं णोपयडिदीहं। गोदस्स बंधोदयं पडुच्च णत्थि पयडिदीहं। संतं पडुच्च अत्थि, अजोगिचरिमसमए पयडिसंतं पेक्खिदूण दुचरिमादिसमयसंतस्स दीहत्तुवलंभादो। एवं पयडिदीहं समत्तं।

ठिदिदीहं दुविहं मूलपयडिट्ठिदिदीहं उत्तरपयडिट्ठिदिदीहं चेदि। तत्थ मूलपयडि-ट्ठिदिदीहं वुच्चदे। तं जहा— णाणावरण-दंसणावरण-वेयणीय-अंतराइयाणं तीसंसागरो-वमकोडाकोडीयो बंधमाणस्स ट्ठिदिदीहं, तदूणं बंधमाणस्स णोट्ठिदिदीहं। मोहणीयस्स सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीयो बंधमाणस्स ट्ठिदिदीहं, तदूणं बंधमाणस्स णोट्ठिदिदीहं। आउअस्स तेत्तीसंसागरोवमाणि बंधमाणस्स ट्ठिदिदीहं, तदूणं बंधमाणस्स णोट्ठिदिदीहं।

उसीके द्विचरम-त्रिचरम आदि समयोंमें वेदनीयकी दो प्रकृतियोंके सत्त्वकी दीर्घता पायी जाती है। मोहनीयके सत्त्वकी अपेक्षा अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सत्तावालेके प्रकृतिदीर्घ है, उनसे कमकी सत्तावालेके नोप्रकृतिदीर्घ है। बन्धकी अपेक्षा बाईस प्रकृतियोंको बांधनेवालेके प्रकृतिदीर्घ है, उनसे कमको बांधनेवालेके नोप्रकृतिदीर्घ है। उदयकी अपेक्षा दस प्रकृतियोंके उदयवालेके प्रकृतिदीर्घ है, उनसे कम उदयवालेके नोप्रकृतिदीर्घ है।

आयु कर्मके बन्ध और उदयकी अपेक्षा प्रकृतिदीर्घ नहीं है। किन्तु सत्त्वकी अपेक्षा है, क्योंकि, परभविक आयुका बन्ध होनेपर दो आयु प्रकृतियोंका सत्त्व देखा जाता है। नामकर्मकी इकतीस प्रकृतियोंके बन्ध और उदयकी अपेक्षा प्रकृतिदीर्घ है, उनसे कमका बन्ध व उदय होनेपर नोप्रकृतिदीर्घ है। सत्त्वकी अपेक्षा तेरानवै प्रकृतियोंकी सत्तावालेके प्रकृतिदीर्घ है, उनसे कमकी सत्तावालेके नोप्रकृतिदीर्घ है। गोत्रके बन्ध और उदयकी अपेक्षा प्रकृतिदीर्घ नहीं है। किन्तु सत्त्वकी अपेक्षा उसके प्रकृतिदीर्घ है, क्योंकि, अयोगकेवलीके अन्तिम समय सम्बन्धी प्रकृति-सत्त्वकी अपेक्षा करके द्विचरम आदि समय सम्बन्धी सत्त्वके दीर्घता पायी जाती है। इस प्रकार प्रकृतिदीर्घ समाप्त हुआ।

स्थितिदीर्घ दो प्रकारका है— मूलप्रकृतिस्थितिदीर्घ और उत्तरप्रकृतिस्थितिदीर्घ। उनमें मूल-प्रकृतिस्थितिदीर्घकी प्ररूपणा करते हैं। यथा— ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय और अन्तराय; इनकी तीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम प्रमाण स्थितिको बांधनेवाले स्थितिदीर्घ है, उससे कम स्थितिको बांधनेवालेके नोस्थितिदीर्घ है। मोहनीयकी सत्तर कोड़ाकोड़ि सागरोपम स्थितिको बांधनेवालेके स्थितिदीर्घ है, उससे कम बांधनेवालेके नोस्थितिदीर्घ है। आयुको तेतीस सागरोपम स्थितिको बांधनेवालेके स्थितिदीर्घ है, उससे कम स्थितिको बांधनेवालेके नोस्थितिदीर्घ है। नाम व गोत्रकी

१ अप्रतौ 'आउअस्स बंधोदयं पडुच्च' इति पाठः।

णामा-गोदाणं वीसंसागरोवमकोडाकोडीयो बंधमाणस्स ट्ठिदिदीहं, तदूणं बंधमाणस्स णोट्ठिदिदीहं। एवमुत्तरपयडीणं पि जाणिदूण ट्ठिदिदीहपरूवणा कायव्वा।

अप्पप्पणो उक्कस्साणुभागट्ठाणाणि बंधमाणस्स अणुभागदीहं, तदूणं बंधमाणस्स णोअणुभागदीहं। सव्वासिं पयडीणं सग-सगपाओग्गउक्कस्सपदेसे[1] बंधमाणस्स पदेस-दीहं, तदूणं बंधमाणस्स णोपदेसदीहं। एवं दीहं ति समत्तं।

रहस्से पयदं[2] — तं चउव्विहं पयडिरहस्सं ट्ठिदिरहस्सं अणुभागरहस्सं पदेसरहस्सं चेदि। तत्थ पयडिरहस्सं दुविहं मूलपयडिरहस्सं उत्तरपयडिरहस्सं चेदि। मूलपयडि-रहस्सं दुविहं पयडिट्ठाणरहस्सं एगेगपयडिरहस्सं चेदि। पयडिट्ठाणे अत्थि रहस्सं। तं जहा— एगेगपयडिं बंधमाणस्स पयडिरहस्सं, तदुवरि बंधमाणस्स णोपयडिरहस्सं। संतं पडुच्च चत्तारिसंतकम्मियस्स पयडिरहस्सं, तदुवरि णोपयडिरहस्सं। एगेगपयडि-रहस्सं णत्थि।

उत्तरपयडीसु पयदं— पंचणाणावरण-पंचंतराइयाणं णत्थि पयडिरहस्सं। दंसणावरणीए चत्तारि पयडीयो बंधमाणस्स पयडिरहस्सं, तदुवरि बंधमाणस्स णोपयडिरहस्सं। मोहणीए एयं बंधमाणस्स पयडिरहस्सं, तदुवरि णोपयडिरहस्सं। आउअस्स बंधं पडुच्च पयडिरहस्सं णत्थि, दोण्णमाउआणमक्कमेण बंधाभावादो। संतं पडुच्च अत्थि पयडिरहस्सं, अबद्धं[3]परभवियाउअम्मि एक्कस्स चेव आउअस्स उवलंभादो।

वीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम स्थितिको बांधनेवालेके स्थितिदीर्घ है, उससे कम बांधनेवालेके नो-स्थितिदीर्घ है। इसी प्रकार उत्तर प्रकृतियोंके भी स्थितिदीर्घकी प्ररूपणा जानकर करना चाहिये।

अपने अपने उत्कृष्ट अनुभागस्थानोंको बांधनेवालेके अनुभागदीर्घ है, उनसे कम बांधने-वालेके नोअनुभागदीर्घ है। सब प्रकृतियोंके अपने अपने योग्य प्रदेशोंको बांधनेवालेके प्रदेशदीर्घ है, उससे कम बांधनेवालेके नोप्रदेशदीर्घ है। इस प्रकार दीर्घका कथन समाप्त हुआ।

ह्रस्वका प्रकरण है— वह प्रकृतिह्रस्व, स्थितिह्रस्व, अनुभागह्रस्व और प्रदेशह्रस्वके भेदसे चार प्रकारका है। उनमें प्रकृतिह्रस्व दो प्रकारका है— मूलप्रकृतिह्रस्व और उत्तरप्रकृतिह्रस्व। मूल-प्रकृतिह्रस्व दो प्रकारका है— प्रकृतिस्थानह्रस्व और एक-एकप्रकृतिह्रस्व। प्रकृतिस्थानमें ह्रस्व है। यथा— एक एक प्रकृतिको बांधनेवालेके प्रकृतिह्रस्व है, उससे अधिक बांधनेवालेके नोप्रकृतिह्रस्व है। सत्त्वकी अपेक्षा चार कर्मोंकी सत्तावालेके प्रकृतिह्रस्व है, उनसे अधिक प्रकृतियोंकी सत्तावालेके नोप्रकृतिह्रस्व है। एक-एकप्रकृतिह्रस्व नहीं है।

उत्तर प्रकृतियोंका प्रकरण है— पांच ज्ञानावरण और पांच अन्तराय प्रकृतियोंके प्रकृति-ह्रस्व नहीं है। दर्शनावरणकी चार प्रकृतियोंको बांधनेवालेके प्रकृतिह्रस्व है, उनसे अधिक बांधनेवालेके नोप्रकृतिह्रस्व है। मोहनीयकी एक प्रकृतिको बांधनेवालेके प्रकृतिह्रस्व है, अधिक बांधनेवालेके नोप्रकृतिह्रस्व है। आयुके बन्धकी अपेक्षा प्रकृतिह्रस्व नहीं है, क्योंकि, आयुकी दो प्रकृतियोंका युगपत् बन्ध सम्भव नहीं है। सत्त्वकी अपेक्षा प्रकृतिह्रस्व सम्भव है, क्योंकि,

---

१ ताप्रतौ 'पदेसं'इति पाठः। २ अ-काप्रत्योः 'पयं' इति पाठः। ३ ताप्रतौ 'बद्ध-' इति पाठः।

णामस्स जसकित्तिं बंधमाणस्स पयडिरहस्सं, तदुवरि णोपयडिरहस्सं। गोद-वेयणीयाणं बंधं पडुच्च णत्थि पयडिरहस्सं, उच्च-णीचागोदाणं सादासादवेदणीयाणं च अक्कमेण बंधाभावादो। एवं पयडिरहस्सं गदं।

ट्ठिदिरहस्सं दुविहं मूलपयडिट्ठिदिरहस्सं उत्तरपयडिट्ठिदिरहस्सं चेदि। तत्थ मूलपयडिट्ठिदिरहस्से[1] च पयदं— णाणावरणीय-दंसणावरणयी-मोहणीय-आउअ-अंतराइयाणं अंतोमुहुत्तट्ठिदिं बंधमाणस्स ट्ठिदिरहस्सं, तदुवरि बंधमाणस्स णोट्ठिदिरहस्सं। वेदणीयस्स बारसमुहुत्तं ट्ठिदिं बंधमाणस्स ट्ठिदिरहस्सं, तदुवरि णोट्ठिदिरहस्सं। णामा-गोदाणमट्ठमुहुत्तं ट्ठिदिं बंधमाणस्स ट्ठिदिरहस्सं, तदुवरि णोट्ठिदिरहस्सं। संतं[2] पडुच्च सव्वासिं पयडीणमेयट्ठिदिसंतकम्मस्स ट्ठिदिरहस्सं[3], तदुवरि णोट्ठिदिरहस्सं।

उत्तरपयडीसु पयदं— बंधं पडुच्च ट्ठिदिरहस्से भण्णमाणे जहा जीवट्ठाणचूलियाए उत्तरपयडीणं जहण्णट्ठिदिपरूवणा कदा तहा कायव्वा। संपहि संतं पडुच्च वुच्चदे। तं जहा— पंचणाणावरणीय-णवदंसणावरणीय-सादासाद-सम्मत्त-मिच्छत्त-सम्मा-

---

परभविक आयुके बन्धसे रहित जीवके एक ही आयुका सत्त्व पाया जाता है। नामकर्मकी यशकीर्तिको बांधनेवालेके प्रकृतिह्रस्व है, उससे अधिक बांधनेवालेके नोप्रकृतिह्रस्व है। गोत्र और वेदनीय कर्मोंके बन्धकी अपेक्षा प्रकृतिह्रस्व नहीं है, क्योंकि, उच्च व नीच गोत्रोंका तथा साता व असाता वेदनीयोंका युगपत् बन्ध सम्भव नहीं है। इस प्रकार प्रकृतिह्रस्व समाप्त हुआ।

स्थितिह्रस्व दो प्रकारका है— मूलप्रकृतिस्थितिह्रस्व और उत्तरप्रकृतिस्थितिह्रस्व। इनमें मूलप्रकृतिस्थितिह्रस्वका प्रकरण है— ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय, आयु और अन्तरायकी अन्तर्मुहूर्त स्थितिको बांधनेवालेके स्थितिह्रस्व है; इससे अधिक स्थितिको बांधनेवालेके नोस्थितिह्रस्व है। वेदनीयकी बारह मुहूर्त मात्र स्थितिको बांधनेवालेके स्थितिह्रस्व है, उससे अधिक स्थितिको बांधनेवालेके नोस्थितिह्रस्व है। नाम और गोत्रकी आठ मुहूर्त मात्र स्थितिको बांधनेवालेके स्थितिह्रस्व है, उससे अधिक बांधनेवालेके नोस्थितिह्रस्व है। सत्त्वकी अपेक्षा सब प्रकृतियोंके एक स्थितिसत्कर्म सहितके स्थितिह्रस्व है, उससे अधिक सत्कर्मवालेके नोस्थितिह्रस्व है।

उत्तर प्रकृतियोंका प्रकरण है— बन्धकी अपेक्षा स्थितिह्रस्वका कथन करनेपर जैसे जीवस्थानकी चूलिकामें उत्तर प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका कथन किया गया है वैसे ही यहां उसका कथन करना चाहिये।

अब सत्त्वकी अपेक्षा स्थितिह्रस्वका कथन करते हैं। यथा— पांच ज्ञानावरणीय, नौ दर्शनावरणीय, साता व असाता वेदनीय, सम्यक्त्व, मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, तेरह कषाय,

---

१ ताप्रतौ 'रहस्सेह च' इति पाठः। २ प्रतिषु 'तं' इति पाठः।
३ प्रतिषु 'संतकम्मं सेसट्ठिदिरहस्सं' इति पाठः।

मिच्छत्त-तेरसकसाय-इत्थि-णवुंसयवेद-चत्तारिआउअ-सव्वणामपयडि-णीचुच्चागोद-पंचंतराइयाणमेया ट्ठिदी ट्ठिदिरहस्सं, तदुवरि णोट्ठिदिरहस्सं। कोधसंजलणाए अंतोमुहुत्तूणबेमासा ट्ठिदिरहस्सं, तदुवरि णोट्ठिदिरहस्सं। माणसंजलणाए अंतोमुत्तूणमासो ट्ठिदिरहस्सं। मायासंजलणाए पक्खो देसूणो ट्ठिदिरहस्सं। पुरिसवेदस्स अट्ठवासा देसूणा ट्ठिदिरहस्सं। तदुवरि णोट्ठिदिरहस्सं। छण्णोकसायाणं संखेज्जाणि वस्साणि ट्ठिदिरहस्सं, तदुवरि णोट्ठिदिरहस्सं। एवं ट्ठिदिरहस्से त्ति समत्तं।

अणुभागरहस्से पयदं। तं जहा— सव्वासिं पयडीणं अप्पप्पणो जहण्णाणुभागट्ठाणं बंधमाणस्स अणुभागरहस्सं, तदुवरि बंधमाणस्स णोअणुभागरहस्सं।

पदेसरहस्से पयदं। तं जहा— सव्वासिं पयडीणं सग-सगजहण्णपदेसे बंधमाणस्स पदेसरहस्सं। संतं[1] पडुच्च खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण गुणसेडिणिज्जरं काऊण सव्वजहण्णीकयपदेसस्स पदेसरहस्सं, तदुवरि णोपदेसरहस्सं। एवं दीह-रहस्से त्ति समत्तमणियोगद्दारं।

स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, चार आयु, सब नामप्रकृतियां, नीच व उच्च गोत्र तथा पांच अन्तराय; इनकी एक स्थिति स्थितिह्रस्व है, उससे अधिक नोस्थितिह्रस्व है। संज्वलन क्रोधकी अन्तर्मुहूर्त कम दो मास स्थिति स्थितिह्रस्व है, उससे अधिक नोस्थितिह्रस्व है। संज्वलन मानकी अन्तर्मुहूर्त कम एक मास स्थिति स्थितिह्रस्व है। संज्वलन मायाकी कुछ कम एक पक्ष स्थिति स्थितिह्रस्व है। पुरुषवेदकी कुछ कम आठ वर्ष स्थिति स्थितिह्रस्व है। उससे अधिक स्थिति नोस्थितिह्रस्व है। छह नोकषायोंकी संख्यात वर्ष स्थिति स्थितिह्रस्व है, उससे अधिक स्थिति नोस्थितिह्रस्व है। इस प्रकार स्थितिह्रस्व समाप्त हुआ।

अनुभागह्रस्वका प्रकरण है। यथा— सब प्रकृतियोंके अपने अपने जघन्य अनुभागस्थानको बांधनेवालेके अनुभागह्रस्व है, उससे अधिक अनुभागस्थानको बांधनेवालेके नोअनुभागह्रस्व है।

प्रदेशह्रस्व अधिकारप्राप्त है। यथा— सब प्रकृतियोंके अपने अपने जघन्य प्रदेशोंको बांधनेवालेके प्रदेशह्रस्व है। सत्त्वकी अपेक्षा क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकर गुणश्रेणिनिर्जराको करके जिसने प्रदेशको सबसे जघन्य कर लिया है उसके प्रदेशह्रस्व है, उससे अधिकके नोप्रदेशह्रस्व है। इस प्रकार दीर्घ-ह्रस्व यह अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

---

१ प्रतिपु 'तं' इति पाठः।



भवधारणीयाणियोगद्दारं

तिहुवणसुरिंदवंदियमहिवंदिय तिहुवणाहिवं सुमदिं[1] ।
भवधारणीय[2]ममलं अणियोगं वण्णइस्सामो ॥१॥

भवसंधारणदाए[3] त्ति अणियोगद्दारे अत्थि भवो तिविहो । तं जहा— ओघभवो आदेसभवो भवग्गहणभवो चेदि । तत्थ ओघभवो णाम अट्ठकम्माणि अट्ठकम्मजणिद-जीवपरिणामो वा । आदेसभवो णाम चत्तारि गइणामाणि तेहिं जणिदजीवपरिणामो वा । सो आदेसभवो चउव्विहो णिरयभवो तिरिक्खभवो मणुसभवो देवभवो चेदि । भवग्गहणभवो णाम गलिदभुज्जमाणाउअस्स उदिण्णअपुव्वाउकम्मस्स पढमसमए उप्पण्ण-जीवपरिणामो वंजणसण्णिदो पुव्वसरीरपरिच्चाएण उत्तरसरीरगहणं वा भवग्गहणभवो णाम । तत्थ भवग्गहणभवेण पयदं— कधममुत्तस्स जीवस्स मुत्तेण सरीरेण सह बंधो? ण एस दोसो, मुत्तट्ठकम्मजणिदसरीरेण अणाइणा[4] संबद्धस्स जीवस्स[5] संसारावस्थाए सव्वकालं तत्तो अपुधभूदस्स तस्संबंधेण[6] मुत्तभावमुवगयस्स सरीरेण सह

तीन लोकके देवों व इन्द्रों वन्दित ऐसे तीन लोकके स्वामी सुमति जिनेन्द्रकी वन्दना करके निर्मल भवधारणीय नामक अनुयोगद्वारका वर्णन करते हैं ॥१॥

'भवसंधारणता' इस अनुयोगद्वारमें भव तीन प्रकारका है । यथा— ओघभव, आदेशभव और भवग्रहणभव । इनमें आठ कर्मों अथवा आठ कर्मजनित जीवके परिणामका नाम ओघभव है । चार गतिनामकर्मों और उनसे उत्पन्न जीवपरिणामको आदेशभव कहते हैं । वह आदेश-भव चार प्रकारका है— नरकभव, तिर्यंचभव, मनुष्यभव और देवभव । भुज्यमान आयुको निर्जीर्ण करके जिसके अपूर्व आयु कर्म उदयको प्राप्त हुआ है उसके प्रथम समयमें उत्पन्न 'व्यंजन' संज्ञावाले जीवपरिणामको, अथवा पूर्व शरीरके परित्यागपूर्वक उत्तर शरीरके ग्रहण करनेको भवग्रहणभव कहा जाता है । उनमें यहां भवग्रहणभव प्रकरणप्राप्त है—

शंका— अमूर्त जीवका मूर्त शरीरके साथ कैसे वन्ध होता है ?

समाधान— यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, मूर्त आठ कर्मजनित अनादि शरीरसे संबद्ध जीव संसार अवस्थामें सदा काल उससे अपृथक् रहता है । अतएव उसके सम्बन्धसे मूर्तभावको प्राप्त हुए जीवके शरीरके साथ सम्बन्ध होनेमें कोई विरोध नहीं है ।

---

१ अ-काप्रत्योः 'सुमहिं' इति पाठः । २ अ-काप्रत्योः '-भववारणीय-', ताप्रतौ 'भववा (धा) रणीय-' इति पाठः । ३ अ-काप्रत्योः 'भवसंवारणदाए', ताप्रतौ 'भवसंवा (धा) रणदाए-' इति पाठः । ४ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-काप्रत्योः 'अणाइणा अणाइणा', ताप्रतौ 'अणाइणा [अणाइणा]' इति पाठः । ५ ताप्रतौ 'जीवस्स' इत्येतत्पदं नोपलभ्यते । ६ प्रतिषु 'तस्स बंधेण' इति पाठः ।

संबंधस्स विरोहाभावादो। कदमेण धारिज्जदि[1] ? कम्मेण धारिज्जदि। कुदो ? अण्णस्सा-संभवादो। तत्थ णाणावरण-दंसणावरण-वेयणीय-मोहणीय-णामा-गोद-अंतराइएहि णो धारिज्जदि[2], तेसिमण्णत्थ वावारुवलंभादो। केण पुण धारिज्जदि ? आउएणेक्केण चेव धारिज्जदि, अण्णहा आउअकम्मस्स वज्जियकज्जस्स अभावप्पसंगादो। कधमण्णत्तो[3] उप्पण्णकज्जस्स अण्णं धारयं ? ण एस दोसो, वट्टीदो[4] समुप्पण्णपईवस्स तेल्लेण[5] धारिज्जमाणस्स उवलंभादो। इहभविएण आउएण धरेदि भवं, ण परभविएणे त्ति भावत्थो। जेण पदेसग्गेण भवं धारेदि तस्स पदेसग्गस्स पदमीमांसा सामित्तमप्पाबहुगं च जहा वेयणाए परूविदं तहा परूवेयव्वं। एवं भवधारणीए त्ति समत्तमणियोगद्दारं।

शंका— किसके द्वारा वह धारण किया जाता है ?

समाधान— कर्मके द्वारा धारण किया जाता है, क्योंकि, अन्यकी सम्भावना नहीं है।

उसमें ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, नाम, गोत्र और अन्तरायके द्वारा तो वह धारण नहीं किया जाता है; क्योंकि, इनका व्यापार अन्य कार्योंमें पाया जाता है।

शंका— तो फिर वह किसके द्वारा धारण किया जाता है ?

समाधान— वह केवल एक आयु कर्मके द्वारा धारण किया जाता है। कारण कि इसके विना आयु कर्मका अन्य कार्य न रहनेसे उसके अभावका प्रसंग प्राप्त होता है।

शंका—अन्यके निमित्तसे उत्पन्न कार्यका अन्य धारक कैसे हो सकता है ?

समाधान— यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, वत्तीसे उत्पन्न प्रदीप तेलके द्वारा धारण किया जानेवाला देखा जाता है।

भावार्थ यह है कि इस भव सम्बन्धी आयु कर्मके द्वारा भव धारण किया जाता है, पर-भव सम्बन्धी आयु कर्मके द्वारा नहीं धारण किया जाता। जिस प्रदेशाग्रके द्वारा भवको धारण करता है उस प्रदेशाग्र सम्बन्धी पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा जैसे वेदना अनुयोगद्वारमें की गयी है वैसे करना चाहिये। इस प्रकार भवधारणीय यह अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

---

१ अ-काप्रत्योः 'कदमेण वारिज्जदि', ताप्रतौ 'कदमेण वा (धा) रिज्जदि' इति पाठः। २ अ-काप्रत्योः 'वारिज्जदि', ताप्रतौ वा (धा) रिज्जदि' इति पाठः।

३ 'अ-काप्रत्योः 'कथमण्णंतो', ताप्रतौ 'कथमण्णंतो (मण्णदो)' इति पाठः। ४ ताप्रतौ वट्टी (ट्टी) दो' इति पाठः। ५ अ-काप्रत्योः तुल्लेण', ताप्रतौ 'तु (ते) ल्लेण' इति पाठः।



पोग्गल-अत्ताणियोगद्दारं

पउमदलगब्भगउरं देवं पउमप्पहं णमंसित्ता ।
पोग्गलअत्तणिओअं समासदो वण्णइस्सामो ॥ १ ॥

पोग्गल-अत्ते त्ति अणियोगद्दारे पोग्गलो णिक्खिविदव्वो । तं जहा— णामपोग्गलो ट्ठवणपोग्गलो दव्वपोग्गलो भावपोग्गलो चेदि चउव्विहो पोग्गलो । णाम-ट्ठवणा-पोग्गला सुगमा । दव्वपोग्गलो[1] आगम-णोआगमदव्वपोग्गलभेदेण दुविहो । आगमपोग्गलो सुगमो । णोआगमपोग्गलो तिविहो जाणुगसरीर-भविय-तव्वदिरित्तं चेदि । जाणुग-सरीर-भवियं गदं । तव्वदिरित्तपोग्गलो थप्पो । भावपोग्गलो दुविहो आगम-णोआगम-भावपोग्गलभेएण । आगमो सुगमो । णोआगमभावपोग्गलो रूव-रस-गंध-फासादिभेएण अणेयविहो । तत्थ णोआगमतव्वदिरित्तदव्वपोग्गले पयदं ।

णेगमणयस्स वत्तव्वएण सव्वदव्वं पोग्गलो । आत्तं णाम गृहीतम् । आत्ताः गृहीताः आत्मसात्कृताः पुद्गलाः पुद्गलात्ताः । ते च पुद्गलाः षड्भिः प्रकारैरात्मसात् क्रियन्ते । तं जहा— गहणदो परिणामदो उवभोगदो आहारदो ममत्तीदो परिग्गहादो

पद्मपत्रके गर्भके समान गौर वर्णवाले पद्मप्रभ जिनेन्द्रको नमस्कार करके पुद्गलात्त अनुयोगद्वारका संक्षेपसे वर्णन करते हैं ॥ १ ॥

'पुद्गलात्त' इस अनुयोगद्वारमें पुद्गलका निक्षेप किया जाता है । यथा— नामपुद्गल, स्थापनापुद्गल, द्रव्यपुद्गल और भावपुद्गलके भेदसे पुद्गल चार प्रकारका है । इनमें नाम-पुद्गल और स्थापनापुद्गल सुगम हैं । द्रव्यपुद्गल आगमद्रव्यपुद्गल और नोआगमद्रव्य-पुद्गलके भेदसे दो प्रकारका है । आगमद्रव्यपुद्गल सुगम है । नोआगमद्रव्यपुद्गल तीन प्रकारका है— ज्ञायकशरीर, भावी और तद्व्यतिरिक्त । ज्ञायकशरीर और भावी अवगत हैं । तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यपुद्गलको अभी छोड़ते हैं । आगम और नोआगम भावपुद्गलके भेदसे भावपुद्गल दो प्रकारका है । उनमें आगमभावपुद्गल सुगम है । नोआगमभावपुद्गल रूप, रस, गन्ध और स्पर्श आदिके भेदसे अनेक प्रकारका है । उनमें यहां तद्व्यतिरिक्त नोआगम-द्रव्यपुद्गल प्रकृत है ।

नैगम नयके विषय स्वरूपसे सब द्रव्य पुद्गल हैं । आत्त शब्दका अर्थ गृहीत है । अतएव 'आत्ताः पुद्गलाः पुद्गलात्ताः' इस विग्रहके अनुसार यहां पुद्गलात्त पदसे आत्मसात् किये गये पुद्गलोंका ग्रहण है । वे पुद्गल छह प्रकारसे आत्मसात् किये जाते हैं । यथा— ग्रहणसे, परिणामसे, उपभोगसे, आहारसे, ममत्वसे और परिग्रहसे । इनकी विभाषा इस प्रकार है—

---

१ अ-काप्रत्योः 'दव्वपोग्गला' इति पाठः ।

चेदि । विहासा । तं जहा— हत्थेण वा पादेण वा जे गहिदा दंडादिपोग्गला ते गहणदो अत्ता पोग्गला । मिच्छत्तादिपरिणामेहि जे अप्पणो कदा ते परिणामदो अत्ता पोग्गला । गंध-तंबोलादिया जे उवभोगे अप्पणो कदा ते उवभोगदो अत्ता पोग्गला । असण-पाणादिविहाणेण जे अप्पणो कदा ते आहारदो अत्ता पोग्गला । जे अणुराएण पडिग्गहिया ते ममत्तीदो अत्ता पोग्गला । जे सायत्तो ते परिग्गहादो अत्ता पोग्गला ।

अथवा, पोग्गलाणमत्ता रूव-रस-गंधफासादिलक्खणं सरूवं पोग्गलअत्ता णाम । तेसिं च अणंतभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्ज-गुणवड्ढि-अणंतगुणवड्ढि त्ति रूवादीणं छव्विहाओ वड्ढीओ होंति । तासिं परूवणा जहा भावविहाणे कदा तहा कायव्वा । सट्ठाणस्स वि असंखेज्जलोगमेत्ताणि ट्ठाणाणि होंति । तेसिं पि एवं चेव परूवणा कायव्वा । एवं पोग्गलात्ते[1] त्ति समत्तमणियोगद्दारं ।

जो दण्ड आदि पुद्गल हाथ अथवा पैरसे ग्रहण किये गये हैं वे ग्रहणसे आत्त पुद्गल कहलाते हैं । मिथ्यात्व आदि परिणामोंके द्वारा जो पुद्गल अपने किये गये हैं वे परिणामसे आत्त पुद्गल कहे जाते हैं । जो गन्ध और ताम्बूल आदि पुद्गल उपभोग स्वरूपसे अपने किये गये हैं उन्हें उपभोगसे आत्त पुद्गल समझना चाहिये । भोजन-पान आदिके विधानसे जो पुद्गल अपने किये गये हैं उन्हें आहारसे आत्त पुद्गल कहते हैं । जो पुद्गल अनुरागसे गृहीत होते हैं वे ममत्वसे आत्त पुद्गल हैं । जो आत्माधीन पुद्गल हैं उनका नाम परिग्रहसे आत्त पुद्गल हैं ।

अथवा, 'अत्त' का अर्थ आत्मा अर्थात् स्वरूप है । अतएव 'पोग्गलाणं-अत्ता पोग्गल-अत्ता' इस विग्रहके अनुसार पुद्गलात्त (पुद्गलात्मा) पदसे पुद्गलोंका रूप, रस, गन्ध व स्पर्श आदि रूप लक्षण विवक्षित है । उन रूपादिकोंके अनन्तभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि ये छह वृद्धियां होती हैं । उनकी प्ररूपणा जैसे भावविधानमें की गयी है वैसे करना चाहिये । स्वस्थानके भी असंख्यात लोक मात्र स्थान होते हैं । उनकी भी इसी प्रकारसे प्ररूपणा करना चाहिये । इस प्रकार पुद्गलात्त यह अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

---

१ ताप्रतौ 'पोग्गलत्ते' इति पाठः ।



१०

णिधत्तमणिधत्ताणियोगद्दारं

णमिऊण सुपासजिणं तियसेसरवंदियं सयलणाणिं ।
वोच्छं समासदो हं णिधत्तमणिधत्तमणियोगं ॥ १ ॥

णिधत्तमणिधत्ते त्ति अणियोगद्दारे अत्थि पयडिणिधत्तं ट्ठिदिणिधत्तं अणुभागणिधत्तं पदेसणिधत्तं चेदि । तत्थ अट्ठपदं— जं पदेसग्गं णिधत्तीकयं उदए दादुं णो सक्कं, अण्णपयडिं संकामिदुं पि णो सक्कं, ओकड्डिदुमुक्कड्डिदुं च सक्कं; एवंविहस्स पदेसग्गस्स णिधत्तमिदि सण्णा[1] । इममण्णं साहणं[2] । उवसामयस्स वा खवयस्स[3] वा सव्वकम्माणि अणियट्टिट्ठाणं पविट्ठिस्स अणिधत्ताणि[4], तेसु णिधत्तलक्खणाणं सव्वेसिं विणासादो । अणंताणुबंधिणो विसंजोएंतस्स अणियट्टिकरणम्हि अणंताणुबंधिचदुक्कमणिधत्तं, सेसाणि[5] कम्माणि णिधत्ताणि अणिधत्ताणि च । दंसण[6]मोहणीयउवसामयस्स अणियट्टिकरणम्हि दंसणमोहखवगस्स अणियट्टिकरणे च दंसणमोहणीयं चेव अणिधत्तं[7], सेसाणि कम्माणि णिधत्ताणि अणिधत्ताणि च । एदेण अट्ठपदेण चउवीसअणियोगद्दारेहि णिधत्तस्स अणिधत्तस्स च मूलुत्तरपयडीओ अस्सिदूण परूवणा कायव्वा । एवं णिधत्तमणिधत्ते त्ति समत्तमणियोगद्दारं ।

त्रिदशेश्वर अर्थात् इन्द्रोंसे वन्दित और पूर्णज्ञानी ऐसे सुपार्श्व जिनको नमस्कार करके मैं संक्षेपमें निधत्तमनिधत्त अनुयोगद्वारका कथन करता हूं ॥१॥

निधत्तमनिधत्त अनुयोगद्वारमें प्रकृतिनिधत्त, स्थितिनिधत्त, अनुभागनिधत्त और प्रदेशनिधत्त हैं। उनमें अर्थपद— जो प्रदेशाग्र निधत्तीकृत है अर्थात् उदयमें देनेके लिये शक्य नहीं है, अन्य प्रकृतिमें संक्रान्त करनेके लिये भी शक्य नहीं है, किन्तु अपकर्षण व उत्कर्षण करनेके लिये शक्य है; ऐसे प्रदेशाग्रकी निधत्त संज्ञा है। यह अन्य साधन है। अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें प्रविष्ट हुए उपशामक अथवा क्षपक जीवके सब कर्म अनिधत्त हैं, क्योंकि, उनमें सब निधत्तलक्षणोंका अभाव है। अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवालेके अनिवृत्तिकरणमें अनन्तानुबन्धिचतुष्क अनिधत्त और शेष कर्म निधत्त व अनिधत्त भी हैं। दर्शनमोहउपशामकके अनिवृत्तिकरणमें और दर्शनमोहक्षपकके अनिवृत्तिकरणमें केवल दर्शनमोहनीय ही अनिधत्त है, शेष कर्म निधत्त व अनिधत्त भी हैं। इस अर्थपदके अनुसार मूल और उत्तर प्रकृतियोंका आश्रय करके निधत्त और अनिधत्तकी प्ररूपणा चौवीस अनुयोगद्वारोंके द्वारा करना चाहिये। इस प्रकार निधत्तमनिधत्त अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

---

१ देसोवसमणतुल्ला होइ निहत्ती निकाइया नवरं । संकमणं पि निहत्तीए नत्थि सेसाण वियरस्स ॥ क. प्र. ५, ७२. २ ताप्रतौ 'इमं सण्णं साहणं' इति पाठः । ३ अ-काप्रत्योः 'खंघयस्स', ताप्रतौ 'खंव (खव) यस्स' इति पाठः । ४ अप्रतौ 'अणिवणत्ताणि', काप्रतौ 'अणिवण्णत्ताणि' इति पाठः । ५ अप्रतौ 'चदुक्कमणिवण्णसेसाणि', काप्रतौ 'चदुक्कमणिवणसेसाणि' इति पाठः । ६ अप्रतौ 'णिधत्ताणि अणिधत्ताणि अणिदत्ताणि च दंसग-', काप्रतौ 'णिधत्ताणि अणिधत्ताणि दंसण-', ताप्रतौ, 'णिधत्ताणि [अणिधत्ताणि] अणिधत्ताणि च दंसण' इति पाठः । ७ अप्रतौ 'अणिधणत्तं', ताप्रतौ 'अणिध [ण] त्तं' इति पाठः ।

णिकाचिदमणिकाचिदाणियोगद्दारं

हंसमिव धवलममलं जम्मण-जर-मरणवज्जियं चंदं।
वोच्छामि भावपणओ णिकाचिदणिकाचिदणियोगं ॥ १ ॥

णिकाचिदमणिकाचिदमिदि अणियोगद्दारे अत्थि पयडिणिकाचिदं ठिदिणिकाचिदं अणुभागणिकाचिदं पदेसणिकाचिदं चेदि। तत्थ अट्ठपदं— जं पदेसग्गं ओकड्डिदुं णो सक्कं, उक्कड्डिदुं णो सक्कं, अण्णपयडिं संकामिदुं णो सक्कं, उदए दादुं णो सक्कं, तं पदेसग्गं णिकाचिदं णाम। अणियट्टिकरणं पविट्ठस्स सव्वकम्माणि अणिकाचिदाणि, हेट्ठा णिकाचिदाणि अणिकाचिदाणि च। एदेण अट्ठपदेण णिकाचिदाणिकाचिदाणं चउवीसअणियोगद्दारेहि परूवणा कायव्वा। उवसंत-णिधत्त-णिकाचिदाणं सण्णियासो। तं जहा— अप्पसत्थउवसामणाए जमुवसंतं पदेसग्गं ण तं णिधत्तं ण तं णिकाचिदं[1] वा। जं णिधत्तं ण तं[2] उवसंतं णिकाचिदं वा। जं णिकाचिदं ण तं उवसंतं णिधत्तं वा।

एदेसिमप्पाबहुअं। तं जहा— जिस्से वा तिस्से वा एक्किस्से पयडीए अधापवत्तसंकमो थोवो। उवसंतपदेसग्गमसंखेज्जगुणं। णिधत्तमसंखेज्जगुणं। णिकाचिदमसंखेज्जगुणं[3]। एवं णिकाचिदमणिकाचिदं ति समत्तमणियोगद्दारं।

हंसके समान धवल, निर्मल तथा जन्म जरा और मरणसे रहित ऐसे चन्द्रप्रभ जिनको भावपूर्ण प्रणाम करके मैं निकाचित-अनिकाचित अनुयोगद्वारकी प्ररूपणा करता हूं ॥१॥

निकाचितमनिकाचित अनुयोगद्वारमें प्रकृतिनिकाचित, स्थितिनिकाचित, अनुभागनिकाचित और प्रदेशनिकाचित हैं। उनमें अर्थपद— जो प्रदेशाग्र अपकर्षण करनेके लिये शक्य नहीं है, उत्कर्षणके लिये शक्य नहीं है, अन्य प्रकृतिमें संक्रान्त करनेके लिये शक्य नहीं है, तथा उदयमें देनेके लिये भी शक्य नहीं है; उस प्रदेशाग्रको निकाचित कहते हैं। अनिवृत्तिकरणमें प्रविष्ट हुए जीवके सब कर्म अनिकाचित हैं। उसके नीचे निकाचित भी हैं और अनिकाचित भी हैं। इस अर्थपदके अनुसार निकाचित और अनिकाचितकी चौबीस अनुयोगद्वारोंके द्वारा प्ररूपणा करना चाहिये।

उपशान्त, निधत्त और निकाचितका संनिकर्ष इस प्रकार है— अप्रशस्त उपशामना द्वारा जो प्रदेशाग्र उपशमको प्राप्त है वह न निधत्त है और न वह निकाचित भी है। जो प्रदेशाग्र निधत्त है वह उपशान्त और निकाचित नहीं है। जो प्रदेशाग्र निकाचित है वह उपशान्त और निधत्त नहीं है।

इनका अल्पबहुत्व इस प्रकार है— जिस किसी भी एक प्रकृतिका अधःप्रवृत्तसंक्रम स्तोक है। उससे उपशान्त प्रदेशाग्र असंख्यातगुणा है। उससे निधत्त प्रदेशाग्र असंख्यातगुणा है। उससे निकाचित प्रदेशाग्र असंख्यातगुणा है। इस प्रकार निकाचितमनिकाचित अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

१ ताप्रतौ 'पदेसग्गं तं णिधत्तं णिकाचिदं' इति पाठः। २ अप्रतौ जं णिधणत्तं णं तं', काप्रतौ 'जं णिधणत्तं ण तं, ताप्रतौ 'जं णिध [ण] त्तं ण तं' इति पाठः। ३ गुणसेढिपएसग्गं थोवं पत्तेगसो असंखगुणं। उवसामणाइ-तिसु वि संकमणेहप्पवत्ते य ॥ क. प्र. ५, ७२.

२२

कम्मट्ठिदिअणियोगद्दारं

णमियूण पुप्फयंतं सुरहियधवलिद्धपुप्फअंचियचलणं[1] ।
कम्मट्ठिदिअणियोगं वोच्छामि समासदो पयत्तेणं[2] ॥ १ ॥

कम्मट्ठिदि त्ति अणियोगद्दारम्हि[3] भण्णमाणे वे उवदेसा होंति— जहण्णुक्कस्सट्ठिदीणं पमाणपरूवणा कम्मट्ठिदिपरूवणे त्ति णागहत्थिखमासमणा भणंति । अज्जमंखुखमासमणा पुण कम्मट्ठिदिसंचिदसंतकम्मपरूवणा कम्मट्ठिदिपरूवणे त्ति भणंति । एवं दोहि उवएसेहि कम्मट्ठिदिपरूवणा कायव्वा । एवं कम्मट्ठिदि त्ति समत्तमणिओगद्दारं ।

सुगन्धित, धवल और समृद्ध पुष्पों द्वारा जिनके चरणोंकी पूजा की गयी है उन पुष्पदन्त जिनेन्द्रको नमस्कार करके मैं प्रयत्नपूर्वक संक्षेपमें कर्मस्थिति अनुयोगद्वारका कथन करता हूं ॥ १ ॥

कर्मस्थिति अनुयोगद्वारके निरूपण करनेमें दो उपदेश हैं— जघन्य और उत्कृष्ट स्थितियोंके प्रमाणकी प्ररूपणा कर्मस्थितिप्ररूपणा है, ऐसा नागहस्ती क्षमाश्रमण कहते हैं । परन्तु आर्यमंक्षु क्षमाश्रमण कहते हैं कि कर्मस्थितिसंचित सत्कर्मकी प्ररूपणाका नाम कर्मस्थितिप्ररूपणा है । इस प्रकार दो उपदेशोंके द्वारा कर्मस्थितिकी प्ररूपणा करना चाहिये । इस प्रकार कर्मस्थिति अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

---

१ अ-काप्रत्योः 'अवियचलणं', ता-मप्रत्योः 'अंचियचलणं' इति पाठः । २ अतोऽग्रे प्रतिष्वत्र 'अहं' इत्येतदधिकं पदं समुपलभ्यते । ३ प्रतिषु 'अणियोगद्दारेहि' इति पाठः ।



पच्छिमक्खंधाणियोगद्दारं

सीयलजिणमहिवंदिय तिहुवणजणसीयलं पयत्तेण ।
वोच्छं समासदो हं जहागमं पच्छिमक्खंधं[1] ॥ १ ॥

पच्छिमभवक्खंधे त्ति[2] अणियोगद्दारे ओघभवो ओदसभवो भवग्गहणभवो चेदि तिविहो भवो। तत्थ भवग्गहणभवेण पयदं। जो चरिमो भवो तम्हि भवे, तस्स जीवस्स सव्वकम्माणं बंधमग्गणा उदयमग्गणा उदीरणमग्गणा संकममग्गणा संतकम्ममग्गणा चेदि एदाओ पंच मग्गणाओ पच्छिमक्खंधाणियोगद्दारे कीरंति। पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसग्गमस्सिदूण एदासु पंचसु परूवणासु कदासु तदो पच्छिमे भवग्गहणे सिज्झमाणस्स इमा अण्णा परूवणा कायव्वा। तं जहा— आउअस्स अंतोमुहुत्तसेसे तदो आवज्जिदकरणं करेदि। आवज्जिदकरणे कदे तदो केवलिसमुग्घादं करेदि। पढमसमए दंडं करेदि[3]। तत्थ ट्ठिदीए असंखेज्जभागे हणदि। अप्पसत्थाणं कम्माणं अणुभागस्स अणंतभागे हणदि। तदो विदियसमए कवाडं करेदि। तत्थ सेसियाए ट्ठिदीए असंखेज्जभागे हणदि, सेसाणुभागस्स च अणंते भागे हणदि। तदो तदियसमए मंथं[4] करेदि। तत्थ वि ट्ठिदि-अणुभागे तहेव[5] हणदि। तदो चउत्थसमए लोगं पूरेदि[6]। लोगं पूरमाणे वि

तीन लोकके जीवोंको शीतल करनेवाले ऐसे शीतल जिनेन्द्रकी वन्दना करके मैं संक्षेपसे आगमके अनुसार पश्चिमस्कन्ध अनुयोगद्वारकी प्ररूपणा करता हूं ॥ १ ॥

'पश्चिमभवस्कन्ध' अनुयोगद्वारमें भव तीन प्रकारका है— ओघ भव, आदेश भव और भवग्रहण भव। इनमें भवग्रहण भव प्रकरणप्राप्त है। जो अन्तिम भव है उस अन्तिम भवमें उस जीवके सब कर्मोंकी बन्धमार्गणा, उदयमार्गणा, उदीरणामार्गणा, संक्रममार्गणा और सत्कर्ममार्गणा ये पांच मार्गणायें पश्चिमस्कन्ध अनुयोगद्वारमें की जाती हैं। प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशाग्रका आश्रय करके इन पांच मार्गणाओंकी प्ररूपणा कर चुकनेपर तत्पश्चात् पश्चिम भवग्रहणमें सिद्धिको प्राप्त होनेवाले जीवकी यह अन्य प्ररूपणा करना चाहिये। यथा— आयुके अन्तर्मुहूर्त मात्र शेष रह जानेपर तब आवर्जितकरणको करता है। आवर्जितकरणके कर चुकनेपर फिर केवलिसमुद्घातको करता है। प्रथम समयमें वह दण्डसमुद्घातको करता है। उसमें स्थितिके असंख्यात बहुभागको घातता है। अप्रशस्त कर्मोंके अनुभागके अनन्त बहुभागको घातता है। तत्पश्चात् द्वितीय समयमें वह कपाटसमुद्घातको करता है। उसमें शेष स्थितिके असंख्यात बहुभागको घातता है और शेष अनुभागके अनन्त बहुभागको घातता है। पश्चात् तृतीय समयमें मंथसमुद्घातको करता है। उसमें भी स्थिति और अनुभागका उसी प्रकारसे घात करता है। तत्पश्चात् चतुर्थ समयमें लोकको पूर्ण करता है अर्थात् लोकपूरणसमुद्घातको करता है। लोक-

---

१ अ-काप्रत्योः 'पच्छिमक्खंडं', ताप्रतौ 'पच्छिमक्खंडं (धं)' इति पाठः। २ अ-काप्रत्योः 'पच्छिमभव-क्खंडेत्ति', ताप्रतौ 'पच्छिमभवक्खंडे (धे) त्ति' इति पाठः। ३ मप्रतिपाठोऽयम्। अ-का-ताप्रतिषु 'करेंति' इति पाठः। ४ अ-काप्रत्योः 'मद्धं' इति पाठः। ५ प्रतिषु 'तत्थेव' इति पाठः। ६ क. पा. सु. पृ. ९००, २-११।

ट्ठिदि-अणुभागे तहेव हणदि। ठिदिसंतकम्ममंतोमुहुत्तं ठवेदि संखेज्जगुणमाउआदो। एदेसु चदुसु समएसु अप्पसत्थकम्माणमणुभागस्स अणुसमयमोवट्टणा, एयसमइयो च ट्ठिदिखंडयस्स घादो। एत्तो सेसाए ट्ठिदीए संखेज्जभागे हणदि। सेसस्स अणुभागस्स अप्पसत्थस्स अणंते भागे हणदि। एत्तो पाए ट्ठिदिखंडयस्स अणुभागखंडयस्स च अंतोमुहुत्तमुक्कीरणद्धा[1]। एत्तो अंतोमुहुत्तं गंतूण वचिजोगं णिरुंभदि। तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण मणजोगं णिरुंभदि अंतोमुहुत्तेण। एत्तो अंतोमुहुत्तं गंतूण उस्सास-णिस्सासं णिरुंभदि अंतोमुहुत्तेण। तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण कायजोगं णिरुंभदि[2]। अंतोमुहुत्तं कायजोगं णिरुंभमाणो इमाणि करणाणि करेदि— पढमसमए अपुव्वफद्दयाइं करेदि पुव्वफद्दयाणं-हेट्ठदो। आदिवग्गणाविभागपडिच्छेदाणं[3] असंखे० भागमोवट्टेदि। जीवपदेसाण-मसंखे० भागमोवट्टेदि। एवमंतोमुहुत्तमपुव्वफद्दयाणि करेदि। असंखेज्जगुणहीणाए सेडीए जीवपदेसाणं च असंखे० गुणाए सेडीए। अपुव्वफद्दयाणि पमाणदो सेडीए असंखेज्जदि-भागो सेडिवग्गमूलस्स वि असंखेज्जदिभागो[4]। एवमपुव्वफद्दयाणि समत्ताणि।

पूरणसमुद्घात करते समय भी स्थिति और अनुभागको उसी प्रकारसे घातता है। स्थितिसत्कर्म-को अन्तर्मुहूर्त मात्र स्थापित करता है जो आयुसे संख्यातगुणा होता है। इन चार समयोंमें अप्रशस्त कर्मोंके अनुभागकी प्रतिसमय अपवर्तना और एक समयवाले स्थितिकाण्डकका घात होता है। यहां उतरते समय शेष स्थितिके संख्यात बहुभागका घात करता है। शेष अप्रशस्त अनुभागके अनन्त बहुभागका घात करता है। यहां स्थितिकाण्डक और अनुभागकाण्डकका अन्तर्मुहूर्तवाला उत्कीरणकाल प्रवृत्त होता है। यहां अन्तर्मुहूर्त जाकर वचनयोगका निरोध करता है। तत्पश्चात् अन्तर्मुहूर्त जाकर अन्तर्मुहूर्तमें मनयोगका निरोध करता है। यहांसे अन्तर्मुहूर्त जाकर अन्तर्मुहूर्तमें उच्छ्वास-निःश्वासका निरोध करता है। तत्पश्चात् अन्तर्मुहूर्त जाकर काययोगका निरोध करता है। अन्तर्मुहूर्तमें काययोगका निरोध करता हुआ इन करणोंको करता है— प्रथम समयमें पूर्वस्पर्धकोंके नीचे अपूर्वस्पर्धकोंको करता है। आदिम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदोंके असंख्यातवें भागका अपवर्तन करता है। जीवप्रदेशोंके असंख्यातवें भागका अपवर्तन करता है। इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त काल अपूर्वस्पर्धकोंको करता है। इन अपूर्व स्पर्धकोंको असंख्यातगुणहीन श्रेणिके क्रमसे तथा जीवप्रदेशोंके असंख्यातगुणी श्रेणिके क्रमसे करता है। अपूर्वस्पर्धकोंका प्रमाण श्रेणिके असंख्यातवें भाग और श्रेणिवर्गमूलके भी असंख्यातवें भाग मात्र है। इस प्रकार अपूर्वस्पर्धकोंका कथन समाप्त हुआ।

---

१ क. पा. सु. पृ. ९०२, १३-१९. २ षट्खंडागम पु. ६, पृ. ४१४; पु. १० पृ. ३२१. एत्तो अंतोमुहुत्तं गंतूण बादरकायजोगेण बादरमणजोगं णिरुंभइ। तदो अंतोमुहुत्तेण बादरकायजोगेण बादरवचिजोगं णिरुंभइ। तदो अंतोमुहुत्तेण बादरकायजोगेण बादरउस्सासणिस्सासं णिरुंभइ। तदो अंतोमुहुत्तेण बादरकायजोगेण तमेव बादरकायजोगं णिरुंभइ। तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण सुहुमकायजोगेण सुहुममणजोगं णिरुंभइ। तदो अंतोमुहुत्तेण सुहुमकायजोगेण सुहुमवचिजोगं णिरुंभइ। तदो अंतोमुहुत्तेण सुहुमकायजोगेण सुहुमउस्सासं णिरुंभइ। क. पा. सु. पृ. ९०४, २०-२६. ३ ताप्रतौ 'करेदि,ः अपुव्वफद्दयाणं हेट्ठदो आदि-' इति पाठः। ४ क. पा. सु. पृ. ९०४, २७-३४.

एत्तो अंतोमुहुत्तं किट्टीयो करेदि। अपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदाणमसंखे० भागमोवट्टेदि। जीवपदेसाणमसंखे० भागमोवट्टेदि। एत्तो अंतोमुहुत्तं किट्टीओ करेदि असंखेज्जगुणहीणाए सेडीए, जीवपदेसाणं च असंखे० गुणाए सेडीए ओवट्टेदि। किट्टीदो किट्टिगुणगारो[1] पलिदो० असंखे० भागो। किट्टीओ[2] सेडीए असंखे० भागो, अपुव्वफद्दयाणं च असंखे० भागो। किट्टिकरणे णिट्ठिदे तदो से काले अपुव्वफद्दयाणि पुव्वफद्दयाणि[3] च णासेदि। अंतोमुहुत्तं किट्टिगदजोगो होदि। सुहुमकिरियमप्पडिवादिज्झाणं झायदि। किट्टीणं चरिमसमए असंखे० भागे णासेदि[4]। जोगम्हि णिरुद्धम्हि आउअसमाणि कम्माणि करेदि। तदो अंतोमुहुत्तं सेलेसिं पडिवज्जदि, समुच्छिण्णकिरियमणियट्टिज्झाणं झायदि। सेलेसिअद्धाए ज्झीणाए सव्वकम्मविप्पमुक्को एयसमएण सिद्धिं गच्छदि त्ति[5]। एवं पच्छिमक्खंधे[6] त्ति समत्तमणियोगद्दारं।

यहांसे लेकर अन्तर्मुहूर्त काल कृष्टियोंको करता है। अपूर्वस्पर्धकोंकी आदिम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदोंके असंख्यातवें भागका अपवर्तन करता है। जीवप्रदेशोंके अविभागप्रतिच्छेदोंके असंख्यातवें भागका अपवर्तन करता है। यहांसे अन्तर्मुहूर्त काल असंख्यातगुणहीन श्रेणिके क्रमसे कृष्टियोंको करता है, जीवप्रदेशोंका असंख्यातगुणित श्रेणिके क्रमसे अपवर्तन करता है। कृष्टिसे कृष्टिका गुणकार पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है। कृष्टियां श्रेणिके असंख्यातवें भाग तथा अपूर्वस्पर्धकोंके भी असंख्यातवें भाग मात्र होती हैं। कृष्टिकरणके समाप्त होनेपर तत्पश्चात् अनन्तर समयमें अपूर्वस्पर्धकों और पूर्वस्पर्धकोंको भी नष्ट करता है। पश्चात् अन्तर्मुहूर्त काल कृष्टिगतयोग होता है और सूक्ष्मक्रिया-अप्रतिपातिध्यानको ध्याता है। कृष्टियोंके अन्तिम समयमें असंख्यात बहुभागको नष्ट करता है। योगका निरोध हो जानेपर कर्मोंको आयुके समान करता है। तत्पश्चात् अन्तर्मुहूर्तमें शैलेश्यभावको प्राप्त करता है और समुच्छिन्नक्रिया-अनिवृत्ति ध्यानको ध्याता है। शैलेश्यकालके क्षीण होनेपर सब कर्मोंसे मुक्त होकर एक समयमें सिद्धिको प्राप्त होता है। इस प्रकार 'पश्चिमस्कन्ध' यह अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

---

१ कसायपाहुडसुत्ते तु 'किट्टीदो किट्टिगुणगारो' इत्येतस्य स्थाने 'किट्टीगुणगारो' इति पाठः। २ प्रतिषु 'किट्टीए' इति पाठः। ३ अप्रतौ 'अपुव्वफद्दयाणि अपुव्वफद्दयाणि' इति पाठः। ४ अ-काप्रत्योः 'णासेडि' इति पाठः। ५ क. पा. सु. पृ. ९०५, ३६-५२. ६ प्रतिषु 'खंडे' इति पाठः।



२४

अप्पाबहुआणियोगद्दारं

णमिऊण वड्ढमाणं अणंतणाणाणुवट्टमाणमिसिं ।
वोच्छामि अप्पबहुअं अणियोगं बुद्धिसारेण ॥ १ ॥

अप्पाबहुगअणियोगद्दारे णागहत्थिभडारओ संतकम्ममग्गणं करेदि । एसो च उवदेसो पवाइज्जदि । संतकम्मं चउव्विहं पयडिसंतकम्मं ठिदिसंतकम्मं अणुभागसंतकम्मं पदेससंतकम्मं चेदि । तत्थ पयडिसंतकम्मं दुविहं मूलपयडिसंतकम्मं उत्तरपयडिसंतकम्मं चेदि । तत्थ मूलपयडीहि सामित्तं णेदूण उत्तरपयडीहि सामित्तं कायव्वं । तं जहा— पंचणाणावरणीय-चउदंसणावरणीय-पंचंतराइयाणं संतकम्मस्स को सामी ? सव्वो छदुमत्थो । एवं णिद्दा-पयलाणं । णवरि चरिमसमयछदुमत्थस्स णत्थि संतकम्मं[2] । [3]थीणगिद्धितियसंतकम्मस्स को सामी ? सव्वो छदुमत्थो । णवरि खवगस्स अणियट्टिकरणमंतोमुहुत्तं पविट्ठस्स संतकम्मं वोच्छिण्णं ति कट्टु उवरिमेसु छदुमत्थेसु णत्थि संतकम्मं[4]।

सादासादाणं संतकम्मं कस्स ? संसारिणो सव्वस्स । णवरि जस्स उदओ णत्थि

अनन्तज्ञानसे अनुवर्तमान वर्धमान ऋषिको नमस्कार करके बुद्धिके अनुसार अल्पबहुत्व अनुयोगद्वारकी प्ररूपणा करता हूं ॥ १ ॥

नागहस्ती भट्टारक अल्पबहुत्व अनुयोगद्वारमें सत्कर्मकी मार्गणा करते हैं । और यह उपदेश प्रवाहस्वरूपसे आया हुआ परंपरागत है । सत्कर्म चार प्रकारका है—प्रकृतिसत्कर्म, स्थितिसत्कर्म, अनुभागसत्कर्म और प्रदेशसत्कर्म । इनमें प्रकृतिसत्कर्म दो प्रकारका है— मूलप्रकृतिसत्कर्म और उत्तरप्रकृतिसत्कर्म । इनमें मूल प्रकृतियोंके साथ स्वामित्वको ले जाकर फिर उत्तर प्रकृतियोंके साथ स्वामित्वकी प्ररूपणा करते हैं । वह इस प्रकार है— पांच ज्ञानावरणीय, चार दर्शनावरणीय और पांच अन्तराय प्रकृतियोंके सत्कर्मका स्वामी कौन है ? इनके सत्कर्मके स्वामी सब छद्मस्थ जीव हैं । इसी प्रकार निद्रा और प्रचलाके सत्कर्मके सम्बन्धमें जानना चाहिये । विशेष इतना है कि अन्तिम समयवर्ती छद्मस्थके उनका सत्कर्म नहीं रहता । स्त्यानगृद्धि आदि तीन दर्शनावरण प्रकृतियोंके सत्कर्मका स्वामी कौन है ? उसके स्वामी सब छद्मस्थ हैं । विशेष इतना है कि अनिवृत्तिकरणमें प्रविष्ट हुए क्षपकके अन्तर्मुहूर्त जाकर इनके सत्कर्मकी व्युच्छित्ति हो जाती है, अतएव इसके आगे छद्मस्थोंके उनका सत्कर्म नहीं रहता ।

साता और असाता वेदनीयका सत्कर्म किसके होता है ? उनका सत्कर्म सब संसारी जीवोंके रहता है । विशेष इतना है कि उक्त दो प्रकृतियोंमेंसे जिसका उदय नहीं है उसका

---

१ ताप्रतौ 'णाणेण वट्टमाण' इति पाठः । २ छउमत्थंता चउदस दुचरमसमयंमि अत्थि दो निद्दा । क. प्र. ७, ३. ३ ताप्रतौ स्त्यानगृद्धित्रयसम्बद्धोऽयं सन्दर्भस्त्रुटितोऽस्ति । ४ खवगानियट्टिअद्धा संखिज्जा होंति अट्ठ वि कसाया । निरय-तिरियतेरसगं निद्दा-निद्दातिगेणुवरिं ॥ क. प्र. ७, ६.

तस्स चरिमसमयभवसिद्धयम्मि णत्थि संतं[1]। मोहणीयसंतकम्मस्स सामित्तं जहा कसायपाहुडे कदं तहा कायव्वं।

णिरयाउअसंतकम्मं कस्स? णेरइयस्स वा मणुस-तिरिक्खस्स वा। मणुस-तिरिक्खाउआणं[2] संतकम्मं कस्स[3]? अण्णदरस्स देवस्स णेरइयस्स तिरिक्खस्स मणुस्सस्स वा। देवाउअसंतकम्मं कस्स? देवस्स मणुसस्स तिरिक्खस्स वा[4]।

णिरयगइ-तिरिक्खगइ-तप्पाओग्गाणं च जादि-आणुपुव्विणामाणं आदावुज्जोव-थावर-सुहुम-साहारणसरीरणामाणं च संतकम्मस्स सामिओ[5] को होदि? अण्णदरो जाव णिरय-तिरिक्खणामाणं चरिमसमयसंछोहओ त्ति। देवगइ-पाओग्गाणुपुव्वि-वेउव्विय-सरीर-आहारसरीर-तप्पाओग्गअंगोवंग-बंधण-संघादाणं च संतकम्मं कस्स? अण्णदरस्स अणुव्वेल्लिदसंतकम्मियस्स जाव दुचरिमसमयभवसिद्धियो[6] त्ति। मणुसगइ-मणुसगइ-पाओग्गाणुपुव्वि-तप्पाओग्गजादिणामाणं संतकम्मं कस्स? अण्णदरस्स अणुव्वेल्लिदसंत-कम्मियस्स जाव चरिमसमयभवसिद्धयो त्ति। णवरि मणुसगइपाओग्गाणुपुव्विणामाए जाव [दु]चरिमसमयभवसिद्धियो त्ति। ओरालिय-तेजा-कम्मइयसरीराणं तप्पाओग्ग-

---

सत्कर्म अन्तिम समयवर्ती भव्यसिद्धिकके नहीं रहता। मोहनीयके सत्कर्मके स्वामित्वका कथन जैसे कषायप्राभृतमें किया गया है वैसे ही यहां भी करना चाहिये।

नारकायुका सत्कर्म किसके होता है? उसका सत्कर्म नारकी, मनुष्य और तिर्यंचके होता है। मनुष्यायु और तिर्यगायुका सत्कर्म किसके होता है? उनका सत्कर्म अन्यतर देव, नारकी, तिर्यंच और मनुष्यके होता है। देवायुका सत्कर्म किसके होता है? उसका सत्कर्म देव, मनुष्य और तिर्यंचके होता है।

नरकगति, तिर्यंचगति और तत्प्रायोग्य जाति एवं आनुपूर्वी नामकर्मोंका तथा आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म और साधारणशरीर नामकर्मोंके सत्कर्मका स्वामी कौन होता है? उसका स्वामी नरकगति और तिर्यंचगति नामकर्मोंके अन्तिम समयवर्ती संक्रामक तक अन्यतर जीव होता है। देवगति, देवगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर व आहारकशरीर तथा उनके योग्य आंगोपांग, बन्धन और संघात नामकर्मोंका सत्कर्म किसके होता है? उनका सत्कर्म सत्कर्मकी उद्वेलना न करनेवाले द्विचरम समयवर्ती भव्यसिद्धिक तक अन्यतर जीवके रहता है। मनुष्यगति, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी और तत्प्रायोग्य जाति नामकर्मका सत्कर्म किसके होता है? उनका सत्कर्म सत्कर्मकी उद्वेलना न करनेवाले अन्तिम समयवर्ती भव्यसिद्धिक तक अन्यतर जीवके रहता है। विशेष इतना है कि मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी नामकर्मका सत्कर्म द्विचरम समयवर्ती भव्यसिद्धिक तक रहता है। औदारिक, तैजस और कार्मण शरीर तथा तत्प्रायोग्य

---

१ मणुयगइ-जाइ-तस-बायरं च पज्जत्त-सुभग-आएज्जं। जसकित्ती तित्थयरं वेयणि-उच्चं च मणुयाणं ॥ भव-चरिमस्समयम्मि उ तम्मग्गिल्लसमयम्मि सेसाउ। आहारग-तित्थयरा भज्जा दुसु नत्थि तित्थरं ॥ क. प्र. ७, ८-९. २ ताप्रतौ '[णिरयगइ] तिरिक्ख [गइ]-मणुस्साउआणं' इति पाठः। ३ अ-काप्रत्योः 'संतकम्मस्स' इति पाठः। ४ बद्धाणि ताव आऊणि वेइयाइं ति जा कसिणं ॥ क. प्र. ७, ३. ५ प्रतिषु 'सामित्तओ' इति पाठः। ६ अ-काप्रत्योः 'सिद्धया' इति पाठः।

अंगोवंग-बंधण-संघादाणं च छसंठाण-छसंघडण-वण्ण-गंध-रस-फास-अगुरुअलहुअ-उव-घाद-परघाद-उस्सास-पसत्थापसत्थविहायगइ - अपज्जत्त - पत्तेयसरीर-थिराथिर - सुहासुह-दूभग-दुस्सर-अणादेज्ज-अजसकित्ति-णिमिण-णीचागोदाणं संतकम्मं कस्स ? चरिमसमय-भवसिद्धियं मोत्तूण संसारत्थस्स सव्वस्स । तस-बादर-पज्जत्त-सुभगादेज्ज-जसकित्ति-उच्चागोदाणं संतकम्मं कस्स ? अण्णदरस्स संसारावत्थस्स । तित्थयरणामाए संतकम्मं कस्स ? सम्माइट्ठिस्स मिच्छाइट्ठिस्स वा जाव चरिमसमयभवसिद्धियादो त्ति । एवं सामित्तं समत्तं ।

एयजीवेण कालो अंतरं, णाणाजीवेहि भंगविचओ कालो अंतरं, सण्णियासो च सामित्तादो साहेदूण भाणियव्वो ।

एत्तो अप्पाबहुअं दुविहं सत्थाण-परत्थाणप्पाबहुअभेएण । तत्थ परत्थाणप्पाबहु-अम्मि पयदं— सव्वत्थोवा आहारसरीरसंतकम्मिया । सम्मत्तसंतकम्मिया असंखे० गुणा । सम्मामिच्छत्तस्स संतकम्मिया विसेसाहिया । मणुस्साउअस्स संतक० असंखे० गुणा । णिरयाउअस्स संतक० असंखे० गुणा । देवाउअस्स संतक० असंखे० गुणा । देवगइ-णामाए संतक० असंखे० गुणा । णिरयगइणामाए संतक० विसेसा० । वेउव्वियसरीर-णामाए संतक० विसेसा० । उच्चागोदस्स संतक० अणंतगुणा । मणुसगइणामाए संतक०

आंगोपांग, बन्धन और संघातका, छह संस्थान, छह संहनन, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्त व अप्रशस्त विहायोगति, अपर्याप्त, प्रत्येकशरीर, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, अयशकीर्ति, निर्माण और नीचगोत्र; इनका सत्कर्म किसके होता है ? इनका सत्कर्म अन्तिम समयवर्ती भव्यसिद्धिकको छोड़कर सब संसारी जीवोंके रहता है । त्रस, बादर, पर्याप्त, सुभग, आदेय, यशकीर्ति और उच्चगोत्रका सत्कर्म किसके होता है ? इनका सत्कर्म अन्यतर संसारी प्राणीके होता है । तीर्थंकर नाम-कर्मका सत्कर्म किसके होता है ? उसका सत्कर्म अन्तिम समयवर्ती भव्यसिद्धिक तक सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टिके भी होता है । इस प्रकार स्वामित्व समाप्त हुआ ।

एक जीवकी अपेक्षा काल और अन्तर तथा नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय, काल, अन्तर और संनिकर्षका कथन स्वामित्वसे सिद्ध करके करना चाहिये ।

यहां अल्पबहुत्व दो प्रकारका है— स्वस्थान अल्पबहुत्व और परस्थान अल्पबहुत्व । उनमें परस्थान अल्पबहुत्व प्रकृत है— आहारशरीरसत्कर्मिक जीव सबसे स्तोक हैं । सम्यक्त्व-प्रकृतिसत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । सम्यग्मिथ्यात्वके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । मनुष्यायुके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । नारकायुके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । देवायुके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । देवगति नामकर्मके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । नरकगति नामकर्मके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । वैक्रियिकशरीर नामकर्मके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । उच्चगोत्रके सत्कर्मिक अनन्तगुणे हैं । मनुष्यगति नामकर्मके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । तिर्यगायुके

---

१ क. प्र. ७, ८-९.

विसे० । तिरिक्खाउअस्स संतक० विसे० । अणंताणुबंधिचउक्कसंतक० विसे० । मिच्छत्त-संतक० विसे० । अट्ठकसायसंतक० विसे० । तिरिक्खगइ-णिद्दाणिद्दा-पयलापयला-थीण-गिद्धीणं च संतक० तुल्ला विसेसाहिया । णवुंसयवेदस्स संतक० विसे० । इत्थिवेयस्स संतक० विसे० । छण्णोकसायाणं संतक० विसे० । पुरिसवेस्स संतक० विसे० । कोह-संजलणाए संतक० विसे० । माण० विसे० । माया० विसे० । लोभ० विसे० । णिद्दा-पयलाणं संतक० विसे० । पंचणाणावरण-चउदंसणावरण-पंचंतराइयाणं संतक० तुल्ला विसेसाहिया । ओरालिय-तेजा-कम्मइय-अजसकित्ति-णीचागोदाणं संतक० विसे० । असादस्स संतक० विसे० । सादस्स संतक० विसे० । जसकित्तीए संतकम्मिया विसे-साहिया । एवं ओघमप्पाबहुअदंडओ समत्तो ।

णिरयगईए सव्वत्थोवा मणुस्साउअस्स संतकम्मिया । आहारसरीरणामाए संत-कम्मिया असंखेज्जगुणा । सम्मत्तस्स संतक० असंखे० गुणा । सम्मामिच्छत्तस्स संतक० विसेसा० । तिरिक्खाउअस्स संतक० असंखे० गुणा । अणंताणुबंधीणं संतक० संखे० गुणा । मिच्छत्तस्स संतक० विसे० । सेसाणं कम्माणं सव्वेसिं संतकम्मिया तुल्ला विसेसा० । एवं णिरयगइदंडओ समत्तो ।

तिरिक्खगदीए आहारसंतकम्मिया थोवा । सम्मत्तसंतक० असंखे० गुणा ।

सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । अनन्तानुबन्धिचतुष्कके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । मिथ्यात्वके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । आठ कषायोंके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । तिर्यंचगति, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला और स्त्यानगृद्धिके सत्कर्मिक तुल्य व विशेष अधिक हैं । नपुंसकवेदके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । स्त्रीवेदके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । छह नोकषायोंके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । पुरुषवेदके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । संज्वलन क्रोधके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । संज्वलन मानके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । संज्वलन मायाके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । संज्वलन लोभके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । निद्रा और प्रचलाके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पांच अन्तरायके सत्कर्मिक तुल्य व विशेष अधिक हैं । औदारिक, तैजस व कार्मण शरीर, अयशकीर्ति और नीचगोत्रके सत्कर्मिक तुल्य व विशेष अधिक हैं । असातावेदनीयके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । सातावेदनीयके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । यशकीर्तिके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । इस प्रकार ओघअल्पबहुत्व दण्डक समाप्त हुआ ।

नरकगतिमें मनुष्यायुके सत्कर्मिक सबसे स्तोक हैं । आहारकशरीर नामकर्मके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । सम्यक्त्व प्रकृतिके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । सम्यग्मिथ्यात्वके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । तिर्यगायुके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । अनन्तानुबन्धिचतुष्टयके सत्कर्मिक संख्यातगुणे हैं । मिथ्यात्वके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । शेष सब कर्मोंके सत्कर्मिक तुल्य व विशेष अधिक हैं । इस प्रकार नरकगतिदण्डक समाप्त हुआ ।

तिर्यंचगतिमें आहारसत्कर्मिक स्तोक हैं । सम्यक्त्व प्रकृतिके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे

सम्मामिच्छत्तसंतक० विसेसा० । मणुस्साउअस्स संतक० असंखे० गुणा । णिरयाउअस्स संतक० असंखे० गुणा । देवाउअस्स संतक० असंखे० गुणा । देवगदीए संतक० असंखे० गुणा । णिरियगदीए संतक० विसे० । वेउव्वियसरीरसंतक० विसे० । उच्चागोदसंतक० अणंतगुणा । मणुसगइसंतक० विसे० । अणंताणुबंधीणं संतक० विसे० । मिच्छत्तस्स संतक० विसे० । सेसाणं कम्माणं संतकम्मिया तुल्ला विसेसाहिया । एवं तिरिक्खगइ-दंडओ समत्तो ।

तिरिक्खजोणिणीसु सव्वत्थोवा आहारसरीरणामाए संतकम्मिया । सम्मत्तसंतक० असं० गुणा । सम्मामिच्छत्तसंत० विसे० । मणुस्साउअस्स संत० असं० गुणा । णिरयाउसंतक० असं० गुणा । देवाउ० संत० असंखे० गुणा । अणंताणुबं० संत० सं० गुणा । सेसाणं कम्माणं संतकम्मिया तुल्ला विसे० । एवं तिरिक्खजोणिणीसु दंडओ समत्तो ।

मणुसगदीए सव्वत्थोवा आहारसरीरणामाए संतक० । णिरयाउअस्स संतक० संखे० गुणा । देवाउअस्स संतक० संखे० गुणा । सम्मत्तस्स संतक० असंखे० गुणा । सम्मा-मिच्छत्तस्स संतक० विसे० । देवगइणामाए संतक० असंखे० गुणा । णिरयगइणामाए संतक० विसे० । वेउव्वियसरीरणामाए संतक० विसे० । तिरिक्खाउअस्स संतक० असंखे० गुणा । अणंताणुबंधिसंतक० संखे० गुणा । मिच्छत्तसंतक० विसे० । सेस-

---

हैं । सम्यग्मिथ्यात्वके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । मनुष्यायुके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । नारकायुके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । देवायुके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । देवगतिके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । नरकगतिके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । वैक्रियिकशरीरके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । उच्चगोत्रके सत्कर्मिक अनन्तगुणे हैं । मनुष्यगतिके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । अनन्तानुबन्धिचतुष्टयके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । मिथ्यात्वके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । शेष कर्मोंके सत्कर्मिक तुल्य व विशेष अधिक हैं । इस प्रकार तिर्यंगति-दण्डक समाप्त हुआ ।

तिर्यंच योनिमतियोंमें आहारशरीर नामकर्मके सत्कर्मिक सबसे स्तोक हैं । सम्यक्त्व प्रकृतिके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । सम्यग्मिथ्यात्वके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । मनुष्यायुके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । नारकायुके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । देवायुके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । अनन्तानुबन्धिचतुष्टयके सत्कर्मिक संख्यातगुणे हैं । शेष कर्मोंके सत्कर्मिक तुल्य व विशेष अधिक हैं । इस प्रकार तिर्यंचयोनिमतियोंमें प्रकृत दण्डक समाप्त हुआ ।

मनुष्यगतिमें आहारशरीर नामकर्मके सत्कर्मिक सबसे स्तोक हैं । नारकायुके सत्कर्मिक संख्यातगुणे हैं । देवायुके सत्कर्मिक संख्यातगुणे हैं । सम्यक्त्व प्रकृतिके सत्कर्मिक असंख्यात-गुणे हैं । सम्यग्मिथ्यात्वके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । देवगति नामकर्मके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । नरकगति नामकर्मके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । वैक्रियिकशरीर नामकर्मके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । तिर्यगायुके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । अनन्तानु-बन्धिचतुष्टयके सत्कर्मिक संख्यातगुणे हैं । मिथ्यात्वके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । शेष

मोघं । णवरि जसकित्तीए सह मणुस्साउअ-मणुस्सगईओ वत्तव्वाओ । एवं मणुसगइ-दंडओ समत्तो ।

मणुसिणीसु सव्वत्थोवा आहारसरीरणामाए संतकम्मिया । सम्मत्तस्स संतक० संखेज्जगुणा । सम्मामिच्छत्तस्स संतक० विसे० । णिरयाउअस्स संतक० असंखे० गुणा । देवाउअस्स संतक० संखे० गुणा । तिरिक्खाउअस्स संतक० संखे० गुणा अणंताणुबंधीणं संतक० संखे० गुणा । मिच्छत्तसंतक० विसे० । सेसं मणुसगइभंगो । णवरि छण्णोकसाएहि सह पुरिसवेदो भाणियव्वो । एवं मणुसिणीसु दंडओ समत्तो ।

जहा णिरयगदीए तहा देवगदीए । असण्णीसु सव्वत्थोवा आहारसरीरणामाए संतकम्मिया । सम्मत्तस्स संतक० असंखे० गुणा । सम्मामिच्छत्तसंतक० विसे० । मणुस्साउअस्स संतक० असंखे० गुणा । णिरयाउअस्ससंतक० असंखे० गुणा । देवाउअस्स संतक० असंखे० गुणा । देवगइणामाए संतक० संखे० गुणा । णिरयगइणामाए संतक० विसे० । वेउव्वियसरीरणामाए संतक० विसे० । उच्चागोदसंतक० विसे० । मणुसगइ-णामाए संतक० विसेसा० । सेसाणं पयडीणं संतकम्मिया तुल्ला विसेसाहिया । एवं असण्णिदंडओ समत्तो ।

भुजगारो पदणिक्खेवो वड्ढी च णत्थि । पयडिट्ठाणसंतकम्मं मोहणीयस्स जहा

कथन ओघके समान है। विशेष इतना है कि यशकीर्तिके साथ मनुष्यायु और मनुष्यगतिको भी कहना चाहिये । इस प्रकार मनुष्यगतिदण्डक समाप्त हुआ ।

मनुष्यनियोंमें आहारकशरीर नामकर्मके सत्कर्मिक सबसे स्तोक हैं । सम्यक्त्व प्रकृतिके सत्कर्मिक संख्यातगुणे हैं । सम्यग्मिथ्यात्वके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । नारकायुके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । देवायुके सत्कर्मिक संख्यातगुणे हैं। तिर्यगायुके सत्कर्मिक संख्यातगुणे हैं । अनन्तानुबन्धिचतुष्टयके सत्कर्मिक संख्यातगुणे हैं । मिथ्यात्वके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । शेष कर्मोंकी प्ररूपणा मनुष्यगतिके समान है । विशेष इतना है कि छह नोकषायोंके साथ पुरुषवेदको कहना चाहिये । इस प्रकार मनुष्यनियोंमें दण्डक समाप्त हुआ ।

जैसे नरकगतिमें प्ररूपणा की गई है वैसे ही देवगतिमें भी जानना चाहिये । असंज्ञी जीवोंमें आहारशरीर नामकर्मके सत्कर्मिक सबसे स्तोक हैं । सम्यक्त्वके सत्कर्मिक असंख्यात-गुणे हैं । सम्यग्मिथ्यात्वके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । मनुष्यायुके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । नारकायुके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । देवायुके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । देवगति नामकर्मके सत्कर्मिक संख्यातगुणे हैं । नरकगति नामकर्मके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । वैक्रियिकशरीर नामकर्मके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । उच्चगोत्रके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । मनुष्यगति नामकर्मके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । शेष प्रकृतियोंके सत्कर्मिक तुल्य व विशेष अधिक हैं । इस प्रकार असंज्ञिदण्डक समाप्त हुआ ।

भुजाकार, पदनिक्षेप और वृद्धि नहीं है । मोहनीयका प्रकृतिस्थानसत्कर्म जैसे कषायप्राभृतमें

कसायपाहुडे कदं तहा कायव्वं। सेसाणं[1] कम्माणं पयडिट्ठाणमग्गणा सुगमा। एवं पयडिसंतकम्ममग्गणा[2] समत्ता।

एत्तो ट्ठिदिसंतकम्मं दुविहं मूलपयडिट्ठिदिसंतकम्मं उत्तरपयडिट्ठिदिसंतकम्मं चेदि। तत्थ मूलपयडिट्ठिदिसंतकम्मं सुगमं। उत्तरपयडिट्ठिदिसंतकम्मे अद्धाच्छेदो। तं जहा– मदिआवरणस्स उक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मं तीसं सागरोवमकोडाकोडीयो पडिवुण्णाओ[3], जाओ ट्ठिदीयो वि एत्तियाओ चेव। जहा मदिआवरणस्स उक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मस्स अद्धाच्छेदो कदो तहा सेसचदुणाणावरण-चदुदंसणावरण-पंचंतराइयाणं कायव्वो। पंचण्णं दंसणावरणीयाणं जट्ठिदिसंतकम्मं तीसं सागरोवमकोडाकोडीयो पडिवुण्णाओ[4], जाओ ट्ठिदीओ समऊणाओ। सादस्स जंट्ठिदिसंतकम्मं जाओ ट्ठिदीओ च तीसं सागरोवमकोडाकोडीओ आवलियूणाओ। जट्ठिदिसंतकम्मं[5] जाओ ट्ठिदीओ च असादस्स तीसं सागरोवमकोडाकोडीओ पडिवुण्णाओ।

मिच्छत्तस्स जंट्ठिदिसंतकम्मं जाओ ट्ठिदीओ च सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीओ पडिवुण्णाओ। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीओ अंतोमुहुत्तूणाओ। सोलसण्णं कसायाणं चत्तालीसं सागरोवमकोडाकोडीओ पडिवुण्णाओ। णवण्णं णोकसायाणं

किया गया है वैसे करना चाहिये। शेष कर्मोंकी प्रकृतिस्थानमार्गणा सुगम है। इस प्रकार प्रकृतिसत्कर्ममार्गणा समाप्त हुई।

यहां स्थितिसत्कर्म दो प्रकारका है— मूलप्रकृतिस्थितिसत्कर्म और उत्तरप्रकृतिस्थिति-सत्कर्म। इनमें मूलप्रकृतिस्थितिसत्कर्म सुगम है। उत्तरप्रकृतिस्थितिसत्कर्ममें अद्धाछेदका कथन इस प्रकार है— मतिज्ञानावरणका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म सम्पूर्ण तीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम प्रमाण तथा जस्थितियां भी इतनी मात्र ही हैं। जैसे मतिज्ञानावरणके उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मका अद्धाच्छेद किया है वैसे ही शेष चार ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पांच अन्तराय प्रकृतियोंका भी करना चाहिये। निद्रादिक पांच दर्शनावरण प्रकृतियोंका जस्थितिसत्कर्म परिपूर्ण तीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम तथा जस्थितियां एक समय कम तीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम मात्र हैं। सातावेदनीयका जस्थितिसत्कर्म और जस्थितियां आवलीसे हीन तीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम प्रमाण हैं। असातावेदनीयका जस्थितिसत्कर्म और जस्थितियां परिपूर्ण तीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम प्रमाण है।

मिथ्यात्वका जस्थितिसत्कर्म और जस्थितियां परिपूर्ण सत्तर कोड़ाकोड़ि सागरोपम मात्र हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतियोंका जस्थितिसत्कर्म और जस्थितियां अन्तर्मुहूर्त कम सत्तर कोड़ाकोड़ि सागरोपम प्रमाण हैं। सोलह कषायोंका जस्थितिसत्कर्म और जस्थितियां परिपूर्ण चालीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम प्रमाण हैं। नौ नोकषायोंका जस्थितिसत्कर्म और

---

१ अ-काप्रत्योः 'विसेसाणं', ताप्रतौ '[वि] सेसाणं' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'पयडिसंकम (संत) मग्गणा' इति पाठः। ३ अप्रतौ 'पड्डिवण्णाओ' इति पाठः। ४ अ-काप्रत्योः 'पडिवण्णाओ' इति पाठः। ५ प्रतिषु 'जट्ठिदीओ' इति पाठः।

जं ट्ठिदिसंतकम्मं जाओ ट्ठिदीओ च चत्तालीसं सागरोवमकोडाकोडीओ आवलियूणाओ।

देव-णिरयाउआणं जं ट्ठिदिसंतकम्मं तेत्तीसं सागरोवमाणि पुव्वकोडीए[1] तिभाएण-ब्भहियाणि, जाओ ट्ठिदीओ तेत्तीसं सागरोवमाणि पडिवुण्णाणि। मणुस-तिरिक्खाउआणं जं ट्ठिदिसंतकम्मं तिण्णिपलिदोवमाणि पुव्वकोडीए तिभाएणब्भहियाणि, जाओ ट्ठिदीओ तिण्णिपलिदोवमाणि पडिवुण्णाणि।

णिरयगइ - तिरिक्खगइ - पंचिंदियजादि - ओरालिय-वेउव्विय - तेजा-कम्मइयसरीर-तप्पाओग्गअंगोवंग - बंधण-संघाद - असंपत्तसेवट्टसंघडण - हुंडसंठाण- वण्ण-गंध-रस-फास-णिरयाणुपुव्वि - अगुरुगलहुग - उवघाद-परघाद-आदावुज्जोव-उस्सास- अप्पसत्थविहायगइ-तस-थावर-बादर-पज्जत्त-पत्तेयसरीर[2] - अथिर - असुभ-दूभग - दुस्सर-अणादेज्ज- अजसकित्ति-णिमिणणामाणं जं ट्ठिदिसंतकम्मं जाओ ट्ठिदीओ च वीसं सागरोवमकोडाकोडीओ पडिवुण्णाओ। णवरि णिरयगइ-तिरिक्खगइणामाणं तप्पाओग्गजादि-आणुपुव्विणामाणं च एइंदिय-ओरालिय- तप्पाओग्गअंगोवंग-बंधण - संघादणामाणं असंपत्तसेवट्टसंघडण-आदाव-थावरणामाणं च उक्कस्सयं जं ट्ठिदिसंतकम्मं वीसं सागरोवमकोडाकोडीओ पडि-वुण्णाओ, जाओ ट्ठिदीओ समऊणाओ। मणुसगइ-जादि-पंचसंठाण-पंचसंघडण-थिर-सुह- सुहग-सुस्सर-आदेज्ज-जसकित्तीणं जं ट्ठिदिसंतकम्मं जाओ ट्ठिदीओ च[3] वीसं सागरो-वमकोडाकोडीओ आवलियूणाओ। मणुस्साणुपुव्वि-सुहुम-अपज्जत्त-साहारणाणं जं ट्ठिदि-

---

जस्थितियां आवलीसे हीन चालीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम प्रमाण हैं।

देवायु और नारकायुका जस्थितिसत्कर्म पूर्वकोटिके तृतीय भागसे अधिक तीस सागरोपम तथा जस्थितियां परिपूर्ण तेतीस सागरोपम मात्र हैं। मनुष्यायु और तिर्यगायुका जस्थितिसत्कर्म पूर्वकोटिके त्रिभागसे अधिक तीन पल्योपम तथा जस्थितियां परिपूर्ण तीन पल्योपम प्रमाण हैं।

नरकगति, तिर्यगति, पंचेन्द्रिय जाति, औदारिक, वैक्रियिक, तैजस व कार्मण शरीर तथा तत्प्रायोग्य आंगोपांग, बन्धन व संघात, असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन, हुण्डसंस्थान, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, नारकानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, परघात, आतप, उद्योत, उच्छ्वास, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, अयशकीर्ति और निर्माण; इन नामकर्मोंका जस्थितिसत्कर्म और जस्थितियां परिपूर्ण बीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम मात्र हैं। विशेषता इतनी है कि नरकगति व तिर्यगति नामकर्मों, तत्प्रायोग्य जाति एवं आनुपूर्वी नामकर्मों, तथा एकेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर एवं तत्प्रायोग्य अंगोपांग, बन्धन और संघात नामकर्मोंका, तथा असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन, आतप और स्थावर नामकर्मोंका उत्कृष्ट जस्थितिसत्कर्म परिपूण बीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम तथा जस्थितियां एक समय कम बीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम मात्र हैं। मनुष्यगति, तत्प्रायोग्य जाति, पांच संस्थान, पांच संहनन; स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय और यशकीर्तिका जस्थितिसत्कर्म और जस्थितियां आवलीसे हीन बीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम मात्र हैं। मनुष्यानुपूर्वी, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणशरीरका जस्थिति-

---

१ अ-काप्रत्योः 'पुव्वकोडीओ' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'बादर-पत्तेयसरीर' इति पाठः। ३ अ-काप्रत्योः 'जाओ ट्ठिदीओ जं ट्ठिदिसंतकम्मं च' इति पाठः।

संतकम्मं वीसं सागरोवमकोडाकोडीओ[1] आवलिऊणाओ, जाओ ट्ठिदीओ वीसं सागरोवमकोडाकोडीओ समयाहियाए आवलियाए ऊणाओ। जहा मणुसगइणामाए तहा पसत्थविहायगइणामाए। आहारणामाए अंतोकोडाकोडीओ[2], जाओ ट्ठिदीओ समऊणाओ। एवं तित्थयरस्स वि।

उच्चागोदस्स जाओ ट्ठिदीओ जंट्ठिदिसंतकम्मं च वीसं सागरोवमकोडाकोडीओ आवलिऊणाओ। णीचागोदस्स वीसं सागरोवमकोडाकोडीयो पडिवुण्णाओ। एवमुक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मं समत्तं।

जहण्णट्ठिदिसंतकम्मपमाणाणुगमो। तं जहा— पंचणाणावरण-चउदंसणावरण-सादासाद-सम्मत्त-लोहसंजलण-दोवेद-आउचउक्क-मणुसगइ-जादि-तस-बादर-पज्जत्त-जसकित्ति-सुभग-आदेज्ज-तित्थयर-पंचंतराइय-उच्चागोदाणं जहण्णट्ठिदिसंतकम्मं एयसमयट्ठिदियं एया ट्ठिदी। पंचदंसणावरण-मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्त-बारसकसायाणं जहण्णयं ट्ठिदिसंतकम्मं दुसमयकालट्ठिदियं एया ट्ठिदी। मायासंजलणाए जं ट्ठिदिसंतकम्मं अद्धमासो दोहि[3] आवलियाहि समऊणाहि ऊणो, जाओ ट्ठिदीओ अंतोमुहुत्तूणअद्धमासमेत्ताओ। माणसंजलणाए जं ट्ठिदिसंतकम्मं मासो[4] दोहि आवलियाहि समऊणाहि ऊणओ,[5] जाओ

सत्कर्म आवलीसे हीन बीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम तथा जस्थितियां एक समय अधिक आवलीसे हीन बीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम प्रमाण हैं। प्रशस्त विहायोगति नामकर्मका अद्धाछेद मनुष्यगति नामकर्मके समान है। आहारशरीर नामकर्मका जस्थितिसत्कर्म अन्तःकोड़ाकोड़ि सागरोपम और जस्थितियां एक समय कम अन्तःकोड़ाकोड़ि सागरोपम मात्र हैं। इसी प्रकार तीर्थंकर प्रकृतिकी भी प्ररूपणा है।

उच्चगोत्रकी जस्थितियां और जस्थितिसत्कर्म आवलीसे हीन बीस कोड़ाकोड़िसागरोपम मात्र हैं। नीचगोत्रका जस्थितिसत्कर्म और जस्थितियां परिपूर्ण बीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम मात्र हैं। इस प्रकार उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म समाप्त हुआ।

जघन्य स्थितिसत्कर्मप्रमाणानुगमकी प्ररूपणा करते हैं। यथा— पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, साता व असाता वेदनीय, सम्यक्त्व, संज्वलन लोभ, दो वेद, चार आयुकर्म, मनुष्यगति, तत्प्रायोग्य जाति, त्रस, बादर, पर्याप्त, यशकीर्ति, सुभग, आदेय, तीर्थंकर, पांच अन्तराय और उच्चगोत्र; इनका जघन्य स्थितिसत्कर्म एक समय स्थिति रूप एक स्थिति मात्र है। पांच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और बारह कषायोंका जघन्य स्थितिसत्कर्म दो समय काल स्थितिवाली एक स्थिति रूप है। संज्वलन मायाका जघन्य स्थितिसत्कर्म एक समय कम दो आवलियोंसे हीन आधा मास तथा जस्थितियां अन्तर्मुहूर्त कम आधा मास प्रमाण हैं। संज्वलन मानका जघन्य स्थितिसत्कर्म एक समय कम दो आवलियोंसे हीन एक मास तथा

१ ताप्रतावतोऽग्रेऽग्रिम 'कोडाकोडीओ' पर्यन्तः पाठस्त्रुटितोऽस्ति। २ ताप्रतावतोऽग्रे 'जाओ ट्ठिदीओ। जहा मणुसगइणामाए तहा पसत्थविहागइणामाए अंतोकोडाकोडीओ' इत्यधिकः पाठः समुपलभ्यते। ३ अ-काप्रत्योः 'दोहि', ताप्रतौ 'दोहि (लोह)' इति पाठः। ४ अप्रतौ 'दो मासा' इति पाठः। ५ अ-ताप्रत्योः 'ऊणाओ' इति पाठः।

ट्ठिदीओ अंतोमुहुत्तूणमासमेत्ताओ[1]। कोधसंजलणाए जं ट्ठिदिसंतकम्मं दो मासा दोहि आवलियाहि समऊणाहि ऊणा, जाओ ट्ठिदीओ अंतोमुहुत्तूणदोमाममेत्ताओ। पुरिसवेदस्स जं ट्ठिदिसंतकम्मं अट्ठवस्साणि दोहि आवलियाहि सम [ऊणाहि] ऊणाणि, जाओ ट्ठिदीओ अट्ठवस्साणि अंतोमुहुत्तूणाणि। छण्णोकसायाणं जाओ ट्ठिदीओ जंट्ठिदीओ च संखेज्जाणि वस्साणि।

णिरयगइ-तिरिक्खगइ-देवगइ- तप्पाओग्गजादि - आणुपुव्वि - मणुसगइ- पाओग्गाणुपुव्वि-पंचसरीर-तदंगोवंग-बंधण-संघाद-छसंठाण- छसंघडण-वण्ण-गंध- रस-फास-अगुरुगलहुग-उवघाद-परघाद-उस्सास- आदावुज्जोव- दोविहायगइ - थावर- सुहुम- अपज्जत्त-पत्तेय-साहारणसरीर-थिराथिर - सुहासुह -दूभग - दुस्सर-अणादेज्ज-अजसकित्ति- णिमिण - णीचागोदाणं जहण्णयं ट्ठिदिसंतकम्मं दुसमयकालट्ठिदियं एक्किस्से ट्ठिदीए। एवं पमाणाणुगमो समत्तो।

सामित्तं। तं जहा— पंचण्णं णाणावरणीयाणं उक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मं कस्स? णियमा उक्कस्सियं ट्ठिदिं बंधमाणस्स। एवं दंसणावरणचउक्कस्स। पंचण्णं दंसणावरणीयाणं उक्कस्सयं ट्ठिदिसंतकम्मं कस्स? जो उक्कस्सियं ट्ठिदिं बंधदि जो च समऊणं वेदयदि। सादस्स उक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मं कस्स? असादउक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मं

जस्थितियां अन्तर्मुहूर्त कम एक मास मात्र हैं। संज्वलन क्रोधका जघन्य स्थितिसत्कर्म एक समय कम दो आवलियोंसे हीन दो मास तथा जस्थितियां अन्तर्मुहूर्त कम दो मास मात्र हैं। पुरुषवेदका जघन्य स्थितिसत्कर्म एक समय कम दो आवलियोंसे हीन आठ वर्ष और जस्थितियां अन्तर्मुहूर्त कम आठ वर्ष मात्र हैं। छह नोकषायोंकी जस्थितियां और जघन्य स्थितिसत्कर्म संख्यात वर्ष मात्र है।

नरकगति, तिर्यंगगति, देवगति तथा तत्प्रायोग्य जाति व आनुपूर्वी नामकर्म, मनुष्यगति, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, पांच शरीर, तीन आंगोपांग, पांच बन्धन, पांच संघात, छह संस्थान, छह संहनन, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, दो विहायोगतियां, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, प्रत्येकशरीर, साधारणशरीर, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, अयशकीर्ति, निर्माण और नीचगोत्र; इनका जघन्य स्थितिसत्कर्म दो समय काल स्थितिवाली एक स्थिति रूप है। इस प्रकार प्रमाणानुगम समाप्त हुआ।

स्वामित्व अधिकार प्राप्त है। यथा— पांच ज्ञानावरणीय प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म किसके होता है? वह नियमसे उत्कृष्ट स्थितिको बांधनेवालेके होता है। इसी प्रकार चार दर्शनावरणीय प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म जानना चाहिये। निद्रा आदि पांच दर्शनावरणीय प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म किसके होता है? जो जीव इनकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधता है और जो एक समय कम उसका वेदन करता है। सातावेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म किसके होता है? वह असातावेदनीयके उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मका संक्रम करनेवाले सातावेदक

---

१ ताप्रतौ 'ट्ठिदीओ मासमेत्ताओ' इति पाठः।

संकामेंतस्स सादावेदयस्स। असादस्स उक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मं कस्स? असादवेदयस्स तस्सेव उक्कस्सियं[1] ट्ठिदिं बंधमाणस्स।

मिच्छत्त-सोलसकसायाणं उक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मं कस्स? पयडिवेदयस्स उक्कस्सियं ट्ठिदिं बंधमाणस्स। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं उक्कस्सयं ट्ठिदिसंतकम्मं कस्स? उक्कस्सियाए सम्मत्तट्ठिदीए सह पढमसमयसम्माइट्ठिस्स। हस्स-रदि-अरदि-सोग-भय-दुगुंछा-तिण्णिवेदाणमुक्कस्सयं ट्ठिदिसंतकम्मं कस्स? अप्पिदपयडिं बंधंतो वेदयंतस्स कसायाणमुक्कस्सट्ठिदिं णोकसायाणं संकामेंतस्स।

णिरय-देवाउआणं उक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मं कस्स? पुव्वकोडीए तिभागस्स पढमसमए उक्कस्सट्ठिदिं बंधमाणस्स। जाओ ट्ठिदीओ उक्कस्सियाओ कस्स? उक्कस्सियं ट्ठिदिं बंधिदूण जाव पढमसमयतब्भवत्थो त्ति ताव। एवं मणुस्स-तिरिक्खाउआणं।

णिरयगइणामाए उक्कस्सयं ट्ठिदिसंतकम्मं कस्स? उक्कस्सियं ट्ठिदिं बंधमाणयस्स[2]। उक्कस्सियाओ जाओ ट्ठिदीओ[3] कस्स? तस्स चेव वा, उक्कस्सियं ट्ठिदिं बंधिदूणुववण्णपढमसमए णेरइयस्स वा। तिरिक्खगइणामाए उक्कस्सियं ट्ठिदिसंतकम्मं कस्स? देवस्स णेरइयस्स वा उक्कस्सियं ट्ठिदिं बंधमाणयस्स। जाओ ट्ठिदीओ उक्कस्सियाओ[4] कस्स?

जीवके होता है। असातावेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म किसके होता है? वह उसकी ही उत्कृष्ट स्थितिको बांधनेवाले असातावेदक जीवके होता है।

मिथ्यात्व और सोलह कषायोंका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म किसके होता है? वह विवक्षित प्रकृतिका वेदन करते हुए उसकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधनेवाले जीवके होता है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म किसके होता है? वह सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिके साथ प्रथम समयवर्ती सम्यग्दृष्टिके होता है। हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा और तीन वेद; इनका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म किसके होता है? वह विवक्षित प्रकृतिको बांधकर वेदन करते हुए कषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिको नोकषायोंमें संक्रान्त करनेवालेके होता है।

नारकायु और देवायुका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म किसके होता है? वह पूर्वकोटिके तृतीय भागके प्रथम समयमें उत्कृष्ट स्थितिको बांधनेवालेके होता है। उनकी उत्कृष्ट जस्थितियां किसके होती हैं? वे उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर जब प्रथम समयवर्ती तद्भवस्थ होता है तब होती हैं। इसी प्रकार मनुष्यायु और तिर्यगायुकी प्ररूपणा करना चाहिये।

नरकगति नामकर्मका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म किसके होता है? वह उसकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधनेवालेके होता है। उसकी उत्कृष्ट जस्थितियां किसके होती हैं? उसके ही होतीं हैं, अथवा उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें नारकी जीवके होती हैं। तिर्यग्गति नामकर्मका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म किसके होता है? उसकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधनेवाले देव अथवा नारकीके उसका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म होता है। उसकी उत्कृष्ट जस्थितियां

---

१ अ-काप्रत्योः 'उक्कस्सय' इति पाठः। २ अ-काप्रत्योः 'कस्स बंधमाणयस्स' इति पाठः। ३ अ-काप्रत्योर्नोपलभ्यते पदमिदम्। ४ ताप्रतौ 'उक्कस्सियाओ ट्ठिदीओ जाओ' इति पाठः।

तस्स चेव वा देवस्स उक्कस्सियं ट्ठिदिं बंधिदूण एइंदिएसु उववण्णस्स पढमसमय-तब्भवत्थस्स वा, देव-णेरइयपच्छायदपंचिंदियतिरिक्खस्स वा । मणुसगइणामाए उक्कस्सियं ट्ठिदिसंतकम्मं कस्स ? मणुसगइं बंधमाणस्स उक्कस्सट्ठिदिं[1] संकामयस्स मणुस्सस्स । उक्कस्सियाओ जाओ ट्ठिदीओ कस्स ? एरिसस्स चेव मणुस्सस्स[2] । देवगइणामाए उक्कस्सयं[3] ट्ठिदिसंतकम्मं कस्स ? देवगइं बंधमाणस्स उक्कस्सट्ठिदिसंकामगस्स । जाओ ट्ठिदीओ एरिसस्सेव ।

एवं जादिणामाणं । वेउव्वियसरीरणामाए णिरयगइभंगो । णवरि समऊणं ण होदि । ओरालियसरीरणामाए तप्पाओग्गबंधण-संघादाणं च तिरिक्खगइभंगो । ओरालियसरीरअंगोवंग-असंपत्तसेवट्टसंघडणाणं उक्कस्सयं ट्ठिदिसंतकम्मं कस्स ? णेरइयस्स सणक्कुमार-माहिंददेवस्स वा उक्कस्सियं ट्ठिदि बंधमाणस्स । एदेसिं दोण्णं कम्माणं जाओ ट्ठिदीओ उक्कस्सियाओ कस्स ? एदेसिं चेव देव-णेरइयाणं तप्पच्छायदस्स पढम-समयतिरिक्खस्स वा । पंचसंठाण-पंचसंघडणाणं उक्कस्सियं ट्ठिदिसंतकम्मं कस्स ? एदासिं पयडीणं बंधमाणस्स उक्कस्सियं ट्ठिदिसंकमे वट्टमाणस्स । जाओ ट्ठिदीओ उक्कस्सियाओ कस्स? एदस्स चेव । णवरि अप्पिदपयडीए वेदओ कायव्वो । हुंडसंठाणस्स उक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मं

किसके होती हैं ? वे उसके ही होती हैं, उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुए प्रथम समयवर्ती तद्भवस्थ देवके होती हैं, अथवा देव-नारकियोंमेंसे पीछे आये हुए पंचेन्द्रिय तिर्यंचके होती हैं । मनुष्यगति नामकर्मका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म किसके होता है ? वह मनुष्यगतिको बांधते हुए उसकी उत्कृष्ट स्थितिको संक्रान्त करनेवाले मनुष्यके होता है । उसकी उत्कृष्ट जस्थितियां किसके होती हैं ? वे ऐसे ही मनुष्यके होती हैं । देवगति नामकर्मका उत्कृष्ट स्थिति-सत्कर्म किसके होता है ? देवगतिको बांधते हुए उसकी उत्कृष्ट स्थितिका संक्रम करनेवालेके उसका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म होता है । ऐसे ही जीवके उसकी उत्कृष्ट जस्थितियां होती हैं ।

इसी प्रकारसे जाति नामकर्मोंकी प्ररूपणा करना चाहिये । वैक्रियिकशरीर नामकर्मकी प्ररूपणा नरकगतिके समान है । विशेष इतना है कि यहां एक समय कम नहीं है । औदारिकशरीर और तत्प्रायोग्य बन्धन व संघात नामकर्मोंकी प्ररूपणा तिर्यग्गतिके समान है । औदारिक-शरीरांगोपांग और असंप्राप्तासृपाटिकासंहननका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म किसके होता है ? वह उत्कृष्ट स्थितिको बांधनेवाले नारकी अथवा सनत्कुमार व माहेन्द्र कल्पवासी देवके होता है । इन दोनों कर्मोंकी उत्कृष्ट जस्थितियां किसके होती हैं । वे इन्हीं देव-नारकियोंके अथवा उनमेंसे पीछे आये हुए प्रथम समयवर्ती तिर्यंचके होती हैं । पांच संस्थान और पांच संहनन नामकर्मोंका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म किसके होता है ? वह इन प्रकृतियोंको बांधते हुए उत्कृष्ट स्थितिसंक्रममें वर्तमान जीवके होता है । उनकी उत्कृष्ट जस्थितियां किसके होती हैं ? वे इसी जीवके होती हैं । विशेष इतना है कि विवक्षित प्रकृतिका वेदक करना चाहिये । हुण्डकसंस्थानका उत्कृष्ट

१ ताप्रतौ 'उक्कस्सयं ट्ठिदिं' इति पाठः । २ अ-काप्रत्योः 'मणुस्स' इति पाठः । ३ ताप्रतौ 'उक्कस्सियं' इति पाठः ।

कस्स ? णेरइयं तिरिक्ख-मणुसस्स उत्तरविउव्विदद्देवस्स वा ।

सव्वासिं धुववंधिपयडीणं णाणावरणभंगो । तिण्णमाणुपुव्विणामाणं उक्कस्सयं ट्ठिदिसंतकम्मं कस्स? आणुपुव्विणामाए अप्पिदाए वंधमाणस्स उक्कस्सट्ठिदिसंकामयस्स । जाओ ट्ठिदीओ उक्कस्सियाओ कस्स ? एदस्स चेव । णवरि तिरिक्खाणुपुव्विणामाए उक्कस्सियं ट्ठिदिं वंधमाणस्स । णिरयाणुपुव्विणामाए उक्कस्सयं ट्ठिदिसंतकम्मं कस्स ? उक्कस्सयं ट्ठिदिं वंधमाणस्स । जाओ ट्ठिदीओ कस्स ? एदस्स चेव विग्गहगदीए वट्टमाणस्स पढमसमयणेरइयस्स वा । उस्सास-तस-वादर-पज्जत्त-पत्तेयसरीराणमुक्कस्सयं ट्ठिदिसंतकम्मं जाओ ट्ठिदीओ च कस्स ? जस्स वा तस्स वा तसकाइयस्स उक्कस्सट्ठिदिं वंधमाणस्स ।

उज्जोवणामाए उक्कस्सयं जं ट्ठिदिसंतकम्मं जाओ ट्ठिदीओ च कस्स ? देवस्स उज्जोवणामाए वेदयस्स उक्कस्सट्ठिदिं वंधमाणस्स । आदाव-थावरणामाए उक्कस्सयं जं ट्ठिदिसंतकम्मं[2] कस्स ? सोहम्मदेवस्स ईसाणदेवस्स वा उक्कस्सयं ट्ठिदिं वंधमाणस्स[3] । जाओ ट्ठिदीओ उक्कस्सियाओ कस्स ? एरिसस्सेव । णवरि थावरणामाए देवपच्छायद-पढमसमयएइंदियस्स सोहम्मीसाणदेवस्स वा । एदेण वीजपदेण सेसपयडीणं पि सामित्तं

स्थितिसत्कर्म किसके होता है ? वह नारकी, तिर्यंच, मनुष्य और उत्तर शरीरकी विक्रियायुक्त देवके होता है ।

सब ध्रुववन्धी प्रकृतियोंकी प्ररूपणा ज्ञानावरणके समान है । तीन आनुपूर्वी नामकर्मोंका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म किसके होता है ? वह विवक्षित आनुपूर्वी नामकर्मको वांधनेवाले उत्कृष्ट स्थिति संक्रामकके होता है । इनकी उत्कृष्ट जस्थितियां किसके होती हैं ? वे इसीके होती हैं । विशेष इतना है कि तिर्यगानुपूर्वी नामकर्मकी उत्कृष्ट जस्थितियां उसकी उत्कृष्ट स्थितिको वांधनेवाले जीवके होती हैं । नारकानुपूर्वी नामकर्मका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म किसके होता है ? वह उसकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधनेवालेके होता है । उसकी जस्थितियां किसके होती हैं ? वे विग्रहगतिमें वर्तमान इसीके अथवा प्रथम समयवर्ती नारकी जीवके होती हैं । उच्छ्वास, त्रस, वादर, पर्याप्त और प्रत्येकशरीर नामकर्मोंका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म और जस्थितियां किसके होती हैं ? वे इनकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधनेवाले जिस किसी भी त्रसकायिक जीवके होती हैं ।

उद्योत नामकर्मका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म और जस्थितियां किसके होती हैं ? वे उत्कृष्ट स्थितिको वांधनेवाले उद्योत नामकर्मके वेदक देवके होती हैं । आतप और स्थावर नामकर्मका उत्कृष्ट जस्थितिसत्कर्म किसके होता है ? वह इनकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधनेवाले सौधर्म और ऐशान कल्पवासी देवके होता है । इनकी उत्कृष्ट-जस्थितियां किसके होती हैं ? वे ऐसे ही जीवके होती हैं । विशेष इतना है कि स्थावर नामकर्मकी जस्थितियां देवोंमेंसे पीछे आये हुए प्रथम समयवर्ती एकेन्द्रिय जीवके अथवा सौधर्म-ऐशान कल्पवासी देवके होती हैं । इस बीज-

---

१ ताप्रतौ 'उक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मं णेरइय' इति पाठः । २ काप्रतौ 'उक्कस्सियं ठिदिसंतकम्मं' इति पाठः । ३ अ-काप्रत्योः 'उक्कस्सयं ट्ठिदिं वंधयस्स' इति पाठः ।

वत्तव्वं । एवमुक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मसामित्तं समत्तं ।

जहण्णट्ठिदिसंतकम्मसामित्तं कस्सामो । तं जहा— पंचणाणावरण-चउदंसणावरण-पंचंतराइयाणं जहण्णयं ट्ठिदिसंतकम्मं कस्स ? चरिमसमयछदुमत्थस्स । णिद्दा-पयलाणं जह० कस्स ? दुचरिमसमयछदुमत्थस्स । थीणगिद्धितियस्स जह० कस्स ? अणियट्टिकरणे वट्टमाणस्स थीणगिद्धितियं संछुहिय समऊणावलियमइक्कंतस्स ।

सादासादाणं जहण्णट्ठिदिसंतकम्मं कस्स ? चरिमसमयभवसिद्धियस्स अप्पिदपयडिवेदयस्स । मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्त-बारसकसायाणं जह० कस्स ? अप्पिदकम्मेसु संछुद्धेसु समऊणावलियमइक्कंतस्स । सम्मत्त-लोहसंजलणाणं जहण्णट्ठिदिसंतकम्मं कस्स ? खवयस्स सम्मत्त-लोहसंजलणाणं चरिमसमयवेदस्स । तिण्णिसंजलण-पुरिसवेदाणं जह० कस्स ? खवयस्स संछुद्धासु पयडीसु समऊणदोआवलियं[1] गदस्स । इत्थि-णवुंसयवेदाणं जह० कस्स ? खवयस्स चरिमसमयवेदयस्स ।

मणुस-तिरिक्खाउआणं जह० कस्स ? जस्स णत्थि तदाउअबंधो[2] तस्स चरिम-

पदसे शेष प्रकृतियोंके भी स्वामित्वकी प्ररूपणा करना चाहिये। इस प्रकार उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मका स्वामित्व समाप्त हुआ।

जघन्य स्थितिसत्कर्मके स्वामित्वका कथन करते हैं। यथा— पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पांच अन्तरायका जघन्य स्थितिसत्कर्म किसके होता है? वह अन्तिम समयवर्ती छद्मस्थ जीवके होता है। निद्रा और प्रचलाका जघन्य स्थितिसत्कर्म किसके होता है? वह द्विचरम समयवर्ती छद्मस्थ जीवके होता है। स्त्यानगृद्धि आदि तीनका जघन्य स्थितिसत्कर्म किसके होता है? वह अनिवृत्तिकरणमें वर्तमान जीवके होता है जिसने कि स्त्यानगृद्धित्रिकका निक्षेप करके एक समय कम आवली कालको विताया है।

साता और असाता वेदनीयका जघन्य स्थितिसत्कर्म किसके होता है? वह विवक्षित प्रकृतिका वेदन करनेवाले अन्तिम समयवर्ती भव्यसिद्धिक जीवके होता है। मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और बारह कषायोंका जघन्य स्थितिसत्कर्म किसके होता है? विवक्षित कर्मोंके निक्षिप्त हो जानेपर जिसने एक समय कम आवली कालको विता दिया है उसके उनका जघन्य स्थितिसत्कर्म होता है। सम्यक्त्व प्रकृति और संज्वलन लोभका जघन्य स्थितिसत्कर्म किसके होता है? वह ऐसे क्षपक जीवके होता है जो सम्यक्त्व और संज्वलन लोभका अन्तिम समयवर्ती वेदक होता है। शेष तीन संज्वलन और पुरुषवेदका जघन्य स्थितिसत्कर्म किसके होता है? वह उस क्षपक जीवके होता है जो इन प्रकृतियोंके निक्षिप्त हो जानेपर एक समय कम दो आवलियोंको विता चुका है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिसत्कर्म किसके होता है? वह उस क्षपक जीवके होता है जो इनका अन्तिम समयवर्ती वेदक है।

मनुष्यायु और तिर्यगायुका जघन्य स्थितिसत्कर्म किसके होता है? जिसके उन आयुओंका बन्ध नहीं हो रहा है उस अन्तिम समयवर्ती तद्भवस्थके उक्त दोनों आयु कर्मोंका जघन्य

१ अप्रतौ 'समऊणादो' इति पाठः । २ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-का-ताप्रतिषु 'तदाअबंधो' इति पाठः ।

समयतब्भवत्थस्स । देव-णिरयाउआणं जहण्णट्ठिदिसंतकम्मं कस्स ? चरिमसमय-तब्भवत्थस्स ।

णिरयगइ - तिरिक्खगइ - तप्पाओग्गजादि - णिरयगइ - तिरिक्खगइपाओग्गाणुपुव्वि-आदावुज्जोव-थावर-सुहुम-साहारणसरीराणं जह० कस्स ? संछोहणादो समयूणमावलियगदस्स । मणुसगइ-पंचिंदियजादि-तस-बादर-पज्जत्त-जसकित्ति- सुभग-आदेज्ज- तित्थयर-णामाणं जह० कस्स ? चरिमसमयभवसिद्धियस्स । सेसाणं णामाणं णीचागोदस्स य जहण्णट्ठिदिसंतकम्मं कस्स ? दुचरिमसमयभवसिद्धियस्स । उच्चागोदस्स चरिमसमय-भवसिद्धिया सामी । एवं सामित्तं समत्तं ।

एयजीवेण कालो अंतरं, णाणाजीवेहि भंगविचओ कालो अंतरं सण्णियासो च सामित्तादो साहेदूण भाणियव्वो ।

एत्तो अप्पाबहुअं । तं जहा— उक्कस्सए पयदं । मणुस्साउअस्स तिरिक्खाउअस्स य जाओ ट्ठिदीओ ताओ थोवाओ । जं ट्ठिदिसंतकम्मं विसेसाहियं । देव-णिरयाउआणं जाओ ट्ठिदीओ संखेज्जगुणाओ । जं ट्ठिदिसंतकम्मं विसेसाहियं । आहारसरीरणामाए जाओ ट्ठिदीओ ताओ संखे० गुणाओ । जं ट्ठिदिसंतकम्मं विसेसाहियं । देवगइणामाए जाओ ट्ठिदीओ ताओ संखे० गुणाओ । जं ट्ठिदिसं० विसे० । मणुसगइ-उच्चागोद-जसकित्तीणं

स्थितिसत्कर्म होता है । देवायु और नारकायुका जघन्य स्थितिसत्कर्म किसके होता है ? वह अन्तिम समयवर्ती तद्भवस्थ देव और नारकीके होता है ।

नरकगति, तिर्यंगति, तत्प्रायोग्य जाति, नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, तिर्यग्गतिप्रायोग्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म और साधारणशरीरका जघन्य स्थितिसत्कर्म किसके होता है ? इनका निक्षेप करनेके पश्चात् जिसने एक समय कम आवली कालको बिता दिया है उसके उनका जघन्य स्थितिसत्कर्म होता है । मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रस, बादर, पर्याप्त, यशकीर्ति, सुभग, आदेय और तीर्थंकर इन नामकर्मोंका जघन्य स्थितिसत्कर्म किसके होता है ? वह अन्तिम समयवर्ती भव्यसिद्धिक जीवके होता है । शेष नामकर्मोंका और नीचगोत्रका जघन्य स्थिति-सत्कर्म किसके होता है ? वह द्विचरम समयवर्ती भव्यसिद्धिक जीवके होता है । उच्चगोत्रके जघन्य स्थितिसत्कर्मके स्वामी अन्तिम समयवर्ती भव्यसिद्धिक जीव होते हैं । इस प्रकार स्वामित्व समाप्त हुआ ।

एक जीवकी अपेक्षा काल और अन्तर तथा नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय, काल, अन्तर और संनिकर्षका कथन स्वामित्वसे सिद्ध करके करना चाहिये ।

यहां अल्पबहुत्व । यथा— उत्कृष्ट अल्पबहुत्वका प्रकरण है । मनुष्यायु और तिर्यगायुकी जस्थितियां स्तोक हैं । उनका जस्थितिसत्कर्म विशेष अधिक है । देवायु और नारकायु-की जस्थितियां संख्यातगुणी हैं । जस्थितिसत्कर्म विशेष अधिक है । आहारशरीर नामकर्मकी जस्थितियां संख्यातगुणी हैं । जस्थितिसत्कर्म विशेष अधिक है । देवगति नामकर्मकी जस्थितियां संख्यातगुणी हैं । जस्थितिसत्कर्म विशेष अधिक है । मनुष्यगति, उच्चगोत्र और

जाओ ट्ठिदीओ जं[1] ट्ठिदिसंतकम्मं च तत्तियं चेव। णिरयगइ-तिरिक्खगइ-ओरालियसरीराणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसेसाहियाओ। एदेसिं चेव कम्माणं जं ट्ठिदिसंतकम्मं तेजा-कम्मइय-अजसगित्ति-णीचागोदाणं जाओ ट्ठिदीओ जं ट्ठिदिसंतकम्मं च विसे०। सादस्स जाओ ट्ठिदीओ जं ट्ठिदिसंतकम्मं च दो वि तुल्लाणि विसेसाहियाणि। पंचण्हं दंसणावरणीयाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसेसाहियाओ। एदेसिं जं ट्ठिदिसंतकम्मं सेसाणं तीसियाणं जाओ ट्ठिदीओ जं ट्ठिदिसंतकम्मं च तुल्लं विसेसाहियं। णोकसायाणं जाओ ट्ठिदीओ जं ट्ठिदिसंतकम्मं च विसे०। सोलसकसायाणं जाओ ट्ठिदीओ जं ट्ठिदिसंतकम्मं च तुल्लं विसे०। सम्मामिच्छत्तस्स जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसे०। एदस्स चेव जं ट्ठिदिसंतकम्मं सम्मत्तस्स जाओ ट्ठिदीओ जं ट्ठिदिसंतकम्मं विसे०। मिच्छत्तस्स जाओ ट्ठिदीओ जं ट्ठिदिसंतकम्मं विसेसाहियं। एवमोघुक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मदंडओ समत्तो। एदमणुमाणियगदीसु णेयव्वं।

जहण्णए पयदं। तं जहा— पंचणाणावरण-चउदंसणावरण-सादासाद-सम्मत्त-लोहसंजलण-इत्थि-णवुंसयवेद-आउचउक्क-मणुसगइ-जसकित्ति-उच्चागोद-पंचंतराइयाणं च जहण्णियाओ जाओ ट्ठिदीओ जं ट्ठिदिसंतकम्मं तुल्लं थोवं। पंचदंसणावरणीय-मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्त-बारसकसाय-तिण्णिगइ-पंचसरीर-अजसकित्ति-णीचागोदाणं जाओ ट्ठिदीओ

यशकीर्तिकी जस्थितियां और जस्थितिसत्कर्म उतना मात्र ही है। नरकगति, तिर्यंगति और औदारिकशरीरकी जो स्थितियां हैं वे विशेष अधिक हैं। इन्हीं कर्मोंका जस्थितिसत्कर्म तथा तैजसशरीर, कार्मणशरीर, अयशकीर्ति और नीचगोत्रकी जस्थितियां एवं जस्थितिसत्कर्म विशेष अधिक है। सातावेदनीयकी जस्थितियां और जस्थितिसत्कर्म दोनों ही तुल्य व विशेष अधिक हैं। पांच दर्शनावरणीय प्रकृतियोंकी जो स्थितियां हैं वे विशेष अधिक हैं। इनका जस्थितिसत्कर्म तथा शेष तीस कोड़ाकोड़ि सागरोपम स्थितिवाले कर्मोंकी जस्थितियां और जस्थितिसत्कर्म तुल्य व विशेष अधिक है। नोकषायोंकी जस्थितियां और जस्थितिसत्कर्म विशेष अधिक है। सोलह कषायोंकी जस्थितियां और जस्थितिसत्कर्म तुल्य व विशेष अधिक है। सम्यग्मिथ्यात्वकी जो स्थितियां हैं वे विशेष अधिक हैं। इसीका जस्थितिसत्कर्म और सम्यक्त्व प्रकृतिकी जस्थितियां व जस्थितिसत्कर्म विशेष अधिक है। मिथ्यात्वकी जस्थितियां और जस्थितिसत्कर्म विशेष अधिक है। इस प्रकार ओघ उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मदण्डक समाप्त हुआ। इसी प्रकारसे अनुमानित गतियोंमें ले जाना चाहिये।

अब जघन्य अल्पबहुत्वका प्रकरण है। यथा— पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, साता व असाता वेदनीय, सम्यक्त्व, संज्वलन लोभ, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, चार आयु, मनुष्यगति, यशकीर्ति, उच्चगोत्र और पांच अन्तराय; इनकी जघन्य जस्थितियां और जस्थितिसत्कर्म तुल्य व स्तोक है। पांच दर्शनावरणीय, मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय, तीन गति, पांच शरीर, अयशकीर्ति और नीचगोत्रकी जस्थितियां उतनी मात्र ही हैं। इनका जस्थितिसत्कर्म

---

[1] का-ताप्रत्योः 'जसकित्तीणं जं' इति पाठः।

तत्तियाओ चेव। जं ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणं। मायासंजलणाए जाओ ट्ठिदीओ ताओ असंखे० गुणाओ। जं ट्ठिदिसंत० विसे०। माणसंजलणाए जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसे०। जं ट्ठिदिसंत० विसे०। कोधसंजलणाए जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसे०। जं ट्ठिदिसंत० विसे०। पुरिसवेदस्स जाओ ट्ठिदीओ ताओ संखे० गुणाओ। जं ट्ठिदिसंत० विसे०। हस्स-रदि-अरदि-सोग-भय-दुगुंछाणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ संखेज्जगुणाओ। जं ट्ठिदिसंतकम्मं विसेसाहियं। एवमोघजहण्णट्ठिदिसंतकम्मदंडओ समत्तो।

गदीसु वि जहण्णट्ठिदिसंतकम्मअप्पाबहुगं कायव्वं। तं जहा— णिरयगदीए सम्मत्तस्स जहण्णट्ठिदी थोवा, एगसमयकालएगट्ठिदित्तादो। उव्वेल्लमाणियाणं जहण्णट्ठिदी तत्तिया चेव। जं ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणं। उवरि अप्पप्पणो जहण्णट्ठिदिसंतकम्मपमाणं जाणिदूण अप्पाबहुगं कायव्वं। एवं णिरयगइदंडओ समत्तो।

जहा णिरयगदीए तहा इयरासु वि गदीसु णेयव्वं। भुजगारो पदणिक्खेवो वड्ढी च एदाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि जहा ट्ठिदिसंकमे[1] णीदाणि तहा णेयव्वाणि। एवं ट्ठिदिसंतकम्मं समत्तं।

अणुभागसंतकम्मे पुव्वं गमणिज्जा आदिफद्दयपरूवणा कीरदे। तं जहा— केवलणाणावरण-केवलदंसणावरण-णिद्दाणिद्दा-पयलापयला-थीणगिद्धि-णिद्दा-पयला-बारसकसायाणं

संख्यातगुणा है। संज्वलन मायाकी जो स्थितियां हैं वे असंख्यातगुणी हैं। जस्थितिसत्कर्म विशेष अधिक है। संज्वलन मानकी जो स्थितियां हैं वे विशेष अधिक हैं। जस्थितिसत्कर्म विशेष अधिक है। संज्वलन क्रोधकी जो स्थितियां हैं वे विशेष अधिक हैं। जस्थितिसत्कर्म विशेष अधिक हैं। पुरुषवेदकी जो स्थितियां हैं वे संख्यातगुणी हैं। जस्थितिसत्कर्म विशेष अधिक है। हास्य, रति, अरति, शोक, भय, और जुगुप्साकी जो स्थितियां हैं वे संख्यातगुणी हैं। इनका जस्थितिसत्कर्म विशेष अधिक है। इस प्रकार ओघ जघन्य स्थितिसत्कर्मदण्डक समाप्त हुआ।

गतियोंमें भी जघन्य स्थितिसत्कर्मका अल्पबहुत्व करते हैं। यथा— नरकगतिमें सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति स्तोक है, क्योंकि, वह एक समय कालवाली एक स्थिति रूप है। उद्वेलित की जानेवाली प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति उतनी ही है। उनका जस्थितिसत्कर्म संख्यातगुणा है। आगे अपने अपने जघन्य स्थितिसत्कर्मके प्रमाणको जानकर प्रकृत अल्पबहुत्वको करना चाहिये। इस प्रकार नरकगतिदण्डक समाप्त हुआ।

जिस प्रकार नरकगतिमें अल्पबहुत्व किया गया है उसी प्रकारसे अन्य गतियोंमें भी ले जाना चाहिये। भुजाकार, पदनिक्षेप और वृद्धि इन तीन अनुयोगद्वारोंको जैसे स्थितिसंक्रममें लिया गया है वैसे यहां भी ले जाना चाहिये। इस प्रकार स्थितिसत्कर्म समाप्त हुआ।

अनुभागसत्कर्ममें सर्वप्रथम जतलाने योग्य आदि स्पर्धकोंकी प्ररूपणा की जाती है। यथा— केवलज्ञानावरण, केवलदर्शनावरण, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, निद्रा, प्रचला और

---

१ अप्रतौ 'ट्ठिदिसंकमेण', ताप्रतौ 'ट्ठिदिसंतकम्मे' इति पाठः।

पदेसग्गं जहण्णेण सव्वघादिफद्दयाणमादिवग्गणाए जुत्तं, उक्कस्सेण अप्पप्पणो उक्कस्साणुभागफद्दएण संजुत्तं। सम्मत्तस्स आदिफद्दयं देसघादीणमादिफद्दएण समाणं, उक्कस्सफद्दयं देसघादी। सम्मामिच्छत्तस्स आदिफद्दयं सव्वघादिफद्दयाणमादिफद्दएण समाणं, तस्सेव उक्कस्सफद्दयं दारुसमाणअणंतिमभागे जम्हि सम्मामिच्छत्तं समत्तं[1]। तदो अणंतरउवरिमफद्दयं मिच्छत्तस्स आदिफद्दयं होदि, उक्कस्समप्पणो चरिमफद्दयं। सेसाणं कम्माणमादिफद्दयं देसघादीणमादिफद्दएण समाणं, उक्कस्समप्पणो चरिमफद्दयं।

एत्तो उवरि घादिसण्णा ट्ठाणसण्णा च कायव्वा— उक्कस्साणुभागसंतकम्मस्स घादिसण्णा ट्ठाणसण्णा च सुगमा, पुव्वं परूविदत्तादो। संपहि जहण्णाणुभागसंतकम्मस्स घादि-ट्ठाणसण्णाओ वत्तइस्सामो। तं जहा— मदि-सुदावरण-चक्खु-अचक्खुदंसणावरण-सम्मत्त-चदुसंजलण-तिण्णिवेद-पंचंतराइयाणं जहण्णाणुभागसंतकम्मं देसघादिएयट्ठाणियं। ओहिणाणावरण-ओहिदंसणावरणाणं[2] पि जहण्णाणुभागसंतकम्मं देसघादिएयट्ठाणियं। मणपज्जवणाणावरणस्स जहण्णाणुभागसंतकम्मं देसघादि-दुट्ठाणियं[3]।

बारह कषाय; इनका प्रदेशाग्र जघन्यतः सर्वघाति स्पर्धकोंकी आदि वर्गणासे युक्त तथा उत्कर्षतः अपने अपने उत्कृष्ट अनुभागस्पर्धकसे संयुक्त होता है। सम्यक्त्व प्रकृतिका आदि स्पर्धक देशघातियोंके आदि स्पर्धकके सदृश तथा उत्कृष्ट स्पर्धक देशघाती होता है। सम्यग्मिथ्यात्वका आदि स्पर्धक सर्वघाति स्पर्धकोंके आदि स्पर्धकके समान होता है तथा उसीका उत्कृष्ट स्पर्धक दारु समान अनन्तवें भागमें अवस्थित है जहां सम्यग्मिथ्यात्व समाप्त होता है। उससे आगेका अनन्तर स्पर्धक मिथ्यात्वका आदि स्पर्धक होता है और उत्कृष्ट अपना अन्तिम स्पर्धक होता है। शेष कर्मोंका आदि स्पर्धक देशघातियोंके आदि स्पर्धकके समान तथा उत्कृष्ट अपना अन्तिम स्पर्धक होता है।

आगे यहां घातिसंज्ञा और स्थानसंज्ञा की जाती है— उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्मकी घातिसंज्ञा और स्थानसंज्ञा सुगम है, क्योंकि, उनकी प्ररूपणा पहिले की जा चुकी है। अब यहां जघन्य अनुभागसत्कर्मकी घाति और स्थान संज्ञाओंका कथन करते हैं। यथा— मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, चक्षुदर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण, सम्यक्त्व, चार संज्वलन, तीन वेद और पांच अन्तरायका जघन्य अनुभागसत्कर्म देशघाति व एकस्थानिक है। अवधिज्ञानावरण और अवधिदर्शनावरणका भी जघन्य अनुभागसत्कर्म देशघाति व एकस्थानिक है। मनःपर्ययज्ञानावरणका जघन्य अनुभागसत्कर्म देशघाति व द्विस्थानिक है। शेष सब कर्मोंका जघन्य अनुभागसत्कर्म (?)

---

१ अ-काप्रत्योः 'सम्मत्तं', ताप्रतौ 'सम्म (म) त्तं' इति पाठः। २ अ-काप्रत्योः 'दंसणावरणं' इति पाठः।

३ संकमसममणुभागे नवरि जहन्नं तु देसघाईनं। छन्नोकसायवज्जाण (वज्जं) एगट्ठाणंमि देसहरं॥ मणनाणे दुट्ठाणं देसहरं सामिगो य सम्मत्ते। आवरण-विग्घसोलस-किट्टिवेएसु य सगंते॥ क. प्र. ७, २१-२२. × × × नवरमयं विशेषो यदुत देसघातिनीनां हास्यादिषट्कवर्जितानां मति-श्रुतावधिज्ञानावरण-चक्षुरचक्षुरवधिदर्शनावरण-संज्वलनचतुष्टय-वेदत्रिकान्तरायपंचकरूपाणामष्टादशप्रकृतीनां जघन्यानुभागसत्कर्मस्थानमधिकृत्य एकस्थानीयम्, घातिसंज्ञामधिकृत्य देशहरं देशघाति वेदितव्यम्। मनःपर्ययज्ञानावरणे पुनर्जघन्यमनुभागसत्कर्म-

सेसाणं सव्वकम्माणं जहण्णाणुभागसंतकम्मं[1] (?) सव्वघादिफद्दएण समाणत्तादो[2] केवल-दंसणाणुभागसंतकम्मस्स उक्कस्सस्स उक्कस्साणुभागं[3] चडिदूण जाव ण घादेदि ताव उक्कस्साणुभागसंतकम्मिओ। सो इदाणीं को होज्ज? एइंदियो बेइंदियो तीइंदियो चउरिंदियो च सण्णी असण्णी पज्जत्तओ अपज्जत्तओ[4] सुहुमो बादरो वा होज्ज।

सव्वेसिं कम्माणं उक्कस्साणुभागसंतकम्मं जहा मदिआवरणस्स वुत्तं तहा वत्तव्वं। सादस्स उक्कस्साणुभागसंतकम्मं कस्स? चरिमसमयसुहुमसांपराइयस्स खवयमादिं कादूण जाव दुचरिमसमयभवसिद्धियादो त्ति। उच्चागोद-जसकित्तीणं सादभंगो। मणुस-गइ-मणुसगइपाओग्गाणुपुव्वी-ओरालियसरीर -ओरालियसरीरअंगोवंग - वज्जरिसहवइर-णारायणसरीरसंघडणाणं उक्कस्साणुभागसंतकम्मं कस्स? देवेण सव्वविसुद्धेण बद्धाणु-भागमघादेदूणमण्णदरगदीएं[5] वट्टमाणस्स। जाओ पसत्थाओ णामपयडीओ तासि-मुक्कस्साणुभागसंतकम्मं कस्स? खवयस्स परभवियणामाणं चेव बंधमाणाणं[6] चरिम-

सर्वघाति स्पर्धकके समान होनेसे केवलदर्शनावरणके उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्मका उत्कृष्ट अनुभाग चढ़कर जब तक नहीं घातता है तब तक वह उसके उत्कृष्ट अनुभाग सत्कर्मसे संयुक्त होता है।

शंका— वह इस समय कौन हो सकता है?

समाधान— वह एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, संज्ञी व असंज्ञी पंचेन्द्रिय, पर्याप्त, अपर्याप्त, सूक्ष्म और बादर हो सकता है।

सब कर्मोंका उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्म, जैसे मतिज्ञानावरणका कहा गया है, वैसे कहना चाहिये।

सातावेदनीयका उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्म किसके होता है? वह अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्म-साम्परायिक क्षपकको आदि करके द्विचरम समयवर्ती भव्यसिद्धिक तक होता है। उच्चगोत्र और यशकीर्तिके उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्मके स्वामीकी प्ररूपणा सातावेदनीयके समान करना चाहिये। मनुष्यगति, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, औदारिकशरीर, औदारिकशरीरांगोपांग और वज्रर्षभ-वज्रनाराचशरीरसंहननका उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्म किसके होता है? जो सर्वविशुद्ध देवके द्वारा बांधे गये अनुभागको न घातकर अन्यतर गतिमें वर्तमान है उसके इनका उत्कृष्ट अनुभाग-सत्कर्म होता है। जो प्रशस्त नामप्रकृतियां हैं उनका उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्म किसके होता है? वह परभविक नामकर्मोंको ही बांधनेवाले क्षपकके अन्तिम समयको आदि करके द्विचरम

स्थानमधिकृत्य द्विस्थानम्, घातिसंज्ञामधिकृत्य देशहरं देशघाति। इहोत्कृष्टानुभागसत्कर्मस्वामिन उत्कृष्टा-नुभागसंक्रमस्वामिन एव वेदितव्याः। जघन्यानुभागसत्कर्मस्वामिनः पुनराह— 'सामिगो येत्यादि' सम्यक्त्व-ज्ञानावरणपंचक-दर्शनावरणषट्कान्तरायपंचकरूपप्रकृतिषोडशक-किट्टिरूपसंज्वलनलोभ-वेदत्रयाणां स्व-स्वान्तिम-समये वर्तमाना जघन्यानुभागसत्कर्मस्वामिनो वेदितव्याः। मलय.

१ प्रतिषु स्खलितोऽत्र प्रतिभाति पाठः, मतिज्ञानावरणस्योत्कृष्टानुभागसत्कर्मप्ररूपणाया अभावात्।

२ ताप्रतौ 'समाण (णं) त्ता (त) दो' इति पाठः। ३ काप्रतौ 'कम्मस्स उक्कस्साणुभागं', 'ताप्रतौ 'कम्मस्स उक्कस्सं, उक्कस्साणुभागं' इति पाठः। ४ अ-काप्रत्योः 'अपज्जत्त' इति पाठः।

५ ता-मप्रत्योः '-मघादेदूण चरिमगदीए' इति पाठः। ६ अप्रतौ 'वट्टमाणस्साणं', का-ताप्रत्योः 'वट्टमाणाणं' इति पाठः।

समयमादिं कादूण जाव दुचरिमसमयभवसिद्धयो त्ति ।

आउअस्स उक्कस्साणुभागसंतकम्मं कस्स ? खवयस्स बद्धतदुक्कस्साणुभागस्स बंधपढमसमयप्पहुडि जाव तब्भवत्थस्स दुचरिमसमयादो[2] त्ति उक्कस्साणुभागसंतकम्मिओ होज्ज । एवमोघसामित्तं समत्तं ।

गदीसु अप्पसत्थाणं कम्माणं उक्कस्साणुभागसंतकम्मं जहा ओघेण कदं तहा कायव्वं[3] । णिरयगदीए सादस्स उक्कस्साणुभागसंतकम्मं कस्स ? जेण कसाए उवसामेंतेण चरिमसमयसुहुमसांपराइएण जं बद्धं सादाणुभागसंतकम्मं तमघादेदूण जो णिरयगदीए उववण्णो तस्स उक्कस्सयं सादाणुभागसंतकम्मं[4] । जहा सादस्स तहा जसकित्ति-तित्थयर-णामकम्माणं उवसामएण बद्धाणुभागमघादेदूण[5] णिरयगदीए उप्पण्णस्स उक्कस्सं वत्तव्वं । एवं सव्वासु गदीसु णेयव्वं । एवमुक्कस्ससामित्तं समत्तं ।

मदि-सुदावरण-चक्खु-अचक्खुदंसणावरणाणं जहण्णाणुभागसंतकम्मं कस्स ? चोद्दसपुव्वियदुचरिमसमयछदुमत्थस्स उक्कस्सलद्धियस्स । ओहिणाणावरण-ओहिदंसणा-वरणाणं[6] जहण्णाणुभागसंतकम्मं कस्स ? चरिमसमयछदुमत्थस्स परमोहियस्स उक्कस्स-

---

समयवर्ती भव्यसिद्धिक तकके होता है ।

आयुका उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्म किसके होता है ? जिसने उसके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध किया है उसके बन्धके प्रथम समयसे लेकर तद्भवस्थ रहनेके द्विचरम समय तक उसका उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्म होता है । इस प्रकार ओघ स्वामित्व समाप्त हुआ ।

गतियोंमें अप्रशस्त कर्मोंका उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्म जैसे ओघ रूपसे किया गया है वैसे करना चाहिये । नरकगतिमें सातावेदनीयका उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्म किसके होता है ? कषायोंका उपशम करनेवाले जिस अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके द्वारा जो सातावेदनीयका उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्म बांधा गया है उसको न घातकर जो नरकगतिमें उत्पन्न हुआ है उसके साता-वेदनीयका उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्म होता है । सातावेदनीयके समान यशकीर्ति और तीर्थंकर नामकर्मोंके उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्मके स्वामी उपशामकके द्वारा बांधे गये अनुभागको न घातकर नरकगतिमें उत्पन्न हुए जीवको कहना चाहिये । इसी प्रकार सब गतियोंमें ले जाना चाहिये । इस प्रकार उत्कृष्ट स्वामित्व समाप्त हुआ ।

मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, चक्षुदर्शनावरण और अचक्षुदर्शनावरणका जघन्य अनु-भागसत्कर्म किसके होता है ? वह चौदह पूर्वोंके धारक उत्कृष्ट श्रुतार्थलब्धि युक्त द्विचरम समयवर्ती छद्मस्थके होता है । अवधिज्ञानावरण और अवधिदर्शनावरणका जघन्य अनुभागसत्कर्म किसके होता है ? वह परमावधिके धारक उत्कृष्ट लब्धि-युक्त अन्तिम समयवर्ती छद्मस्थके होता है ।

---

१ ताप्रतौ 'कस्स ? खवयस्स परभवियबद्ध' इति पाठः । २ अ-काप्रत्योः 'समयदो' इति पाठः । ३ अ-काप्रत्योः 'कदा तहा कायव्वा' इति पाठः । ४ अ-काप्रत्योः 'उक्कस्सयसादाणं संतकम्मं' इति पाठः । ५ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-का-ताप्रतिषु 'मघादेमाणं' इति पाठः । ६ अ-काप्रत्योः 'दंसणावरण' इति पाठः ।

लद्धियस्स । मणपज्जवणाणावरणस्स जहण्णाणुभागसंतकम्मं कस्स ? चरिमसमयछदुमत्थस्स विउलमइस्स उक्कस्सलद्धियस्स[2]। केवलणाणावरण-केवलदंसणावरण-पंचंतराइयाणं जहण्णाणुभागसंतकम्मं कस्स ? जस्स वा तस्स वा चरिमसमयछदुमत्थस्स । एवं णिद्दा-पयलाणं । णवरि दुचरिमसमयछदुमत्थस्स सव्वस्स[3] ।

णिद्दाणिद्दा-पयलापयला-थीणगिद्धीणं जहण्णाणुभागसंतकम्मं कस्स ? सुहुमसंतकम्मेण हदसमुप्पत्तिएण वट्टमाणस्स[3] । अण्णदरो[4] एइंदियो बेइंदियो तेइंदियो चउरिंदियो असण्णी सण्णी सुहुमो बादरो पज्जत्तो अपज्जत्तो वा जहण्णाणुभागसंतकम्मिओ होज्ज । सादासादाणं जहण्णाणुभागसंतकम्मं कस्स ? चरिमसमयभवसिद्धियस्स जहण्णए उदयट्ठाणे वट्टमाणस्स ।

सम्मत्तस्स जह० संतकम्मं[5] कस्स ? चरिमसमयअक्खीणदंसणमोहणीयस्स । सम्मामिच्छत्तस्स जह० संत० कस्स ? चरिमाणुभागखंडए वट्टमाणस्स । मिच्छत्तस्स जह० संत० कस्स ? सुहुमेइंदियस्स हदसमुप्पत्तियकम्मेण कयजहण्णाणुभागस्स[6] ।

मनःपर्ययज्ञानावरणका जघन्य अनुभागसत्कर्म किसके होता है ? वह उत्कृष्ट लब्धि युक्त विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानके धारक अन्तिम समयवर्ती छद्मस्थके होता है । केवलज्ञानावरण, केवलदर्शनावरण और पांच अन्तरायका जघन्य अनुभागसत्कर्म किसके होता है ? वह जिस किसी भी अन्तिम समयवर्ती छद्मस्थके होता है। इसी प्रकार निद्रा और प्रचलाका भी जघन्य अनुभागसत्कर्म कहना चाहिये । विशेष इतना है कि वह द्विचरम समयवर्ती सब छद्मस्थके होता है ।

निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला और स्त्यानगृद्धिका जघन्य अनुभागसत्कर्म किसके होता है ? हतसमुत्पत्तिक सत्कर्मस्वरूपसे जो सूक्ष्म एकेन्द्रिय वर्तमान है उसके उनका जघन्य अनुभागसत्कर्म होता है । अन्यतर एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, संज्ञी व असंज्ञी पंचेन्द्रिय, सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त और अपर्याप्त जीव उनके जघन्य अनुभागसत्कर्मसे संयुक्त होता है । साता व असाता वेदनीयका जघन्य सत्कर्म किसके होता है ? वह जघन्य उदयस्थानमें वर्तमान अन्तिम समयवर्ती भव्य जीवके होता है ।

सम्यक्त्व प्रकृतिका जघन्य सत्कर्म किसके होता है ? वह अन्तिम समयवर्ती अक्षीणदर्शनमोहके होता है । सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य सत्कर्म किसके होता है ? वह उसके अन्तिम अनुभागकाण्डकमें वर्तमान जीवके होता है । मिथ्यात्वका जघन्य अनुभागसत्कर्म किसके होता है ? जिसने हतसमुत्पत्तिककर्म स्वरूपसे उसके अनुभागको जघन्य कर लिया है ऐसे सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवके उसका जघन्य अनुभागसत्कर्म होता है ?

---

२ मइ-सुय-चक्खुं-अचक्खूण सुयसमत्तस्स जेट्ठलद्धिस्स । परमोहिस्स ओहिदुगं मननाणं विउलनाणस्स ॥ क. प्र. ७, २३. २ अ-काप्रत्याः 'सव्वेसिं', ताप्रतौ 'सव्वेसिं', मप्रतौ 'सवुकस्स' इति पाठः । ३ ताप्रतौ 'वड्ढमाणस्स' इति पाठः । ४ प्रतिषु 'अण्णदुकस्सो' इति पाठः । ५ काप्रतौ 'जहण्णसंतकम्मं', ताप्रतौ 'जहण्णट्ठिदि (अणुभाग) संतकम्मं' इति पाठः । ६ ताप्रतौ 'जहण्णीकदाणुभागस्स' इति पाठः ।

अणंताणुबंधीणं जह० संत० कस्स ? विसंजोएदूण संजोएमाणस्स[1] जहण्णबंधे वट्टमाणस्स । अट्ठण्णं कसायाणं जह० संत० कस्स ? सुहुमस्स हदसमुप्पत्तियकम्मेण जहण्णीकदाणुभागस्स । हस्स-रदि-अरदि-सोग-भय-दुगुंछाणं जह० संत० कस्स ? चरिमअणुभाग[2]खंडए वट्टमाणस्स । णवुंसयवेद० जह० संत० कस्स ? चरिमसमय-णवुंसयवेदखवयस्स । इत्थिवेदस्स जहण्णुक्कस्सदो पुण चरिमसमयइत्थि[3]वेदोदयस्स । पुरिसवेदस्स जह० संत० कस्स ? पुरिसवेदोदयखवयस्स अवगदवेदो होदूण चरिम-समयपबद्ध[4]चरिमसमयसंकामयस्स ।

कोहसंजलणाए जहण्णाणुभागसंतकम्मं कस्स ? कोधेण उवट्ठिदस्स खवयस्स चरिमसमयपबद्धचरिमसमयसंकामयस्स[5]। माणसंजलणाणं जहण्णाणुभागसंतकम्मं णत्थि । मायासंजलणाए जह० संत० कस्स ? मायाए उवट्ठिदस्स खवयस्स चरिमसमयपबद्धस्स । लोहसंजलणाए जह० संत० कस्स ? तिव्वयरहदसमुप्पत्तियचरिमसमयसंकाममस्स । एवं जहण्णसामित्तं समत्तं ।

अनन्तानुबन्धी कषायोंका जघन्य अनुभागसत्कर्म किसके होता है? वह उनका विसंयोजन करके पुनः संयोजन करते हुए जघन्य बन्धमें वर्तमान जीवके होता है । आठ कषायोंका जघन्य अनुभागसत्कर्म किसके होता है ? वह हतसमुत्पत्तिककर्म स्वरूपसे अनुभागको जघन्य कर लेनेवाले सूक्ष्म जीवके होता है । हास्य, रति, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका जघन्य अनुभाग सत्कर्म किसके होता है ? वह उनके अन्तिम अनुभागकाण्डकमें वर्तमान जीवके होता है। नपुंसकवेदका जघन्य अनुभागसत्कर्म किसके होता है ? वह अन्तिम समयवर्ती नपुंसकवेदके क्षपकके होता है । स्त्रीवेदका जघन्य व उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्म अन्तिम समयवर्ती स्त्रीवेदवेदकके होता है। पुरुषवेदका जघन्य अनुभागसत्कर्म किसके होता है ? जो अपगतवेदी होकर अन्तिम समयप्रबद्धका अन्तिम समयवर्ती संक्रामक है ऐसे पुरुषवेदोदययुक्त क्षपकके उसका जघन्य अनुभागसत्कर्म होता है ।

संज्वलन क्रोधका जघन्य अनुभागसत्कर्म किसके होता है ? वह क्रोधसे उपस्थित क्षपकके होता है जो कि उसके अन्तिम समयप्रबद्धका अन्तिम समयवर्ती संक्रामक है । संज्वलन मानका जघन्य अनुभागसत्कर्म नहीं होता । संज्वलनमायाका जघन्य अनुभागसत्कर्म किसके होता है ? वह मायासे उपस्थित हुए उसके अन्तिम समयप्रबद्धके क्षपकके होता है। संज्वलन लोभका जघन्य अनुभागसत्कर्म किसके होता है ? वह तीव्रतर हतसमुत्पत्तिक अन्तिम समयवर्ती संक्रामकके होता है । इस प्रकार जघन्य स्वामित्व समाप्त हुआ ।

---

१ ताप्रतौ 'विसंजोएणूणसंजोएमाणस्स' इति पाठः । २ ताप्रतौ 'चरिमसमयअणुभाग' इति पाठः । ३ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-काप्रत्योः 'इत्थिवेदस्स जहण्णुक्कस्सजहण्णचरिमसमयो इत्थि', ताप्रतौ 'इत्थिवेदस्स जह० कस्स ? जहण्णचरिमसमय इत्थि-' इति पाठः ।

४ का-ताप्रत्योः 'समयबद्ध' इति पाठः । ५ काप्रतौ 'समयबंधचरिमसमयसंकामयस्स', ताप्रतौ 'समयपबद्धस्स च संकामयस्स' इति पाठः ।

णिरयगईए णेरइएसु सव्वतिव्वाणुभागं सादं। उच्चागोद-जसकित्तीओ अणंतगुणाओ[1]। कम्मइय० अणंतगुणो। तेजइय० अणंतगुणो। वेउव्विय० अणंतगुणो। मिच्छत्त० अणंतगुणो। ओहिणाण-ओहिदंसणावरणाणं अणंतगुणो[2]। सम्मामिच्छत्ते[3]। अणंतगुणो। दाणंतराइय० अणंतगुणो। लाहंतराइय० अणंतगुणो। भोगंतराइय० अणंतगुणो। परिभोगंतराइय० अणंतगुणो। अचक्खुदंसणावरण० अणंतगुणो। चक्खुदंस० अणंतगुणो। वीरियंतराइय० अणंतगुणो। सम्मत्त० अणंतगुणो।

तिरिक्खगदीए तव्वतिव्वाणुभागं उच्चागोद-जसकित्तीणं। कम्मइय० अणंतगुणं। तेजइय० अणंतगुणं। वेउव्विय० अणंतगुणं। मिच्छत्त० अणंतगुणं। केवलणाण-केवलदंसणावरणाणं अणंतगुणं। अण्णदरो अणंताणुबंधि० अणंतगुणो। अण्णदरो संजलण० अणंतगुणो। अण्णदरो पच्चक्खाण० अणंतगुणं। अण्ण० अपच्चक्खाण० अणंतगुणं। मदिआवरण० अणंतगुणं। सुदावरण० अणंतगुणं। ओहिणाण-ओहिदंसणावरणाणं अणंतगुणं। मणपज्जवणाणावरण० अणंतगुणं। थीणगिद्धि० अणंतगुणं। णिद्दाणिद्दा० अणंतगुणं। पयलापयला० अणंतगुणं। णिद्दा० अणंतगुणं। पयला[4] अणंतगुणं। रदि० अणंतगुणं। हस्स० अणंतगुणं। ओरालिय० अणंतगुणं। तिरिक्खाउ० अणंतगुणं।

नरकगतिमें नारकियोंमें सातावेदनीय सबसे तीव्र अनुभागवाली प्रकृति है। उससे उच्चगोत्र और यशकीर्ति अनन्तगुणी हैं। कार्मणशरीर अनन्तगुणा है। तैजसशरीर अनन्तगुणा है। वैक्रियिकशरीर अनन्तगुणा है। मिथ्यात्व अनन्तगुणा है। अवधिज्ञानावरण और अवधिदर्शनावरण अनन्तगुणे हैं। सम्यग्मिथ्यात्व अनन्तगुणा है। दानान्तराय अनन्तगुणा है। लाभान्तराय अनन्तगुणा है। भोगान्तराय अनन्तगुणा है। परिभोगान्तराय अनन्तगुणा है। अचक्षुदर्शनावरण अनन्तगुणा है। चक्षुदर्शनावरण अनन्तगुणा है। वीर्यान्तराय अनन्तगुणा है। सम्यक्त्व अनन्तगुणा है।

तिर्यंचगतिमें उच्चगोत्र और यशकीर्ति सबसे तीव्र अनुभागवाली प्रकृतियां हैं। कार्मणशरीर अनन्तगुणा है। तैजसशरीर अनन्तगुणा है। वैक्रियिकशरीर अनन्तगुणा है। मिथ्यात्व अनन्तगुणा है। केवलज्ञानावरण और केवलदर्शनावरण अनन्तगुणे हैं। अनन्तानुबन्धिचतुष्कमें अन्यतर अनन्तगुणा है। अन्यतर संज्वलन अनन्तगुणा है। अन्यतर प्रत्याख्यानावरण अनन्तगुणा है। अन्यतर अप्रत्याख्यानावरण अनन्तगुणा है। मतिज्ञानावरण अनन्तगुणा है। श्रुतज्ञानावरण अनन्तगुणा है। अवधिज्ञानावरण और अवधिदर्शनावरण अनन्तगुणे हैं। मनःपर्ययज्ञानावरण अनन्तगुणा है। स्त्यानगृद्धि अनन्तगुणा है। निद्रानिद्रा अनन्तगुणी है। प्रचलाप्रचला अनन्तगुणी है। निद्रा अनन्तगुणी है। प्रचला अनन्तगुणी है। रति अनन्तगुणी है। हास्य अनणगुणा है। औदारिकशरीर अनन्तगुणा है। तिर्यगायु अनन्तगुणा है। असातावेदनीय

---

१ प्रतिषु 'अणंतगुणहीणाओ' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'मिच्छत्त० ओहिणाण० ओहिदंसणावरण० अणंतगुणा' इति पाठः। ३ अप्रतौ 'सम्मामिच्छत्ताणं' इति पाठः। ४ अ-ताप्रत्योः 'पयला०' इत्येतस्य स्थाने 'सुद०', काप्रतौ 'सुदणाण०' इति पाठः।

असाद० अणंतगुणं । णवुंसय० अणंतगुणं । इत्थि० अणंतगुणं । पुरिस० अणंतगुणं । अरदि० अणंतगुणं । सोग० अणंतगुणं । भय० अणंतगुणं । दुगुंछा० अणंतगुणं । णीचागोद० अजसकित्ति० अणंतगुणं । तिरिक्खगइ० अणंतगुणं । चक्खु० अणंतगुणं । सम्मामिच्छत्त० अणंतगुणं । दाणंतराइय० अणंतगुणं । लाहंतराइय० अणंतगुणं । भोगंतराइय० अणंतगुणं । परिभोगंतराइय० अणंतगुणं । अचक्खु[1]० अणंतगुणं । वीरियंतराइय० अणंतगुणं । सम्मत्तं अणंतगुणं ।

मणुस्सेसु सव्वतिव्वाणुभागमुच्चागोद-जसकित्तीणं । कम्मइय० अणंतगुणं । तेजइय० अणंतगुणं । आहार० अणंतगुणं । वेउव्विय० अणंतगुणं । मिच्छत्त० अणंतगुणं । केवलणाण-केवलदंसणावरणाणं अणंतगुणं । कसायाणमोघभंगो । तदो मदिआवरण० अणंतगुणं । सुदावरण० अणंतगुणं । ओहिणाण-ओहिदंसणावरणाणमणंतगुणं[2] । मणपज्जव० अणंतगुणं । थीणगिद्धि० अणंतगुणं । णिद्दाणिद्दा अणंतगुणं । पयलापयला० अणंतगुणं । णिद्दा० अणंतगुणं । पयला० अणंतगुणं । साद० अणंतगुणं । रदि० अणंतगुणं । हस्स० अणंतगुणं । मणुसगइ० अणंतगुणं । ओरालिय० अणंतगुणं । मणुसाउ० अणंतगुणं । असाद० अणंतगुणं । णवुंस० अणंतगुणं । इत्थि०अणंतगुणं । पुरिस० अणंतगुणं । अरदि० अणंतगुणं । सोग० अणंतगुणं । भय० अणंतगुणं । दुगुंछा

अनन्तगुणा है । नपुंसकवेद अनन्तगुणा है । स्त्रीवेद अनन्तगुणा है । पुरुषवेद अनन्तगुणा है । अरति अनन्तगुणी है । शोक अनन्तगुणा है । भय अनन्तगुणा है । जुगुप्सा अनन्तगुणी है । नीचगोत्र और अयशकीर्ति अनन्तगुणे हैं । तिर्यग्गति अनन्तगुणी है । चक्षुदर्शनावरण अनन्तगुणा है । सम्यग्मिथ्यात्व अनन्तगुणा है । दानान्तराय अनन्तगुणा है । लाभान्तराय अनन्तगुणा है । भोगान्तराय अनन्तगुणा है । परिभोगान्तराय अनन्तगुणा है । अचक्षुदर्शनावरण अनन्तगुणा है । वीर्यान्तराय अनन्तगुणा है । सम्यक्त्व अनन्तगुणा है ।

मनुष्योंमें उच्चगोत्र और यशकीर्तिका अनुभाग सबसे तीव्र है । कार्मणका अनन्तगुणा है । तैजसशरीरका अनन्तगुणा है । आहारशरीरका अनन्तगुणा है । वैक्रियिकशरीरका अनन्तगुणा है । मिथ्यात्वका अनन्तगुणा है । केवलज्ञानावरण और केवलदर्शनावरणका अनन्तगुणा है । कषायोंका अल्पबहुत्व ओघके समान है । उनसे आगे मतिज्ञानावरणका अनुभाग अनन्तगुणा है । श्रुतज्ञानावरणका अनुभाग अनन्तगुणा है । अवधिज्ञानावरण और अवधिदर्शनावरणका अनन्तगुणा है । मनःपर्ययज्ञानावरणका अनन्तगुणा है । स्त्यानगृद्धिका अनन्तगुणा है । निद्रानिद्राका अनन्तगुणा है । प्रचलाप्रचलाका अनन्तगुणा है । निद्राका अनन्तगुणा है । प्रचलाका अनन्तगुणा है । सातावेदनीयका अनन्तगुणा है । रतिका अनन्तगुणा है । हास्यका अनन्तगुणा है । मनुष्यगतिका अनन्तगुणा है । औदारिकशरीरका अनन्तगुणा है । मनुष्यायुका अनन्तगुणा है । असातावेदनीयका अनन्तगुणा है । नपुंसकवेदका अनन्तगुणा है । स्त्रीवेदका अनन्तगुणा है । पुरुषवेदका अनन्तगुणा है । अरतिका अनन्तगुणा है । शोकका अनन्तगुणा है ।

---

१ प्रतिषु 'चक्खु०' इति पाठः । २ ताप्रतौ 'सुदावरण-ओहिदंसणावरणाणं अणंतगुणं' इति पाठः ।

अणंतगुणं । णीचागोद-अजसकित्तीणं अणंतगुणं । सम्मामिच्छत्त० अणंतगुणं । चदुण्ण-मंतराइयाणमोघभंगो । अचक्खु० अणंतगुणं । चक्खु० अणंतगुणं । वीरियंतराइय० अणंतगुणं । सम्मत्त० अणंतगुणं ।

देवगईए सव्वतिव्वाणुभागं सादं । उच्चागोद-जसकित्तीओ अणंतगुणाओ[1] । मिच्छत्त० अणंतगुणं । केवलणाण-केवलदंसणावरणाणं अणंतगुणं । अण्णदरो अणंताणु-बंधि० अणंतगुणं । सेसाणं कसायाणमोघभंगो । तदो मदिआवरण० अणंतगुणं । सुदआवरण० अणंतगुणं । मणपज्जव० अणंतगुणं । णिद्दा० अणंतगुणं । पयला अणंतगुणं । देवगइ अणंतगुणं । रदि० अणंतगुणं । हस्स० अणंतगुणं । कम्मइय० अणंतगुणं । तेजा० अणंतगुणं । वेउव्विय० अणंतगुणं । देवाउ० अणंतगुणं । असाद० अणंतगुणं । इत्थि० अणंतगुणं । पुरिस० अणंतगुणं । अरदि० अणंतगुणं । सोग० अणंतगुणं । भय० अणंतगुणं । दुगुंछा० अणंतगुणं । अजसकित्ति० अणंतगुणं । ओहिणाण-ओहिदंसणा-वरणाणं अणंतगुणं । सम्मामिच्छत्त० अणंतगुणं । चदुण्हमंतराइयाणमोघभंगो । अचक्खु० अणंतगुणं । वीरियंतराइय० अणंतगुणं । सम्मत्त० अणंतगुणं ।

भवणवासिएसु सव्वतिव्वाणुभागं मिच्छत्तं । केवलणाण-केवलदंसणावरणाणं अणंत-गुणं । कसायाणमोघभंगो । मदिआवरण० अणंतगुणं । सुदआव० अणंतगुणं । मणपज्जव०

भयका अनन्तगुणा है । जुगुप्साका अनन्तगुणा है । नीचगोत्र और अयशकीर्तिका अनन्तगुणा है । सम्यग्मिथ्यात्वका अनन्तगुणा है । चार अन्तराय प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व ओघके समान है । अचक्षुदर्शनावरणका अनन्तगुणा है । चक्षुदर्शनावरणका अनन्तगुणा है । वीर्यान्तरायका अनन्तगुणा है । सम्यक्त्वका अनन्तगुणा है ।

देवगतिमें सबसे तीव्र अनुभागवाला सातावेदनीय है । इससे उच्चगोत्र और यशकीर्ति अनन्तगुणे हैं । मिथ्यात्व अनन्तगुणा है । केवलज्ञानावरण और केवलदर्शनावरण अनन्तगुणे हैं । अन्यतर अनन्तानुबन्धी अनन्तगुणी है । शेष कषायोंका अल्पबहुत्व ओघके समान है । आगे मतिज्ञानावरण अनन्तगुणा है । श्रुतज्ञानावरण अनन्तगुणा है । मनःपर्ययज्ञानावरण अनन्तगुणा है । निद्रा अनन्तगुणी है । प्रचला अनन्तगुणी है । देवगति अनन्तगुणी है । रति अनन्तगुणी है । हास्य अनन्तगुणा है । कार्मणशरीर अनन्तगुणा है । तैजसशरीर अनन्तगुणा है । वैक्रियिकशरीर अनन्तगुणा है । देवायु अनन्तगुणी है । असातावेदनीय अनन्तगुणा है । स्त्रीवेद अनन्तगुणा है । पुरुषवेद अनन्तगुणा है । अरति अनन्तगुणी है । शोक अनन्तगुणा है । भय अनन्तगुणा है । जुगुप्सा अनन्तगुणी है । अयशकीर्ति अनन्तगुणी है । अवधिज्ञानावरण और अवधिदर्शनावरण अनन्तगुणे हैं । सम्यग्मिथ्यात्व अनन्तगुणा है । चार अन्तराय प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व ओघके समान है । अचक्षुदर्शनावरण अनन्तगुणा है । वीर्यान्तराय अनन्तगुणा है । सम्यक्त्व अनन्तगुणा है ।

भवनवासी देवोंमें मिथ्यात्व सबसे तीव्र अनुभागवाला है । केवलज्ञानावरण और केवल-दर्शनावरण अनन्तगुणे हैं । कषायोंका अल्पबहुत्व ओघके समान है । मतिज्ञानावरण अनन्त-

[1] प्रतिषु 'अणंतगुणहीणाओ' इति पाठः ।

अणंतगुणं । णिद्दा० अणंतगुणं । पयला० अणंतगुणं । थीणगिद्धि० अणंतगुणं । उच्चागोद० जसकित्ति० अणंतगुणं । देवगइ० अणंतगुणं । रदि० अणंतगुणं । हस्स० अणंतगुणं । उवरि देवोघभंगो ।

एइंदिएसु सव्वतिव्वाणुभागं मिच्छत्तं । केवलणाणावरण-केवलदंसणावरणाणं[1] अणंतगुणं । कसायाणमोघभंगो । तदो मदिआवरण० अणंतगुणं । चक्खु० अणंतगुणं । सुदआवरण अणंतगुणं । ओहिणाण-ओहिदंसणावरणाणं अणंतगुणं । मणपज्जव० अणंतगुणं । थीणगिद्धि० अणंतगुणं । णिद्दाणिद्दा० अणंतगुणं । पयलापयला० अणंतगुणं । णिद्दा० अणंतगुणं । पयला० अणंतगुणं । असाद० अणंतगुणं । णवुंसय० अणंतगुणं । अरदि० अणंतगुणं । सोग० अणंतगुणं । भय० अणंतगुणं । दगुंछा० अणंतगुणं । णीचागोद० अणंतगुणं । अजसकित्ति० अणंतगुणं । तिरिक्खगइ० अणंतगुणं । साद० अणंतगुणं । जसकित्ति० अणंतगुणं । रदि० अणंतगुणं । हस्स० अणंतगुणं । कम्मइय० अणंतगुणं । तेजइय० अणंतगुणं । वेउव्विय० अणंतगुणं । ओरालिय० अणंतगुणं । तिरिक्खाउ० अणंतगुणं । चदुण्णमंतराइयाणमोघो । अचक्खु० अणंतगुणं । विरियंतराइय० अणंतगुणं । एवं विगलिंदिएसु वि । णवरि पसत्थकम्मंसा उवरि कायव्वा । एवमुक्कस्सदंडओ समत्तो ।

गुणा है । श्रुतज्ञानावरण अनन्तगुणा है । मनःपर्ययज्ञानावरण अनन्तगुणा है । निद्रा अनन्तगुणी है । प्रचला अनन्तगुणी है । स्त्यानगृद्धि अनन्तगुणी है । उच्चगोत्र और यशकीर्ति अनन्तगुणे हैं । देवगति अनन्तगुणी है । रति अनन्तगुणी है । हास्य अनन्तगुणा है । आगेकी प्ररूपणा देव ओघके समान है ।

एकेन्द्रिय जीवोंमें मिथ्यात्व सबसे तीव्र अनुभागवाला है । केवलज्ञानावरण और केवलदर्शनावरण अनन्तगुणे हैं । कषायोंका अल्पबहुत्व ओघके समान है । आगे मतिज्ञानावरण अनन्तगुणा है । चक्षुदर्शनावरण अनन्तगुणा है । श्रुतज्ञानावरण अनन्तगुणा है । अवधिज्ञानावरण और अवधिदर्शनावरण अनन्तगुणे हैं । मनःपर्ययज्ञानावरण अनन्तगुणा है । स्त्यानगृद्धि अनन्तगुणी है । निद्रानिद्रा अनन्तगुणी है । प्रचलाप्रचला अनन्तगुणी है । निद्रा अनन्तगुणी है । प्रचला अनन्तगुणी है । असातावेदनीय अनन्तगुणा है । नपुंसकवेद अनन्तगुणा है । अरति अनन्तगुणी है । शोक अनन्तगुणा है । भय अनन्तगुणा है । जुगुप्सा अनन्तगुणी है । नीचगोत्र अनन्तगुणा है । अयशकीर्ति अनन्तगुणी है । तिर्यग्गति अनन्तगुणी है । सातावेदनीय अनन्तगुणा है । यशकीर्ति अनन्तगुणी । रति अनन्तगुणी है । हास्य अनन्तगुणा है । कार्मणशरीर अनन्तगुणा है । तैजसशरीर अनन्तगुणा है । वैक्रियिकशरीर अनन्तगुणा है । औदारिकशरीर अनन्तगुणा है । तिर्यगायु अनन्तगुणी है । चार अन्तराय प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व ओघके समान है । अचक्षुदर्शनावरण अनन्तगुणा है । वीर्यान्तराय अनन्तगुणा है । इसी प्रकार विकलेन्द्रिय जीवोंमें भी उपर्युक्त अल्पबहुत्व जानना चाहिये । विशेष इतना है कि प्रशस्त कर्मांशोंको आगे करना चाहिये । इस प्रकार उत्कृष्ट दण्डक समाप्त हुआ ।

१ ताप्रतौ 'केवलणाणावरणाणं' इति पाठः ।

जहण्णए पयदं— सव्वमंदाणुभागं लोहसंजलण०। माया अणंतगुणा। माणो अणंतगुणो। कोधो अणंतगुणो। वीरियंतराइय० अणंतगुणो। सम्मत्त० अणंतगुणं। चक्खु० अणंतगुणं। सुदआवरण० अणंतगुणं। [मदि० अणंतगुणं।] अचक्खु० अणंतगुणं। ओहिणाण-ओहिदंसणाव० अणंतगुणं। परिभोगंतराइय० अणंतगुणं। भोगंतराइय० अणंतगुणं। लाहंतराइय० अणंतगुणं। दाणंतराइय० अणंतगुणं। पुरिस० अणंतगुणं। इत्थि० अणंतगुणं। णवुंस० अणंतगुणं। रदि० अणंतगुणं। हस्स० अणंतगुणं। अरदि० अणंतगुणं। दुगुंछ० अणंतगुणं। भय० अणंतगुणं। सोग० अणंतगुणं। केवलणाण-केवलदंसणाव० अणंतगुणं। पयला० अणंतगुणं। णिद्दा० अणंतगुणं। पयलापय० अणंतगुणं। णिद्दाणिद्दा० अणंतगुणं। थीणगिद्धि० अणंतगुणं। अण्णदरो पच्चक्खाणकसाओ अणंतगुणो। अण्णदरो अपच्च० कसाओ अणंतगुणं। अण० अणंताणुबंधि० अणंतगुणं। संजलण० अणंतगुणं। मिच्छित्त० अणंतगुणं। ओरालिय० अणंतगुणं। वेउव्विय० अणंतगुणं। तिरिक्खाउ० अणंतगुणं। मणुस्साउ० अणंतगुणं। आहार० अणंतगुणं। तेजा० अणंगुणं। कम्मइय० अणंतगुणं। तिरिक्खगइ० अणंतगुणं। णिरयगइ० अणंतगुणं। मणुसगइ० अणंतगुणं। देवगइ० अणंतगुणं। अजसकित्ति० अणंतगुणं। असाद० अणंतगुणं। उच्चागोद० अणंतगुणं। जसकित्ति० अणंतगुणं। साद० अणंत-

अब जघन्य अनुभागसत्कर्मदण्डक प्रकृत है— सबसे मंद अनुभागवाला संज्वलन लोभ है। संज्वलन माया अनन्तगुणी है। संज्वलन मान अनन्तगुणा है। संज्वलन क्रोध अनन्तगुणा है। वीर्यान्तराय अनन्तगुणा है। सम्यक्त्व अनन्तगुणा है। चक्षुदर्शनावरण अनन्तगुणा है। श्रुतज्ञानावरण अनन्तगुणा है। [मतिज्ञानावरण अनन्तगुणा है।] अचक्षुदर्शनावरण अनन्तगुणा है। अवधिज्ञानावरण और अवधिदर्शनावरण अनन्तगुणे हैं। परिभोगान्तराय अनन्तगुणा है। भोगान्तराय अनन्तगुणा है। लाभान्तराय अनन्तगुणा है। दानान्तराय अनन्तगुणा है। पुरुषवेद अनन्तगुणा है। स्त्रीवेद अनन्तगुणा है। नपुंसकवेद अनन्तगुणा है। रति अनन्तगुणी है। हास्य अनन्तगुणा है। अरति अनन्तगुणी है। जुगुप्सा अनन्तगुणी है। भय अनन्तगुणा है। शोक अनन्तगुणा है। केवलज्ञानावरण और केवलदर्शनावरण अनन्तगुणे हैं। प्रचला अन्तगुणी है। निद्रा अनन्तगुणी है। प्रचलाप्रचला अनन्तगुणी है। निद्रानिद्रा अनन्तगुणी है। स्त्यानगृद्धि अनन्तगुणी है। अन्यतर प्रत्याख्यानावरण कषाय अनन्तगुणी है। अन्यतर अप्रत्याख्यानावरण कषाय अनन्तगुणी है। अन्यतर अनन्तानुबन्धी कषाय अनन्तगुणी है। संज्वलनचतुष्कमें अन्यतर अनन्तगुणा है। मिथ्यात्व अनन्तगुणा है। औदारिकशरीर अनन्तगुणा है। वैक्रियिकशरीर अनन्तगुणा है। तिर्यगायु अनन्तगुणी है। मनुष्यायु अनन्तगुणी है। आहारकशरीर अनन्तगुणा है। तैजसशरीर अनन्तगुणा है। कार्मणशरीर अनन्तगुणा है। तिर्यग्गति अनन्तगुणी है। नरकगति अनन्तगुणी है। मनुष्यगति अनन्तगुणी है। देवगति अनन्तगुणी है। अयशकीर्ति अनन्तगुणी है। असातावेदनीय अनन्तगुणा है। उच्चगोत्र अनन्तगुणा है। यशकीर्ति अनन्तगुणी है।

१ अप्रतौ 'सोग अणंतगुणं अरदि अणंतगुणं केवल', ताप्रतौ 'सोग० [अरदि०] केवल' इति पाठः।

गुणं । णिरयाउ० अणंतगुणं । देवाउ० अणंतगुणं । एत्थ ओघजहण्णदंडओ समत्तो ।

णिरयगईए सव्वमंदाणुभागं सम्मत्तं । चक्खु० अणंतगुणं । अचक्खु० अणंतगुणं । हस्स० अणंतगुणं । रदि० अणंतगुणं । दुगुंछा० अणंतगुणं । भय० अणंतगुणं । सोग० अणंतगुणं । अरदि० अणंतगुणं । अवगदवेदो (?) एवं तिव्वयरसव्वमंदाणुभागं णेयव्वं जाव दाणंतराइयं [ति] । ओहिणाण-ओहिदंसणावरणाणं अणंतगुणं । मणपज्जव० अणंतगुणं । सुदावरण० अणंतगुणं । मदिआ० अणंतगुणं । अण्णदरो पच्चक्खाणकसाओ अणंतगुणो । अण्णदरो अपच्चक्खाणकसाओ अणंतगुणो । केवलणाण-केवलदंसणावरणाणं अणंतगुणं । पयला० अणंतगुणं । णिद्दा अणंतगुणं । सम्मामिच्छत्त० अणंतगुणं । अण्णदरो अणंताणुबंधिकसाओ अणंतगुणो । अण्णदरो[1] संजलणाणं णत्थि । मणुसगईए णिरयगइभंगो । वेउव्विय० अणंतगुणं । कम्मइय० अणंतगुणं । णिरयगइ० अणंतगुणं । णीचागोद० अणंतगुणं । अजसकित्तीए अणंतगुणं । असाद० अणंतगुणं । साद० अणंतगुणं । णिरयाउ० अणंतगुणं । एवं दोच्चाए । णवरि वीरियंतराइयस्स परिभोगंतराइयस्स च मज्झे सम्मत्तं कायव्वं । एवं णिरयगइदंडओ समत्तो ।

तिरिक्खगईए सव्वमंदाणुभागं सम्मत्तं । चक्खु० अणंतगुणं । अचक्खु० अणंतगुणं ।

सातावेदनीय अनन्तगुणा है । नारकायु अनन्तगुणी है । देवायु अनन्तगुणी है । यहां ओघ जघन्य दण्डक समाप्त हुआ ।

नरकगतिमें सबसे मंद अनुभागवाली सम्यक्त्व प्रकृति है । चक्षुदर्शनावरण अनन्तगुणा है । अचक्षुदर्शनावरण अनन्तगुणा है । हास्य अनन्तगुणा है । रति अनन्तगुणी है । जुगुप्सा अनन्तगुणी है । भय अनन्तगुणा है । शोक अनन्तगुणा है । अरति अनन्तगुणी है । अपगतवेद (?) इस प्रकार तीव्रतर सर्वमन्दानुभाग दानान्तराय तक ले जाना चाहिये । अवधिज्ञानावरण और अवधिदर्शनावरणका अनन्तगुणा है । मनःपर्ययज्ञानावरणका अनन्तगुणा है । श्रुतज्ञानावरणका अनन्तगुणा है । मतिज्ञानावरणका अनन्तगुणा है । अन्यतर प्रत्याख्यानावरण कषाय अनन्तगुणी है । अन्यतर अप्रत्याख्यानावरण कषाय अनन्तगुणी है । केवलज्ञानावरण और केवलदर्शनावरणका अनन्तगुणा है । प्रचलाका अनन्तगुणा है । निद्राका अनन्तगुणा है । सम्यग्मिथ्यात्वका अनन्तगुणा है । अन्यतर अनन्तानुबन्धी कषायका अनन्तगुणा है । अन्यतर संज्वलन कषायोंके नहीं है । मनुष्यगतिकी प्ररूपणा नरकगतिके समान है । वैक्रियिकशरीरका अनन्तगुणा है । कार्मणशरीरका अनन्तगुणा है । नरकगतिका अनन्तगुणा है । नीचगोत्रका अनन्तगुणा है । अयशकीर्तिका अनन्तगुणा है । असातावेदनीयका अनन्तगुणा है । सातावेदनीयका अनन्तगुणा है । नारकायुका अनन्तगुणा है । इसी प्रकार दूसरी पृथिवीमें जानना चाहिये । विशेष इतना है कि वीर्यान्तराय और परिभोगान्तरायके मध्यमें सम्यक्त्वको करना चाहिये । इस प्रकार नरकगतिदण्डक समाप्त हुआ ।

तिर्यंचगतिमें सम्यक्त्व प्रकृति सबसे मंद अनुभागवाली है । चक्षुदर्शनावरण अनन्तगुणा

---

१ काप्रतौ 'अण०', ताप्रतौ 'अण्णदरा' इति पाठः ।

ओहिणाण-ओहिदंसणावरणाणं अणंतगुणं । हस्स० अणंतगुणं । रदि० अणंतगुणं । दुगुंछा अणंतगुणं । भय० अणंतगुणं । सोग० अणंतगुणं । अरदि० अणंतगुणं । पुरिस० अणंतगुणं । इत्थि० अणंतगुणं । णवुंस० अणंतगुणं । अण्णदरसंजलण० अणंतगुणं । वीरियंतराइय० अणंतगुणं । एवं णेदव्वं जाव दाणंतराइयं[1] ति अणंतगुणक्कमेण । मणपज्जव० अणंतगुणं । सुदावरण० अणंतगुणं । मदिआ० अणंतगुणं । अण्णदरो अपच्चक्खाणकसाओ अणंतगुणो । अण्णदरो पच्चक्खाणाणं केवलणाण-केवलदंसणावरणाणं अणंतगुणं । पयला० अणंतगुणं । णिद्दा० अणंतगुणं । पयलापयला० अणंतगुणं । णिद्दाणिद्दा० अणंतगुणं । थीणगिद्धि० अणंतगुणं । सम्मामिच्छत्त० अणंतगुणं । अण्णदरो अणंताणुबंधिकसाओ अणंतगुणो । मिच्छत्त० अणंतगुणं । ओरालिय० अणंतगुणं । वेउव्विय० अणंतगुणं । तिरिक्खाउ० अणंतगुणं । तेजा० अणंतगुणं । कम्मइय० अणंतगुणं । तिरिक्खगइ० अणंतगुणं । णीचागोद० अणंतगुणं । अजसकित्ति० अणंतगुणं । असाद० अणंतगुणं । जसकित्ति० अणंतगुणं । साद० अणंतगुणं । उच्चागोद० अणंतगुणं । एवं तिरिक्खगई० चउण्णमंतराइयाणमोघो (१) ।

मणुसेसु ओघभंगो । देवगईए सव्वमंदाणुभागं सम्मत्तं । चक्खु० अणंतगुणं ।

है । अचक्षुदर्शनावरण अनन्तगुणा है । अवधिज्ञानावरण और अवधिदर्शनावरण अनन्तगुणे हैं । हास्य अनन्तगुणी है । रति अनन्तगुणी है । जुगुप्सा अनन्तगुणी है । भय अनन्तगुणा है । शोक अनन्तगुणा है । अरति अनन्तगुणी है । पुरुषवेद अनन्तगुणा है । स्त्रीवेद अनन्तगुणा है । नपुंसकवेद अनन्तगुणा है । अन्यतर संज्वलन कषाय अनन्तगुणी है । वीर्यान्तराय अनन्तगुणा है । इस प्रकार अनन्तगुणितक्रमसे दानान्तराय तक ले जाना चाहिये । मनःपर्ययज्ञानावरण अनन्तगुणा है । श्रुतज्ञानावरण अनन्तगुणा है । मतिज्ञानावरण अनन्तगुणा है । अन्यतर अप्रत्याख्यानावरण कषाय अनन्तगुणी है । अन्यतर प्रत्याख्यानावरण कषाय, केवलज्ञानावरण और केवलदर्शनावरण अनन्तगुणे हैं । प्रचला अनन्तगुणी है । निद्रा अनन्तगुणी है । प्रचलाप्रचला अनन्तगुणी है । निद्रानिद्रा अनन्तगुणी है । स्त्यानगृद्धि अनन्तगुणी है । सम्यग्मिथ्यात्व अनन्तगुणा है । अन्यतर अनन्तानुबन्धी कषाय अनन्तगुणी है । मिथ्यात्व अनन्तगुणा है । औदारिकशरीर अनन्तगुणा है । वैक्रियिकशरीर अनन्तगुणा है । तिर्यगायु अनन्तगुणी है । तैजसशरीर अनन्तगुणा है । कार्मणशरीर अनन्तगुणा है । तिर्यग्गति अनन्तगुणी है । नीचगोत्र अनन्तगुणा है । अयशकीर्ति अनन्तगुणी है । असातावेदनीय अनन्तगुणा है । यशकीर्ति अनन्तगुणी है । सातावेदनीय अनन्तगुणी है । उच्चगोत्र अनन्तगुणा है । इस प्रकार तिर्यग्गति-दण्ड समाप्त हुआ । चार अन्तराय प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व ओघके समान है ।

मनुष्योंमें उक्त अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा ओघके समान है । देवगतिमें सबसे मन्द अनुभागवाली सम्यक्त्व प्रकृति है । चक्षुदर्शनावरण अनन्तगुणा है । श्रुतज्ञानावरण अनन्तगुणा है ।

---

१ ताप्रतौ 'जाव अंतराइयं' इति पाठः ।

सुदणाणावरण० अणंतगुणं। मदिआ० अणंतगुणं। अचक्खु० अणंतगुणं। ओहिणाण-ओहिदंसणावरणाणं अणंतगुणं। हस्स० अणंतगुणं। रदि० अणंतगुणं। दुगुंछा० अणंतगुणं। भय० अणंतगुणं। सोग० अणंतगुणं। अरदि० अणंतगुणं। पुरिस० अणंतगुणं। इत्थि० अणंतगुणं। अण्णदरसंजलण० अणंतगुणं। कम्मइय० अणंतगुणं। एवं णेदव्वं अणंतगुणक्कमेण जाव दाणंतराइयं ति। मणपज्जवणाणावरण० अणंतगुणं। अण्णदरो अपच्चक्खाणकसाओ अणंतगुणो। अण्ण० पच्चक्खा० अणंतगुणो। केवलणाण-केवलदंसणावरणाणं अणंतगुणं। पयला० अणंतगुणं। णिद्दा अणंतगुणं। सम्मामिच्छत्त० अणंतगुणं। अण्णदरो अणंताणुबंधिकसाओ अणंतगुणो। मिच्छत्त० अणंतगुणं। ओरालिय० अणंतगुणं। कम्मइय० अणंतगुणं। देवगइ० अणंतगुणं। अजसकित्ति० अणंतगुणं। असाद० अणंतगुणं। उच्चागोद० अणंतगुणं। जसकित्ति० अणंतगुणं। साद० अणंतगुणं। देवाउ० अणंतगुणं।

एइंदिएसु सव्वमंदाणुभागं···। हस्स० अणंतगुणं। रदि० अणंतगुणं। दुगुंछ० अणंतगुणं। भय० अणंतगुणं। सोग० अणंतगुणं। अरदि० अणंतगुणं। णवुंस० अणंतगुणं। अण्णदरसंजलण० अणंतगुणं। वीरियंतराइय० अणंतगुणं। अणंताणुबंधि० अणंतगुणं। भोगंतराइयं० अणंतगुणं। लाहंतराइय० अणंतगुणं। दाणंतराइय० अणंतगुणं। मणपज्जव-

---

श्रुतज्ञानावरण अनन्तगुणा है। मतिज्ञानावरण अनन्तगुणा है। अचक्षुदर्शनावरण अनन्तगुणा है। अवधिज्ञानावरण और अवधिदर्शनावरण अनन्तगुणे हैं। हास्य अनन्तगुणा है। रति अनन्तगुणी है। जुगुप्सा अनन्तगुणी है। भय अनन्तगुणा है। शोक अनन्तगुणा है। अरति अनन्तगुणी है। पुरुषवेद अनन्तगुणा है। स्त्रीवेद अनन्तगुणा है। अन्यतर संज्वलन कषाय अनन्तगुणी है। कार्मणशरीर अनन्तगुणा है। इस प्रकार अनन्तगुणितक्रमसे दानान्तराय तक ले जाना चाहिये। मनःपर्ययज्ञानावरण अनन्तगुणा है। अन्यतर अप्रत्याख्यानावरण कषाय अनन्तगुणा है। अन्यतर प्रत्याख्यानावरण कषाय अनन्तगुणा है। केवलज्ञानावरण और केवलदर्शनावरण अनन्तगुणे हैं। प्रचला अनन्तगुणी है। निद्रा अनन्तगुणी है। सम्यग्मिथ्यात्व अनन्तगुणा है। अन्यतर अनन्तानुबन्धी कषाय अनन्तगुणी है। मिथ्यात्व अनन्तगुणा है। औदारिकशरीर अनन्तगुणा है। कार्मणशरीर अनन्तगुणा है। देवगति अनन्तगुणी है। अयशकीर्ति अनन्तगुणी है। असातावेदनीय अनन्तगुणा है। उच्चगोत्र अनन्तगुणा है। यशकीर्ति अनन्तगुणी है। सातावेदनीय अनन्तगुणा है। देवायु अनन्तगुणी है।

एकेन्द्रियोंमें सबसे मंद अनुभागवाली ············ प्रकृति है। हास्य अनन्तगुणा है। रति अनन्तगुणी है। जुगुप्सा अनन्तगुणा है। भय अनन्तगुणा है। शोक अनन्तगुणा है। अरति अनन्तगुणी है। नपुंसकवेद अनन्तगुणा है। अन्यतर संज्वलन कषाय अनन्तगुणी है। वीर्यान्तराय अनन्तगुणा है। अन्यतर अनन्तानुबन्धी कषाय अनन्तगुणी है। भोगान्तराय अनन्तगुणा है। लाभान्तराय अनन्तगुणा है। दानान्तराय अनन्तगुणा है।

---

१ ताप्रतौ 'अणंताणुबंधी० सोग० (?) भोगंतराइय०' इति पाठः।

णाणा० अणंतगुणं। ओहिणाणा० ओहिदंसणावरण० अणंतगुणं। सुदणाणाव० अणंतगुणं। चक्खु० अणंतगुणं। मदिआव० अणंतगुणं। अण्णदरअपच्चक्खाणकसाओ अणंतगुणो[1]। अण्ण० पच्चक्खा० अणंतगुणो। अण्ण० अणंताणुबंधि० अणंतगुणं। केवलणाण-केवलदंसणावरणाणं दुव्व तुल्लाणि अणंतगुणाणि। मिच्छत्तमणंतगुणं। पयला० अणंतगुणं। णिद्दा० अणंतगुणं। पयलापयला अणंतगुणं। णिद्दाणिद्दा० अणंतगुणं। थीणगिद्धि० अणंतगुणं। ओरालि० अणंतगुणं। वेउव्विय० अणंतगुणं। तिरिक्खाउ० अणंतगुणं। आहार० अणंतगुणं। तेजा० अणंतगुणं। कम्मइय० अणंतगुणं। तिरिक्खगई० अणंतगुणं। णीचागोद० अणंतगुणं। अजसकित्ति० अणंतगुणं। असाद० अणंतगुणं। जसकित्ति० अणंतगुणं। साद० अणंतगुणं। एवमणुभागउदीरणा[2] समत्ता।

पदेसउदीरणाए उक्कस्सओ[3] मूलपयडिदंडओ। तं जहा— उक्कस्सेण जं पदेसग्गमुदीरिज्जदि तमाउअम्मि थोवं। वेयणीए असंखेज्जगुणं। मोहणीए असंखेज्जगुणं। णाणावरण-दंसणावरण-अंतराइएसु तुल्लमसंखेज्जगुणं। [4]णाम-गोदेसु तुल्लमसंखेज्जगुणं। एवमोघदंडओ समत्तो।

णिरयगईए मणुसगई[5] (?) संकामिज्जदि तं थोवं। णामा-गोदेसु असंखेज्जगुणं।

मनःपर्ययज्ञानावरण अनन्तगुणा है। अवधिज्ञानावरण और अवधिदर्शनावरण अनन्तगुणे हैं। श्रुतज्ञानावरण अनन्तगुणा है। चक्षुदर्शनावरण अनन्तगुणा है। मतिज्ञानावण अनन्तगुणा है। अन्यतर अप्रत्याख्यानावरण कषाय अनन्तगुणी है। अन्यतर प्रत्याख्यानावरण कषाय अनन्तगुणी है। अन्यतर अनन्तानुबन्धी कषाय अनन्तगुणी है। केवलज्ञानावरण और केवलदर्शनावरण ये दोनों तुल्य व अनन्तगुणे हैं। मिथ्यात्व अनन्तगुणा है। प्रचला अनन्तगुणी है। निद्रा अनन्तगुणी है। प्रचलाप्रचला अनन्तगुणी है। निद्रानिद्रा अनन्तगुणी है। स्त्यानगृद्धि अनन्तगुणी है। औदारिकशरीर अनन्तगुणा है। वैक्रियिकशरीर अनन्तगुणा है। तिर्यगायु अनन्तगुणी है। आहारशरीर अनन्तगुणा है। तैजसशरीर अनन्तगुणा है। कार्मणशरीर अनन्तगुणा है। तिर्यग्गति अनन्तगुणी है। नीचगोत्र अनन्तगुणा है। अयशकीर्ति अनन्तगुणी है। असातावेदनीय अनन्तगुणी है। यशकीर्ति अनन्तगुणी है। सातावेदनीय अनन्तगुणी है। इस प्रकार अनुभागउदीरणा समाप्त हुई।

प्रदेशउदीरणामें उत्कृष्ट मूलप्रकृतिदण्डक इस प्रकार है— उत्कर्षसे जो प्रदेशाग्र उदीर्ण होता है वह आयु कर्ममें सबसे स्तोक है। वेदनीयमें असंख्यातगुणा है। मोहनीयमें असंख्यातगुणा है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय इन प्रकृतियोंमें वह तुल्य व असंख्यातगुणा है। नाम और गोत्रमें तुल्य व असंख्यातगुणा है। इस प्रकार ओघदण्डक समाप्त हुआ।

नरकगतिमें जो प्रदेशाग्र आयुमें संक्रान्त होता है वह स्तोक है। नाम और गोत्रमें

---

१ ताप्रतौ 'अण्णदरो पच्चक्खाणकसाओ० अण्ण० अपच्चक्खाणक०' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'एवं मंदाणुभागउदीरणा' इति पाठः। ३ ताप्रतौ 'उक्कस्सए' इति पाठः। ४ ताप्रतौ नास्तीदं वाक्यम्। ५ अ-काप्रत्योः 'णिरयगई देवगई' इति पाठः।

णाणावरण-दंसणावरण-अंतराइएसु विसेसाहियं। मोहणीए विसे०। वेदणीए विसे०[1]। एवं सव्वासु गदीसु। णवरि मणुसगदीए मूलोघभंगो।

जहण्णए पयदं— आउअम्मि जं तं थोवं। णामा-गोदेसु देव-णेरइयाणं असंखेज्जगुणं। णाणावरण-दंसणावरण-अंतराइएसु विसेसाहियं। मोहणीए विसे०। एवं सव्वासु गदीसु। एवं णाणावरण-दंसणावरण-पंचंतराइयं ति (?) मणपज्जव० विसेसाहियं। सुद० विसे०। मदि० विसे०। अचक्खु० विसे०। चक्खु० विसे०। उच्चागोदे विसे०। सादासादे विसे०। एवं देवगइदंडओ समत्तो।

मणुसगदीए जं पेदसग्गं वेदिज्जदि मिच्छत्ते तं थोवं। सम्मामिच्छत्ते असंखे० गुणं। सम्मत्ते असंखे० गुणं। अण्णदरअणंताणुबंधिकसाए असंखे० गुणं। केवलणाणावरणे[2] असंखे० गुणं। पयला० विसे०। णिद्दा० विसे०। पयलापयला० विसे०। णिद्दाणिद्दा० विसे०। थीणगिद्धीए विसे०। केवलदंसणाव० विसे०। अण्णदरअपच्चक्खाणकसाए विसे०। पच्चक्खाण० विसे०। ओहिणाणाव० अणंतगुणं[3]। ओहिदंस० विसे०। मणुसाउअम्मि असंखे० गुणं। ओरालिय० असंखे० गुणं। तेज० विसे०।

असंख्यातगुणा है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तरायमें विशेष अधिक है। मोहनीयमें विशेष अधिक है। वेदनीयमें विशेष अधिक है। इस प्रकार सब गतियोंमें जानना चाहिये। विशेष इतना है कि उसकी प्ररूपणा मनुष्यगतिमें मूल ओघके समान है।

जघन्य मूलप्रकृतिदण्डक अधिकारप्राप्त है— जो प्रदेशाग्र [वेदा जाता है] वह आयुमें स्तोक है। उससे नाम और गोत्र कर्मोंमें देवों व नारकियोंके असंख्यातगुणा है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तरायमें विशेष अधिक है। मोहनीयमें विशेष अधिक है। इसी प्रकार सब गतियोंमें जानना चाहिये। इस प्रकार ज्ञानावरण, दर्शनावरण और पांच अन्तराय तक (?) मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। उच्चगोत्रमें विशेष अधिक है। साता और असाता वेदनीयमें विशेष अधिक है। इस प्रकार देवगतिदण्डक समाप्त हुआ।

मनुष्यगतिमें जो प्रदेशाग्र वेदा जाता है वह मिथ्यात्वमें स्तोक है। सम्यग्मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है। सम्यक्त्वमें असंख्यातगुणा है। अन्यतर अनन्तानुबन्धी कषायमें असंख्यातगुणा है। केवलज्ञानावरणमें असंख्यातगुणा है। प्रचलामें विशेष अधिक है। निद्रामें विशेष अधिक है। प्रचलाप्रचलामें विशेष अधिक है। निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है। स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है। केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। अन्यतर अप्रत्याख्यानावरण कषायमें विशेष अधिक है। अन्यतर प्रत्याख्यानावरण कषायमें विशेष अधिक है। अवधिज्ञानावरणमें अनन्तगुणा है। अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। मनुष्यायुमें असंख्यातगुणा है। औदारिकशरीरमें असंख्यातगुणा है। तैजसशरीरमें विशेष अधिक है।

१ ताप्रतौ 'मोहणीए० वेयणीए० विसेसाहियं' इति पाठः। २ का-ताप्रत्योः 'केवलदंसण०' इति पाठः। ३ काप्रतौ 'असंखे० गुणा' इति पाठः।

कम्मइय० विसे० । वेउव्विय० विसे० । मणुसगई० संखे० गुणं । जसकित्ति-अजस-कित्तीसु दुगुंछा० संखे० गुणं । भय० विसे० । हस्स० विसे० । सोगे विसे० । रदि-अरदि० विसे० । अण्णदरवेद० विसे० । दाणंतराइए विसे० । एवं विसेसाहियकमेण णेदव्वं [जाव] वीरियंतराइयं ति । मणपज्जव० विसे० । सुदणा० विसे० । मदि० विसे० । अचक्खु० विसे० । अण्णदरसंजलणकसाए विसे० । [उच्च] णीचागोदेसु० विसे० । सादासादे० विसे० । आहार० असंखे० । एवं मणुसगइदंडओ समत्तो ।

एइंदिएसु जं[2] पदेसग्गं वेदिज्जदि मिच्छत्ते तं थोवं । अण्णदरअणंताणुबंधिकसाए असंखे० गुणं । केवलणाणाव० असंखेज्जगुणं । पयला० विसेसाहियं । णिद्दा० विसेसाहियं । पयलापयला० विसे० । णिद्दाणिद्दा० विसे० । थीणगिद्धि० विसे० । केवलदंसण० विसे० । अण्णदरअपच्चक्खाणकसाए विसे० । अण्ण० पच्चक्खा० विसे० । तिरिक्खाउअम्मि अणंतगुणं । ओरालिय० संखेज्जगुणं । तेज० विसेसाहियं । कम्मइय० विसे० । वेउव्विय० विसे० । तिरिक्खिगई० संखेज्जगुणं । जसकित्ति-अजसकित्तीसु विसे० । दुगुंछाए० संखे० गुणं । भए० विसे० । हस्स-सोगे० विसे० । णिद्दा० विसे० । रदि-अरदीसु० विसे० ।

कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है । वैक्रियिकशरीरमें विशेष अधिक है । मनुष्यगतिमें संख्यातगुणा है । यशकीर्ति और अयशकीर्तिमें [संख्यातगुणा] है । जुगुप्सामें संख्यात-गुणा है । भयमें विशेष अधिक है । हास्यमें विशेष अधिक है । शोकमें विशेष अधिक है । रति और अरतिमें विशेष अधिक है । अन्यतर वेदमें विशेष अधिक है । दानान्तरायमें विशेष अधिक है । इस प्रकार वीर्यान्तराय तक विशेष अधिक क्रमसे ले जाना चाहिये । आगे मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । अन्यतर संज्वलन कषायमें विशेष अधिक है । ऊंच और नीच गोत्रोंमें विशेष अधिक है । साता और असाता वेदनीयमें विशेष अधिक है । आहारकशरीरमें असंख्यातगुणा है । इस प्रकार मनुष्यगतिदण्डक समाप्त हुआ ।

एकेन्द्रिय जीवोंमें जो प्रदेशाग्र वेदा जाता है वह मिथ्यात्वमें स्तोक है । अन्यतर अनन्तानु-बन्धी कषायमें असंख्यातगुणा है । केवलज्ञानावरणमें असंख्यातगुणा है । प्रचलामें विशेष अधिक है । निद्रामें विशेष अधिक है । प्रचलाप्रचलामें विशेष अधिक है । निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है । स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है । केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । अन्यतर अप्रत्याख्यानावरण कषायमें विशेष अधिक है । अन्यतर प्रत्याख्यानावरण कषायमें विशेष अधिक है । तिर्यगायुमें अनन्तगुणा है । औदारिकशरीरमें संख्यातगुणा है । तैजसशरीरमें विशेष अधिक है । कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है । वैक्रियिकशरीरमें विशेष अधिक है । तिर्यग्गतिमें संख्यातगुणा है । यशकीर्ति और अयशकीर्तिमें विशेष अधिक है । जुगुप्सामें संख्यागुणा है । भयमें विशेष अधिक है । हास्य और शोकमें विशेष अधिक है । निद्रामें

---

१ काप्रतौ 'जसगिचिअजसकित्तनु० दुगुंछ०', ताप्रतौ 'जसकित्ति० अजसकित्तीसु, दुगुंछा०' इति पाठः ।
२ अ-काप्रत्योः 'जं' इत्येतत्पदं नास्ति ।

णवुंस० विसे० । दाणंतराइए विसे० । एवं विसेसाहियकमेण णेदव्वं जाव विरियंतराइयं ति । मणपज्जव० विसे० । ओहिणा० विसे० । सुद० विसे० । मदि० विसे० । ओहिदंस० विसे० । अचक्खु० विसे० । चक्खु० विसे० । अण्णदरसंजलणकसाए विसे० । णीचागोदे० विसे० । सादासादे० विसे० । एवमेइंदियदंडओ समत्तो । एवमुदओ समत्तो ।

जा विपरिणामेणोपक्कमेण मग्गणा[1] सा चेव मोक्खाणिओगद्दारे कायव्वा । उत्तरपयडिसंकमे आहार० संकामया थोवा । सम्मत्ते० असंखे० गुणा । मिच्छत्ते० असंखे० गुणा । सम्मामिच्छत्ते० विसेसा० । देवगदीए० असंखे० गुणा । णिरयगदीए० विसे० । वेउव्विय० विसे० । णीचागोदस्स० अणंतगुणं । असाद० संखे० गुणं । सादस्स० संखे० गुणं । उच्चागोदस्स० विसे० । मणुसगदीए० विसे० । अणंताणुबंधिचउक्कस्स० विसे० । जसकित्तीए विसे० । अट्ठकसायाणं० विसे० थीणगिद्धितियस्स० तिरिक्खगदीए० विसे० । लोहसंजलणाए विसे० । णवुंस० विसे० । इत्थि० विसे० । छण्णोकसायाणं विसे० । पुरिसवेद० विसे० । कोहसंजलण० विसे० ।

विशेष अधिक है। रति और अरतिमें विशेष अधिक है। नपुंसकवेदमें विशेष अधिक है। दानान्तरायमें विशेष अधिक है। इस प्रकार विशेष अधिक क्रमसे वीर्यान्तराय तक ले जाना चाहिये। मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। चक्षुदर्शनावरणमें विशेषअ धिक है। अन्यतर संज्वलन कषायमें विशेष अधिक है। नीचगोत्रमें विशेष अधिक है। साता और असाता वेदनीयमें विशेष अधिक है। इस प्रकार एकेन्द्रियदण्डक समाप्त हुआ। इस प्रकार उदय समाप्त हुआ।

जो विपरिणामोपक्रमसे मार्गणा है वह मोक्ष अनुयोगद्वारमें की जावेगी। उत्तर प्रकृतिसंक्रममें आहारशरीरके संक्रामक स्तोक हैं। सम्यक्त्व प्रकृतिके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। मिथ्यात्वके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामक विशेष अधिक हैं। देवगतिके संक्रमक असंख्यातगुणे हैं। नरकगतिके संक्रामक विशेष अधिक हैं। वैक्रियिकशरीरके संक्रामक विशेष अधिक हैं। नीचगोत्रके संक्रामक अनन्तगुणे हैं। असातावेदनीयके संक्रामक संख्यातगुणे हैं। सातावेदनीयके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं। उच्चगोत्रके संक्रामक विशेष अधिक हैं। मनुष्यगतिके संक्रामक विशेष अधिक हैं। अनन्तानुबन्धिचतुष्कके संक्रामक विशेष अधिक हैं। यशकीर्तिके संक्रामक विशेष अधिक हैं। आठ कषायोंके संक्रामक विशेष अधिक हैं। स्त्यानगृद्धित्रिकके संक्रामक........(?)। तिर्यग्गतिके संक्रामक विशेष अधिक हैं। संज्वलन लोभके संक्रामक विशेष अधिक हैं। नपुंसकवेदके संक्रामक विशेष अधिक हैं। स्त्रीवेदके संक्रामक विशेष अधिक हैं। छह नोकषायोंके संक्रामक विशेष अधिक हैं। पुरुषवेदके

---

१ ताप्रतौ 'विपरिणामणोपक्कमेण' इति पाठः। २ अ-का-ताप्रतिषु 'गम्मणा', मप्रतौ 'कम्मणा' इति पाठः।

माण० विसे० । माया० विसे० । पंचणाणावरण-छदंसणावरण-पंचंतराइय-ओरालिय-तेजा-कम्मइय-अजसकित्तीणं विसेसाहियं । एवमोघदंडओ समत्तो ।

मोहणीयस्स पयडिट्ठाणसंकमेण णवण्हं संकमया थोवा । छण्णं संकामया विसेसाहिया । चोद्दसण्णं संखेज्जगुणं । पंचण्हं संखे० गुणं । अट्ठण्हं विसेसाहियं । अट्ठारसण्हं विसे० । उणवीसण्णं[1] विसेसाहियं । चदुण्हं संखे० गुणं । सत्तण्हं विसे० । वीसण्हं विसे० । एक्किस्से संखे० गुणं । दोण्हं विसे० । दसण्हं विसे० । एक्कारसण्हं विसे० । बारसण्हं विसे० । तिण्हं संखे० गुणं । तेरसण्हं संखेज्जगुणं । छव्वीसण्हं असंखे० गुणं । एक्कवीसण्हं असंखे० गुणं । तेवीसण्हं असंखे० गुणं । सत्तवीसण्हं असंखे० गुणं । पणुवीसण्हं अतणंगुणं । एवमोघदंडओ समत्तो ।

उक्कस्सट्ठिदिसंकमो सुगमो । जहण्णट्ठिदिसंकमे पयदं— पंचणाणावरण-चउदंसणावरण-सम्मत्त-लोहसंजलण-आउचउक्क-पंचंतराइयाणं जाओ ट्ठिदीओ संकामिज्जंदि ताओ थोवाओ । णिद्दा-पयलाणं त्तत्तिओ चेव । जट्ठिदी[2] असंखेज्ज[3]० । णिद्दा-पयलाणं जट्ठिदी

संक्रामक विशेष अधिक हैं । संज्वलन क्रोधके संक्रामक विशेष अधिक हैं । संज्वलन मानके संक्रामक विशेष अधिक हैं । संज्वलन मायाके संक्रामक विशेष अधिक हैं । पांच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, पांच अन्तराय, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर और अयशकीर्तिके संक्रामक विशेष अधिक हैं । इस प्रकार ओघदण्डक समाप्त हुआ ।

प्रकृतिस्थानसंक्रमकी अपेक्षा मोहनीयकी नौ प्रकृतियोंके संक्रामक स्तोक हैं । उसकी छह प्रकृतियोंके संक्रामक विशेष अधिक हैं । चौदह प्रकृतियोंके संक्रामक संख्यातगुणे हैं । पांच प्रकृतियोंके संक्रामक संख्यातगुणे हैं । आठ प्रकृतियोंके संक्रामक विशेष अधिक हैं । अठारह प्रकृतियोंके संक्रामक विशेष अधिक हैं । उन्नीस प्रकृतियोंके संक्रामक विशेष अधिक हैं । चार प्रकृतियोंके संक्रामक संख्यातगुणे हैं । सात प्रकृतियोंके संक्रामक विशेष अधिक हैं । वीस प्रकृतियोंके संक्रामक विशेष अधिक हैं । एकके संक्रामक संख्यातगुणे हैं । दोके संक्रामक विशेष अधिक हैं । दसके संक्रामक विशेष अधिक हैं । ग्यारहके संक्रामक विशेष अधिक हैं । बारहके संक्रामक विशेष अधिक हैं । तीनके संक्रामक संख्यातगुणे हैं । तेरहके संक्रामक संख्यातगुणे हैं । छब्बीसके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं । इक्कीसके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं । तेईसके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं । सत्ताईसके संक्रामक असंख्यातगुणे हैं । पच्चीसके संक्रामक अनन्तगुणे हैं । इस प्रकार ओघदण्डक समाप्त हुआ ।

उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम सुगम है । जघन्य स्थितिसंक्रम अधिकार प्राप्त है— पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सम्यक्त्व, संज्वलन लोभ, चार आयु कर्म और पांच अन्तराय; इनकी जो स्थितियां संक्रान्त होती हैं वे स्तोक हैं । निद्रा और प्रचलाकी उतनी मात्र ही हैं । उनकी जस्थिति

---

१ अ-काप्रत्योः 'ऊणवीसयं' इति पाठः । २ मप्रतिपाठोऽयम् । अ-का-ताप्रतिषु 'जट्ठिदी' इति पाठः । अग्रेऽप्ययमेव पाठक्रमः । ३ ताप्रतौ 'संखेज्ज' इति पाठः ।

संखेज्जगुणं। देवगइ-वेउव्विय-आहार-णीचागोद-अजसकित्तीणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ संखे० गुणाओ । ओरालिय-तेजा-कम्मइय-उच्चागोद-जसकित्ति-मणुसगदीणं जाओ ट्ठिदीओ ताओ विसेसाहियाओ[1] । सव्वासिं जट्ठिदीओ विसे० । सादासादाणं जह० विसे० । जट्ठिदी० विसे० । मायासंजलणाए जह० संखे० गुणं । जट्ठिदि० विसे० । माणसंजलणाए जह० विसे० । जट्ठिदि० विसे० । कोहसंलणाए जह० वि० । जट्ठिदि० विसे० । पुरिस० जह० संखे० गुणं । जट्ठिदि विसे० । इत्थि-णवुंसयवेदाणं जह० असंखे० गुणं । थीणगिद्धितियस्स जह० असंखे० गुणं । जट्ठिदि० विसे० । णिरयगइ-तिरिक्खगइणामाणं जह० असं० गुणं । जट्ठिदि० विसे० । अट्ठण्हं कसायाणं जह० असं० गु० । जट्ठिदि० विसे० । सम्मामिच्छत्तस्स जह० संखे० । जट्ठिदि० विसे० । मिच्छत्त० जह० असंखे० । जट्ठिदि० विसे० । अणंताणुबंधिचउक्कस्स जह० असंखे० गुणं । जट्ठिदि० विसे० । एवमोघदंडओ समत्तो ।

जहण्णेण सव्वमंदाणुभागं लोहसंजलणं । मायासंज० अणंतगुणं । माणसंज० अणंतगुणं । कोहसंज० अणंतगुणं । सम्मत्त० अणंतगुणं । पुरिस० अणंतगुणं । सम्मामिच्छत्त० अणंतगुणं । मणपज्जव० अणंतगुणं । दाणंतराइय० अणंतगुणं ।

असंख्यातगुणी है । निद्रा और प्रचलाकी जस्थिति संख्यातगुणी है । देवगति, वैक्रियिकशरीर, आहारकशरीर, नीचगोत्र और अयशकीर्ति; इनकी जो स्थितियां संक्रान्त होती हैं वे संख्यातगुणी हैं । औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, उच्चगोत्र, यशकीर्ति और मनुष्यगतिकी जो स्थितियां संक्रान्त होती हैं वे विशेष अधिक हैं । इन सबकी जस्थितियां विशेष अधिक हैं । साता और असाता वेदनीयकी जो जघन्य स्थितियां संक्रान्त होती हैं वे विशेष अधिक हैं । जस्थिति विशेष अधिक है । संज्वलन मायाकी उक्त जघन्य स्थितियां संख्यातगुणी हैं । जस्थिति विशेष अधिक है । संज्वलन मानकी वे जघन्य स्थितियां विशेष अधिक हैं । जस्थिति विशेष अधिक है । संज्वलन क्रोधकी वे जघन्य स्थितियां विशेष अधिक हैं । जस्थिति विशेष अधिक है । पुरुषवेदकी वे जघन्य स्थितियां संख्यातगुणी हैं । जस्थिति विशेष अधिक है । स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी वे जघन्य स्थितियां असंख्यातगुणी हैं । स्त्यानगृद्धित्रयकी वे जघन्य स्थितियां असंख्यातगुणी हैं । जस्थिति विशेष अधिक है । नरकगति और तिर्यग्गति नामकर्मोंकी वे जघन्य स्थितियां असंख्यातगुणी हैं । जस्थिति विशेष अधिक है । आठ कषायोंकी वे जघन्य स्थितियां असंख्यातगुणी हैं । जस्थिति विशेष अधिक है । सम्यग्मिथ्यात्वकी वे जघन्य स्थितियां संख्यातगुणी हैं । जस्थिति विशेष अधिक है । मिथ्यात्वकी वे जघन्य स्थितियां असंख्यातगुणी हैं । जस्थिति विशेष अधिक है । अनन्तानुबन्धिचतुष्ककी वे जघन्य स्थितियां असंख्यातगुणी हैं । जस्थिति विशेष अधिक है । इस प्रकार ओघदण्डक समाप्त हुआ ।

जघन्यकी अपेक्षा सबसे मंद अनुभागवाला संज्वलन लोभ है । संज्वलन माया अनन्तगुणी है । संज्वलन मान अनन्तगुणा है । संज्वलन क्रोध अनन्तगुणा है । सम्यक्त्व अनन्तगुणा है । पुरुषवेद अनन्तगुणा है । सम्यग्मिथ्यात्व अनन्तगुणा है । मनःपर्ययज्ञानावरण अनन्तगुणा है ।

१ अ-ताप्रत्योः 'विसेसाहिओ' इति पाठः ।

ओहिणाण० अणंतगुणं । ओहिदंस० अणंतगुणं । लाहंतराइयाणं अणंतगुणं[1] । सुद० अचक्खु० भोगंतराइयाणं अणंतगुणं । चक्खु० अणंतगुणं । मदिआवरण-परिभोगंतराइयाणं अणंतगुणं । केवलणाण-केवलदंसणावरण-वीरियंतराइयाणं अणंतगुणं । पयला० अणंतगुणं । णिद्दा० अणंतगुणं । हस्स० अणंतगुणं । रदि० अणंतगुणं । दुगुंछ० अणंतगुणं । भय० अणंतगुणं । सोग० अणंतगुणं । अरदीए० अणंतगुणं । इत्थि० अणंतगुणं । णवुंस० अणंतगुणं । अणंताणुबंधिमाणे० अणंतगुणं । कोहे० विसेसाहियं । मायाए० विसे० । लोहे० विसे० । वेउव्विय० अणंतगुणं । तिरिक्खाउअम्मि० अणंतगुणं । मणुसाउ० अणंतगुणं । णिरयगइ० अणंतगुणं । मणुसगइ० अणंतगुणं । देवगइ० अणंतगुणं । उच्चागोद० अणंतगुणं । णिरयाउ० अणंतगुणं । देवाउ० अणंतगुणं । ओरालिय० अणंतगुणं । तेजइय० अणंतगुणं । कम्मइय० अणंतगुणं । तिरिक्खगइ० अणंतगुणं । णीचागोद०अजसकित्तीओ अणंतगुणं । पयलापयला० अणंतगुणं । णिद्दाणिद्दा० अणंतगुणं । थीणगिद्धि० अणंतगुणं । अपच्चक्खाणमाणे० अणतगुणं । कोहे० विसेसाहियं । मायाए० विसे० । लोहे० विसे० । पच्चक्खाणमाणे० अणंतगुणं । कोहे० विसे० । मायाए विसे० । लोहे विसे० । असाद० अणंतगुणं ।

दानान्तराय अनन्तगुणा है । अवधिज्ञानावरण अनन्तगुणा है । अवधिदर्शनावरण अनन्तगुणा है । लाभान्तराय अनन्तगुणा है । श्रुतज्ञानावरण, अचक्षुदर्शनावरण और भोगान्तराय अनन्तगुणे हैं । चक्षुदर्शनावरण अनन्तगुणा है । मतिज्ञानावरण और परिभोगान्तराय अन्तगुणे है । केवलज्ञानावरण, केवलदर्शनावारण और वीर्यान्तराय अनन्तगुणे हैं । प्रचला अनन्तगुणी है । निद्रा अनन्तगुणी है । हास्य अनन्तगुणा है । रति अनन्तगुणी है । जुगुप्सा अनन्तगुणी है । भय अनन्तगुणा है । शोक अनन्तगुणा । अरति अनन्तगुणी है । स्त्रीवेद अनन्तगुणा है । नपुंसकवेद अनन्तगुणा है । अनन्तानुबन्धी मान अनन्तगुणा है । अनन्तानुबन्धी क्रोध विशेष अधिक है । अनन्तानुबन्धी माया विशेष अधिक है । अनन्तानुबन्धी लोभ विशेप अधिक है । वैक्रियिकशरीर अनन्तगुणा है । तिर्यगायु अनन्तगुणी है । मनुष्यायु अनन्तगुणी है । नरकगति अनन्तगुणी है । मनुष्यगति अनन्तगुणी है । देवगति अनन्तगुणी है । उच्चगोत्र अनन्तगुणा है । नारकायु अनन्तगुणी । देवायु अनन्तगुणी है । औदारिकशरीर अनन्तगुणा है । तैजसशरीर अनन्तगुणा है । कार्मणशरीर अनन्तगुणा है । तिर्यग्गति अनन्तगुणी है । नीचगोत्र और अयशकीर्ति अनन्तगुणे हैं । प्रचलाप्रचला अनन्तगुणी है । निद्रानिद्रा अनन्तगुणी है । स्त्यानगृद्धि अनन्तगुणी है । अप्रत्याख्यानावरण मान अनन्तगुणा है । अप्रत्याख्यानावरण क्रोध विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण माया विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण लोभ विशेप अधिक है । प्रत्याख्यानावरण मान अनन्तगुणा है । प्रत्याख्यानावारण क्रोध विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण माया विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण लोभ विशेष अधिक

---

१ ताप्रतौ 'माणसंजलणं० कोहसंजलणं० सम्मत्त० पुरिस० सम्मामिच्छत्त० मणपज्जव० दाणंतराइय० ओहिणाण० ओहिदंसण० लाहंतराइयाणं अणंतगुणं ।' इति पाठः ।

मिच्छत्ते० अणंतगुणं। जस० अणंतगुणं। साद० अणंतगुणं। आहार० अणंतगुणं। एवमोघदंडओ समत्तो।

जहण्णट्ठिदिसंकमे उक्कस्से वा जं पदेसग्गं सम्मत्ते[1] संकामिज्जदि तं थोवं। केवलणाणावरणे असंखेज्जगुणं। केवलदंसणावरणे विसेसाहियं। पयला० असंखे० गुणा। णिद्दा० विसे०। अपच्चक्खाणमाणे असंखे० गुणं। कोहे विसे०। मायाए विसे०। लोहे विसे०। पच्चक्खाणमाणे विसे०। कोहे विसे०। मायाए विसे०। लोहे विसे०। [2]मिच्छत्ते विसे०। सम्मामिच्छत्ते विसे०। पयलापयला० संखे० गुणं। णिद्दाणिद्दा० विसे०। थीणगिद्धि० विसे०। आहार० अणंतगुणं। जसकित्ति० असंखे० गुणं। वेउव्विय० संखे० गुणं। ओरालिय० विसे०। तेज० विसे०। कम्मइय० विसे०। देवगइ० संखे० गुणं। मणुसगइ० विसे०। साद० संखे० गुणं। लोभसंजलण० संखे० गुणं। दाणंतराइय० विसे०। एवं विसेसाहियं ताव णेदव्वं जाव विरियंतराइयं ति। मणपज्जव० विसे०। ओहिणाण० विसे०। सुद० विसे०। मदि० विसे०।

है। असातावेदनीय अनन्तगुणा है। मिथ्यात्व अनन्तगुणा है। यशकीर्ति अनन्तगुणी है। है। सातावेदनीय अनन्तगुणा है। आहारशरीर अनन्तगुणा है। इस प्रकार ओघदण्डक समाप्त हुआ।

जघन्य स्थितिसंक्रम अथवा उत्कृष्ट स्थितिसंक्रममें जो प्रदेशाग्र सम्यक्त्व प्रकृतिमें संक्रान्त कराया जाता है वह स्तोक है। केवलज्ञानावरणमें असंख्यातगुणा है। केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। प्रचलामें असंख्यातगुणा है। निद्रामें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है। मिथ्यात्वमें विशेष अधिक है। सम्यग्मिथ्यात्वमें विशेष अधिक है। प्रचलाप्रचलामें संख्यातगुणा है। निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है। स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है। आहारशरीरमें अनन्तगुणा है। यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है। वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है। औदारिकशरीरमें विशेष अधिक है। तैजसशरीरमें विशेष अधिक है। कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है। देवगतिमें संख्यातगुणा है। मनुष्यगतिमें विशेष अधिक है। सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। संज्वलन लोभमें संख्यातगुणा है। दानान्तरायमें विशेष अधिक है। इस प्रकार वीर्यान्तराय तक विशेष अधिक क्रमसे ले जाना चाहिये। आगे मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिदर्शना-

---

१ अ-काप्रत्योः 'सम्मत्तं' इति पाठः। २ अप्रतावतः प्राक् 'अपचक्खाणमाणे विसे०, कोहे विसे०, मायाए विसे०, लोहे विसे०' इत्यधिकः पाठोऽस्ति, ताप्रतावपि सः [ ] कोष्ठकान्तर्गतोऽस्ति।

ओहिदंसण० विसे० । अचक्खु० विसे० । चक्खु० विसे० । उच्चागोद० संखेज्जगुणं । णिरयगइ० असंखे० गुणं । जसकित्ति० असंखे० गुणं । असादे० संखे० गुणं । णीचागोदे० विसे० । तिरिक्खगदीए० असंखे० गुणं । हस्से० संखे० गुणं । रदीए० विसेसाहियं । इत्थि संखे[1]० । सोगे० विसे० । अरदि० विसे० । णवुंस० विसे० । दुगुंछ० विसे० । भय० विसे० । पुरिस० संखे० गुणं । कोह० संखे० गुणं । लोह० संखे० गुणं । माण० विसे० । माय० विसेसाहियं । एवमोघदंडओ समत्तो ।

णिरयगदीए जं पदेसग्गं संकामिज्जदि सम्मत्ते तं थोवं । सम्मामिच्छत्ते० असंखे० गुणं । अपच्चक्खाणमाणे० असंखे० गुणं । कोहे० विसे० । मायाए० विसे० । लोहे० विसे० । पच्चक्खाणमाणे० विसे० । कोहे० विसे० । मायाए० विसे० । लोहे० विसे० । केवलणाणा० विसे० । पयला० विसे० । णिद्दा० विसे० । पयलापयला० विसे० । णिद्दाणिद्दा० विसे० । थीणगिद्धि० विसे० । केवलदंस० विसे० । मिच्छत्ते० असंखे० गुणं । अणंताणुबंधिमाणे० असंखे० गुणं । कोहे० विसे० । मायाए० विसे० । लोहे० विसे० । णिरयगदीए० अणंतगुणं । वेउव्विय० असंखे० गुणं । देवगइ० संखे० गुणं ।

वरणमें विशेष अधिक है । अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । उच्चगोत्रमें संख्यातगुणा है । नरकगतिमें असंख्यातगुणा है । यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है । असातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । नीचगोत्रमें विशेष अधिक है । तिर्यग्गतिमें असंख्यातगुणा है । हास्यमें संख्यातगुणा है । रतिमें विशेष अधिक है । स्त्रीवेदमें संख्यातगुणा है । शोकमें विशेष अधिक है । अरतिमें विशेष अधिक है । नपुंसकवेदमें विशेष अधिक है । जुगुप्सामें विशेष अधिक है । भयमें विशेष अधिक है । पुरुषवेदमें संख्यातगुणा है । क्रोधमें संख्यातगुणा है । लोभमें संख्यातगुणा है । मानमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । इस प्रकार ओघदण्डक समाप्त हुआ ।

नरकगतिमें जो प्रदेशाग्र सम्यक्त्व प्रकृतिमें संक्रान्त होता है वह स्तोक है । सम्यग्मिथ्यात्वमें उससे असंख्यातगुणा है । अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है । अप्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है । केवलज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । प्रचलामें विशेष अधिक है । निद्रामें विशेष अधिक है । प्रचलाप्रचलामें विशेष अधिक है । निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है । स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है । केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है । अनन्तानुबन्धी मानमें असंख्यातगुणा है । अनन्तानुबन्धी क्रोधमें विशेष अधिक है । अनन्तानुबन्धी मायामें विशेष अधिक है । अनन्तानुबन्धी लोभमें विशेष अधिक है । नरकगतिमें अनन्तगुणा है । वैक्रियिकशरीरमें असंख्यातगुणा है । देवगतिमें संख्यातगुणा है । आहार-

---

१ का-मप्रतिपाठोऽयम् । अ-ताप्रत्योः 'विसे०' इति पाठः ।

आहार० असंखे० गुणं। ओरालिय० संखे गुणं। तेज० विसेसाहियं। कम्मइय० विसे०। अजसकित्ति० संखेज्जगुणं। तिरिक्खगई० विसे०। मणुसगई० विसे०। हस्से० संखे० गुणं। रदि० विसे०। साद० संखे० गुणं। इत्थि० संखे० गुणं। सोग० विसे०। अरदि० विसे०। णवुंस० विसे०। दुगुंछ० विसे०। भय० विसे०। पुरिस० विसे०। माणसंजलण० विसे०। कोह० विसे०। मायाए० विसे०। लोह० विसे०। दाणंतराइय० विसे०। एवं विसेसाहियकमेण णेदव्वं जाव विरियंतराइयं ति। मणपज्ज० विसे०। ओहिणाण० विसे०। सुद० विसे०। मदि विसे०। ओहिदंसण० विसे०। अचक्खु० विसे०। चक्खु० विसे०। असाद० संखे० गुणं। उच्चागोद० विसे०। णीचागोद० विसे०। एवं णिरयगइदंडओ समत्तो।

एवं देवगदीए वि०[1]। तिरिक्खगदीए विसेसो—[2]उक्कस्सेण जं पदेसग्गं संकामिज्जदि सम्मत्ते तं थोवं। सम्मामिच्छत्ते० संखे० गुणं। अपच्चक्खाणमाणे० असंखे० गुणं। कोहे० विसे०। मायाए० विसे०। लोहे० विसे०। पच्चक्खाणमाणे० विसे०। कोहे० विसे०। मायाए० विसे०। लोहे० विसे०। केवलणाण० विसे०। पयला० विसे०।

शरीरमें असंख्यातगुणा है। औदारिकशरीरमें संख्यातगुणा है। तैजसशरीरमें विशेष अधिक है। कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है। अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है। तिर्यग्गतिमें विशेष अधिक है। मनुष्यगतिमें विशेष अधिक है। हास्यमें संख्यातगुणा है। रतिमें विशेष अधिक है। सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। स्त्रीवेदमें संख्यातगुणा है। शोकमें विशेष अधिक है। अरतिमें विशेष अधिक है। नपुंसकवेदमें विशेष अधिक है। जुगुप्सामें विशेष अधिक है। भयमें विशेष अधिक है। पुरुषवेदमें विशेष अधिक है। संज्वलन मानमें विशेष अधिक है। संज्वलन क्रोधमें विशेष अधिक है। संज्वलन मायामें विशेष अधिक है। संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है। दानान्तरायमें विशेष अधिक है। इस प्रकार वीर्यान्तराय तक विशेषाधिक-क्रमसे ले जाना चाहिये। मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधि-दर्शनावरणमें विशेष अधिक है। अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। असातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। उच्चगोत्रमें विशेष अधिक है। नीचगोत्रमें विशेष अधिक है। इस प्रकार नरकगतिदण्डक समाप्त हुआ।

इसी प्रकार प्रकृत प्ररूपणा देवगतिमें भी करना चाहिये। तिर्यग्गतिमें विशेषता है—उत्कर्षसे जो प्रदेशाग्र सम्यक्त्वमें संक्रान्त होता है वह स्तोक है। सम्यग्मिथ्यात्वमें संख्यातगुणा है। अप्रत्या-ख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है। अप्रत्या-ख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्याना-वरण मानमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है। केवलज्ञानावरणमें विशेष

---

१ काप्रतौ 'वि' इति पाठः। २ अ-ताप्रत्योः 'वि०' इति पाठः।

णिद्दा० विसे० । पयलापयला० विसे० । णिद्दाणिद्दा० विसे० । थीणगिद्धि० विसे० । केवलदंसणा० विसे० । मिच्छत्ते० असंखे० गुणं । अणंताणुबंधिमाणे० असंखे० गुणं । कोहे० विसे० । मायाए० विसे० । लोहे० विसे० । णिरयगईए० अणंतगुणं । आहार० असंखे० गुणं । जसगित्ति० असंखे० गुणं । वेउव्विय० संखे० गुणं । ओरालिय० विसे० । तेज० विसे० । कम्मइय० विसे० । अजसकित्ति० संखे० गुणं । देवगइ० विसे० । तिरिक्खगइ० विसे० । मणुसगइ० विसे० । हस्स० संखे० गुणं । रदि० विसे० । साद० संखे० गुणं । णवुंसयवेद० संखे० गुणं । सोगे० विसे० । अरदि० विसे० । णवुंस० (१) विसे० । दुगुंछ० विसे० । भय० विसे० । पुरिस० विसे० । माण-संजलण० विसे० । कोह० विसे० । माया० विसे० । लोह० विसे० । दाणंतराइय० विसे० । लाहंतराइय० विसे० । एवं विसेसाहियकमेण णेदव्वं जाव विरियंतराइयं ति । मणपज्ज० विसे० । ओहिणाण० विसे० । सुद० विसे० । मदि० विसे० । ओहिदंसण० विसे० । अचक्खु० विसे० । चक्खु० विसे० । साद० संखे० गुणं । उच्चागोदे० विसे० । णीचागोद० विसे० । एवं तिरिक्खगइदंडओ समत्तो । मणुसेसु ओघ-

---

अधिक है । प्रचलामें विशेष अधिक है । निद्रामें विशेष अधिक है । प्रचलाप्रचलामें विशेष अधिक है । निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है । स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है । केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है । अनन्तानुबन्धी मानमें असंख्यातगुणा है । अनन्तानुबन्धी क्रोधमें विशेष अधिक है । अनन्तानुबन्धी मायामें विशेष अधिक है । अनन्तानुबन्धी लोभमें विशेष अधिक है । नरकगतिमें अनन्तगुणा है । आहारशरीरमें असंख्यातगुणा है । यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है । वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है । औदारिकशरीरमें विशेष अधिक है । तैजसशरीरमें विशेष अधिक है । कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है । अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है । देवगतिमें विशेष अधिक है । तिर्यग्गतिमें विशेष अधिक है । मनुष्यगतिमें विशेष अधिक है । हास्यमें संख्यातगुणा है । रतिमें विशेष अधिक है । साता-वेदनीयमें संख्यातगुणा है । नपुंसकवेदमें संख्यातगुणा है । शोकमें विशेष अधिक है । अरतिमें विशेष अधिक है । नपुंसकवेदमें विशेष अधिक है । जुगुप्सामें विशेष अधिक है । भयमें विशेष अधिक है । पुरुषवेदमें विशेष अधिक है । संज्वलन मानमें विशेष अधिक है । संज्वलन क्रोधमें विशेष अधिक है । संज्वलन मायामें विशेष अधिक है । संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है । दानान्तरायमें विशेष अधिक है । लाभान्तरायमें विशेष अधिक है । इस प्रकार विशेषाधिकक्रमसे वीर्यान्तराय तक ले जाना चाहिये । मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । उच्चगोत्रमें विशेष अधिक है । नीचगोत्रमें विशेष अधिक है । इस प्रकार तिर्यग्गतिदण्डक समाप्त हुआ । मनुष्योंमें

---

१ ताप्रतौ 'णवुंसय (इत्थि) वेदं०' इति पाठः ।

दंडओ समत्तो (१)।

एइंदिएसु उक्कस्सेण जं पदेसग्गं संकामिज्जदि सम्मत्ते तं थोवं। सम्मामिच्छत्ते० असंखे० गुणं। अपच्चक्खाणमाणे० असंखे० गुणं। कोहे० विसे०। मायाए० विसे०। लोहे० विसे०। पच्चक्खाणमाणे[1] विसे०। कोहे० विसे०। मायाए० विसे०। लोहे० विसे०[2]। केवलणाण० विसे०। पयला० विसे०। णिद्दा० विसे०। पयलापयला० विसे०। णिद्दाणिद्दा० विसे०। थीणगिद्धि० विसे०। केवलदंस० विसे०। णिरयगइ० अणंतगुणं। आहार० असंखे०। जसकित्ति० असंखे० गुणं। वेउव्विय० संखे० गुणं। ओरालिय० विसे०। तेज० विसे०। कम्मइय० विसे०। अजसकित्ति० संखे० गुणं। देवगइ० विसे०। तिरिक्खगइ० विसे०। मणुसगइ० विसे०। हस्स-भये[3]० संखे० गुणं। रदि० विसे०। साद० संखे० गुणं। इत्थि० संखे० गुणं। सोगे० विसे०। अरदि० विसे०। णवुंस० विसे०। दुगुंछ० विसे०। भय० विसे०। माणसंजलण० विसे०। कोहे० विसे०। मायाए० विसे०। लोहे० विसे०। दाणंतराइय० विसे०। एवं विसेसाहिय-कमेण णेदव्वं जाव विरियंतराइयं ति। मणपज्जव० विसे०। ओहिणाण० विसे०। सुद०

ओघदण्डकके समान प्ररूपणा है।

एकेन्द्रिय जीवोंमें उत्कर्षसे जो प्रदेशाग्र सम्यक्त्व प्रकृतिमें संक्रान्त होता है वह स्तोक है। सम्यग्मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है। अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है। केवलज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। प्रचलामें विशेष अधिक है। निद्रामें विशेष अधिक है। प्रचलाप्रचलामें विशेष अधिक है। निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है। स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है। केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। नरकगतिमें अनन्तगुणा है। आहारकशरीरमें असंख्यातगुणा है। यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है। वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है। औदारिकशरीरमें विशेष अधिक है। तैजसशरीरमें विशेष अधिक है। कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है। अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है। देवगतिमें विशेष अधिक है। तिर्यग्गतिमें विशेष अधिक है। मनुष्यगतिमें विशेष अधिक है। हास्य और भयमें संख्यातगुणा है। रतिमें विशेष अधिक है। सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। स्त्रीवेदमें संख्यातगुणा है। शोकमें विशेष अधिक है। अरतिमें विशेष अधिक है। नपुंसकवेदमें विशेष अधिक है। जुगुप्सामें विशेष अधिक है। भयमें विशेष अधिक है। संज्वलन मानमें विशेष अधिक है। संज्वलन क्रोधमें विशेष अधिक है। संज्वलन मायामें विशेष अधिक है। संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है। दानान्तरायमें विशेष अधिक है। इस प्रकार वीर्यान्तराय तक विशेष अधिक क्रमसे ले जाना चाहिये। आगे मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधि-

१ ताप्रतौ 'संजलणमाणे (पच्चक्खाणमाणे) इति पाठः। २ अतोऽग्रे अ-काप्रत्योः 'संजलणमाणे० विसे० कोहे० विसे० मायाए० विसे० लोहे० विसे०' इत्येतावनाधिकः पाठोऽस्ति। ३ काप्रतौ 'हस्से० भय०', ताप्रतौ 'हस्से [भय०]' इति पाठः।

विसे० । मदि० विसे० । ओहिदंसण० विसे० । अचक्खु० विसे० । चक्खु० विसे० । असाद० संखे० गुणं । उच्चागोदे० विसे० । णीचागोदे विसे० । एवमेइंदियदंडओ समत्तो ।

जहण्णेण जं पदेसग्गं सम्मत्ते संकामिज्जदि तं थोवं । सम्मामिच्छत्ते० असंखे० गुणं । मिच्छत्ते० असंखे० गुणं । अणंताणुबंधिमाणे० असंखे० गुणं । कोहे० विसे० । मायाए० विसे० । लोहे० विसे० । पयलापयला० असंखे० गुणं । णिद्दाणिद्दा० विसे० । थीणगिद्धि० विसे० । अपच्चक्खाणमाणे असंखे० गुणं । कोहे० विसे० । मायाए० विसे० । लोहे० विसे० । पच्चक्खाणमाणे० विसे० । कोहे० विसे० । मायाए० विसे० । [लोहे० विसे०]। पयला० विसे० । णिद्दा० विसे० । केवलदंसण० विसे० । णिरयगइ० अणंतगुणं । देवगइ० असंखे० गुणं । वेउव्विय० संखे० गुणं । आहार० असंखे० गुणं । मणुसगइ० संखे० गुणं । उच्चागोद० संखे० गुणं । तिरिक्खगइ० असंखे० गुणं । णवुंस० असंखे० गुणं । णीचागोद० संखे० गुणं । इत्थि० असंखे० गुणं । ओरालिय० असंखे० गुणं । कोहसंजल० असंखे० । माण० विसे० । पुरिस० विसे० । माय० विसे० । जसकित्ति० असंखे० गुणं । तेज० संखे० गुणं । कम्मइय० विसे० ।

ज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। श्रुतज्ञावरणमें विशेष अधिक है। मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। असातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। उच्चगोत्रमें विशेष अधिक है। नीचगोत्रमें विशेष अधिक है। इस प्रकार एकेन्द्रियदण्डक समाप्त हुआ।

जघन्य रूपसे जो प्रदेशाग्र सम्यक्त्व प्रकृतिमें संक्रान्त होता है वह स्तोक है। सम्यग्मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है। मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है। अनन्तानुबन्धी मानमें असंख्यातगुणा है। अनन्तानुबन्धी क्रोधमें विशेष अधिक है। अनन्तानुबन्धी मायामें विशेष अधिक है। अनन्तानुबन्धी लोभमें विशेष अधिक है। प्रचलाप्रचलामें असंख्यातगुणा है। निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है। स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है। [प्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है।] प्रचलामें विशेष अधिक है। निद्रामें विशेष अधिक है। केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। नरकगतिमें अनन्तगुणा है। देवगतिमें असंख्यातगुणा है। वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है। आहारशरीरमें असंख्यातगुणा है। मनुष्यगतिमें संख्यातगुणा है। उच्चगोत्रमें संख्यातगुणा है। तिर्यग्गतिमें असंख्यातगुणा है। नपुंसकवेदमें असंख्यातगुणा है। नीचगोत्रमें संख्यातगुणा है। स्त्रीवेदमें असंख्यातगुणा है। औदारिकशरीरमें असंख्यातगुणा है। संज्वलन क्रोधमें असंख्यातगुणा है। संज्वलन मानमें विशेष अधिक है। पुरुषवेदमें विशेष अधिक है। संज्वलन मायामें विशेष अधिक है। यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है। तैजसशरीरमें संख्यातगुणा है। कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है।

अजसकित्ति० संखे० गुणं। हस्स० संखे० गुणं। रदि० विसे०। साद० संखे० गुणं। सोगे० असंखे०। अरदि० विसे०। दुगुंछा० विसे०। भय० विसे०। लोहसंजल० विसे०। दाणंतराइय० विसे०। एवं विसेसाहियकमेण णेदव्वं जाव विरियंतराइयं ति। मणपज्जव० विसे०। ओहिणाण० विसे०। सुद० विसे०। मदि० विसे०। ओहिदंसण० विसे०। अचक्खु० विसे०। चक्खु० विसे०। असादे० संखेज्जगुणं। एवमोघदंडओ समत्तो।

णिरयगदीए जं पदेसग्गं संकामिज्जदि सम्मत्ते तं थोवं। सम्मामिच्छत्ते० असंखे० गुणं। मिच्छत्ते० असंखे० गुणं। अणंताणुबंधिमाणे० असंखे० गुणं। कोहे० विसे०। मायाए० विसे०। लोहे० विसे०। पयलापयला० असंखे० गुणं। णिद्दाणिद्दा० विसे०। थीणगिद्धि० विसे०। अपच्चक्खाणमाणे असंखे० गुणं। कोहे० विसे०। मायाए० विसे०। लोहे० विसे०। पच्चक्खाणमाणे विसे०। कोहे विसे०। मायाए विसे०। लोहे विसे०। केवलणाण० विसे०। पयला० विसे०। णिद्दा विसे०। केवलदंसण० विसे०। आहार० असंखे० गुणं[1]। देवगइ० असंखे० गुणं। मणुसगइ० संखे० गुणं। वेउव्विय० संखे० गुणं। णिरयगइ० संखे० गुणं।

अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है। हास्यमें संख्यातगुणा है। रतिमें विशेष अधिक है। सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। शोकमें असंख्यातगुणा है। अरतिमें विशेष अधिक है। जुगुप्सामें विशेष अधिक है। भयमें विशेष अधिक है। संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है। दानान्तरायमें विशेष अधिक है। इस प्रकार विशेषाधिकक्रमसे वीर्यान्तराय तक ले जाना चाहिये। मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। असातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। इस प्रकार ओघदण्डक समाप्त हुआ।

नरकगतिमें जो प्रदेशाग्र सम्यक्त्वमें संक्रान्त होता है वह स्तोक है। सम्यग्मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है। मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है। अनन्तानुबन्धी मानमें असंख्यातगुणा है। अनन्तानुबन्धी क्रोधमें विशेष अधिक है। अनन्तानुबन्धी मायामें विशेष अधिक है अनन्तानुबन्धी लोभमें विशेष अधिक है। प्रचलाप्रचलामें असंख्यातगुणा है। निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है। स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है। केवलज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। प्रचलामें विशेष अधिक है। निद्रामें विशेष अधिक है। केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। आहारशरीरमें असंख्यातगुणा है। देवगतिमें असंख्यातगुणा है। मनुष्यगतिमें संख्यातगुणा है। वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है। नरकगतिमें संख्यातगुणा है। उच्चगोत्रमें संख्यातगुणा है।

१ ताप्रतौ 'अणंतगुणा' इति पाठः।

उच्चागोद० संखे० गुणं । तिरिक्खगइ० असंखे० गुणं । इत्थि संखे० गुणं। णवुंस० संखे० गुणं । णीचागोद० संखे० गुणं । जसकित्ति० असंखे० गुणं । ओरालिय० संखे० गुणं । तेज० विसे० । कम्मइय० विसे० । अजसकित्ति संखे० गुणं । पुरिस० संखे० गुणं । हस्स संखे० गुणं । रदि० विसे० । अरदि०संखे० गुणं । सोगे० संखे० गुणं । दुगुंछा० विसे० । भय० विसे० । माणसंजलण विसे० । कोहसंजलण० विसे० । मायाए० विसे० । [लोहे० विसे० ।] दाणंतराइए० विसे० । एवं विसेसाहियकमेण णेदव्वं जाव विरियंतराइयं ति । मणपज्जव० विसे० । ओहिणाण० विसे० । सुद० विसे० । मदि० विसे० । ओहिदंस० विसे० । अचक्खु० विसे० । चक्खु० विसे० । असादे० संखे० गुणं । एवं णिरयगइदंडओ समत्तो ।

तिरिक्खेसु जं पदेसग्गं संकामिज्जदि सम्मत्ते तं थोवं । सम्मामिच्छत्ते० असंखे० गुणं । [1]मिच्छत्ते० असंखे० गुणं । अणंताणुबंधिमाणे० असंखे० गुणं । कोहे० विसे० । मायाए० विसे० । लोहे० विसेसा० । पयलापयला असंखे० गुणं । णिद्दाणिद्दा० विसे० । थीणगिद्धि० विसे० । अपच्चक्खाणमाणे० असंखे० गुणं । कोहे० विसे० । मायाए विसे० । लोहे विसे० । पच्चक्खाणमाणे विसे० । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे०

तिर्यग्गतिमें असंख्यातगुणा है । स्त्रीवेदमें संख्यातगुणा है । नपुंसकवेदमें संख्यातगुणा है । नीचगोत्रमें संख्यातगुणा है । यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है । औदारिकशरीरमें संख्यातगुणा है । तैजसशरीरमें विशेष अधिक है । कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है । अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है । पुरुषवेदमें संख्यातगुणा है । हास्यमें संख्यातगुणा है । रतिमें विशेष अधिक है । अरतिमें संख्यातगुणा है । शोकमें संख्यातगुणा है । जुगुप्सामें विशेष अधिक है । भयमें विशेष अधिक है । संज्वलन मानमें विशेष अधिक है । संज्वलन क्रोधमें विशेष अधिक है । संज्वलन मायामें विशेष अधिक है । [संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है ।] दानान्तरायमें विशेष अधिक है । इस प्रकार विशेषाधिकक्रमसे वीर्यान्तराय तक ले जाना चाहिये । आगे मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । असातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । इस प्रकार नरकगतिदण्डक समाप्त हुआ ।

तिर्यंचोंमें जो प्रदेशाग्र सम्यक्त्वमें संक्रान्त होता है वह स्तोक है । सम्यग्मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है । मिथ्यात्वमें असंख्यागुणा है । अनन्तानुबन्धी मानमें असंख्यातगुणा है । अनन्तानुबन्धी क्रोधमें विशेष अधिक है । अनन्तानुबन्धी मायामें विशेष अधिक है । अनन्तानुबन्धी लोभमें विशेष अधिक है । प्रचलाप्रचलामें असंख्यातगुणा है । निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है । स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है । अप्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण क्रोधमें

१ ताप्रतौ 'नास्तीदं वाक्यम्' इति पाठः ।

विसे० । केवलणाणावरण० विसे० । पयला० विसे० । केवलदंसण० विसे० । णिरयगइ० असंखे० गुणं[1] । देवगइ० असंखे० गुणं । वेउव्विय० संखे० गुणं । आहार० असंखे० गुणं । मणुसगइ० संखे० गुणं । उच्चागोद० संखे० गुणं । ओरालियं[2] असंखे० गुणं । तिरिक्खगई० संखे० गुणं । इत्थि० संखे० गुणं । णवुंस० संखे० गुणं । णीचागोद० संखे० गुणं । जसकित्ति० असंखे० गुणं । तेज० संखे० गुणं । कम्मइय० विसे० । अजसकित्ति० संखे० गुणं । पुरिस० संखे० गुणं । हस्स० संखे० गुणं । रदि० विसे० । सादे० संखे गुणं । सोगे० संखे० गुणं । अरदि० विसे० । दुगुंछा० विसे० । भय० विसे० । माणसंजलण० विसे० । कोहे० विसे० । मायाए० विसे० । लोहे० विसे० । दाणंतराइए० विसे० । एवं विसेसाहियकमेण णेदव्वं जाव विरियंतराइयं ति । मणपज्जव० विसे० । ओहिणाण० विसे० । सुद० विसे० । मदि० विसे० । ओहिदंसण० विसे० । अचक्खु० विसे० । चक्खु० विसे० । असादे० संखे० गुणं । एवं तिरिक्खगइदंडओ समत्तो ।

मणुसगदीए जं पदेसग्गं संकामिज्जदि सम्मत्ते तं थोवं । सम्मामिच्छत्ते० असंखे० गुणं । मिच्छत्ते० असंखे० गुणं । अणंताणुबंधिमाणे० असंखे० गुणं । कोहे० विसे० ।

विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है । केवलज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । प्रचलामें विशेष अधिक है । केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । नरकगतिमें असंख्यातगुणा है । देवगतिमें असंख्यातगुणा है । वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है । आहारशरीरमें असंख्यातगुणा है । मनुष्यगतिमें संख्यातगुणा है । उच्चगोत्रमें संख्यातगुणा है । औदारिकशरीरमें असंख्यातगुणा है । तिर्यग्गतिमें संख्यातगुणा है । स्त्रीवेदमें संख्यातगुणा है । नपुंसकवेदमें संख्यातगुणा है । नीचगोत्रमें संख्यातगुणा है । यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है । तैजसशरीरमें संख्यातगुणा है । कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है । अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है । पुरुषवेदमें संख्यातगुणा है । हास्यमें संख्यातगुणा है । रतिमें विशेष अधिक है । सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । शोकमें संख्यातगुणा है । अरतिमें विशेष अधिक है । जुगुप्सामें विशेष अधिक है । भयमें विशेष अधिक है । संज्वलन मानमें विशेष अधिक है । संज्वलन क्रोधमें विशेष अधिक है । संज्वलन मायामें विशेष अधिक है । संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है । दानान्तरायमें विशेष अधिक है । इस प्रकार विशेषाधिकक्रमसे वीर्यान्तराय तक ले जाना चाहिये । मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । आसातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । इस प्रकार तिर्यग्गतिदण्डक समाप्त हुआ ।

मनुष्यगतिमें जो प्रदेशाग्र सम्यक्त्वमें संक्रान्त होता है वह स्तोक है । सम्यग्मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है । मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है । अनन्तानुबन्धी मानमें असंख्यातगुणा है ।

१ ताप्रतौ 'अणंतगुणा' इति पाठः । २ ताप्रतौ 'उच्चागोद० संखे० । पुरिस० संखे० । ओरालि०' इति पाठः ।

मायाए० विसे० । लोहे० विसे० । पयलापयला० असंखे० गुणं । णिद्दाणिद्दा० विसे० । थीणगिद्धि० विसे० । अपच्चक्खाणमाणे० असंखे० गुणं । कोहे० विसे० । मायाए० विसे० । लोहे० विसे० । पच्चक्खाणमाणे० विसे० । कोहे० विसे० । मायाए० विसे० । लोहे० विसे० । केवलणाण० विसे० । पयला० विसे० । णिद्दा० विसे० । केवलदंसण० विसे० । णिरयगइ० अणंतगुणं । देवगइ० असंखे० गुणं । वेउव्विय० संखे० गुणं । आहार० असंखे० गुणं । तिरिक्खगइ० असंखे० गुणं । णवुंस० असंखे० गुणं । उच्चागोद० संखे० गुणं । इत्थि० असंखे० गुणं । मणुमगइ० असंखे० गुणं । ओरालि० असंखे गुणं । कोहसंजलण० असंखे० गुणं । माण० विसे० । पुरिस० विसे० । माया० विसे० । उच्चागोद० असंखे० गुणं । जसकित्ति० असंखे० गुणं । तेज० संखे० गुणं । कम्म० विसे० । अजसकित्ति० संखे० गुणं० । हस्स० संखे० गुणं । रदि० विसे० । सादे० असंखे० गुणं । सोगे० संखे० गुणं । अरदि० विसे० । दुगुंछा० विसे० । भय० विसे० । लोहसंजलण० विसे० । दाणंतराइय० विसे० । एवं विसेसाहियक्कमेण णेदव्वं जाव विरियंतराइयं ति । मणपज्ज० विसे० । ओहिणाण०

अनन्तानुबन्धी क्रोधमें विशेष अधिक है । अनन्तानुबन्धी मायामें विशेष अधिक है । अनन्तानुबन्धी लोभमें विशेष अधिक है । प्रचलाप्रचलामें असंख्यातगुणा है । निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है । स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है । अप्रत्याख्यानावरण क्रोधमे विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है । केवलज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । प्रचलामें विशेष अधिक है । निद्रामें विशेष अधिक है । केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । नरकगतिमें अनन्तगुणा है । देवगतिमें असंख्यातगुणा है । वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है । आहारकशरीरमें असंख्यातगुणा है । तिर्यग्गतिमें असंख्यातगुणा है । नपुंसकवेदमें असंख्यातगुणा है । उच्चगोत्रमें संख्यातगुणा है । स्त्रीवेदमें असंख्यातगुणा है । मनुष्यगतिमें असंख्यातगुणा है । औदारिकशरीरमें असंख्यातगुणा है । संज्वलन क्रोधमें असंख्यातगुणा है । संज्वलन मानमें विशेष अधिक है । पुरुषवेदमें विशेष अधिक है । संज्वलन मायामें विशेष अधिक है । उच्चगोत्रमें असंख्यातगुणा है । यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है । तैजसशरीरमें संख्यातगुणा है । कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है । अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है । हास्यमें संख्यातगुणा है । रतिमें विशेष अधिक है । सातावेदनीयमें असंख्यातगुणा है । शोकमें संख्यातगुणा है । अरतिमें विशेष अधिक है । जुगुप्सामें विशेष अधिक है । भयमें विशेष अधिक है । संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है । दानान्तरायमें विशेष अधिक है । इस प्रकार विशेषाधिकक्रमसे वीर्यान्तराय तक ले जाना चाहिये । मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अवधिज्ञानावरणमें

१ ताप्रतावतः प्राक् 'पयलापयला० असंखे० गुणा'''लोहे विसे०' इत्येतावानयं पाठः पुनर्मुद्रितोऽस्ति कोष्ठकस्थः ।

विसे० । सुद० विसे० । मदि० विसे० । ओहिदंसण० विसे० । अचक्खु० विसे० । चक्खु० विसे० । असाद० संखेज्जगुणं । एवं मणुसगइदंडओ समत्तो ।

देवगदीए जं पदेसग्गं संकामिज्जदि सम्मत्ते तं थोवं । सम्मामिच्छत्ते० असंखे० गुणं । मिच्छत्ते असंखे० गुणं । अणंताणुबंधिमाणे० असंखे० गुणं । कोहे० विसे० । मायाए० विसे० । लोहे० विसे० । पयलापयला० असंखे० गुणं । णिद्दाणिद्दा० विसे० । थीणगिद्धि० विसे० । अपच्चक्खाणमाणे० असंखे० गुणं । कोहे० विसे० । मायाए० विसे० । लोहे० विसे० । पच्चक्खाणमाणे० विसे० । कोहे० विसे० । मायाए० विसे० । लोहे० विसे० । केवलणाण० विसे० । पयला० विसे० । णिद्दा० विसे० । केवलदंसण० विसे० । आहार० अणंतगुणं । णिरयगइ० असंखे० गुणं । तिरिक्खगइ० असंखे० गुणं । णवुंस० संखे० गुणं । उच्चागोद० संखे० गुणं । इत्थि० असंखे० गुणं । देवगइ० असंखे० गुणं । वेउव्विय० संखे० गुणं । मणुसगइ० असंखे० गुणं । ओरालिय० असंखे० गुणं । उच्चागोद० असंखे० गुणं । जसकित्ति० असंखे० गुणं । तेज० संखे० गुणं । कम्मइय० विसे० । अजसकित्ति० संखे० गुणं । पुरिस० संखे० गुणं ।

विशेष अधिक है । श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । असातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । इस प्रकार मनुष्यगतिदण्डक समाप्त हुआ ।

देवगतिमें जो प्रदेशाग्र सम्यक्त्वमें संक्रान्त होता है वह स्तोक है । सम्यग्मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है । मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है । अनन्तानुबन्धी मानमें असंख्यातगुणा है । अनन्तानुबन्धी क्रोधमें विशेष अधिक है । अनन्तानुबन्धी मायामें विशेष अधिक है । अनन्तानुबन्धी लोभमें विशेष अधिक है । प्रचलाप्रचलामें असंख्यातगुणा है । निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है । स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है । अप्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है । केवलज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । प्रचलामें विशेष अधिक है । निद्रामें विशेष अधिक है । केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । आहारकशरीरमें अनन्तगुणा है । नरकगतिमें असंख्यातगुणा है । तिर्यग्गतिमें असंख्यातगुणा है । नपुंसकवेदमें संख्यातगुणा है । उच्चगोत्रमें संख्यातगुणा है । स्त्रीवेदमें असंख्यातगुणा है । देवगतिमें असंख्यातगुणा है । वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है । मनुष्यगतिमें असंख्यातगुणा है । औदारिकशरीरमें असंख्यातगुणा है । उच्चगोत्रमें असंख्यातगुणा है । यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है । तैजसशरीरमें संख्यातगुणा है । कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है । अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है । पुरुषवेदमें संख्यातगुणा है । हास्यमें संख्यातगुणा है । रतिमें

हस्स० संखे० गुणं। रदि० विसे०। साद० संखे० गुणं। सोगे० संखे० गुणं। अरदि० विसे०। दुगुंछ० विसे०। भय० विसे०। कोहे० विसे०। माणे० विसे०। लोहे० विसे०। मायाए० विसे०। दाणंतराइए० विसे०। एवं विसेसाहियकमेण णेदव्वं जाव विरियंतराइयं ति। मणपज्जव० विसे०। ओहिणाण० विसे०। सुद० विसे०। मदि० विसे०। ओहिदंसण० विसे०। अचक्खु० विसे०। चक्खु० विसे०। असाद० संखे० गुणं। एवं देवगइदंडओ समत्तो।

[एइंदिएसु] जं पदेसग्गं संकामिज्जदि सम्मत्ते तं थोवं। सम्मामिच्छत्ते असंखे० गुणं। अणंताणुबंधिमाणे० असंखे० गुणं। कोहे० विसे०। मायाए० विसे०। लोहे० विसे०। अपच्चक्खाणमाणे० असंखे० गुणं। कोहे० विसे०। मायाए० विसे०। लोहे० विसे०। पच्चक्खाणमाणे० विसे०। कोहे० विसे०। मायाए विसे०। लोहे० विसे०। केवलणाण० विसे०। पयला० विसे०। णिद्दा०[2] विसे०। पयलापयला० विसे०। णिद्दाणिद्दा० विसे०। थीणगिद्धि० विसे०। केवलदंसणा० विसे०। णिरयगई० अणंत-

---

विशेष अधिक है। सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। शोकमें संख्यातगुणा है। अरतिमें विशेष अधिक है। जुगुप्सामें विशेष अधिक है। भयमें विशेष अधिक है। [संज्वलन] क्रोधमें विशेष अधिक है। संज्वलन मानमें विशेष अधिक है। संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है। संज्वलन मायामें विशेष अधिक है। दानान्तरायमें विशेष अधिक है। इस प्रकार विशेषाधिक-क्रमसे वीर्यान्तराय तक ले जाना चाहिये। मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधि-ज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। असातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। इस प्रकार देवगतिदण्डक समाप्त हुआ।

[एकेन्द्रिय जीवोंमें] जो प्रदेशाग्र सम्यक्त्वमें संक्रान्त होता है वह स्तोक है। सम्यग्मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है। अनन्तानुबन्धी मानमें असंख्यातगुणा है। अनन्तानुबन्धी क्रोधमें विशेष अधिक है। अनन्तानुबन्धी मायामें विशेष अधिक है। अनन्तानुबन्धी लोभमें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है। अप्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण क्रोधमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मायामें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण लोभमें विशेष अधिक है। केवलज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। प्रचलामें विशेष अधिक है। निद्रामें विशेष अधिक है। प्रचलाप्रचलामें विशेष अधिक है। निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है। स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है। केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। नरकगतिमें अनन्तगुणा है। देवगतिमें

---

१ ताप्रतौ 'लोहे विसे०। केवलणाणे विसे०। पयला० विसे०। अपच्च-' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'लोहे विसे०। केवलणाण० विसे०। पच्चक्खाणमाणे विसे०, कोहे विसे०, माया० विसे०, लोहे० विसे०। णिद्दा०' इति पाठः।

गुणं । देवगई० असंखे० गुणं । वेउव्विय० संखे० गुणं । आहार० असंखे० गुणं । मणुसगई० असंखे० गुणं । उच्चागोदे० संखे० गुणं । जसकित्ति० असंखे० गुणं । ओरालिय० संखे० गुणं० । तेज० विसे० । कम्म० विसे० । तिरिक्खगई० संखे० गुणं । अजसकित्ति० संखे० गुणं । णीचागोद० संखे० गुणं । हस्स० संखे० गुणं । रदि० विसे० । सादे० संखे० गुणं । सोग० संखे० गुणं । अरदि० विसे० । णवुंस० विसे० । दुगुंछ० विसे० । भय० विसेसा० । माणसंलण० विसे० । कोहे० विसे० । मायाए० विसे० । लोहे विसे० । दाणंतराइए० विसे० । एवं विसेसाहियकमेण णेदव्वं जाव विरियंतराइयं ति । मणपज्ज० विसे० । ओहिणाण० विसे० । सुद० विसे० । मदि० विसे० । ओहिदंस० विसे० । अचक्खु० विसे० । चक्खु० विसे० । असादे० संखे० गुणं । णीचागोदे० विसेसाहियं । एवमेइंदियदंडओ समत्तो । एवं पदेससंकमो समत्तो ।

लेस्सा त्ति अणियोगद्दारे तत्थ[1] इमाणि अट्ठ पदाणि । तं जहा— लेस्साणिक्खेवे १ लेस्साणयपरूवणा २ लेस्साणिरूवणा ३ सेस्सासंकमणणिव्वत्ती ४ लेस्सावण्णसमोदारो ५ लेस्सावण्णचउरंसे[2] ६ लेस्साट्ठाणपरूवणा ७ लेस्सासरीरसमोदारो चेदि ८ । एवं लेस्साणिक्खेवेत्ति समत्तमणियोगद्दारं ।

असंख्यातगुणा है। वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है। आहारकशरीरमें असंख्यातगुणा है। मनुष्यगतिमें असंख्यातगुणा है। उच्चगोत्रमें संख्यातगुणा है। यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है। औदारिकशरीरमें संख्यातगुणा है। तैजसशरीरमें विशेष अधिक है। कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है। तिर्यग्गतिमें संख्यातगुणा है। अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है। नीचगोत्रमें संख्यातगुणा है। हास्यमें संख्यातगुणा है। रतिमें विशेष अधिक है। सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। शोकमें संख्यातगुणा है। अरतिमें विशेष अधिक है। नपुंसकवेदमें विशेष अधिक है। जुगुप्सामें विशेष अधिक है। भयमें विशेष अधिक है। संज्वलन मानमें विशेष अधिक है। संज्वलन क्रोधमें विशेष अधिक है। संज्वलन मायामें विशेष अधिक है। संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है। दानान्तरायमें विशेष अधिक है। इस प्रकार विशेष अधिक क्रमसे वीर्यान्तराय तक ले जाना चाहिये। आगे मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। असातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। नीचगोत्रमें विशेष अधिक है। इस प्रकार एकेन्द्रियदण्डक समाप्त हुआ। इस प्रकार प्रदेशसंक्रम समाप्त हुआ।

लेश्या अनुयोगद्वारमें वहां ये आठ पद हैं। वे ये हैं— १ लेश्यानिक्षेप, २ लेश्यानयप्ररूपणा, ३ लेश्यानिरूपणा, ४ लेश्यासंक्रमणनिर्वृत्ति, ५ लेश्यावर्णसमवतार, ६ लेश्यावर्णचतुरंश, ७ लेश्यास्थानप्ररूपणा और ८ लेश्याशरीरसमवतार। इस प्रकार लेश्यानिक्षेप अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

१ ताप्रतौ 'तस्स' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'लेस्साअंतरविहाणे' इति पाठः।

लेस्सापरिणामे त्ति अणिओगद्दारे दस वित्थरपदाणि। तं जहा— लेस्सापरिणामे १ लेस्सापच्चयविहाणे २ लेस्सापदविहाणे ३ लेस्सासामित्तविहाणे ४ लेस्साकालविहाणे ५ लेस्साअंतरविहाणे ६ लेस्सातिव्व-मंददाए ७ लेस्साट्ठाणपरूवणा ८ लेस्साट्ठाणाणं अप्पाबहुअं ९ लेस्सागइसमोदारो १० । एवं लेस्सापरिणामे त्ति सम्मत्तमणिओगद्दारं।

लेस्साकम्मे त्ति अणिओगद्दारे पंचविधियपदाणि । तं जहा— लेस्सासंकमे १ लेस्साट्ठाणसंकमे २ लेस्साट्ठाणप्पाबहुए ३ लेस्साअद्धासमोदारे ४ लेस्साअद्धासंकमे ५ । किण्हलेस्सादो संकिलेसंतो अण्णलेस्सं ण संकमदि, विसुज्झंतो सट्ठाणे छट्ठाणपदिदाणि ओसरदि, णीलेलस्सं[1] वा संकमदि[2], ठाणे अणंतगुणहीणे पददि । णीलादो संकिलिस्संतो सट्ठाणे छट्ठाणपदिदाणि ओसरदि, किण्णलेस्सं संकमदि[2] ठाणे अणंतगुणे; तदो विसुज्झंतो सट्ठाणे छट्ठाणपदिदाणि ओसरइ, काउं वा संकमदि ट्ठाणे अणंतगुणहीणे । काउलेस्सादो[3] संकिलेसंतो सट्ठाणे छट्ठाणपदिदाणि ओसरइ[4], णीललेस्सं वा संकमदि[5] ट्ठाणे अणंतगुणे; विसुज्झंतो सट्ठाणे ओसरदि छट्ठाणपदिदाणि, तेउं वा संकमदि ट्ठाणे अणंतगुणहीणे। तेउलेस्सादो संकिलेसंतो[6] सट्ठाणे छट्ठाणपदिदाणि ओसरदि, काउं वा[7] संकमदि ट्ठाणे

लेश्यापरिणाम अनुयोगद्वारमें दस विस्तारपद हैं। वे ये हैं— १ लेश्यापरिणाम, २ लेश्याप्रत्ययविधान, ३ लेश्यापदविधान, ४ लेश्यास्वामित्वविधान, ५ लेश्याकालविधान, ६ लेश्याअन्तरविधान, ७ लेश्यातीव्र-मंदता, ८ लेश्यास्थानप्ररूपणा, ९ लेश्यास्थानोंका अल्पबहुत्व और १० लेश्यागतिसमवतार। इस प्रकार लेश्यापरिणाम अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

लेश्याकर्म अनुयोगद्वारमें पंचविधिक पद हैं। वे ये हैं— १ लेश्यासंक्रम, २ लेश्यास्थानसंक्रम, ३ लेश्यास्थानअल्पबहुत्व, ४ लेश्याद्धासमवतार और ५ लेश्याद्धासंक्रम। कृष्णलेश्यासे संक्लेशको प्राप्त हुआ जीव अन्य लेश्यामें संक्रमण नहीं करता, उससे विशुद्धिको प्राप्त होकर स्वस्थानमें छह स्थानोंमें पड़ता है अथवा नीललेश्यामें संक्रमण करता है— अर्थात् अनन्तगुणे हीन नीललेश्या रूप परस्थानमें जाता है। नीललेश्यासे संक्लेशको प्राप्त होकर स्वस्थानमें छह स्थानोंमें नीचे गिरता है अथवा अनन्तगुणे परस्थानमें कृष्णलेश्यामें संक्रमण करता है। उससे विशुद्धिको प्राप्त होता हुआ स्वस्थानमें छह स्थानोंमें गिरता है, अथवा अनन्तगुणी हीन परस्थानभूत कापोतलेश्यामें संक्रमण करता है। कापोतलेश्यासे संक्लेशको प्राप्त होकर स्वस्थानमें छह स्थानोंमें नीचे पड़ता है, अथवा अनन्तगुणे परस्थानमें नीललेश्यामें संक्रमण करता है। उससे विशुद्धिको प्राप्त होता हुआ स्वस्थानमें छह स्थानोंमें गिरता है, अथवा अनन्तगुणी हीन परस्थानभूत तेजलेश्यामें संक्रमण करता है।

तेजलेश्यासे संक्लेशको प्राप्त होकर स्वस्थानमें छह स्थानोंमें नीचे गिरता है, अथवा अनन्तगुणे परस्थानमें कापोतलेश्यामें संक्रमण करता है। उससे विशुद्धिको प्राप्त होता हुआ स्वस्थानमें

१ ताप्रतौ 'लेस्सावण्णचउरंसे' इति पाठः। २ अ-काप्रत्योः 'संकमेदि' इति पाठः। ३ अप्रतौ 'उक्कस्सादो', काप्रतौ 'उस्सासादो', ताप्रतौ 'उस्सादो (काउलेस्सादो)' इति पाठः। ४ अ-काप्रत्योः 'अइसरइ' इति पाठः। ५ अ-काप्रत्योः 'संकामदि' इति पाठः। ६ अ-काप्रत्योः 'तेउसंकमसंकिलेसंतो', ताप्रतौ तेउसंकम (लेस्सादो) संकिलेसंतो' इति पाठः। ७ ताप्रतौ 'काउलेस्सं वा' इति पाठः।

अणंतगुणे; विसुज्झंतो सट्ठाणे छट्ठाणपदिदाणि अहिसरदि, पम्माए वा संकमदि ट्ठाणे अणंतगुणे। पम्मादो संकिलिस्संतो सट्ठाणे छट्ठाणपदिदाणि ओसरइ, तेउं वा संकमदि ट्ठाणे अणंतगुणहीणे; विसुज्झंतो सट्ठाणे छट्ठाणपदिदाणि[1] ओसरदि, सुक्कं वा संकमइ ट्ठाणे अणंतगुणे। सुक्कादो संकिलिस्संतो सट्ठाणे छट्ठाणपदिदाणि ओसरइ, पम्मं वा संकमदि ट्ठाणे अणंतगुणहीणे; विसुज्झंतो ण कहिं पि संकमदि।

किण्ह-णीलाओ अप्पिदाओ कट्टु णीलाए ट्ठाणं जहण्णयं थोवं, पडिग्गहट्ठाणं[2] णीलाए जहण्णयमणंतगुणं। किण्हाए जहण्णयमणंतगुणं। किण्हाए जहण्णयं ट्ठाणं संकमट्ठाणं च अणंतगुणं। णीलाए जहण्णयं संकमट्ठाणमणंतगुणं। किण्हाए जहण्णयं पडिग्गहट्ठाणमणंतगुणं। णीलाए उक्कस्सयं पडिग्गहट्ठाणमणंतगुणं। किण्हाए उक्कस्सयं पडिग्गहट्ठाणमणंतगुणं। णीलाए उक्कस्सयं संकमट्ठाणं उक्कस्सयं संकिलेसट्ठाणं च अणंतगुणं। किण्हाए उक्कस्सयं पडिग्गहट्ठाणमणंतगुणं। किण्हाए उक्क० ट्ठाणमणंतगुणं[3]।

लेस्सट्ठाणाणि छट्ठाणपदिदाणि असंखेज्जा लोगा। तत्थ काऊए ट्ठाणाणि थोवाणि। णीलाए ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। किण्हाए ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। तेऊए ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। पम्माए ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। सुक्काए ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। एवमेसो समत्तो दंडओ।

छह स्थानोंमें ऊपर जाता है, अथवा अनन्तगुणे पद्मलेश्याके परस्थानमें संक्रमण करता है। पद्मलेश्यासे संक्लेशको प्राप्त होकर स्वस्थानमें छह स्थानोंमें नीचे गिरता है, अथवा अनन्तगुणी हीन परस्थानभूत तेजलेश्यामें संक्रमण करता है। उससे विशुद्धिको प्राप्त होता हुआ स्वस्थानमें छह स्थनोंमें ऊपर जाता है, अथवा अनन्तगुणी परस्थानभूत शुक्लेश्यामें संक्रमण करता है। शुक्लेश्यासे संक्लेशको प्राप्त होकर स्वस्थानमें छह स्थानोंमें नीचे गिरता है, अथवा अनन्तगुणी हीन परस्थानभूत पद्मलेश्यामें संक्रमण करता है। उससे विशुद्धिको प्राप्त होता हुआ कहींपर भी संक्रमण नहीं करता है।

कृष्ण और नील लेश्याओंकी विवक्षा करके नीलका जघन्य स्थान स्तोक है। नीलका जघन्य प्रतिग्रहस्थान उससे अनन्तगुणा है। कृष्णका जघन्य स्थान अनन्तगुणा है। कृष्णका जघन्य स्थान और संक्रमस्थान अनन्तगुणा है। नीलका जघन्य संक्रमस्थान अनन्तगुणा है। कृष्णका जघन्य प्रतिग्रहणस्थान अनन्तगुणा है। नीलका उत्कृष्ट प्रतिग्रहस्थान अनन्तगुणा है। कृष्णका उत्कृष्ट प्रतिग्रहस्थान अनन्तगुणा है। नीलका उत्कृष्ट संक्रमस्थान और उत्कृष्ट संक्लेशस्थान अनन्तगुणा है। कृष्णका उत्कृष्ट प्रतिग्रहस्थान अनन्तगुणा है। कृष्णका उत्कृष्ट स्थान अनन्तगुणा है।

छह स्थान पतित लेश्यास्थानोंका प्रमाण असंख्यात लोक है। उनमें कापोतलेश्याके स्थान स्तोक हैं। नीललेश्याके स्थान असंख्यातगुणे हैं। कृष्णलेश्याके स्थान असंख्यातगुणे हैं। तेजलेश्याके स्थान असंख्यातगुणे हैं। पद्मलेश्याके स्थान असंख्यातगुणे हैं। शुक्ललेश्याके स्थान असंख्यातगुणे हैं। इस प्रकार यह दण्डक समाप्त हुआ।

---

१ ताप्रतौ 'छट्ठाणपदाणि' इति पाठः। २ अ-काप्रत्योः 'पओग्गहट्ठाणं', ताप्रतौ 'पओ (डि) ग्गहट्ठाणं' इति पाठः। ३ ताप्रतौ 'किण्हाए उक्क० मणंतगुणं, किण्हाए० अणंतगुणं' इति पाठः।

तिव्व-मंददाए दंडओ— सव्वत्थोवं काऊए जहण्णयं ट्ठाणमणंतगुणं (?)। णीलाए जहण्णयं ट्ठाणमणंतगुणं। किण्हाए जहण्णयं ट्ठाणमणंतगुणं। तेऊए जहण्णयं ट्ठाणमणंतगुणं। पम्माए जहण्णयं ट्ठाणमणंतगुणं। सुक्काए जहण्णयं ट्ठाणमणंतगुणं। काऊए उक्कस्सयं ट्ठाणमणंतगुणं। णीलाए उक्कस्सयं ट्ठाणमणंतगुणं। किण्हाए उक्क० ट्ठाणमणंत०। तेऊए उक्कस्सयं ट्ठाणमणंतगुणं। पम्माए उक्कस्सयं ट्ठाणमणंतगुणं। सुक्काए उक्कस्सयं ट्ठाणमणंतगुणं। एवं तिव्व-मंददाए दंडओ समत्तो। लेस्साकम्मे[1] त्ति समत्तमणिओगद्दारं।

सादमसादे त्ति अणिओगद्दारे सव्वत्थोवमेयंतसादं[2]। एयंतअसादं संखेज्जगुणं। अणेयंतसादं असंखेज्जगुणं। अणेयंतअसादं विसेसाहियं। एसो ताव एक्को पयारो।

इमो विदिओ दंडओ। तं जहा— जं सादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तं विसेसाहियं। जं सादत्ताये बद्धं असंछुद्धं असादत्ताये[3] वेदिज्जदि तं विसेसाहियं। जमसादत्ताये बद्धं असंछुद्धं सादत्ताये[4] वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं। जमसादत्ताए बद्धं असंछुद्धं अपडिछुद्धं असादत्ताये वेदिज्जदि तं विसेसाहियं। जं

तीव्र-मंदताका दण्डक— कपोतलेश्याका जघन्य स्थान सबमें स्तोक है। नीललेश्याका जघन्य स्थान अनन्तगुणा है। कृष्णलेश्याका जघन्य स्थान अनन्तगुणा है। तेजलेश्याका जघन्य स्थान अनन्तगुणा है। पद्मलेश्याका जघन्य स्थान अनन्तगुणा है। शुक्ललेश्याका जघन्य स्थान अनन्तगुणा है। कपोतलेश्याका उत्कृष्ट स्थान अनन्तगुणा है। नीललेश्याका उत्कृष्ट स्थान अनन्तगुणा है। कृष्णलेश्याका उत्कृष्ट स्थान अनन्तगुणा है। तेजोलेश्याका उत्कृष्ट स्थान अनन्तगुणा है। पद्मलेश्याका उत्कृष्ट स्थान अनन्तगुणा है। शुक्ललेश्याका उत्कृष्ट स्थान अनन्तगुणा है। इस प्रकार तीव्र-मंदताका दण्डक समाप्त हुआ। लेश्याकर्म अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

सात-असात अनुयोगद्वारमें एकान्तसात सबमें स्तोक है। एकान्तअसात संख्यातगुणा है। अनेकान्तसात असंख्यातगुणा है। अनेकान्तअसात विशेष अधिक है। यह एक पहला प्रकार है।

यह दूसरा दण्डक है जो इस प्रकार है— जो सात स्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त और अप्रतिक्षित होता हुआ सात स्वरूपसे वेदा जाता है वह विशेष अधिक है। जो सात स्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त [और अप्रतिक्षिप्त] होता हुआ असात स्वरूपसे वेदा जाता है वह विशेष अधिक है। जो असात स्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त [और अप्रतिक्षित] होता हुआ सात स्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है। जो असातस्वरूपसे बांधा जाकर असंक्षिप्त और अप्रतिक्षिप्त होता हुआ असात स्वरूपसे वेदा जाता है वह विशेष अधिक है। जो सात स्वरूपसे

---

१ प्रतिषु 'लेस्सासंकमे' इति पाठः। २ अ-काप्रत्योः '-मेयंतसादं वा' इति पाठः। ३ ताप्रतौ 'असंछुद्धं [अपडिच्छुद्धं-] असादत्ताए' इति पाठः। ४ ताप्रतौ '-छुद्धं [अपडिच्छुद्धं-] सादत्ताये' इति पाठः।

सादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तमसंखेज्जगुणं । जं सादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिछुद्धं असादत्ताए वेदिज्जदि तं विसेसाहियं । [जमसादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिछुद्धं सादत्ताए वेदिज्जदि तं संखेज्जगुणं] । जमसादत्ताए बद्धं संछुद्धं पडिछुद्धं असादत्ताए वेदिज्जदि तं विसेसाहियं । एवं सादासादे त्ति समत्तमणियोगद्दारं ।

दीहे रहस्से[1] त्ति अणियोगद्दारे इमा मग्गणा । तं जहा— पयडिदीहं ट्ठिदिदीहं अणुभागदीहं पदेसदीहं ति चउव्विहं दीहं । एवं रहस्सं पि चउव्विहं । एदेसिमट्ठण्हं पि अप्पाबहुअपरूवणाए कदाए दीहे[2] रहस्से त्ति अणिओगद्दारं समत्तं होइ ।

भवधारणे त्ति अणिओगद्दारे इमा मग्गणा । तं जहा— कदरेण कम्मेण भवो धारिज्जदि ? आउएण कम्मेण धारिज्जदि । एत्थ अप्पाबहुअपरूवणा कायव्वा । एवं भवधारणे त्ति समत्तमणिओगद्दारं ।

पोग्गलअत्ते त्ति अणिओगद्दारे इमा गाहा मग्गिदव्वा—ममत्ति०[3]

आहारे परिभोयं परिग्गहग्गय तहा च परिणामा ।
आदेसपमाणत्ता (?) पुण अट्ठविहा पोग्गला अत्ता ॥ १ ॥
अत्ता ममुत्ति परिभोग परिग्गहणे तथा च परिणामे ।
आहारे गहणे पुण चउव्विहा पोग्गला अत्ता ॥ २ ॥

बांधा जाकर संक्षिप्त और प्रतिक्षिप्त होकर सात स्वरूपसे वेदा जाता है वह असंख्यातगुणा है । जो सात स्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त और प्रतिक्षिप्त होता हुआ असात स्वरूपसे वेदा जाता है वह विशेष अधिक है । [जो असात स्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त और प्रतिक्षिप्त होता हुआ सात स्वरूपसे वेदा जाता है वह संख्यातगुणा है ।] जो असात स्वरूपसे बांधा जाकर संक्षिप्त और प्रतिक्षिप्त होता हुआ असात स्वरूपसे वेदा जाता है वह विशेष अधिक है । इस प्रकार सातासात अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

दीर्घ-ह्रस्व अनुयोगद्वारमें यह मार्गणा है । यथा— प्रकृतिदीर्घ, स्थितिदीर्घ, अनुभागदीर्घ और प्रदेशदीर्घ इस प्रकार दीर्घ चार प्रकारका है । इसी प्रकारसे ह्रस्व भी चार प्रकारका है । इन आठोंके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा करनेपर दीर्घ-ह्रस्व अनुयोगद्वार समाप्त होता है ।

भवधारण अनुयोगद्वारमें यह मार्गणा है । यथा— किस कर्मके द्वारा भव धारण किया जाता है ? आयु कर्मके द्वारा धारण किया जाता है । यहां अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा करना चाहिये । इस प्रकार भवधारण अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

पुद्गलात्त अनुयोगद्वारमें इस गाथाकी मार्गणा करना चाहिये— ममत्ति०

आहार, परिभोग, परिग्रहगत तथा परिणामस्वरूपसे पुद्गल ग्रहण किये जाते हैं । परन्तु आदेशप्रमाणकी अपेक्षा (?) आठ प्रकारके पुद्गल ग्रहण किये जाते हैं ॥ १ ॥

ममत्व, परिभोग, परिग्रहण तथा परिणाम रूपसे चार प्रकारके पुद्गल ग्रहण होते हैं । तथा आहार और ग्रहणमें चार प्रकारके पुद्गल ग्रहण किये जाते हैं ॥ २ ॥

---

१ ताप्रतौ 'दीहरहस्से' इति पाठः । २ अ-काप्रत्योः 'अप्पाबहुअं परूवणाए कदाए दीए', ताप्रतौ 'अप्पाबहुअं परूवणाए कदा । एवं दीहे' इति पाठः । ३ ताप्रतौ 'मग्गिदव्वा ममत्ति० ।' इति पाठः ।

एत्थ एदेसिमप्पाबहुअं कायव्वं । एवं पोग्गलअत्ते त्ति समत्तमणियोगद्दारं ।

णिधत्तमणिधत्ते त्तिअणिओगद्दारे इदमट्ठपदं । तं जहा— जमोकड्डिज्जदि[1] उक्कड्डिज्जदि, परपयडिं ण संकामिज्जदि उदये ण दिज्जदि पदेसग्गं[2] तं णिधत्तं णाम । तव्विवरीयमणिधत्तं । णिधत्तं पुण पयडीए केवडिभायेण अवणिज्जदि ? पलिदोवमस्स-असंखेज्जदिभाएण पलिदोवमवग्गमूलस्स असंखेज्जदिभाएण । जा उवसामणाये मग्गणा सा चेव एत्थ वि कायव्वा । एत्थतणपदाणमप्पाबहुअपरूवणा च जाणिदूण कायव्वा । एवं णिधत्तमणिधत्ते त्ति समत्तमणिओगद्दारं ।

णिकाचिदमणिकाचिदं ति अणिओगद्दारे कधमट्ठपदं[3] ? जं पदेसग्गं ण वि ओकड्डिज्जदि [ण वि उक्कड्डिज्जदि][4] ण वि संकामिज्जदि ण वि उदए दिज्जदि तं णिकाचिदं णाम । तव्विवरीयमणिकाचिदं । तं पयडीए पलिदोवमस्स असंखे० भाग-पडिभागियं । जा उवसामणाए मग्गणा सा चेव एदेसु दोसु कायव्वा । जं पदेसग्गं गुणसेडीए दिज्जदि तं थोवं । [जं] उवसामिज्जदि पदेसग्गं तं असं० गुणं । जं णिधत्तिज्जदि तमसंखे० गुणं । जं णिकाचिज्जदि तमसंखे० गुणं । जमधापवत्तसंकमेण संकामिज्जदि तमसंखे० गुणं ।

यहां इनका अल्पबहुत्व करना चाहिये । इस प्रकार पुद्गलात्त अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

निधत्त-अनिधत्त अनुयोगद्वारमें यह अर्थपद है । यथा— जो प्रदेशाग्र अपकर्षको प्राप्त कराया जाता है और उत्कर्षको भी प्राप्त कराया जाता है, किन्तु न तो परप्रकृति रूपमें संक्रान्त किया जाता है और न उदयमें दिया जाता है उसका नाम निधत्त है । इससे विपरीत अनिधत्त होता है । निधत्त प्रकृतिके कितनेवें भागसे अपनीत किया जाता है ? वह पल्योपमके असंख्यातवें भाग व पल्योपमके वर्गमूलके असंख्यातवें भागसे अपनीत किया जाता है । जो उपशामनामें मार्गणा है वही यहां भी करना चाहिये । यहांके पदोंके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा भी जानकर करना चाहिये । इस प्रकार निधत्त-अनिधत्त अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

निकाचित-अनिकाचित अनुयोगद्वारमें अर्थपद कैसा है ? जो प्रदेशाग्र न अपकृष्ट किया जाता है, न उत्कृष्ट किया जाता है, न संक्रान्त किया जाता है, और न उदयमें भी दिया जाता है उसे निकाचित कहते हैं । इससे विपरीत अनिकाचित है । वह प्रकृतिके पल्योपमके असंख्यातवें भाग प्रतिभागवाला है । जो उपशामनामें मार्गणा है उसे ही इन दोनोंमें करना चाहिये । जो प्रदेशाग्र गुणश्रेणि रूपसे दिया जाता है वह स्तोक है । जो प्रदेशाग्र उपशान्त किया जाता है वह असंख्यातगुणा है । जो प्रदेशाग्र निधत्त स्वरूप किया जाता है वह असंख्यातगुणा है । जो निकाचित अवस्थाको प्राप्त कराया जाता है वह असंख्यातगुणा है । जो अधःप्रवृत्तसंक्रमसे संक्रमणको प्राप्त कराया जाता है वह असंख्यातगुणा है ।

---

१ प्रतिषु 'तमोकड्डिज्जदि' इति पाठः । २ प्रतिषु 'पदेसट्टं' इति पाठः । ३ प्रतिषु 'कदमट्ठपदं' इति पाठः । ४ अ-काप्रत्योः 'ओकड्डदिज्जदि', ताप्रतौ 'ओकड्डदि, [ण वि उक्कड्डदि-]' इति पाठः । अतोऽग्रे अ-काप्रत्योः पच्छिमक्खंधाणियोगद्दारान्तर्गतः 'अंतोमुहुत्त' पर्यन्तोऽयं संदर्भः स्खलितः ।

महावाचयाणं खमासमणाणं उवदेसेण सव्वत्थोवाणि कसाउदयट्ठाणाणि । ठिदिबंधअज्झवसाणट्ठाणाणि असं० गुणाणि । पदेसउदीरयअज्झवसाणट्ठाणाणि असंखे० गुणाणि । पदेससंकमणाअज्झवसाणाणि असंखे० गुणाणि । उवसामयअज्झवसा० असं० गुणाणि । णिधत्तमज्झवसाणाणि असं० गुणाणि । णिकाचणज्झवसा० असं० गुणाणि । एत्थ अणंतराणंत[र]गुणगारो असं० लोगा । एवं णिकाचिदं त्ति समत्तमणियोगद्दारं ।

कम्मट्ठिदि त्ति अणियोगद्दारे एत्थ महावाचया अज्जणंदिणो संतकम्मं करेंति[1] । महावाचया ट्ठिदिसंतकम्मं पयासंति । एवं कम्मट्ठिदि त्ति समत्तमणियोगद्दारं ।

पच्छिमक्खंधे त्ति अणियोगद्दारे तत्थ इमा मग्गणा— आउअस्स अंतोमुहुत्ते सेसे[2] तदा आवज्जिदकरणं करेदि । आवज्जिदकरणे कदे तदो केवलिसमुग्घादं करेदि— पढमसमए दंडं करेदि । ठिदीए असंखेज्जे भागे हणदि । अप्पसत्थकम्मं सव्वं अणंतभागे अणुभागखंडएण हणदि । तदो विदियसमए कवाडं करेदि । तत्थ सेसियाए ट्ठिदीए असंखेज्जे भागे हणदि । सेसस्स च[3] अणुभागस्स अणंतभागे हणदि । तदो तदियसमए मंथं[4] करेदि । तत्थ वि सेसियाए ट्ठिदीए असंखेज्जे भागे हणदि । सेसस्स च अणुभागस्स अणंतभागे हणदि । तदो चउत्थसमए लोगं पूरेदि[5] । लोगे पुण्णे एगा[6]

महावाचक क्षमाश्रमणके उपदेशके अनुसार कषायउदयस्थान सबसे स्तोक हैं। स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। प्रदेशउदीरक अध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। प्रदेशसंक्रम अध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । उपशामक अध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। निधत्त अध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। निकाचन अध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। यहां अनन्तर-अनन्तर गुणकारका प्रमाण असंख्यात लोक है । इस प्रकार निकाचित अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

कर्मस्थिति अनुयोगद्वारमें यहां महावाचक आर्यनन्दी सत्कर्मकी परूपणा करते हैं और महावाचक [नागहस्ती] स्थितिसत्कर्मको प्रकाशित करते हैं। इस प्रकार कर्मस्थिति अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

पश्चिमस्कन्ध इस अनुयोगद्वारमें वहां यह मार्गणा है— आयुके अन्तर्मुहूर्त मात्र शेष रहनेपर तब आवर्जित करणको करता है। आवर्जित करणके कर चुकनेपर फिर केवलिसमुद्घातको करता है। इसमें प्रथम समयमें दण्डसमुद्घातको करता है। स्थितिके असंख्यात बहुभागको नष्ट करता है। सब अप्रशस्त कर्मके अनन्त बहुभागको अनुभागकाण्डक द्वारा नष्ट करता है। पश्चात् द्वितीय समयमें कपाटसमुद्घातको करता है। उसमें शेष स्थितिके असंख्यात बहुभागको नष्ट करता है। शेष अनुभागके भी अनन्त बहुभागको नष्ट करता है। तत्पश्चात् तृतीय समयमें मंथ समुद्घातको करता है। उसमें भी शेष स्थितिके असंख्यात बहुभागको नष्ट करता है। शेष अनुभागके भी अनन्त बहुभागको नष्ट करता है। तदनंतर

१ अ-काप्रत्योः 'करेंति करेंति', ताप्रतौ 'करेंति [करेंति]' इति पाठः। २ ताप्रतौ '[आउअस्स-] अंतोमुहुत्तसेसे' इति पाठः। ३ प्रतिषु 'सेसं च' इति पाठः। ४ अ-काप्रत्योः 'मत्थं' इति पाठः। ५ अ-काप्रत्योः 'लोगो च्चरेदि', ताप्रतौ 'लोगो च (पू) रेदि' इति पाठः। ६ प्रतिषु 'एदा' इति पाठः।

जोगवग्गणा। सेसियाए ट्ठिदीए असंखेज्जे भागे हणदि, सेसस्स च अणुभागस्स अणंते भागे हणदि। महावाचयाणमज्जमंखुसमणाणमुवदेसेण लोगे पुण्णे आउअसमं करेदि। महावाचयाणमज्जणंदीणं उवदेसेण अंतोमुहुत्तं ट्ठवेदि संखेज्जगुणमाउआदो। एदे चत्तारिसमए अप्पसत्थस्स अणुभागस्स अणुसमओवट्टणा एयसमइयो चरिमखंडयघादो। एत्तो सेसियाये ट्ठिदीए संखेज्जभागो ट्ठिदिखंडयं हणदि। सेसस्स च अणुभागस्स अणंतभागे हणदि। एत्तो पाये अंतोमुहुत्तिया ट्ठिदिखंडयस्स अणुभागखंडयस्स उक्कीरणद्धा। तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण वचिजोगं णिरुंभदि अंतोमुहुत्तेण। एत्तो अंतोमुहुत्तं गंतूण मणजोगं णिरुंभदि[1] अंतोमुहुत्तेण। तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण उस्सास-णिस्सासं णिरुंभदि अंतोमुहुत्तेण। तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण कायजोगं णिरुंभदि अंतोमुहुत्तेण। कायजोगं च णिरुंभमाणो[2] इमाणि करणाणि करेदि— पढमसमए अपुव्वफद्दयाणि करेदि पुव्वफद्दयाणं हेट्ठदो। आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदाणमसंखेज्जदिभागमोकड्डदि। जीवपदेसाणमसंखेज्जदिभागमोकड्डदि। अंतोमुहुत्तेण कायजोगपुव्वफद्दयाणि करेदि असंखेज्जगुणहीणाए सेडीए, जीवपदेसाणमसंखेज्जगुणाए सेडीए। अपुव्वफद्दयाणि सेडीए असंखेज्जदिभागो, सेडिवग्गमूलस्स वि असंखेज्जदिभागो[3]। पुव्वफद्दयाणमसंखेज्जदिभागो अपुव्व-

---

चतुर्थ समयमें लोकपूरणसमुद्घातको करता है। लोकके पूर्ण होनेपर एक योगवर्गणा होती है। यहां शेष स्थितिके असंख्यात बहुभागको और शेष अनुभागके अनन्त बहुभागको नष्ट करता है। महावाचक आर्यमंक्षु श्रमणके उपदेशके अनुसार लोकके पूर्ण होनेपर [शेष अघाति कर्मोंको] आयु कर्मके समान करता है। किन्तु महावाचक आर्यनन्दीके उपदेशके अनुसार आयु कर्मसे संख्यातगुणी अन्तर्मुहूर्त मात्र स्थितिको स्थापित करता है। इन चार समयोंमें अप्रशस्त अनुभागकी प्रतिसमय अपवर्तना और एक समयरूप अन्तिम स्थितिकाण्डकका घात होता है। यहां शेष स्थितिके संख्यात बहुभागको नष्ट करता है। शेष अनुभागके भी अनन्त बहुभागको नष्ट करता है। यहां स्थितिकाण्डक और अनुभागकाण्डकका अन्तर्मुहूर्त मात्र उत्कीरणकाल होता है। तत्पश्चात् अन्तर्मुहूर्त जाकर अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा वचनयोगका निरोध करता है। यहांसे अन्तर्मुहूर्त जाकर अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा मनयोगका निरोध करता है। तत्पश्चात् अन्तर्मुहूर्त जाकर अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा उच्छ्वास-निःश्वासका निरोध करता है। पश्चात् अन्तर्मुहूर्त जाकर काययोगका अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा निरोध करता है। काययोगका निरोध करता हुआ इन करणों को करता है— प्रथम समयमें पूर्वस्पर्धकोंके नीचे अपूर्वस्पर्धकोंको करता है। आदि वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदोंके असंख्यातवें भागका अपकर्षण करता है। जीवप्रदेशोंके संख्यातवें भागका अपकर्षण करता है। अन्तर्मुहूर्तमें काययोगके अपूर्वस्पर्धकोंको असंख्यातगुणहीन श्रेणिसे और जीवप्रदेशोंके असंख्यातगुणी श्रेणिसे करता है। अपूर्वस्पर्धक श्रेणिके असंख्यातवें भाग और श्रेणिवर्गमूलके भी असंख्यातवें भाग होते हैं। अपूर्वस्पर्धक

---

१ ताप्रतौ 'मणजोगं पि उक्कड्डिज्जदि णिरुंभदि' इति पाठः। २ अ-काप्रत्योः 'णिरुंभमाणे' इति पाठः। ३ अप्रतौ '-मूलस्स दि असंखे० भागो', का-ताप्रत्योः 'मूलस्स असंखे० भागो' इति पाठः।

फद्दयाणि । एवमपुव्वफद्दयकरणं समत्तं ।

एत्तो अंतोमुहुत्तं किट्टीओ करेदि । अपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदाणमसंखेज्जदिभागमोकड्डदि[1] । जीवफद्दयपदेसाणं असंखेज्जदिभागमोकड्डिज्जदि । अंतोमुहुत्तं किट्टीओ करेदि असंखेज्जगुणहीणाए सेडीए । जीवपदेसे असंखेज्जगुणाए सेडीए ओकड्डदि । किट्टीदो किट्टीए गुणगारो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो । किट्टीओ सेडीए असंखेज्जदिभागो, अपुव्वफद्दयाणमसंखेज्जदिभागो । किट्टिकरणे णिट्ठिदे तदो से काले अपुव्वफद्दयाणमसंखेज्जदिभागो णस्सेदि[2] । अंतोमुहुत्तं किट्टिगदजोगो सुहुमकिरियं अपडिवादिज्झाणं[3] झायदि । किट्टीणं चरिमसमए असंखेज्जा भागा णस्संति[4] । जोगम्हि णिरुद्धम्हि आउअसमाणि कम्माणि [करेदि] । तदो अंतोमुहुत्तं सेलेसिं पडिवज्जदि, समुच्छिण्णकिरियं अणियट्टिज्झाणं झायदि । सेलेसिं पडिवज्जदि त्ति कम्मविप्पमुक्को सिद्धिं गच्छदि । एवं पच्छिमक्खंधे त्ति समत्तमणिओगद्दारं ।

अप्पाबहुए त्ति जमणिओगद्दारं एत्थ महावाचयखमासमणा संतकम्ममग्गणं[6] करेदि । उत्तरपयडिसंतकम्मेण दंडओ । तं जहा— सव्वत्थोवा आहारसंतकम्मिया[7] । सम्मत्तस्स संतकम्मिया असंखेज्जगुणा । सम्मामिच्छत्तस्स संतकम्मिया विसेसाहिया ।

पूर्वस्पर्धकोंके असंख्यातवें भाग होते हैं । इस प्रकार अपूर्वस्पर्धककरण समाप्त हुआ ।

यहां अन्तर्मुहूर्त कृष्टियोंको करता है— अपूर्वस्पर्धकोंकी आदि वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदोंके असंख्यातवें भागका अपकर्षण करता है । जीवस्पर्धकप्रदेशोंके असंख्यातवें भागका अपकर्षण करता है । अन्तर्मुहूर्त काल असंख्यातगुणी हीन श्रेणिसे कृष्टियोंको करता है । जीवप्रदेशोंका असंख्यातगुणित श्रेणिसे अपकर्षण करता है । कृष्टिसे कृष्टिके गुणकारका प्रमाण पल्योपमका असंख्यातवां भाग है । कृष्टियां श्रेणिके असंख्यातवें भाग और अपूर्वस्पर्धकोंके असंख्यातवें भाग मात्र होती हैं । कृष्टिकरणके समाप्त होनेपर तदनन्तर कालमें अपूर्वस्पर्धकों [और पूर्वस्पर्धकों] के असंख्यातव भाग का नाश करता है । अन्तर्मुहूर्त कृष्टिगतयोग होकर सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती ध्यानको ध्याता है । कृष्टियोंके अन्तिम समयमें असंख्यात बहुभाग नष्ट हो जाता है । योगके निरुद्ध हो जानेपर कर्मोंको आयुके बराबर करता है । तत्पश्चात् अन्तर्मुहूर्तमें शैलेश्यभावको प्राप्त होता है व समुच्छिन्नक्रियानिवृत्ति ध्यानको ध्याता है । शैलेश्यभावको प्राप्त हुआ कि कर्मोंसे रहित होकर सिद्धिको प्राप्त होता है । इस प्रकार पश्चिमस्कन्ध अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

जो अल्पबहुत्व अनुयोगद्वार है यहां महावाचक क्षमाश्रमण (नागहस्ती) सत्कर्ममार्गणाको करते हैं । उत्तरप्रकृतिसत्कर्मदण्डककी प्ररूपणा इस प्रकार है— आहारसत्कर्मिक सबसे स्तोक हैं । सम्यक्त्वके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । सम्यग्मिथ्यात्वके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं ।

---

१ प्रतिषु '-मोवट्टदि' इति पाठः । २ अ-काप्रत्योः '-भागो', ताप्रतौ '-भागो[णस्सदि-] ।' इति पाठः । ३ प्रतिषु 'कदं' इति पाठः । ४ अ-काप्रत्योः 'पडिवादि' इति पाठः । ५ अप्रतौ 'णसंति', काप्रतौ 'णंसंति' इति पाठः । ६ अ-काप्रत्योः 'संतकम्मं मग्गणं' इति पाठः । ७ अ-काप्रत्योः 'सव्वत्थोवं आहार० संतकम्मिय' इति पाठः ।

मणुस्साउअस्स संतकम्मिया असंखेज्जगुणा । णिरयाउअस्स संतकम्मिया असंखेज्जगुणा । देवाउअस्स संतकम्मिया असंखेज्जगुणा । देवगइसंतकम्मिया असंखेज्जगुणा[1] । णिरयगइसंतकम्मिया विसेसाहिया । वेउव्विय० अणंतगुणा । उच्चागोद० अणंतगुणा । मणुसगइ० विसे० । तिरिक्खाउअस्स० विसे० । अणंताणुबंधिउक्क० [विसे०] । मिच्छत्त० विसे० । अट्ठकसायाणं० विसे० । थीणगिद्धितिय० तिरिक्खगइणामाए० विसे० । णवुंसयवेद० विसे० । इत्थि० विसे० । छण्णोकसाय० विसे० । पुरिस० विसे० । कोहसंजल० विसे० । माणसंज० विसे० । मायासंज० विसे० । लोभसंज० विसे० । णिद्दा-पयलाणं विसे० । पंचणाणावरण-चउदंसणावरण-पंचंतराइयाणं तुल्ला विसेसाहिया । ओरालिय-तेजा-कम्मइय-अजसकित्ति-णीचगोदाणं विसे० । असादस्स० विसे० । साद० विसे० । जसकित्तीणं (?) विसे० । एवमोघदंडओ समत्तो ।

मोहणीयस्स पयडिट्ठाणसंतकम्मेण सव्वत्थोवा पंचसंतकम्मिया[2] । एक्किस्से विसेसाहिया । दोण्हं विसेसा० । तिण्हं विसे० । एक्कारसण्हं विसे० । चउण्हं० तेरसण्हं संखेज्जगुणं । वावीसाए संखे० गुणं । तेवीसाए संखे० गुणं । पंचवीसाए असंखे०

मनुष्यायुके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । नारकायुके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । देवायुके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । देवगति नामकर्मके सत्कर्मिक असंख्यातगुणे हैं । नरकगति नामकर्मके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । वैक्रियिकशरीर नामकर्मके सत्कर्मिक अनन्तगुणे हैं । उच्चगोत्रके सत्कर्मिक अनन्तगुणे हैं । मनुष्यगति नामकर्मके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । तिर्यगायुके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । अनन्तानुबन्धिचतुष्कके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । मिथ्यात्वके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । आठ कषायोंके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । स्त्यानगृद्धित्रिक और तिर्यग्गति नामकर्मके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । नपुंसकवेदके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । स्त्रीवेदके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । छह नोकषायोंके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । पुरुषवेदके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । संज्वलन क्रोधके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । संज्वलन मानके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । संज्वलन मायाके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । संज्वलन लोभके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । निद्रा और प्रचलाके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पांच अन्तरायके सत्कर्मिक तुल्य व विशेष अधिक हैं । औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, अयशकीर्ति और नीचगोत्रके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । असातावेदनीयके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । सातावेदनीयके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । यशकीर्तिके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । इस प्रकार ओघदण्डक समाप्त हुआ ।

मोहनीयके प्रकृतिस्थानसत्कर्मकी अपेक्षा पांच प्रकृतिरूप स्थानके सत्कर्मिक सबमें स्तोक हैं । एकके सत्कर्मिक विशेष अधिक हैं । दोके विशेष अधिक हैं । तीनके विशेष अधिक हैं । ग्यारहके विशेष अधिक हैं । चारके विशेष अधिक हैं । तेरहके संख्यातगुणे हैं । बाईसके

१ अ-काप्रत्योर्नोपलभ्यते वाक्यमिदम् । २ अकाप्रत्योः 'पंचसम्मत्तधम्मिया', ताप्रतौ 'पंचसम्मत्तधम्मिय (पंचसंतकम्मिया)' इति पाठः ।

गुणं। एक्कवीसाए असंखे० गुणं। चउवीसाए असंखे० गुणं। अट्ठावीसाए असंखे० गुणं। छव्वीसाए अणंतगुणं। एवमोघदंडओ समत्तो।

उत्तरपयडिट्ठिदिसंतकम्मेण जहण्णेण पंचणाणावरण-चउदंसणावरण-सादासाद-सम्मत्त-लोहसंजलण-इत्थि-णवुंसयवेद-आउचउक्क-मणुसगइ-जसकित्ति-उच्चागोद-पंचंतराइयाणं जहण्णट्ठिदी थोवा। जट्ठिदी त्तत्तिया चेव। जत्तिया [णिद्दाणिद्दा-] पयलापयला-थीणगिद्धि-णिद्दा-पयला-मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्त-बारसकसाय-णिरयगइ-तिरिक्खगइ-देवगइ-पंचसरीर-अजसकित्ति-णीचागोदाणं जहण्णिया ट्ठिदी तत्तिया चेव। जट्ठिदी संखेज्जगुणा। मायासंज० जह० असंखेज्जगुणा। माणसंजल० विसे०। कोहसंज० विसे०। पुरिसवेद० संखे० गुणा। छण्णोकसायाणं असंखे० गुणा। जट्ठिदी विसे०। एवमोघदंडओ चेव।

उत्तरपयडिअणुभागसंतकम्मेण जहण्णेण सव्वमंदाणुभागं लोहसंजलणं। माया० अणंतगुणा। माण० अणंतगुणं। कोह० अणंतगुणं। विरियंतराइय० (?) अणंतगुणं। सम्मत्त० अणंतगुणं। चक्खु० अणंतगुणं। सुदाणुभागं[4] अणंतगुणं। मदिणाण० अणंतगुणं। अचक्खु० अणंतगुणं। ओहिणाण० अणंतगुणं। ओहिदंसण० अणंतगुणं।

संख्यातगुणे हैं। तेईसके संख्यातगुणे हैं। पच्चीसके असंख्यातगुणे हैं। इक्कीसके असंख्यातगुणे हैं। चौबीसके असंख्यातगुणे हैं। अट्ठाईसके असंख्यातगुणे हैं। छब्बीसके अनन्तगुणे हैं। इस प्रकार ओघदण्डक समाप्त हुआ।

उत्तरप्रकृतिस्थितिसत्कर्मकी अपेक्षा जघन्यसे पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, साता व असाता वेदनीय, सम्यक्त्व, संज्वलन लोभ, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, चार आयु कर्म, मनुष्यगति, यशकीर्ति, उच्चगोत्र और पांच अन्तराय; इनकी जघन्य स्थिति स्तोक है। ज-स्थिति उतनी मात्र ही है। निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, निद्रा, प्रचला, मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय, नरकगति, तिर्यग्गति, देवगति, पांच शरीर, अयशकीर्ति और नीचगोत्र; इनकी जघन्य स्थिति उतनी मात्र ही है। ज-स्थिति संख्यातगुणी है। संज्वलन मायाकी जघन्य स्थिति असंख्यातगुणी है। संज्वलन मानकी जघन्य स्थिति विशेष अधिक है। संज्वलन क्रोधकी जघन्य स्थिति विशेष अधिक है। पुरुषवेदकी जघन्य स्थिति संख्यातगुणी है। छह नोकषायोंकी जघन्य स्थिति असंख्यातगुणी है। इन सबकी जस्थिति क्रमशः विशेष अधिक है। इस प्रकार ओघदण्डक ही है।

उत्तरप्रकृतिसत्कर्मकी अपेक्षा जघन्यतः सबसे मंद अनुभागवाला संज्वलन लोभ है। संज्वलन माया उससे अनन्तगुणी है। संज्वलन मान अनन्तगुणा है। संज्वलन क्रोध अनन्तगुणा है। वीर्यान्तराय (?) अनन्तगुणा है। सम्यक्त्व प्रकृति अनन्तगुणी है। चक्षुदर्शनावरण अनन्तगुणा है। श्रुतज्ञानावरण अनन्तगुणा है। मतिज्ञानावरण अनन्तगुणा है। अचक्षुदर्शनावरण अनन्तगुणा है। अवधिज्ञानावरण अनन्तगुणा है। अवधिदर्शनावरण अनन्तगुणा

१ प्रतिषु 'सम्मत्त-मणुसगइणामाए इत्थि' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'तत्तियाए' इति पाठः। ३ अ-काप्रत्योः 'जत्तिया पयलापयला', ताप्रतौ 'जत्तिया (णिद्दाणिद्दा) पयलापयला' इति पाठः। ४ अप्रतौ 'मंदाणुभागं', काप्रतौ 'मंदमंदाणुभाग', ताप्रतौ 'मंद०' इति पाठः।

परिभोग० अणंतगुणं । [भोग० अणंतगुणं ।] लाहंतराइय० अणंतगुणं । दाणंतराइय० अणंतगुणं । वीरियंतराइय० (१) अणंतगुणं । [पुरिस० अणंतगुणं ।] इत्थिवेद० अणंतगुणं । णवुंस० अणंतगुणं । मणपज्ज० अणंतगुणं । सम्मामिच्छत्त० अणंतगुणं । केवलणाण० केवलदंसणावरण० अणंतगुणं । पयला० अणंतगुणं । णिद्दा० अणंतगुणं । हस्स० अणंतगुणं । रदि० अणंतगुणं । दुगुंछा० अणंतगुणं । भय० अणंतगुणं । सोग० अणंतगुणं । अरदि० अणंतगुणं । अणंताणुबंधिमाण० अणंतगुणं । कोह० विसे० । मायाए विसे० । लोह० विसे० । वेउ० अणंतगुणं । तिरिक्खाउ० अणंतगुणं । तिरिक्खाणुपुव्वि० अणंतगुणं । णिरयगइ० अणंतगुणं । मणुसगइ० अणंतगुणं । देवगइ० अणंतगुणं । उच्चागोद० अणंतगुणं । असाद०अणंतगुणं । णिरयाउ० अणंतगुणं । ओरालिय०अणंतगुणं । तेज०अणंतगुणं । कम्मइय०अणंतगुणं । तिरिक्खगइ० अणंतगुणं । णीचागोद० अणंतगुणं । अजसकित्ति० अणंतगुणं । अणादेज्ज० अणंतगुणं । पयलापयला अणंतगुणं । णिद्दाणिद्दा० अणंतगुणं । थीणगिद्धि० अणंतगुणं । अपच्चक्खाणमाण० अणंतगुणं । कोह० विसे० । माया० विसे० । लोह० विसे० । मिच्छत्त० अणंतगुणं । जसकित्ति० अणंतगुणं । एवमोघदंडओ समत्तो ।

है । परिभोगान्तराय अनन्तगुणा है । [भोगान्तराय अनन्तगुणा है ।] लाभान्तराय अनन्तगुणा है । दानान्तराय अनन्तगुणा है । वीर्यान्तराय (?) अनन्तगुणा है । पुरुषवेद अनन्तगुणा है । स्त्रीवेद अनन्तगुणा है । नपुंसकवेद अनन्तगुणा है । मनःपर्ययज्ञानावरण अनन्तगुणा है । सम्यग्मिथ्यात्व अनन्तगुणा है । केवलज्ञानावरण और केवलदर्शनावरण अनन्तगुणे हैं । प्रचला अनन्तगुणी है । निद्रा अनन्तगुणी है । हास्य अनन्तगुणा है । रति अनन्तगुणी है । जुगुप्सा अनन्तगुणी है । भय अनन्तगुणा है । शोक अनन्तगुणा है । अरति अनन्तगुणी है । अनन्तानुबन्धी मान अनन्तगुणा है । अनन्तानुबन्धी क्रोध विशेष अधिक है । अनन्तानुबन्धी माया विशेष अधिक है । अनन्तानुबन्धी लोभ विशेष अधिक है । वैक्रियिकशरीर अनन्तगुणा है । तिर्यगायु अनन्तगुणी है । तिर्यगानुपूर्वी अनन्तगुणी है । नरकगति अनन्तगुणी है । मनुष्यगति अनन्तगुणी है । देवगति अनन्तगुणा है । उच्चगोत्र अनन्तगुणा है । असातावेदनीय अनन्तगुणा है । नारकायु अनन्तगुणी है । औदारिकशरीर अनन्तगुणा है । तैजसशरीर अनन्तगुणा है । कार्मणशरीर अनन्तगुणा है । तिर्यग्गति अनन्तगुणी है । नीचगोत्र अनन्तगुणा है । अयशकीर्ति अनन्तगुणी है । अनादेय अनन्तगुणा है । प्रचलाप्रचला अनन्तगुणी है । निद्रानिद्रा अनन्तगुणी है । स्त्यानगृद्धि अनन्तगुणी है । अप्रत्याख्यानावरण मान अनन्तगुणा है । क्रोध विशेष अधिक है । माया विशेष अधिक है । लोभ विशेष अधिक है । मिथ्यात्व अनन्तगुणा है । यशकीर्ति अनन्तगुणी है । इस प्रकार ओघदण्डक समाप्त हुआ ।

---

१ काप्रतौ 'परिभोगंतराइय० अणंतगुणं । लाइतरायं अणंतगुणं । दाणंतगइय अणंतगुणं । वीरियंतराइय० अणंतगुणं । इत्थिवेद', ताप्रतौ 'परिभोग० लाहंतराइय० विरियंतराइय० इत्थिवेद०' इति पाठः ।

उत्तरपयडिसंतकम्मेण उक्कस्सपदेसग्गेण सव्वत्थोवं अपच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेसग्गं। [कोहे] अणंतगुणं। मायाए० विसे०। लोहे० विसे०। पच्चक्खाणमाणे विसे०। कोहे० विसे०। मायाए० विसे०। लोहे० विसे०[1]। अणंताणुबंधिमाणे० विसे०। कोहे० विसे०। मायाए० विसे०। लोहे० विसे०। सम्मामिच्छत्ते० विसे०। सम्मत्ते० विसे०। मिच्छत्ते विसे०। केवलणाणावरणे संखे० गुणं। पयला० विसे०। णिद्दा० विसे०। पयलापयला० विसे०। णिद्दाणिद्दा० विसे० थीणगिद्धि० विसे०। केवलदंसणावरण० विसे०। णिरयाउअम्मि अणंतगुणो। देवाउअम्मि तत्तिया चेव। तिरिक्खाउअम्मि विसे०। मणुस्साउअम्मि विसे०! णिरयगइ० असंखे० गुणा। आहार० असंखे० गुणा। ओरालिय० विसे०। तेज० विसे०। कम्मइय० विसे०। अजसकित्ति० संखे० गुणा। देवगइ० विसे०। मणुसगइ० विसे०। हस्स० संखेज्जगुणं। रदि० विसेसाहियं। इत्थि० संखे० गुणं। सोग० विसे०। अरदि० विसे०। णवुंस० विसे०। दुगुंछ०विसे०। भय०विसे०। एवं विसेसाहियकमेण णेदव्वं जाव विरियंतराइत्ति[2]। ओहिणाण० विसे०। मणपज्जव० विसे०। ओहिदंसण० विसे०। चक्खु०

उत्तरप्रकृतिसत्कर्म रूप उत्कृष्ट प्रदेशाग्रकी अपेक्षा अप्रत्याख्यानावरण मानमें उत्कृष्ट प्रदेशाग्र सबसे स्तोक है। क्रोधमें अनन्तगुणा है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। अनन्तानुबन्धी मानमें विशेष अधिक है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। सम्यग्मिथ्यात्वमें विशेष अधिक है। सम्यक्त्वमें विशेष अधिक है। मिथ्यात्वमें विशेष अधिक है। केवलज्ञानावरणमें संख्यातगुणा है। प्रचलामें विशेष अधिक है। निद्रामें विशेष अधिक है। प्रचलाप्रचलामें विशेष अधिक है। निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है। स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है। केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। नारकायुमें अनन्तगुणा है। देवायुमें उतना ही है। तिर्यगायुमें विशेष अधिक है। मनुष्यायुमें विशेष अधिक है। नरकगतिमें असंख्यातगुणा है। आहारकशरीरमें असंख्यातगुणा है। औदारिकशरीरमें विशेष अधिक है। तैजसशरीरमें विशेष अधिक है। कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है। अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है। देवगतिमें विशेष अधिक है। मनुष्यगतिमें विशेष अधिक है। हास्यमें संख्यातगुणा है। रतिमें विशेष अधिक है। स्त्रीवेदमें संख्यातगुणा है। शोकमें विशेष अधिक है। अरतिमें विशेष अधिक है। नपुंसकवेदमें विशेष अधिक है। जुगुप्सामें विशेष अधिक है। भयमें विशेष अधिक है। इस प्रकार विशेषाधिक विशेषाधिकक्रमसे वीर्यान्तराय तक ले जाना चाहिये। अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। चक्षुदर्शनावरणमें

---

१ ताप्रतौ नोपलभ्यते वाक्यमिदम्। २ अ-काप्रत्योः 'भय० विसे० एवं विसेसाहिया २ एवं विसेसाहिया-', ताप्रतौ 'भय० विसे०, विसेसाहिओ, एवं विसेसाहिय-' इति पाठः।

विसे० । अचक्खु०विसे० । कोहसंजल०विसे० । माणसंज० विसे० । मायासंज०विसे० । जसकित्ति० विसे० । णीचागोद० विसे० । उच्चागोद० विसे० । लोहसंजलण० विसेसाहियं । एवमोघदंडओ समत्तो ।

णिरयगदीए उक्कस्से सम्मामिच्छत्ते[1] पदेसग्गं थोवं । अपच्चक्खाणमाणे असंखे० गुणं । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे विसे० । पच्चक्खाणमाणे विसे० । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे विसे० । अणंताणुबंधिमाणे विसे० । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे विसे० । सम्मत्ते विसे० । मिच्छत्ते विसे० । केवलणाण० विसे० । पयला० विसे० । णिद्दा० विसे० । पयलापयला० विसे० । णिद्दाणिद्दा० विसे० । थीणगिद्धि० विसे० । केवलदंसण० विसे० । अण्णदरे आउए अणंतगुणं । णिरयगइ० असंखे०गुणं । आहार० असंखे०गुणं[2] । जसकित्ति० संखे० गुणं । वेउव्विय० विसे० । ओरालिय०[3] विसे० । तेज० विसे० । कम्मइय० विसे० । अजसकित्ति० संखे० गुणं । देवगइ० विसे० । तिरिक्खगइ० विसे० । मणुसगइ० विसे० । हस्स० संखेज्जगुणं । रदि० विसे० । साद० संखे० गुणं । इत्थि० संखेज्जगुणं । सोग० संखे० गुणं ।

विशेष अधिक है। अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। संज्वलन क्रोधमें विशेष अधिक है। संज्वलन मानमें विशेष अधिक है। संज्वलन मायामें विशेष अधिक है। यशकीर्तिमें विशेष अधिक है। नीचगोत्रमें विशेष अधिक है। उच्चगोत्रमें विशेष अधिक है। संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है। इस प्रकार ओघदण्डक समाप्त हुआ।

नरकगतिमें उत्कर्षसे सम्यग्मिथ्यात्वमें स्तोक प्रदेशाग्र है। अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। अनन्तानुबन्धी मानमें विशेष अधिक है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। सम्यक्त्वमें विशेष अधिक है। मिथ्यात्वमें विशेष अधिक है। केवलज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। प्रचलामें विशेष अधिक है। निद्रामें विशेष अधिक है। प्रचलाप्रचलामें विशेष अधिक है। निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है। स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है। केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। अन्यतर आयुकर्ममें अनन्तगुणा है। नरकगति नामकर्ममें असंख्यातगुणा है। आहारकशरीरमें असंख्यातगुणा है। यशकीर्तिमें संख्यातगुणा है। वैक्रियिकशरीरमें विशेष अधिक है। औदारिकशरीरमें विशेष अधिक है। तैजसशरीरमें विशेष अधिक है। कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है। अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है। देवगतिमें विशेष अधिक है। तिर्यग्गतिमें विशेष अधिक है। मनुष्यगतिमें विशेष अधिक है। हास्यमें संख्यातगुणा है। रतिमें विशेष अधिक है। सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। स्त्रीवेदमें

---

१ प्रतिषु 'सम्मत्तमिच्छत्ते' इति पाठः। २ ताप्रतौ 'अणंतगुणा' इति पाठः। ३ अप्रतौ 'विदिय', काम्प्रत्योः 'वादिय०', ताप्रतौ 'वेदिय' इति पाठः।

अरदिं॰[1] विसे॰ । णवुंसय॰ विसे॰ । दुगुंछ॰ विसे॰ । भय॰ विसे॰ । पुरिस॰ विसे॰ । माणसंजल॰ विसे॰ । कोहे विसे॰ । मायाए विसे॰ । लोहे विसे॰ । पुणो पुणो विसेसाहियं, एवं विसेसाहियकमेण णेदव्वं जाव विरियंतराइं ति । मणपज्जव॰ विसे॰ । ओहिणाण॰ विसे॰ । सुद॰ विसे॰ । मदि॰ विसे॰ । ओहिदंसण॰ विसे॰ । अचक्खु॰ विसे॰ । चक्खु॰ विसे॰ । सादे॰ संखे॰ गुणं । उच्चागोदे॰ विसे॰ । णीचागोदे॰ विसे॰ । एवं णिरयगइ[2]दंडओ समत्तो ।

जहण्णेण पदेससंतकम्मेण सम्मत्ते[3] थोवं संतकम्मं । सम्मामिच्छत्ते असंखेज्जगुणो । अणंताणुबंधिमाणे असंखे॰ गुणं । कोहे विसे॰ । मायाए विसे॰ । लोहे विसे॰ । मिच्छत्ते असंखे॰ गुणं । अपच्चक्खाणमाणे असंखे॰ गुणं । कोहे॰ विसे॰ । मायाए॰ विसे॰ । लोहे॰ विसे॰ । पच्चक्खाणमाणे विसेसाहिओ । कोहे विसे॰ । मायाए विसे॰ । लोहे॰ विसे॰ । पयलापयला॰ असंखे॰ गुणा । णिद्दाणिद्दा॰ विसे॰ । थीणगिद्धि॰ विसे॰ । केवलणाण॰ असंखे॰ गुणं । पयला॰ विसे॰ । णिद्दा॰ विसे॰ । केवलदंसण॰

संख्यातगुणे संख्यातगुणा है । शोकमें संख्यातगुणा है । अरतिमें विशेष अधिक है । नपुंसकवेदमें विशेष अधिक है । जुगुप्सामें विशेष अधिक है । भयमें विशेष अधिक है । पुरुषवेदमें विशेष अधिक है । संज्वलन मानमें विशेष अधिक है । संज्वलन क्रोधमें विशेष अधिक है । संज्वलन मायामें विशेष अधिक है । संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है । पुनः पुनः विशेष अधिक, इस प्रकार विशेष अधिक क्रमसे वीर्यान्तराय तक ले जाना चाहिये । मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । उच्चगोत्रमें विशेष अधिक है । नीचगोत्रमें विशेष अधिक है । इस प्रकार नरकगतिदण्डक समाप्त हुआ ।

जघन्य प्रदेशसत्कर्मकी अपेक्षा सत्कर्म सम्यक्त्वमें स्तोक है । सम्यग्मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है । अनन्तानुबन्धी मानमें असंख्यातगुणा है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है । अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । प्रचलाप्रचलामें असंख्यातगुणा है । निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है । स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है । केवलज्ञानावरणमें असंख्यातगुणा है । प्रचलामें विशेष अधिक है । निद्रामें विशेष अधिक है ।

---

१ अप्रतौ 'रदि॰', काप्रतौ त्रुटितोऽत्र पाठः, ताप्रतौ '[अ-] रदि॰' इति पाठः । २ अप्रतौ 'एवं णिरयाउणिरयगई-', काप्रतौ 'णिरयाउणिरयगई-', ताप्रतौ 'णिरयाउ॰ । णिरयगइ-' इति पाठः । ३ प्रतिषु 'सम्मत्तं' इति पाठः ।

विसे० । ओहिणाण० असंखे० गुणं[1] । ओहिदंसण० विसे० । णिरयगइ० असंखे० गुणं । देवगइ० असंखे० गुणं । वेउव्विय० संखे० गुणं । आहार० असंखे० गुणं । मणुसगइ० संखे० गुणं । उच्चागोद० संखे० गुणं । णिरयाउअम्मि असंखे० गुणं । देवाउअम्मि विसेसाहियं । तिरिक्खाउअम्मि विसे० । मणुस्साउअम्मि विसे० । कोह-संजलण० असंखे० गुणं । माणसंजल० विसे० । पुरिस० विसे० । मायासंजल० विसे० । तिरिक्खगइ० असंखे० गुणा । इत्थि० असंखे० गुणा । णवुंस० विसे० । णीचागोद० असंखेज्जगुणं । ओरालिय० असंखे० गुणं । जसकित्ति० असंखे० गुणं । तेज० विसे० । कम्मइय० विसे० । अजसकित्ति० संखेज्जगुणं । हस्स० संखे० गुणं । रदि० विसे० । सादे संखे० गुणं । सोगे संखे० गुणं । अरदि० विसे० । दुगुंछ० विसे० । भय० विसे० । लोहसंजलणं विसेसाहियं । एवं विसेसाहियकमेण णेदव्वं जाव विरियंतराइयं ति । मणपज्जव० विसेसाहियं । सुद० विसे० । मदि० विसे० । अचक्खु० विसे० । चक्खु० विसे० । असादे संखेज्जगुणं । एवमोघदंडओ समत्तो ।

णिरयगदीए सव्वत्थोवं सम्मत्ते जहण्णयं पदेसग्गं संतकम्मं । सम्मामिच्छत्ते असंखेज्जगुणं । अणंताणुबंधिमाणे असंखे० गुणं । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे

केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । अवधिज्ञानावरणमें असंख्यातगुणा है । अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । नरकगतिमें असंख्यातगुणा है । देवगतिमें असंख्यातगुणा है । वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है । आहारकशरीरमें असंख्यातगुणा है । मनुष्यगतिमें संख्यातगुणा है । उच्चगोत्रमें संख्यातगुणा है । नारकायुमें असंख्यातगुणा है । देवायुमें विशेष अधिक है । तिर्यगायुमें विशेष अधिक है । मनुष्यायुमें विशेष अधिक है । संज्वलन क्रोधमें असंख्यातगुणा है । संज्वलन मानमें विशेष अधिक है । पुरुषवेदमें विशेष अधिक है । संज्वलन मायामें विशेष अधिक है । तिर्यग्गतिमें असंख्यातगुणा है । स्त्रीवेदमें असंख्यातगुणा है । नपुंसकवेदमें विशेष अधिक है । नीचगोत्रमें असंख्यातगुणा है । औदारिकशरीरमें असंख्यातगुणा है । यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है । तैजसशरीरमें विशेष अधिक है । कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है । अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है । हास्यमें संख्यातगुणा है । रतिमें विशेष अधिक है । सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । शोकमें संख्यातगुणा है । अरतिमें विशेष अधिक है । जुगुप्सामें विशेष अधिक है । भयमें विशेष अधिक है । संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है । इस प्रकार विशेषाधिक क्रमसे वीर्यान्तराय तक ले जाना चाहिये । आगे मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक । अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । असातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । इस प्रकार ओघदण्डक समाप्त हुआ ।

नरकगतिमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म सम्यक्त्व प्रकृतिमें सबसे स्तोक है । सम्यग्मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है । अनन्तानुबन्धी मानमें असंख्यातगुणा है । क्रोधमें विशेष अधिक है ।

१ ताप्रतौ 'अणंतगुणा' इति पाठः ।

विसे० । अचक्खु० असंखे० गुणं । पयलापयला० असंखे० गुणं । णिद्दाणिद्दा० विसे० । थीणगिद्धि० विसे० । अपच्चक्खाणमाणे० असंखे० गुणं । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे विसे० । पच्चक्खाणमाणे विसे० । [कोहे विसे० ।] मायाए विसे० । लोहे विसे० । केवलणाण० विसे० । पयला० विसे० । णिद्दा० विसे० । केवलदंसण० विसे० । आहार० अणंतगुणं । णिरयाउअम्मि असंखे० गुणं । देवगदीए असंखे० गुणं । मणुसगई० असंखे० गुणं । तिरिक्खगई० संखे० गुणं । णिरयगई० संखे० गुणं । उच्चागोद० संखे० गुणं[1] । इत्थि० संखे० गुणं । णवुंस० संखे० गुणं । णीचागोद० संखे० गुणं । जसकित्ति० असंखे० गुणं । ओरालिय० संखे० गुणं । तेज० विसे० । कम्मइय० विसे० । अजसकित्ति० संखे०[2] गुणं । पुरिस० संखे० गुणं । हस्स० संखे० गुणं । रदि० विसे० । सादे० संखे० गुणं । सोगे० संखे० गुणं । अरदि० विसे० । दुगुंछ० विसे० । भय विसे० । माणसंजलण० विसे० । कोहसंज० विसे० । मायाए विसे० । लोहसंजलण० विसे० । दाणंतराइय० विसे० । लाहंतराइय० विसे० । भोगंतराइय० विसे० । परिभोगंतराइय० विसे० । विरियंतराइय० विसे० । मणपज्जव० विसे० ।

मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । अचक्षुदर्शनावरणमें असंख्यातगुणा है । प्रचलाप्रचलामें असंख्यातगुणा है । निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है । स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है । [क्रोधमें विशेष अधिक है ।] मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । केवलज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । प्रचलामें विशेष अधिक है । निद्रामें विशेष अधिक है । केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । आहारकशरीरमें अनन्तगुणा है । नारकायुमें असंख्यातगुणा है । देवगतिमें असंख्यातगुणा है । मनुष्यगतिमें असंख्यातगुणा है । तिर्यग्गतिमें संख्यातगुणा है । नरकगतिमें संख्यातगुणा है । उच्चगोत्रमें संख्यातगुणा है । स्त्रीवेदमें संख्यातगुणा है । नपुंसकवेदमें संख्यातगुणा है । नीचगोत्रमें संख्यातगुणा है । यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है । औदारिकशरीरमें संख्यातगुणा है । तैजसशरीरमें विशेष अधिक है । कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है । अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है । पुरुषवेदमें संख्यातगुणा है । हास्यमें संख्यातगुणा है । रतिमें विशेष अधिक है । सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । शोकमें संख्यातगुणा है । अरतिमें विशेष अधिक है । जुगुप्सामें विशेष अधिक है । भयमें विशेष अधिक है । संज्वलन मानमें विशेष अधिक है । संज्वलन क्रोधमें विशेष अधिक है । संज्वलन मायामें विशेष अधिक है । संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है । दानान्तरायमें विशेष अधिक है । लाभान्तरायमें विशेष अधिक है । भोगान्तरायमें विशेष अधिक है । परिभोगान्तरायमें विशेष अधिक है । वीर्यान्तरायमें विशेष अधिक है । मनःपर्ययज्ञानावरणमें

---

१ अतोऽग्रे प्रतिषु 'तिरिक्खगई० असंखे० गुणं' इत्येदधिकं वाक्यमुपलभ्यते । २ अप्रतौ 'असंखे०' इति पाठः ।

ओहिणाण० विसे० । सुद० विसे० । मदि० विसे० । ओहिदंसण० विसे० । अचक्खु० विसे० । चक्खु० विसे० । असादे० संखेज्जगुणा । एवं णिरयगइदंडओ समत्तो ।

तिरिक्खगदीए सव्वत्थोवं सम्मत्ते जहण्णपदेससंतकम्मं । सम्मामिच्छत्ते असंखेज्ज-गुणं । अणंताणुबंधिमाणे असंखेज्जगुणं । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे विसे० । मिच्छत्ते असं० गुणं । पयलापयला० असंखे० गुणं । णिद्दाणिद्दा० संखे० गुणं । थीण-गिद्धि० विसे० । अपच्चक्खाणमाणे असंखे० गुणं । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे विसे० । पच्चक्खाणमाणे विसे० । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे० विसे० । ओहिणाण० विसे० । केवलणाण० विसे० । पयला० विसे० । णिद्दा० विसे० । केवल-दंसण० विसे० । णिरयगदीए अणंतगुणं । देवगदीए असंखे० गुणं । वेउव्विय० संखे० गुणं । आहार० असंखे० गुणं । मणुसगदीए संखेज्जगुणं । उच्चागोद० संखे० गुणं । तिरिक्खाउअम्मि असंखे० गुणं । मणुस्साउअम्मि असंखे० गुणं । देव-णिरयाउअम्मि असंखे० गुणं । ओरालिय० असंखे० गुणं । तिरिक्खगदीए संखे० गुणं । इत्थि० संखे० गुणं । णवुंसय० संखे० गुणं । पुरिस० विसे० । जसकित्ति० असंखे० गुणं । तेज० संखे० गुणं० । कम्मइय० विसे० । अजसकित्ति० संखे० गुणं । हस्स० विसे० । रदि०

विशेष अधिक है । अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । अचक्षुदर्शना-वरणमें विशेष अधिक है । चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । असातावेदनीयमें संख्यात-गुणा है । इस प्रकार नरकगतिदण्डक समाप्त हुआ ।

तिर्यंगतिमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म सम्यक्त्वमें सबसे स्तोक है । सम्यग्मिथ्यात्वमें असंख्यात-गुणा है । अनन्तानुबन्धी मानमें असंख्यातगुणा है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । मिथ्यात्वमें असंख्यागुणा है । प्रचलाप्रचलामें असंख्यातगुणा है । निद्रानिद्रामें संख्यातगुणा है । स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । केवल-ज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । प्रचलामें विशेष अधिक है । निद्रामें विशेष अधिक है । केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । नरकगतिमें अनन्तगुणा है । देवगतिमें असंख्यातगुणा है । वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है । आहारकशरीरमें असंख्यातगुणा है । मनुष्यगतिमें संख्यातगुणा है । उच्चगोत्रमें संख्यातगुणा है । तिर्यगायुमें असंख्यातगुणा है । मनुष्यायुमें असंख्यातगुणा है । देवायु और नारकायुमें असंख्यातगुणा है । औदारिकशरीरमें असंख्यात-गुणा है । तिर्यंगतिमें संख्यातगुणा है । स्त्रीवेदमें संख्यातगुणा है । नपुंसकवेदमें संख्यातगुणा है । पुरुषवेदमें विशेष अधिक है । यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है । तैजसशरीरमें संख्यातगुणा है । कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है । अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है । हास्यमें विशेष अधिक

विसे० । सादे संखे० गुणं । सोगे संखे० गुणं । अरदि० विसे० । दुगुंछ० विसे० । भय० विसे० । माणसंजल० विसे० । कोहसंज० विसे० । मायासंज० विसे० । लोहसं० विसे० । दाणंतराइय० विसे० । एवं विसेसाहियकमेण णेदव्वं जाव विरियंतराइयं ति । मणपज्जव० विसे० । ओहिणाण० विसे० । सुदणा० विसे० । मदि० विसे० । ओहिदंसण० विसे० । [1]अचक्खु० विसे० । चक्खु० विसे० । असादे० संखेज्जगुणं । एवं तिरिक्खगइदंडओ समत्तो ।

देवगदीए जहण्णेण सम्मत्ते पदेससंतकम्मं थोवं । सम्मामिच्छत्ते पदेससंतकम्मं असंखेज्जगुणं । अणंताणुबंधिमाणे असंखे० गुणं । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे विसे० । मिच्छत्ते असंखे० गुणं । पयलापयला० असंखे० गुणं । णिद्दाणिद्दा० विसे० । थीणगिद्धि० विसे० । अपच्चक्खाणमाणे असंखे० गुणं । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे विसे० । पच्चक्खाणमाणे विसे० । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे विसे० । केवलणाण० विसे० । पयला० विसे० । णिद्दा० विसे० । केवलदंसण० विसे० । आहार० अणंतगुणं । देवाउअम्मि असंखे० गुणं । तिरिक्ख-मणुसाउअम्मि

है । रतिमें विशेष अधिक है । सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । शोकमें संख्यातगुणा है । अरतिमें विशेष अधिक है । जुगुप्सामें विशेष अधिक है । भयमें विशेष अधिक है । संज्वलन मानमें विशेष अधिक है । संज्वलन क्रोधमें विशेष अधिक है । संज्वलन मायामें विशेष अधिक है । संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है । दानान्तरायमें विशेष अधिक है । इस प्रकार विशेषाधिकक्रमसे वीर्यान्तराय तक ले जाना चाहिये । आगे मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । असातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । इस प्रकार तिर्यंगतिदण्डक समाप्त हुआ ।

देवगतिमें जघन्यसे प्रदेशसत्कर्म सम्यक्त्वमें स्तोक है । सम्यग्मिथ्यात्वमें प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है । अनन्तानुबन्धी मानमें असंख्यातगुणा है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है । प्रचला-प्रचलामें असंख्यातगुणा है । निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है । स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । केवलज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । प्रचलामें विशेष अधिक है । निद्रामें विशेष अधिक है । केवलदर्शनावरण-में विशेष अधिक है । आहारकशरीरमें अनन्तगुणा है । देवायुमें असंख्यातगुणा है । तिर्यगायु और

---

१ ताप्रतौ नास्तीदं वाक्यम् ।

असंखे० गुणं। णिरयगदीए असंखेज्जगुणं। तिरिक्खगदीए असंखे० गुणं। णवुंस० असंखे० गुणं। णीचागोदे० संखे० गुणं। इत्थि० असंखेज्जगुणं। देवगईए असंखे० गुणं। वेउव्विय० संखे० गुणं। मणुसगदीए असंखे० गुणं। उच्चागोदे असंखे० गुणं। जसकित्ति० असंखे० गुणं। ओरालिय० संखे० गुणं। तेज० विसे०। कम्मइय० विसे०। अजसकित्ति० संखे० गुणं। पुरिस० संखे० गुणं। हस्स० संखे० गुणं। रदि० विसे०। सादे० संखे० गुणं। सोगे० संखे० गुणं। अरदीए विसे०। दुगुंछ० विसे०। भय० विसे०। माणसंजलण० विसे०। कोहसंज० विसे०। मायासंज० विसे०। लोहसं० विसे०। दाणंतराइए विसेसाहियं। एवं विसेसाहियकमेण णेदव्वं जाव विरियंतराइयं ति। केवलणाण० विसे०। मणपज्ज० विसे०। ओहिणाण० विसे०। सुद० विसे०। मदि० विसे०। ओहिदंसण० विसे०। अचक्खु० विसे०। चक्खु० विसे०। असादे० संखे० गुणं। एवं देवगइदंडओ समत्तो।

मणुसगदीए सव्वत्थोवं सम्मत्ते पदेससंतं जहण्णयं। सम्मामिच्छत्ते असंखे० गुणं। अणंताणुबंधिमाणे असंखेगुणं। कोहे विसे०। मायाए विसे०। लोहे विसे०। मिच्छत्ते असंखे० गुणं। अपच्चक्खाणमाणे असंखे० गुणं। कोहे विसे०। मायाए विसे०। लोहे विसे०। पच्चक्खाणमाणे विसे०। कोहे विसे०।

मनुष्यायुमें असंख्यातगुणा है। नरकगतिमें असंख्यातगुणा है। तिर्यंगतिमें असंख्यातगुणा है। नपुंसकवेदमें असंख्यातगुणा है। नीचगोत्रमें संख्यातगुणा है। स्त्रीवेदमें असंख्यातगुणा है। देवगतिमें असंख्यातगुणा है। वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है। मनुष्यगतिमें असंख्यातगुणा है। उच्चगोत्रमें असंख्यातगुणा है। यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है। औदारिकशरीरमें संख्यातगुणा है। तैजसशरीरमें विशेष अधिक है। कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है। अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है। पुरुषवेदमें संख्यातगुणा है। हास्यमें संख्यातगुणा है। रतिमें विशेष अधिक है। सातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। शोकमें संख्यातगुणा है। अरतिमें विशेष अधिक है। जुगुप्सामें विशेष अधिक है। भयमें विशेष अधिक है। संज्वलन मानमें विशेष अधिक है। संज्वलन क्रोधमें विशेष अधिक है। संज्वलन मायामें विशेष अधिक है। संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है। दानान्तरायमें विशेष अधिक है। इस प्रकार विशेषाधिकक्रमसे वीर्यान्तराय तक ले जाना चाहिये। केवलज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। मनःपर्ययज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। असातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। इस प्रकार देवगतिदण्डक समाप्त हुआ।

मनुष्यगतिमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म सम्यक्त्वमें सबसे स्तोक है। सम्यग्मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है। अनन्तानुबन्धी मानमें असंख्यातगुणा है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है। अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है। क्रोधमें विशेष अधिक है। मायामें विशेष अधिक है। लोभमें विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है। क्रोधमें

मायाए विसे० । लोहे विसे० । पयलापयला० असंखे० गुणं । णिद्दाणिद्दा० विसे० । थीणगिद्धि० विसे० । केवलणाणा० असंखे० गुणं । पयला० विसे० । णिद्दा० विसे० । केवलदंसण० विसे० । ओहिणाण० अणंतगुणं । ओहिदंसण० विसे० । णिरयगइ० असंखे० गुणं । वेउव्विय० संखे० गुणं । आहार० असंखे० गुणं । मणुसाउअम्मि असंखे० गुणं । तिरिक्खाउअम्मि असंखे० गुणं । कोह-संजलण० असंखे० गुणं । मायासंज० विसे० । पुरिस० विसे० । माणसंजे० विसे० । णिरय-देवाउअम्मि विसे० । तिरिक्खगईए असंखे० गुणं । इत्थि० असंखे० गुणं । णवुंस० विसे० । णीचागोदे० असंखे० गुणं । मणुसगइ० असंखे० गुणं । ओरालिय० असंखे० गुणं । उच्चागोदे असंखे० गुणं । जसकित्ति० असंखे० गुणं । तेज० संखे० गुणं । कम्मइय० विसे० । अजसगित्ति० संखे० गुणं । हस्स० संखे० गुणं । रदि० विसे० । सादे संखे० गुणं । सोगे संखे गुणं । अरदि० विसे० । दुगुंछ० विसे० । भय० विसे० । लोहसंजल० विसे० । दाणंतराइय० विसे० । लाहंतराइय० विसे० । भोगंतराइय० विसे० । परिभोगंतराइय० विसे० । विरियंतरा-

---

विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । प्रचलाप्रचलामें असंख्यातगुणा है । निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है । स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है । केवल-ज्ञानावरणमें असंख्यातगुणा है । प्रचलामें विशेष अधिक है । निद्रामें विशेष अधिक है । केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । अवधिज्ञानावरणमें अनन्तगुणा है । अवधिदर्शना-वरणमें विशेष अधिक है । नरकगतिमें असंख्यातगुणा है । वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है । आहारकशरीरमें असंख्यातगुणा है । मनुष्यायुमें असंख्यातगुणा है । तिर्यगायुमें असंख्यातगुणा है । संज्वलन क्रोधमें असंख्यातगुणा है । संज्वलन मायामें विशेष अधिक है । पुरुषवेदमें विशेष अधिक है । संज्वलन मानमें विशेष अधिक है । नारकायु और देवायुमें विशेष अधिक है । तिर्यंगतिमें असंख्यातगुणा है । स्त्रीवेदमें असंख्यातगुणा है । नपुंसकवेदमें विशेष अधिक है । नीचगोत्रमें असंख्यातगुणा है । मनुष्यगतिमें असंख्यातगुणा है । औदारिकशरीरमें असंख्यातगुणा है । उच्चगोत्रमें असंख्यातगुणा है । यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है । तैजसशरीरमें संख्यातगुणा है । कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है । अयशकीर्तिमें संख्यातगुणा है । हास्यमें संख्यातगुणा है । रतिमें विशेष अधिक है । साता-वेदनीयमें संख्यातगुणा है । शोकमें संख्यातगुणा है । अरतिमें विशेष अधिक है । जुगुप्सामें विशेष अधिक है । भयमें विशेष अधिक है । संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है । दानान्तरायमें विशेष अधिक है । लाभान्तरायमें विशेष अधिक है । भोगान्तरायमें विशेष अधिक है । परिभोगान्तरायमें विशेष अधिक है । वीर्यान्तरायमें विशेष अधिक है । मनःपर्यय-

---

१ ताप्रतौ 'कोहसजलण० असंखे० गुणा । माणसं० विसे० । पुरिस० विसे० । मायासंजलण०' इति पाठः ।

इय० विसे० । मणपज्जय० विसे० । सुद० विसे० । मदि० विसे० । अचक्खु० विसे० । चक्खु० विसे० । असादे संखे० गुणं । एवं मणुसगइदंडओ समत्तो ।

एइंदिएसु जहण्णेण सव्वत्थोवं सम्मत्ते जहण्णपदेससंतकम्मं । सम्मामिच्छत्ते असंखे० गुणं । मिच्छत्ते असंखे० गुणं । अणंताणुबंधिमाणे असंखे० गुणं । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे विसे० । अपच्चक्खाणमाणे असंखे० गुणं० । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे विसे० । पच्चक्खाणमाणे विसे० । कोहे विसे० । मायाए विसेसा० । लोहे विसे० । केवलणाण० विसे० । पयला० विसे० । णिद्दा० विसे० । पयलापयला० विसे० । [1]णिद्दाणिद्दा० विसे० । थीणगिद्धि० विसे० । केवलदंसण० विसे० । णिरयगइ० अणंतगुणं । देवगइ० अणंतगुणं[2] । वेउव्विय० संखे० गुणं । आहार० असंखे० गुणं । मणुसगइ० संखे० गुणं । उच्चागोदे संखे० गुणं । मणुसाउअम्मि असंखे० गुणं । जसकित्ति० असंखे० गुणं । ओरालिय० संखे० गुणं । तेज० विसे० । कम्मइय० विसे० । तिरिक्खगई० संखे० गुणं । अजसकित्ति० विसे० । पुरिस० संखे० गुणं । इत्थि० संखे० गुणं । हस्स० संखे गुणं । रदि विसे० । सोग० संखे० गुणं । सादे[3] विसे० ।

ज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । असातावेदनीयमें संख्यातगुणा है । इस प्रकार मनुष्यगतिदण्डक समाप्त हुआ ।

एकेन्द्रियोंमें जघन्यसे जघन्य प्रदेशसत्कर्म सम्यक्त्वमें सबसे स्तोक है । सम्यग्मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है । मिथ्यात्वमें असंख्यातगुणा है । अनन्तानुबन्धी मानमें असंख्यातगुणा है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । अप्रत्याख्यानावरण मानमें असंख्यातगुणा है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । प्रत्याख्यानावरण मानमें विशेष अधिक है । क्रोधमें विशेष अधिक है । मायामें विशेष अधिक है । लोभमें विशेष अधिक है । केवलज्ञानावरणमें विशेष अधिक है । प्रचलामें विशेष अधिक है । निद्रामें विशेष अधिक है । प्रचलाप्रचलामें विशेष अधिक है । निद्रानिद्रामें विशेष अधिक है । स्त्यानगृद्धिमें विशेष अधिक है । केवलदर्शनावरणमें विशेष अधिक है । नरकगतिमें अनन्तगुणा है । देवगतिमें अनन्तगुणा है । वैक्रियिकशरीरमें संख्यातगुणा है । आहारकशरीरमें असंख्यातगुणा है । मनुष्यगतिमें संख्यातगुणा है । उच्चगोत्रमें संख्यातगुणा है । मनुष्यायुमें असंख्यातगुणा है । यशकीर्तिमें असंख्यातगुणा है । औदारिकरीरमें संख्यातगुणा है । तैजसशरीरमें विशेष अधिक है । कार्मणशरीरमें विशेष अधिक है । तिर्यग्गतिमें संख्यातगुणा है । अयशकीर्तिमें विशेष अधिक है । पुरुषवेदमें संख्यातगुणा है । स्त्रीवेदमें संख्यातगुणा है । हास्यमें संख्यातगुणा है । रतिमें विशेष अधिक है । शोकमें संख्यातगुणा है । सातावेदनीयमें विशेष अधिक है । अरतिमें विशेष

१ ताप्रतौ नास्तीदं वाक्यम् । २ ताप्रतौ 'असंखे० गुणा' इति पाठः । ३ अस्य स्थाने अ-ताप्रत्योः 'पदेस०', काप्रतौ 'पुरिस०' इति पाठः ।

अरदि० विसे० । णवुंस० विसे० । दुगुंछ० विसे० । भय० विसे० । माणसंजल० विसे० । कोह० विसे० । माया० विसे० । लोह० विसे० । दाणंतराइए विसे० । लाहंत० विसे० । भोगंत० विसे० । परिभोगंत० विसे० । विरियंतरा० विसे० । मणपज्ज० विसे० । ओहिणाण० विसे० । सुद० विसे० । मदि० विसे० । ओहिदंस० विसे० । अचक्खु० विसे० । चक्खु० विसे० । असादे संखेज्जगुणं । णीचागोदे जहण्णयं पदेससंतकम्मं विसेसाहियं । एवमेइंदियदंडओ समत्तो ।

एवं चउवीसदिमअणियोगद्दारं समत्तं ।

अधिक है। नपुंसकवेदमें विशेष अधिक है। जुगुप्सामें विशेष अधिक है। भयमें विशेष अधिक है। संज्वलन मानमें विशेष अधिक है। संज्वलन क्रोधमें विशेष अधिक है। संज्वलन मायामें विशेष अधिक है। संज्वलन लोभमें विशेष अधिक है। दानान्तरायमें विशेष अधिक है। लाभान्तरायमें विशेष अधिक है। भोगान्तरायमें विशेष अधिक है। परिभोगान्तरायमें विशेष अधिक है। वीर्यान्तरायमें विशेष अधिक है। मनःपर्यय-ज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। श्रुतज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। मतिज्ञानावरणमें विशेष अधिक है। अवधिदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। अचक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। चक्षुदर्शनावरणमें विशेष अधिक है। असातावेदनीयमें संख्यातगुणा है। नीचगोत्रमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है। इस प्रकार एकेन्द्रियदण्डक समाप्त हुआ।

इस प्रकार चौवीसवां अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।



धवलाकार-प्रशस्तिः

जस्साएसेण[1] मए सिद्धंतमिदं हि अहिलहुदं[2] ।
महु सो एलाइरियो पसियउ वरवीरसेणस्स ॥ १ ॥
वंदामि उसहसेणं तिउवणजियवंधवं सिवं संतं ।
णाणकिरणावहासियसयल-इयर-तम-पणासियं दिट्ठं ॥ २ ॥
अरहंता[3] भगवंतो सिद्धा सिद्धा पसिद्धयारिया ।
साहू साहू य महं पसियंतु भडारया सव्वे ॥ ३ ॥
अज्जज्जणंदिसिस्सेणुज्जुवकम्मस्स चंदसेणस्स ।
तह णत्तुवेण पंचत्थुहण्णयंभाणुणा मुणिणा ॥ ४ ॥
सिद्धंत-छंद-जोइस-वायरण-पमाणसत्थणिवुणेण ।
भट्टारएण टीका लिहिएसा वीरसेणेण ॥ ५ ॥
अट्ठत्तीसम्हि सासियविक्कमरायम्हि एसु संगरमो ।
पासे[5]सुतेरसीए भावविलग्गे धवलपक्खे ॥ ६ ॥
जगतुंगदेवरज्जे रियम्हि कुंभम्हि राहुणा कोणे ।
सूरे तुलाए संते[6] गुरुम्हि कुलविल्लए होंते ॥ ७ ॥
चावम्हि वरणिवुत्ते सिंघे[7] सुक्कम्मि मेंढिचंदम्मि[8] (?) ।
कत्तियमासे एसा टीका हु समाणिआ[9] धवला ॥ ८ ॥
वोद्दणरायणरिंदे णरिंदचूडामणिम्हि भुंजंते ।
सिद्धंतगंथमत्थिय गुरुप्पसाएण विगत्ता सा ॥ ९ ॥

पुस्तकप्रदातृ-प्रशस्तिः

शब्दब्रह्मेति शाब्दैर्गणधरमुनिरित्येव राद्धान्तविद्भिः, साक्षात्सर्वज्ञ एवेत्यवहितमतिभिः सूक्ष्मवस्तु-प्रणीतौ । यो दृष्टो विश्वविद्यानिधिरिति जगति प्राप्तभट्टारकाख्यः, स श्रीमान् वीरसेनो जयति परमतध्वान्त-भित्तन्त्रकारः ॥ १ ॥ श्रीचारित्रसमृद्धि मिक्क विजयश्रीकर्मविच्छित्तिपूर्वकज्ञानावरणीयमूलनिर्नाशनं । भूचक्रं बेसकेय्ये संद मुनिवृंदाधीश्वरकुंदकुंदाचार्यर् धृतधैर्यरायंतेयिनेनाचार्यरोळ् वर्यरो ॥ २ ॥ जितमदर्विगतमलचंतुरंगुलचारणर्द्धिनिरतर्णगळ्दर् । कीर्त्तिगे गुणगणधरयंतिपतिगणधरायेंनिसि कुंद-कुंदाचार्यर् ॥ ३ ॥ अवरन्वयदोळ् सिद्धांतविद्व्योकरणवेदिगळ् षट्तर्कप्रवणर्द्धि सिद्धिसंस्तुतरवरय्य गृद्ध्रपिच्छाचार्य्यवर्य्यर् ॥ ४ ॥ धैर्यपरर्णगळ्द गांभीर्यगुणोदधिगळु चित्तशमदमयमतास्पर्यरेने गृद्ध्र-पिच्छाचार्यरशिष्यर् बलाकपिच्छाचार्यर् ॥ ५ ॥ गुणनंदिपंडितैर्निजगुणनंदिपंडितजनंगळं मेच्चिसि मैगुणद पेसरेसेये विद्वद्गणतिलकर् सकलमुनींद्ररशिष्यर् ॥ ६ ॥ पदार्थदोळर्थशास्त्रदोळ् जिनागमदोळ् हयतंत्रदोळ् महाचरितपुराणसंततिगळोळ् परमागमदोळ् पेरसंमंदोरे सरि पाटि पासटि समानमेनळ् कृतविद्यरारेनुत्तिरे बुधकोटि संदरवनीतळदोळ् ॥ ७ ॥ गुणनंदि पंडितशिष्यर् विहितविदर्गें सूनुर्वराशिष्यरोळ् तरवेच्छर् सिद्धांतपरायणरेणिकेगोळ् केयर्दिं वर्तयो विच्छिन्नानंगेरंबो महिमेयिनेसेदर्वार्धियेंतंतुदारर्

---

१ प्रतिपु 'जस्स सेसाएण' इति पाठः । २ प्रतिषु 'अहिलहुंदी' इति पाठः । ३ प्रतिषु 'अरिहंतपदो' इति पाठः । ४ काप्रतौ 'सामिय' इति पाठः । ५ ताप्रतौ 'पा(पो)स' इति पाठः । ६ अ-काप्रत्योः 'संतं' इति पाठः । ७ का-ताप्रत्योः 'सिंग्घे', मप्रतौ 'सिघ्घे' इति पाठः । ८ अ-काप्रत्योः 'सुक्कम्मि णेमिचंदम्मि', ताप्रतौ 'सुक्कम्मि मिणे चंदम्मि' इति पाठः । ९ प्रतिषु 'समाणिला इति पाठः ।

स्वच्छर् दिनकरकिरणमेनेगले देवेंद्रसिद्धांतर् ॥ ८ ॥ अंतु नेगर्त्तेवेत्त वरशिष्यकदंबकदोळ् समस्त-
सिद्धांतमहापयोनिधियेनिसि तद्बंबरेगं तपोबला- । क्रांतमनोजरागि मदवर्जितरागि पोगर्त्तेवेत्तराशांत-
भनेटदे कीर्ति वसुनंदिमुनींद्ररुदात्तवृत्तियं ॥ ९ ॥ उदधिगेकलाधरं पुट्टिदन्तेवंतवर्गे शिष्यरादर् गुण-
दोळोदवे रविचंद्रसिद्धांतदेवरेंबर्जगद्विशेषकचरितर् ॥ १० ॥ अंतुदयावनीधरक्कुतोदयनाद शशांकनिंदे
शार्व्वरिकपराब्धिगित्तु धरातलमंते दुर्णयध्वांतविघातभागिरे तदुद्भवरिं सले पूर्णचन्द्रसिद्धांतमुनींद्र-
निगदितांतप्रतिशासनं जैनशासनं ॥११॥ इंदु शरददवेळिंदंगळे पुदिदुदु देसेदेसेयोळेनिप जसदोळ्वं
ताळिद दामनंदिसिद्धांतदेवरवरप्रशिष्यरधिगततत्त्वर् ॥१२॥ शांततेवेत्त चित्तजनोळाद विरोधमिदेत्त
निस्पृहर् स्वांततेवेत्तकांक्षे परमार्थदोळिंतु नेराळ्तेवेत्तिदानींतनरिन्मिरारेने जन्यजिनेंद्र वीरनंदिसिद्धांत-
मुनींद्ररे सुचरितक्रमदोळ् विपरीतवृत्तरो ॥१३॥ बोधितभव्यरचित्तवर्धमान श्रीधरदेवरेंबरवर्गप्रतनूभवरादरा
यशःश्रीधरगोदशिष्यरवरोळ् नेगळ्दर् मलधारिदेवरुं श्रीधरदेवरुं ॥१४॥ नतनरेंद्रतिरीटतटार्चितक्रमर् ।
अनुवशनागि वर्पनेनगंबुरुहोदरनोंदे पूविनं । विनोलेवसक्के वंदनभवं जलजासन मीनकेतनमनेकं
तत्तदेवप्रकरकरींद्रमदोद्धतनप्पचित्तजन्मनेतले दोरलमनेमेचदरार् मलधारिदेवरं ॥१५॥ श्रुतधरवलित्ति-
नेमेय्यनोर्म्मेयुं तुरिसुवुदिल्ल निद्देवरमगुंलनिक्कुदिल्लवागिलं– । किरुत्तेरेयेंवुदिल्ल गुर्वुदिल्ल महेंद्रनुं नेरे
ओण बण्णिसल् गुणगणावळियं मलधारिदेवरं ॥१६॥ आ मलधारिदेवमुनिमुख्यर शिष्यरोळग्रण्यरु
वर्जितकपायक्रोधलोभमानमायारमदवर्जितर्णेगदरिंदुमरीचिगळंदमं यशः श्रीचंद्रकीर्तिमुनिनाथरुदात्तचरित्र-
वृत्तियं ॥ १७ ॥ मलधारिदेवरिंदं बेळगिदुदु जिनेंद्रशासनं मुन्नं निर्मलमागि मत्तमीगल् बेळगिदपुदु
चंद्रकीर्ति भट्टारकरिं ॥१८॥ बेळ्गुव कीर्तिचंद्रिके मृदूक्तिसुधारसप्रसरितमूर्तियोळ् । बेळदमल पोदलदसित-
कांछनमागिरे चंद्रनंदमं तळेदु जनं मनंगोळे दिगंतरविकासितोज्वलि-शुभचंद्रकीर्तिमुनिनाथरिदं विबुधाभि-
वंद्यरो ॥१९॥ इंतु प्रसरकिरणारातीय चंद्रकीर्तिमुनींद्रराशांतवर्तितकीर्ति- गळन् मुनिवृंदवंदितरादरा
शांतचित्तर शिष्यरात्तदय दिवाकरणंदि सिद्धांतदेवरिदें जिनागमवार्धिपारगरादरो ॥ २० ॥ इतिदावु-
दरिंदिल्लिकेयुदु सिद्धांतवारिधियनलुकदे वंदिरेंदोदानेंतु बण्णिसुवेनण्ण दिवाकरणंदिसिद्धांतदेवरखिला-
गमभक्तर मार्गमं ॥२१॥'''तिमसुधांशुप्रचुरपूरनिकरं व्याख्यानघोषं मरुचलितोत्तुङ्गतरंगघोषमेनेमिकौदार्यं-
दिंदोप्पि निर्मलधर्मामृतदिंदलंकरिसि गंभीरत्वमं ताळ्दी भूवलयक्केटदे पवित्रागि नेगळ्दर् सिद्धांतरत्ना-
करर् ॥२२॥ अवरप्रशिष्यर् । मरेहुमदोर्म्मे लौकिकदवार्तेयनाढद केत्तबागिलं तेरेयद भानुवस्तमितमागिरे
पोगद मेय्यनोर्म्मेयुं तुरिसदकुक्कुटासनके सोलद गंडविमुक्तवृत्तियं मरेयदघोरदुस्तरतपश्चरितं मलधारि-
देवर ॥२३॥ अवरप्रशिष्यर् ।

श्रीदेशीगणवार्धिवर्द्धनकरश्चन्द्रावदातोल्वणः, स्थेयात् श्रीमलधारिदेवयमिनः पुत्रः पवित्रो भुवि ।
सद्धर्मैकशिखामणिर्जिनपतेर्भव्यैकचिन्तामणिः, स श्रीमान् शुभचन्द्रदेवमुनिपः सिद्धान्तविद्यानिधिः ॥ १ ॥
शब्दाधिष्ठितभूतले परिलसत्तर्कोलसत्स्तंभके (तर्कोल्लसत्स्तंभके), साहित्यस्फटिकाश्मभित्तिरुचिरे ज्योतिर्मये
मण्डले । सद्रत्नत्रयनूत्नरत्नकलशे स्याद्वादहर्म्ये मुदा, यो देवेन्द्रसुरार्चितैर्दिविषदैस्तस्थिर्विरेजुस्तु तत्
॥ २ ॥ देवेन्द्रसिद्धान्तमुनीन्द्रपाद-पङ्केजभृङ्गः शुभचन्द्रदेवः । यदीयनामापि विनेयचेतोजातं तमो हर्तुमलं
समर्थः ॥ ३ ॥ परमजिनेश्वरविरचितवरसिद्धान्ताम्बुराशिपारगरेंदी । धरे बण्णिसुगुं गुणगणधररं शुभचन्द्र-
देवसिद्धान्तिकरं ॥ ४ ॥ श्रीमज्जिनेन्द्रपद-पद्म-परागभृङ्गः, श्रीजैनशासनसमुद्गतवार्द्धिचन्द्रः । सिद्धान्त-
शास्त्रविहिताङ्कितदिव्यवाणी, धर्मप्रबोधमुकुरः शुभचन्द्रसूरिः ॥ ५ ॥ चित्तोद्भूतमदेभकन्ददलनप्रोत्कण्ठ-
कण्ठीरवो भव्याम्भोजकुलप्रबोधनकृते विद्वज्जनानन्दकृत्। स्थेयात्कुन्दहिमेन्दुनिर्मलयशोवल्लीसमालम्बनस्तम्भः
श्रीशुभचन्द्रदेवमुनिपः सिद्धान्तरत्नाकरः ॥ ६ ॥ कुवलयकुलबन्धुध्वस्तमीहातमिस्रे विकसितमुनितत्त्वे
सज्जनानन्दवृत्ते । विदितविमलनानासत्कलान्वीतमूर्तिः शुभमतिशुभचन्द्रो राजवद्राजतेऽयम् ॥ ७ ॥
दिग्दन्तिदन्तान्तरवर्तिकीर्तिः रत्नत्रयालंकृतचारुमूर्तिः । जीयाच्चिरं श्रीशुभचन्द्रदेवो भव्याब्जिनी-राजत-

(राजित)राजहंसः ॥ ८ ॥ श्रीमान् भूपालमौलिस्फुरितमणिगणज्योतिरुद्योतितांघ्रिः, भव्याम्भोजातजातप्रमदकरनिधिस्त्यक्तमायामदादिः । दृश्यत्कन्दर्पदर्पप्रबलितगिलितस्तूर्णितश्चार्य्यशश्वज्जीयाज्जैनाब्जभास्वाननुपमविनयो नूतसिद्धान्तदेवः ॥ ९ ॥ जीयादसावनुपमं शुभचन्द्रदेवो भावोद्भवोद्भवविनाशनमूलमंत्रः । निस्तन्द्रसान्द्रविबुधस्तुतिभूरिपात्रं त्रैलोक्य-गेहमणिदीपसमानकीर्तिः ॥१०॥ मूर्तिः शमस्य नियमस्य विनूतपात्रं क्षेत्रं श्रुतस्य यशसोऽनघजन्मभूमिः । भूविश्रुतश्रि(श्रु)तवतां सुरभूजकल्पानल्पान्बुधा निवसताच्छुभचन्द्रदेवः ॥११॥

स्वस्ति श्री समस्तगुणगणालंकृतसत्य-शौचाचारचारुचरित्र-नय-विनय-सुशीलसम्पन्नेयुं विबुधप्रसन्नेयुं आहाराभय-भैषज्य-शास्त्रदानविनोदेयुं गुणगणाल्हादेयुं जिनस्नपनसमयसमुच्छलितदिव्यगन्धबन्धुरनान्धोदकपवित्रगात्रेयुं गोत्रपवित्रेयुं सम्यक्त्वचूडामणियुं मंडलिनाड-श्रीभुजबलगंगपेर्म्माडिदेवरत्तेयरुमप्पेडवि-देमियक्कं श्रुतपंचमियं नोंतुजवणेयनाड-बन्नियकेरेयुत्तुङ्गचैत्यालयदाचार्यरुं भुवनविख्यातरुमेनिसिद तम्म गुरुगळ श्रीशुभचन्द्रसिद्धान्तदेवर्गे श्रुतपूजेयं माडिबरेयिसि कोट्टधवलेयं पोस्तकं मंगलमहा । श्री ३ ।

श्रीकुपणं प्रसिद्धपुरमापुरदाणेगवंशवार्द्धिशो-
भाकरमूर्जितं निखिलसाक्षरिकास्यविलासदर्पणं ।
नाकजनाथवंद्यजिनपादपयोरुहभृङ्गनेन्दुभू-
लोकमिदुवर्णिपुदु जिन्नमनं मनुनीतिमार्ग्गनं ॥
जिनपद-पद्माराधकमनुपमविनयाम्बुराशिदानविनोदं ।
मनुनीतिमार्ग्गनसतीजनदूरं लौकितार्थदानिग जिन्नं ॥
वारिनिधियोळगे मुत्तं नेरिदवं कोंडुकोरेदु वरुणं मुददिं ।
भारतियकोरळोळिक्कदहारमननुकरिसलैसेवरेवों जिन्नं ॥

श्रीधवलं समाप्तम् ।



१ अवतरण-गाथासूची

क्रमसंख्या	गाथा	पृष्ठ	अन्यत्र कहां
१[७ २]	अगुरुलघु-परुवघादा	१३	
२[२४-२]	अत्ता मवुत्ति परिभोग-	५७५	
३[८-१४]	अभावैकान्तपक्षेऽपि	३०	आ. मी. १२
४[८-१]	असदकरणादुपादान-	१७	सां. का. ९
५[८-२०]	आउअभागो थोवो	३५	
६[२४-१]	आहारे परिभोयं	५७५	
७[१२-३]	उगुदाल तीस सत्त य	४१०	गो. क. ४१८
८[९-४]	उदए संकम-उदए	२७६	" ४४०
९[१२-१]	उव्वेल्लण विज्झादो	४०८	,, ४०९
१०[९-१]	एक्क य छक्केक्कारस	८२	जयध. अ. प. ७५८ (उद्धृत)
११[८-१९]	एयक्खेत्तोगाढं	३५	गो. क. १८५
१२[८-१६]	कथंचित्ते सदेवेष्टं	३१	आ. मी. १४
१३[८-१७]	कम्मं ण होदि एयं	३२	
१४[८-१२]	कार्यद्रव्यमनादि स्यात्	२९	आ. मी. १०
१५[१३-१]	किण्णं भमरसवण्णा	४८५	
१६[८-७]	क्षणिकैकान्तपक्षेऽपि	२६	आ. मी. ४१
१७[१०-६]	खवए य खीणमोहे	२९६	ष.खं.पु. १२, पृ.७८; क.प्र.६, ९
१८[७-३]	गदि-जादी उस्सासो	१३	
१९[८-८]	घट-मौलि-सुवर्णार्थी	२७	आ. मी. ५९
२०[७-४]	चत्तारि आणुपुव्वी	१४	
२१[१४-१]	चंडो ण मुवइ वेरं	४९०	
२२[१४-८]	चाई भद्दो चोक्खो	४९२	गो.जी.५१५
२३[१४-७]	जाणइ कज्जमकज्जं	४९१	,, ५१४
२४[८-६]	जातिरेव हि भावानां	२६	क.पा. १, पृ. २२७ (उद्धृत)
२५[१४-९]	ण य कुणइ पक्खवायं	४९२	गो.जी.५१६
२६[१४-५]	ण य पत्तियइ परं सो	४९१	,, ५१२
२७[१४-३]	णिद्दावंचणबहुलो	,,	,, ५१०
२८[७-५]	दाणं तराइयं दाणे	१४	
२९[८-१०]	न सामान्यात्मनोदेति	२८	आ. मी. ५७
३०[८-२]	नित्यत्वैकान्तपक्षे पि	१९	,, ३७
३१[१३-२]	पम्मा पउमसवण्णा	४८५	
३२[८-९]	पयोव्रतो न दध्यत्ति	२७	आ. मी. ६०
३३[७-१]	पंच य छ त्ति य छप्पंच	१३	
३४[९-३]	पंचादि अट्ठणिहणा	८२	जयध.अ.प.७५९
३५[८-४]	पुण्य-पापक्रिया न स्यात्	२०	आ. मी. ४०
३६[१२-२]	बंधे अधापमत्तो	४०९	गो. क. ४१६
३७[८-११]	भावैकान्ते पदार्थानां	२८	आ. मी. ९
३८[१४-६]	मरणं पत्थेइ रणे	४९१	गो. जी. ५१३
३९[१४-२]	मंदो बुद्धिविहीणो	४९०	,, ५०९
४०[८-३]	यदि सत्सर्वथा कार्यं	२०	आ. मी. ३९
४१[८-५]	यद्यसत्सर्वथा कार्यं	२१	,, ४२
४२[८-१८]	राग-द्वेषाद्यूष्मा	३४	
४३[१४-४]	रूसइ णिंदइ अण्णे	४९१	गो. जी. ५११
४४[८-१५]	विरोधान्नोभयैकात्म्यं	३०	आ. मी. १३
४५[९-२]	सत्तादि दसुक्कस्सं	८२	जयध.अ.प.७५९
४६[१०-५]	सम्मत्तुप्पत्तीए	२९६	ष. खं. पु. १२, पृ.७८;क. प्र.६,८
४७[८-१३]	सर्वात्मकं तदेकं स्या-	२९	आ. मी. ११
४८[८-२१]	सव्वुवरिवेदणीए	३६	

२ ग्रन्थोल्लेख

१ कर्मप्रवाद

१ सा कम्मपवादे सवित्थरेण परूविदा। — २७५

२ कषायप्राभृत

१ एसा सव्वकरणुवसामणा कसायपाहुडे परूविज्जिहिदि। — २७५

२ मोहणीयस्स जहा कसायपाहुडे वित्थरेण ट्ठाणसमुक्कित्तणा कदा तहा एत्थ वि कायव्वा । ३४७
३ मोहणीयसंतकम्मस्स सामित्तं जहा कसायपाहुडे कदं तहा कायव्वं । ५२३
४ पयडिट्ठाणसंतकम्मं मोहणीयस्स जहा कसायपाहुडे कदं तहा कायव्वं । ५२७

३ जीवस्थान-चूलिका

१ बंधं पडुच्च ट्ठिदिरहस्से भण्णमाणे जहा जीवट्ठाणचूलियाए उत्तरपयडीणं जहण्णट्ठिदिपरूवणा कदा तहा कायव्वा । ५१०

४ तत्त्वार्थसूत्र

१ ओहिणाणो [दाव्वदो] मुत्तिदव्वाणि चेव जाणदि नामुत्तधम्माधम्म-कालागास-सिद्धजीवद्व्याणि, "रूपिष्ववधेः" इति वचनात् । ८
२ किं च-ण जीवदव्वमत्थि, "रूपिणः पुद्गलाः" इच्चेदेण लक्खणेण जीवाणं पोग्गलेसु अंतब्भावादो । ३३

५ भावविधान

१ तासिं परूवणा जहा भावविहाणे कदा तहा कायव्वा । ५१५

६ महाबन्ध

१ जहा महाबंधे परूविदं तहा परूवणा एत्थ किण्ण कीरदे । ४३

७ वेदना

१ जेण पदेसग्गेण भवं धारेदि तस्स पदेसग्गस्स पदमीमांसा सामित्तमप्पाबहुगं च जहा वेयणाए परूविदं तहा परूवेयव्वं । ५१३

८ सत्कर्मप्रकृतिप्राभृत

१ एत्थ एदेसिं चदुण्णमुवक्कमाणं जहा संतकम्मपयडिपाहुडे परूविदं तहा परूवेयव्वं । ४३

९ सूत्रविशेष

१ कुदो अधापवत्तभागहारादो विज्झादभागहारस्स संखेज्जगुणहीणत्तं णव्वदे ? एदम्हादो चेव सुत्तादो । ४४९

३ ग्रन्थकारोल्लेख

१ आर्यनन्दी

१ कम्मट्ठिदि त्ति अणियोगद्दारे एत्थ महावाचया अज्जणंदिणो संतकम्मं करेंति । ५७७
२ महावाचयाणमज्जणंदीणं उवदेसेण अंतोमुहुत्तं ट्ठवेदि संखेज्जगुणमाउआदो । ५७८

२ आयमंक्षु

१ अज्जमंखुखमासमणा पुण कम्मट्ठिदिसंचिदसंतकम्मपरूवणा कम्मट्ठिदिपरूवणे त्ति भणंति । ५१८
२ महावाचयाणमज्जमंखुसमणाणमुवदेसेण लोगे पुण्णे आउअसमं करेदि । ५७८

३ नागहस्ती

४ निक्षेपाचार्य

५ भूतबली भट्टारक

६ महावाचक क्षमाश्रमण

४ परम्परागत उपदेश

५ उपदेशभेद

७ अण्णेण उवदेसेण असंखे० भागमेत्तेण विसे० । ३८९

८ अण्णेण उवएसेण मदिआवरणस्स भुजगारवेदओ तेत्तीसं सागरोवमाणि देसूणाणि सव्वद्धे । ३२८

९ एदम्हि उवदेसे जाणि कम्माणि ण भणिदाणि तेसिं कम्माणं णत्थि दो उवदेसा, पढमेण चेव उवदेसेण ताणि णेयव्वाणि। ३२९

१० अण्णेण उवएसेण पुण सव्वणामपयडीणं णत्थि अवट्ठिदसंकमो । ४६७

११ एदेहि दोहि उवदेसेहि भुजगार-पदणिक्खेववड्ढिसंकमेसु सामित्तमप्पाबहुगं कायव्वं । ४६८

१२ जेसिमाइरियाणं णिग्गमाणुसारी आगमो तेसिमहिप्पाएण अत्थि अवट्ठिदसंकमो। जेसिं पुण आइरियाणं णिग्गमाणुसारी आगमो ण होदि, किंतु संकामिज्जमाणपयडिपदेसाणुसारी, तेसिमहिप्पाएण सव्वणामपयडीणं णत्थि अवट्ठाणं । ४६९

१३ जेण उवदेसेण अवट्ठाणं तेण उवदेसेण तिपलिदोवमियस्स तप्पाओग्गउक्कस्सियाए वड्ढीए वड्ढिदूण अवट्ठिदस्स उक्कस्समवट्ठाणं। ४६९

१४ एसो ताव एक्को उवदेसो। अण्णेण उवएसेण अणंताणुबंधीणं जहण्णिया हाणी कस्स ? ४७४

१५ बारसण्णं कसायाणं जेण उवएसेण अवट्ठाणमत्थि तेण उवएसेण उवदे— ४८५

६ पारिभाषिक-शब्द-सूची

षट्खंडागम सूत्र व धवला टीकाके सोलहों भागोंकी सम्मिलित

पारिभाषिक शब्द-सूची

सूचना—मोटे टाइपके अंक भागके और उसके आगेके अंक उसी भागके पृष्ठोंके सूचक हैं।

अ

घ

झ

ट

ड

फ

ब

श